ग़ालिब के पत्र

[दूसरा भाग]

[illegible] तथा सम्पादक

डाक्टर श्रीराम शर्मा

हिन्दुस्तानी एकेडेमी

इलाहाबाद

प्रकाशक
हिन्दुस्तानी एकेडेमी
इलाहाबाद

प्रथम संस्करण १९६३
मूल्य रु० ८·००

मुद्रक
चनगार्ड प्रेस
इलाहाबाद

प्रकाशकीय

ग़ालिब के पत्र भारतीय साहित्य की निधि हैं। किसी भी लेखक अथवा साहित्यकार के वास्तविक रूप और आन्तरिक चरित्र, जो उसके व्यक्तित्व के मूल्यांकन का प्रधान साधन हैं, उसके निजी पत्रों से अपेक्षाकृत अधिक सुन्दर और उत्तम रूप में प्रकट होते हैं। मूर्धन्य साहित्यकारों के वैयक्तिक पत्रों में उनके प्रकृत और सहज रूप का परिचय मिलता है। इनसे उन्हें पूर्णरूप से परिचित होने का अवसर प्राप्त होता है। मिर्ज़ा असदुल्ला बेग 'ग़ालिब' अपने युग के सर्वोत्कृष्ट साहित्यकार थे। देश की भाषा और साहित्य समुन्नत हो रही थी। देश म बड़े-बड़े परिवर्त्तन हो रहे थे। वे अपने युग में फ़ारसी के परम श्रेष्ठ और अद्वितीय साहित्यकार थे। उर्दू में लिखना उन्होंने अपने मित्रों के आग्रह पर शुरू किया था। उस भाषा में भी उन्हें वही स्थान और सफलता मिली जो फ़ारसी में मिली थी। उस समय वह स्वयं उर्दू को हिन्दी कहते थे। ग़ालिब के पत्रों के संकलन का नागरी लिप्यन्तर हिन्दी साहित्य की गौरव वृद्धि करेगा। लिप्यन्तरकार ग़ालिब के इस पत्र-साहित्य को विस्तृत क्षेत्र में ले आने के लिए श्रीराम शर्मा तथा श्रीराम निवास शर्मा बधाई के पात्र हैं।

ग़ालिब के पत्र का प्रथम-खण्ड सन् १९५९ में प्रकाशित हुआ था। कागज और छपाई आदि के मूल्यों में वृद्धि हो जाने के कारण द्वितीय खण्ड का मूल्य प्रथम खण्ड की अपेक्षा कुछ अधिक रखना पड़ रहा है। विद्वानों और रसज्ञ-पाठकों ने प्रथम-खण्ड स्वागत किया था। उनके हाथों में यह द्वितीय खण्ड रखते हुए हिन्दुस्तानी एकेडेमी को प्रसन्नता है।

हिन्दुस्तानी एकेडेमी,
इलाहाबाद

विद्या भास्कर
सचिव

निवेदन

मिर्ज़ा असदुल्लाहख़ाँ 'ग़ालिब' सन् १८४८ ई० के आसपास हिन्दी में पत्र लिखने लगे। सब से पुराना पत्र ९ मार्च, १८४८ का लिखा हुआ है। १५ फ़रवरी, १८६९ को ग़ालिब का देहान्त हुआ। मृत्यु से कुछ समय पहले तक मित्रों और शिष्यों को पत्र लिखते रहे। २०-२१ वर्ष की अवधि में ग़ालिब ने सैंकड़ों पत्र लिखे। पत्र क्या लिखते थे, मित्रों से बात-चीत करते थे।

अब तक ग़ालिब के जितने हिन्दी पत्रों का पता चला है, उन सब का समावेश इस पुस्तक के दोनों भागों में किया गया है। एक व्यक्ति के नाम पर लिखे गए पत्र तिथि-क्रम से संकलित हैं। अब तक उर्दू में भी ये पत्र एक ही स्थान पर उपलब्ध नहीं हैं। ग़ालिब ने स्थान-स्थान पर अपने तथा अन्य कवियों के जो फ़ारसी पद उद्धृत किये हैं, उनका हिन्दी अनुवाद यथास्थान दिया गया है।

द्वितीय भाग के सम्पादन में निम्नलिखित उर्दू-पुस्तकों से सहायता ली गई है।

(१) नादिराते ग़ालिब—सम्पादक, आफ़ाक़ हुसेन 'आफ़ाक़', प्रकाशक, इदारए नादिरात, कराची (मई १९४९ ई०)।

(२) ख़ुतूते ग़ालिब (दोनों भाग)—सम्पादक, ग़ुलाम रसूल 'मेह्र' प्रकाशक-किताब मंजिल, लाहौर (प्रकाशन की तिथि मुद्रित नहीं)।

इस खण्ड के आरम्भ में ग़ुलाम नबी 'हक़ीर' के नाम लिखे गये पत्र संकलित हैं। इन पत्रों से ग़ालिब के जीवन से सम्बन्धित बहुत-सी अज्ञात घटनाओं का पता चलता है। ग़ालिब के जीवन-चरित्र लिखने वालों ने दो-चार स्थलों पर इन पत्रों के उद्धरण दिये हैं।

ग़ालिब के इन पत्रों का हिन्दी और उर्दू, दोनों के लिये समान रूप से महत्व है। लल्लूलाल, मीर अम्मन, इंशा और सितारे हिन्द शिवप्रसाद तथा भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के काल को ये पत्र जोड़ते हैं। ग़ालिब इस शृंखला की बीच की कड़ी हैं। पत्र-साहित्य में इन पत्रों का अपना स्थान है। भाषा और साहित्य के अतिरिक्त भी इन पत्रों का अपना महत्व है। इन पत्रों के माध्यम से पाठक उन्नीसवीं शती के उत्तरार्द्ध के साथ सम्पर्क स्थापित कर सकता है। उन दिनों भारतीय जनता साहित्य, संस्कृति, समाज, आर्थिक-व्यवस्था सभी क्षेत्रों में संघर्ष कर रही थी। ग़ालिब के समय में केवल एक राजवंश का ही पतन नहीं हुआ, पुरानी सामाजिक-व्यवस्था पूरी तरह टूट गई। ग़ालिब जैसे महाकवि ने इस युगान्तर को अपनी सम्पूर्ण भावुकता के साथ इन पत्रों में चित्रित किया है। कोई भी पत्र छपने के लिये नहीं लिखा गया था। इसीलिए इन पत्रों से कवि की, कवि के माध्यम से तत्कालीन समाज की निर्बलता और शक्ति दोनों का पता चलता है।

उर्दू को नागरी लिपि में रूपान्तरित करने में कुछ बाधाएँ हैं। नागरी-लिपि में अन्य भाषाओं को व्यक्त करने की सुविधा है, किन्तु लिपि का आधार ध्वनि ही नहीं हैं। पढ़ते-लिखते समय रूढ़ि से भी सहायता ली जाती है। फ़ारसी-अरबी के शब्दों और मुहावरों को ज्यों का त्यों व्यक्त करने की रूढ़ि अब तक नागरी लिपि में नहीं है। इधर नागरी लिपि में उर्दू के अनेक ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं, किन्तु लिपि के सम्बन्ध में सर्वमान्य संकेतों के अभाव में रूपान्तकार अपने विवेक से ही काम लेता रहा है। उदाहरण के लिए 'इस्बात (अर० = प्रमाणित करना) को 'इसबात' लिखना चाहिये या 'इस्बात', हिन्दी की प्रवृत्ति के अनुसार 'इसबात' लिखने से भी उच्चारण 'इस्बात' ही किया जाएगा। ऐसे स्थलों पर हिन्दी की उच्चारण प्रणाली का अनुसरण किया जाये अथवा उर्दू का? फिर उर्दू लिपि में स्वर-व्यंजन की स्थिति बहुत कुछ अनिश्चित है।

नागरी में इस प्रकार के विकल्प के लिए कोई स्थान नहीं है। लिपि सम्बन्धी ऐसे ही अनेक प्रश्न हैं।

लिप्यन्तरकार की अपेक्षा कम्पोजीटर और प्रूफ़ पढ़ने वाले की कठिनाइयाँ अधिक हैं। फ़ारसी-अरबी के शब्दों में दोनों को विशेष सावधानी बरतनी पड़ती है। कई बार अभ्यस्त आँखें तथा हाथ इस सावधानी पर विजय पा जाते हैं। पुस्तक में छापे की जो थोड़ी-सी त्रुटियाँ दिखाई देती हैं, वे इसी लिए क्षम्य हैं। अनावश्यक विलम्ब से बचने के लिए प्रूफ़ प्रयाग में ही देखा गया है। इसलिये भी कुछ ग़ल्तियाँ रह गई हैं। अन्त में जो शुद्धि-पत्र दिया गया है, उससे पाठक को सहायता मिलेगी। कुछ त्रुटियाँ ऐसी हैं, जिनका उल्लेख शुद्धि-पत्र में नहीं है। ख और ख़ में कई स्थलों पर भ्रम होता है। 'व' और 'ब' भी कई स्थलों पर एक-दूसरे के लिये छपे हैं। 'क़' आदि के नुक़्ते अनावश्यक स्थलों पर छप गये हैं और कुछ आवश्यक स्थलों पर उनका उपयोग नहीं हुआ है। इन सबका उल्लेख शुद्धिपत्र में नहीं हो सकता था।

लगभग १२०० पृष्ठ की इस पुस्तक का प्रकाशन हिन्दुस्तानी एकेडेमी उत्तर-प्रदेश (इलाहाबाद) जैसी संस्था ही अपने हाथ में ले सकती थी। एकेडेमी के पदाधिकारियों के लिये केवल कृतज्ञता व्यक्त करना पर्याप्त नहीं है। एकेडेमी के भूतपूर्व प्रधानमन्त्री आदरणीय डाक्टर धीरेन्द्र वर्मा और स्वर्गीय राहुल सांकृत्यायन की प्रेरणा से ही दूसरा भाग इतनी जल्दी तैयार हो सका। एकेडेमी के सहायकमन्त्री डाक्टर सत्यव्रत सिन्हा ने इस पुस्तक के प्रकाशन में जो रुचि ली है, उसके लिये धन्यवाद अर्पित करता हूँ।

गाँधी बाजार
हैदराबाद—२
गांधी जयन्ती १९६३ ई०

श्रीराम शर्मा

पत्र-सूची

१—मुंशी नबी बख़्श 'हक़ीर' के नाम .. १

२—मुंशी अब्दुल्लतीफ़ के नाम .. १२२

३—नवाब अमीनुद्दीन अहमदख़ाँ के नाम .. १२४

४—नवाब ज़ियाउद्दीन अहमदख़ाँ के नाम .. १३३

५—मिर्ज़ा क़ुर्बानअलीबेगख़ाँ 'सालिक' के नाम .. १३५

६—मिर्ज़ा मुरादअलीबेगख़ाँ 'मिर्ज़ा' के नाम .. १३७

७—मिर्ज़ा बाक़िरअलीख़ाँ 'कामिल' के नाम .. १४०

८—मीर सरफ़राज़ हुसैन के नाम .. १४३

९—मीर अफ़ज़लअली उर्फ़ मीरन के नाम .. १४७

१०—ख़्वाजा ग़ुलामग़ौसख़ाँ 'बेख़बर' के नाम .. १५०

११—हकीम ज़हीरुद्दीन अहमदख़ाँ के नाम .. १९१

१२—नवाब हुसैन मिर्ज़ा के नाम .. १९३

१३—नवाब सज्जाद मिर्ज़ा के नाम .. २०७

१४—नवाब मीर ग़ुलाम बाबाख़ाँ के नाम .. २०९

१५—नवाब इब्राहीमअलीख़ाँ के नाम .. २२१

१६—हकीम सयद अहमदहसन मौदूदी के नाम .. २२६

१७—तफ़ज़्ज़ुल हुसैनख़ाँ के नाम .. २३८

१८—मियाँ दादख़ाँ 'सय्याह' के नाम .. २३९

१९—मीर हबीबुल्लाह् 'ज़का' के नाम .. २७९

२०—चौधरी अब्दुलग़फ़ूर 'सुरूर' के नाम .. ३०४

२१—साहबे आलम मारहरवी के नाम .. ३६८

२२—शाह आलम के नाम ३७९
२३—अब्दुल रज़्ज़ाक़ 'शाकिर' के नाम ३८३
२४—शहज़ादा बशीरुद्दीन के नाम ४०१
२५—मुंशी हीरासिंघ के नाम ४०९
२६—बिहारीलाल 'मुश्ताक़' के नाम ४११
२७—केवलराम 'होशयार' के नाम ४१४
२८—मौलवी करामतअली के नाम ४१७
२९—मुस्तफ़ाख़ाँ बहादुर 'शेफ़्ता' के नाम ४२४
३०—ग़ुलाम बिस्मिल्लाह के नाम ४२७
३१—अज़ीज़ुद्दीन के नाम ४२८
३२—मुफ़्ती सैयद मुहम्मद अब्बास के नाम ४२९
३३—अब्दुलग़फ़ूरख़ाँ 'निसाख़' के नाम ४३१
३४—मर्दानअलीख़ाँ 'राना' के नाम ४३४
३५—हकीम ग़ुलाम मुर्त्तज़ाख़ाँ के नाम ४३५
३६—हकीम ग़ुलाम रज़ाख़ाँ के नाम ४३६
३७—प्यारेलाल 'आशोब' के नाम ४३८
३८—गोविन्दसहाय के नाम ४४२
३९—शाह करामत हुसेन 'हमदानी' बिहारी के नाम ४४४
४०—'सफ़ीर' बिलगिरामी के नाम ४४७
४१—अब्दुलहक़ के नाम ४५०
४२—शेख़ लतीफ़ अहमद बिलगिरामी के नाम ४५१
४३—मौलवी ज़ियाउद्दीनख़ाँ 'ज़िया' के नाम ४५३
४४—सूफ़ी मुनीरी के नाम ४६२
४५—मुंशी नवलकिशोर के नाम ४६४
४६—मुहम्मद हुसेनख़ाँ के नाम ४६६

४७—मौलवी नेमान अहमद के नाम .. ४६९
४८—नवाब कल्बे अलीखाँ के नाम .. ४७६
४९—अज्ञात व्यक्तियों के नाम .. ४७८
५०—परिशिष्ट—पत्र-लेखक .. ४८३
५०—पत्र-प्राप्तकर्त्ता .. ४९०
५१—शुद्धि-पत्र .. ५०६



मुंशी नबी बख़्श 'हकीर' के नाम

१

(९ मार्च १८४८ ई०)

साहब बन्दा,

मियाँ नसीमुल्लाह यहाँ आये। और वो हिकमत[1] इमामुद्दीनख़ाँ से और फ़लसफ़ा[2] मौलवी सद्रुद्दीन से पढ़ते थे, नागाह अज़ रू ए इज़्तिरार[3] दल को चले गये। वक़्ते विदा कहते थे कि वालिद[4] की बीमारी की ख़बर वतन से आई है, नाचार[5] मैं जाता हूँ और क़ुतुब दर्सी[6] यहीं छोड़े जाता हूँ। बाद हुसूले इफ़ाक़ते मरीज़[7] फिर आऊँगा। आज तक वो मुआवदत[8] कर कर नहीं आये। आप अज़ रहे मेहरबानी उनका हाल और उनके वालिदे माजिद[9] की सेहत व मर्ज़ का हाल मुंशी हरगोपाल 'तफ़्ता' से मालूम मुझको लिखिये। ज़रूर ज़रूर फ़क़्त।

२

(४ जून १८४८ ई०)

बन्दा पर्वर,

बहुत दिनों से मेरा ध्यान आपमें लगा हुआ था। वारे, आपके ख़त आने से बहुत ख़ुशी और फ़रहत[10] हासिल हुई। ये आपने क्या लिखा है कि मैं बदायूँ

---

१. चिकित्सा शास्त्र। २. दर्शन शास्त्र। ३. जल्दी के कारण। ४. पिता। ५. विवश। ६. पाठ्य पुस्तकें। ७. रोगी के स्वास्थ्य लाभ के पश्चात्। ८. लौटना। ९. पूज्य पिता। १०. हर्ष।

के हकीम की दवा कर रहा हूँ। तेरी बताई हुई दवा अभी नहीं कर सकता। आप ग़ौर तो कीजिए मैंने तो दवा नहीं बताई। एक तरकीब पानी के मुदव्वर[1] करने की अर्ज़ की है।...

साहबाने अमाराज़े सादाविए मुज़मिना[2] को उस पानी का पीना नफ़ा करता है। और नफ़ा उसका बरसों में ज़ाहिर होता है और उस पानी के इस्तेमाल के ज़माने में दवा को मुमानियत नहीं। जो दवा चाहिए, खाइए। जो ग़िज़ा चाहिए तनावुल फ़रमाइए[3]। सिर्फ़ ये पानी कब दवा हो सकता है? आप शौक़ से इस पानी को शुरू कीजिए और दवा तबीब[4] की, बदस्तूर किये जाइए। और ग़िज़ा मुआफ़िक़ तबीब के खाये जाइए। पानी जब पीजिए तब यही पानी पीजिए। जहाँ जाइए आदमी को हुक्म कीजिए कि एक सुराही उस पानी की ले आवे और भी आपके ख़याल में रहे कि अगर नागाह कोई ज़रूरत लाहिक़[5] हो और ये पानी मौजूद न हो और आप बहस्बे पानी ज़रूरत[6] पी लेवें तो भी महले अंदेशा[7] नहीं है। मुंशी हरगोपाल सतूदा खिसाल[8] के बाब में जो कुछ लिखा था, मालूम हुआ। ख़ुदा की क़सम, मुझको उनसे हरगिज़ मलाल नहीं हुआ। बल्के मुझको ये ग़म था कि कहीं वो अपनी ग़लतफ़हमी से मुझसे मलूल[9] न हुए हों। बहरहाल उस गुफ़्तगू में मुंशी साहब ने एक फ़िक़्रा[10] अपनी मदह[11] में बढ़वा लिया, याने-सिपहरे सुख़नरा माहे दो हफ़्ता[12]। आप उनसे मेरा सलाम कहिएगा। और ये कहिएगा कि मैं तुमसे राज़ी और ख़ुश हूँ। ये चाहता हूँ कि तुम मुझसे राज़ी रहो और मुझको अपना ख़िदमतगुज़ार समझो। रुबाइयाँ[13] आपकी भेजी हुई मेरे पास

---

१. शुद्ध। २. पुराने वातरोगी। ३. खाइए। ४. चिकित्सक। ५. आवश्यक। ६. आवश्यकतानुसार। ७. आशंका का स्थल। ८. प्रशंसित। ९. दुखी। १०. वाक्य। ११. प्रशंसा। १२. काव्य गगन के पूर्णचन्द्र। १३. चार चरण की कविता; प्रथम, द्वितीय तथा चतुर्थ पंक्ति में तुक रहता है, रुबाई के चौथे चरण में प्राय: कोई सार्वभौम सत्य उद्धृत किया जाता है।

मौजूद हैं, बाद इस्लाह[1] के आप के पास भेज दूँगा। घबराइए नहीं और खातिर जमा रखिए।

मुग़ाँ शेवए बानुवाँ-बानू बादशाह की बीबी को कहते हैं और अलिफ़ नून (आँ) जमा[2] का है याने बीबियाँ। मुग़ाँ शेवा की वह तरकीब है जो गुले रुख़्सार[3] और माहे जबीं[4] की तरकीब है। याने वो शख़्स कि जिसका रुख़्सार मानिन्द गुल के है और पेशानी चाँद की-सी है और शेवा[5] मुग़ाँ[6] का-सा है। मुग़ आतिशकदा का कारफ़रमा और चूँकि बादशाहा ने पारस आतिश परस्त थे तो वो ख़िदमत आतिशकदों की अमायद[7] व अकाबिर[8] व अशराफ़[9] व उलमा[10] को देते थे। और शराब को चूँकि वो बहुत उम्दा चीज़ और पाक और मुतबर्रिक[11] जानते थे और हर सिफ़ला[12] और फिरोमाया[13] को नहीं पीने देते थे। ये भी मुग़ों के तहवील में रहती थी। ताकि वो जिसको लायक़ समझें और अहल[14] जानें उसको बक़द्रे मुनासिब[15] दें। बहरहाल वो लोग याने मुग़ बहुत ख़ूबसूरत और ख़ुशसीरत[16] आलिम फ़ाज़िल[17] तरहदार, बज़्लागो[18] हरीफ़ ज़रीफ़[19] हुआ करते थे। इस राह से पारसियों ने मुग़ाँ शेवा मदह माशूक़ों की ठहराई है। याने चालाक और ख़ुशबयान और तरहदार और तिरछा और बाँका मानिन्द मुग़ों के। और इसका नज़ीर हिन्दुस्तान में ये है कि जैसे किसू बेगम या उम्दा औरत को कहें कि फ़लानी बेगम या फ़लानी औरत में कितना डोमनीपन निकलता है। क़िस्सा मुख़्तसिर मुग़ाँ शेवा उस महबूब को कहते हैं कि जो बहुत गरम और शूख़ और शीरीं हरकात और चालाक हो। मुग़ाँ शेवा

---

१. संशोधन। २. बहुवचन। ३. गुलाब जैसे गालवाली-सुन्दरी। ४. चन्द्रमा के समान मस्तकवाली। ५. ढंग। ६. पारसी, अग्निपूजक लोग। ७. जाति के सरदार। ८. महान (ब. व.)। ९. सभ्य (ब. व.)। १०. विद्वान (ब० व.)। ११. पवित्र। १२. नीच। १३. ओछा। १४. पात्र। १५. उचित परिमाण में। १६. सुस्वभाव। १७. विद्वान। १८. विनोदी। १९. हँसमुख।

बानुआँ-मुग़ाँ शेवा दिलबराँ। मुग़ाँ शेवा शाहिदाँ[1] ख़ाही व मजमा, ख़ाही बेइन्फ़रादे तरकीबे मक़लूब[2] है, याने बानूए मुग़ाँ शेवा या बानुआने मुग़ाँ शेवा। क़स अला हाज़ही[3] और अल्फ़ाज़—

मदह जनाब सैयदुश्शोहदा में क़ता है[4]

माज़ूरी अर ज़े हादसा रंजी अज़ाँ गर नीस्त
अज़ नाज़ुकी बतबा गवारा गिरीस्तन
मिस्कीं न दीदए ज़ मुग़ाँ शेवा बानुआँ
दर ख़ाबगाहे बहमनो दारा गिरीस्तन

हासिले मानी ये कि शाइर अपने नफ़्स को या किसू और को मुख़ातिब कर कर कहता है कि तू माफ़ है अगर वक़ाए वो हवादिसे दहर[5] से आज़ुर्दा होता है इस वास्ते के तू बहुत नाज़ुक है और गिरिया व ज़ारी[6] की शिद्दत का मुत्तहमिल[7] नहीं हो सकता। ये बयान बसबीले ताना व तारीज़[8] वाक़ै है। जैसा कि दूसरी बैत में कहता है कि ऐ शख़्स तू ने ख़ाबगाहे बहमन[9] व दारा[9] में परीज़ाद व नाज़ुक व मुग़ाँ शेवा बेगमात को रोते-पीटते नहीं देखा कि कैसे बादशाहाने जलीलुल क़द्र[10] की बीबियाँ थीं और कैसी तरहदार व नाज़ुक कि जैसे मुग़ होते हैं और फिर उन पर क्या मुसीबतें गुज़रीं? ज़ाहिरा तू ने ये क़िस्सा क़ुतुबे तवारीख़[11] में नहीं देखा। और वजह बहमन व दारा के नाम ख़ास की ये है कि बहमन इब्ने इस्फ़न्दयार[12] को आग़ाज़े शबाब[13] में अज़दहा[14]

---

१. सुन्दरी, प्रेमिका। २. चाहे सामूहिक रूप में चाहे व्यक्तिगत रूप में, अभीष्ट है। ३. तदनुसार। ४. क़ता—चार चरण की कविता, प्रथम, द्वितीय और चतुर्थ चरण में तुक रहता है किन्तु रुबाई की भाँति चतुर्थ चरण में कोई सार्वभौम सत्य नहीं रहता। ५. सामयिक घटनाएँ। ६. रुदन। ७. सहनसील। ८. उलहना। ९. एक ईरानी शासक। १०. अत्यधिक प्रतिष्ठित। ११. ऐतिहासिक पुस्तकें। १२. ईरान का एक बादशाह। इसने मिश्र पर विजय प्राप्त की थी। १३. चढ़ती जवानी। १४. अजगर।

निगल गया है और दारा इब्ने दाराब इब्ने बहमन ऐन जवानी में सिकन्दर की लड़ाई में अपने दो मुसाहिबों के साथ मारा गया।

वस्सलाम वल इकराम[1]।

निगाश्ता[2] यकशम्बा चारुम[3] जून १८४८।

असदुल्लाह्

३

(६ जनवरी १८५०)

शफ़ीक़[4] मेरे मुशफ़िक़ मेरे, करमफ़रमा मेरे, इनायत गुस्तर[5] मेरे!

तुम्हारे एक ख़त का जवाब मुझ पर क़र्ज़ है, क्या करूँ? सख़्त ग़मज़दा[6] और मलूल[7] रहता हूँ। मुझको अब इस शहर की इक़ामत[8], नागवार है। और मवाने और अवायक़[9] ऐसे फ़राहम हुए हैं कि निकल नहीं सकता। खुलासा मेरे रंज व अलम[10] का ये है कि मैं अब सिर्फ़ मरने की तवक़्क़ो[11] पर जीता हूँ। हैहात[12]—

मुनहसिर मरने पै हो जिसकी उमैद
नाउमैदी उसकी देखा चाहिए

आज इसी हुजूमे ग़म व अन्दोह[13] में तुम्हारा और तुम्हारे बच्चों का खयाल आ गया। बहुत दिन गुज़रे कि न तुम्हारा हाल मालूम और न प्यारी भतीजी ज़किया का हाल, न मुंशी अब्दुल लतीफ़ और नसीरुद्दीन की हक़ीक़त

---

१. ईश्वर आपको सकुशल रखे और कृपा करे। २. लिखित। ३. चार। ४. कृपालु। ५. दयालु। ६. दुःखी। ७. उदास। ८. निवास। ९. बाधाएँ। १०. दुःख-वेदना। ११. सम्भावना। १२. हाय। १३. शोकाधिक्य।

मालूम । दुआगो[1] हूँ तुम्हारा और सनाख़ाँ[2] हूँ तुम्हारा। बहरहाल लड़कों को दुआ कह देना और अगर मौलाना तफ़्ता हों तो उनको सलाम कहना कि भाई दो-एक जुज़्व[3] तुम्हारे उस कारनामे के देखे हैं, आइन्दा मुझको कसरते ग़म व हम[4] से फ़ुर्सत देखने की नहीं मिली।

निगाश्तए व फ़िरिस्तादए[5] दहुम जनवरी १८५० ई०।

अज़—असदुल्लाह

४

(१८५० ई०)

भाई साहब,

बन्दा गुनहगार हाज़िर हुआ है और बन्दगी अर्ज़ करता है और अफ़्रू तक़सीर[6] का आरज़ूमन्द है। दो ख़त आप के आये हैं और उनका जवाब लिख नहीं सका। ज़ाहिरा शेख़ वज़ीरुद्दीन ने अर्ज़ किया होगा। अस्ल हक़ीक़त ये है कि मेरा और आपका लहू मिलता है। जब वहाँ इह्तिराक़[7] की शिद्दतें हैं तो यहाँ उसका ज़ुहूर क्यों कर न हो? एक मुद्दत से मेरा पाँव फल रहा था, छोटे-छोटे दाने बतरीक़े दायरा कफ़ेपा[8] के मुहीत[9] थे। नागाह जैसे एक क़ौम में से एक शख़्स अमीर हो जाए। एक दाना इन दानों में से बढ़ गया और पक गया और फोड़ा हो गया और वो क़रीब टखने की हड्डी के था। क़यास कीजिए क्या हाल होगा? ईद के दिन बादशाह के साथ ईदगाह न जा सका। दूसरे दिन लंगलंगाँ[10] क़िले गया। और ईद की नज़्र[11] दी। आख़िरकार तप चढ़ी

---

१. प्रार्थना करने वाला। २. प्रशंसक। ३. अंश। ४. शोकाधिक्य। ५. प्रेषित। ६. दोषक्षमा। ७. वेदना। ८. पाँव के पंजे के चारों ओर। ९. घेरने वाला। १०. लँगड़ाते-लँगड़ाते। ११. भेंट।

और सदाअ शदीद[1] आरिज़[2] हुआ। वो फोड़ा पका और फूटा। लेकिन अर्ज़ करूँ? सोज़िश अर्ज़ करूँ? दस-बारह दिन बराबर ये हाल रहा। मरहम लगा किये। आख़िरकार वो फोड़ा फूटा। उसमें माद्दए मुन्जमिद[3] जिसको कील कहते हैं—वो निकला। दो अंगुल का ज़ख़्म पड़ गया, अब वो ज़ख़्म भर गया है। दो फाहों में अच्छा हो जाएगा। तप जो आरज़ी थी जाती रही। मगर सदाअ शायद माद्दी और बजाए ख़ुद एक मर्ज़ हक़ीक़ी[4] था, कि हनोज़[5] बाक़ी है। बिल्लाहुल अज़ीम[6] अगर इस अर्से में एक दफ़ा लिखा हो। जहां तक तुमको भेज चुका हूँ, वहीं तक तहरीर है। एक फ़िक़रा उस पर शायद नहीं लिखा गया। और अगर यही दर्देसर है तो न लिखा जाएगा। इस सबब से तहरीर ख़त में मुक़स्सिर[7] रहा हूँ। मुआफ़ रखिएगा और ख़त का जवाब लिखिएगा। इन दिनों दिल्ली में तप व दर्देसर व अक़सामे-अमराज़[8] की शिद्दत[9] है। बारे, इत्तिला दीजिए कि आपका मिज़ाज कैसा है। और मेरा भतीजा और प्यारी भतीजी किस तरह है। पहले ख़त से मालूम हुआ था कि वो दवात-क़लम लेकर अलग बैठती है और मुझको ख़त लिखा करती है और जब लड़ती है तो कहती है कि मैं मिर्ज़ा साहब के हाँ चली जाऊँगी। अब आप उससे मिर्ज़ा साहब कहना मौक़ूफ़ करवाइए। उससे मुझको चचा कहवाया कीजिए। अगर ख़ुदा चाहता है तो इन जाड़ों में एक बार बतरीक़े डाक कोल[10] आऊँगा और दो-चार दिन रहूँगा। तुमको देखूंगा और भतीजे को देखूंगा। तफ़्ता का हाल मालूम हुआ। हमने भी बादशाह की नौकरी की थी। वो हमारे शागिर्द हैं। क्योंकर राजा की नौकरी न करते? सुनो भाई, बात वो है जो तुम कहते हो। तफ़्ता को नौकरी से अपने जानो तन[11] की परवरिश मंज़ूर नहीं, दीवान के छपने की फ़िक्र है। क्या करूँ, दस्तगाह[12] नहीं और

---

१. अत्यधिक सिरदर्द। २. बाधक। ३. एकत्रित। ४. वास्तविक रोग। ५. अब तक। ६. महान ईश्वर की शपथ। ७. वंचित। ८. विभिन्न प्रकार के रोग। ९. अधिकता। १०. अलीगढ़। ११. प्राण और शरीर। १२. सामर्थ्य।

बेमक़दूर हूँ वर्ना क्या सौ-दो सौ से तफ़्ता की इग्रानत[1] न करता। अपने से बेज़ार, यारों से शर्मसार। क्योंकर कोई जाने कि मैं अपने दोस्तों को किस तरह चाहता हूँ। तिहीदस्त[2] की बात क्या और आबरु क्या? हाँ साहब, अगर बाबू हरगोबिन्दसिंह आपके पास आएँ तो उनसे मेरी दुआ कहना, और ये मेरा हाल कह देना। और उनको इत्तिला देना कि तुम्हारा ख़त पहुँचा है, जवाब इस राह से नहीं लिखा कि तुम अपना अहवाल[3] मुझको लिखो। अब ज़्यादा क्या लिखूँ? लड़कों को दुआ कह देना। और शेख़ वज़ीरुद्दीन का हाल लिखना। वस्सलाम वल अकराम।

५

(२ जनवरी १८५१)

अपने भाई साहब क़िब्ला[4] की ख़िदमत में बन्दगी अर्ज़ करता हूँ और अपनी भतीजी को दुआ कहता हूँ और अपने प्यारे भतीजे को प्यार करता हूँ। और उसकी तनदुरुस्ती की दुआ माँगता हूँ। सुना मैंने कि फिर उसको दस्त आने लगे। साहब, अँदेशा न करो। जूँ जूँ ये बढ़ता जाएगा और हरारत उसके मिज़ाज में आती जाएगी, वों वों ये हालत रफ़ा होती जाएगी। इन्शा अल्लाह ताला[5] असूल ख़ैरी जवारिशे ऊद[6] व जवारिशे मस्तगी[6], बनवा रखो। हर रोज़, बल्के गाह-गाह[7] उसको चटा दिया करो और ख़ुरिश हाय[8] नागवार मत दिया करो। अब मेरा हाल सुनो। मंजन पहुँचा। दर्द से मर रहा था। वल्लाह, बेतकल्लुफ़ कहता हूँ। मैंने इस पचपन बरस की उम्र में ऐसी सरीउल तासीर[9] दवा नहीं देखी। एक बार के लगाने से दर्द तो फ़ौरन जाता रहा। सुबह को वर्म बिल्कुल न था। डाढ़ के दर्द की मगर अक्सीर ये है लेकिन बावजूद इसके तकलीफ़ न

---

१. सहायता। २. रिक्तहस्त। ३. समाचार (ब० व०)। ४. प्रतिष्ठित। ५. ईश्वर ने चाहा तो। ६. एक यूनानी औषधि। ७. कभी-कभी। ८. अवाञ्छनीय भोजन। ९. शीघ्र प्रभाव करने वाली।

गई। भाई ये दर्द अज़ क़िस्म ओजाए नज़ला व रुतूबत[1] नहीं। डाढ़ गिरने को है, जगह छोड़ दी है, ऊपर को उठ आई है। हनोज़ कुछ इलाक़ा मसूढ़े से बाक़ी है। जब वो इलाक़ा जा चुके और डाढ़ गिर चुके तब फ़ुर्सत हो। चार डाढ़ें गिर चुकी हैं, ये पांचवीं गिरा चाहती है। चूंकि है इन्तिहा, मैं उसको उखड़वा नहीं सकता। बहरहाल आपकी इनायत से वो दर्द और वर्म[2] कि जो मन्शाए आज़ार था, जाता रहा। अब ये क़िस्सा तो जब तक ज़िन्दा हूँ, रहेगा। पांव भी अब अच्छा है। ज़ख़्म थोड़ा-सा बाक़ी रहा है। ज़हमत व तकलीफ़ व रंज व आशोब[3] नहीं है। तुम्हारा हाल उन दोनों ख़तों से मालूम हुआ। क्या करूँ, कुछ इख़्तियार की बात नहीं। ख़ुदा तुम पर रहम करे। ये मर्ज़ नहीं, रोग है। इस रोग को ख़ुदा खोवे। मियाँ नसीमुल्ला साहब ने अच्छा किया। बेकारी से बेहतर है। अगर क़िस्मत यावरी करेगी और नेकनाम रहेंगे, तरक़्क़ी कर जाएँगे। मौलाना तफ़्ता का हाल मालूम हुआ। अच्छा है कुछ दुनिया का भी धंदा लगा रहे। यक़ीन है कि कहीं से वो ख़त मुझको भी लिखेंगे। मुंशी हरगोविन्दसिंह ने एक ख़त मुझको अकबराबाद[4] से भेजा था। उसमें अपनी मुलाक़ात का हाल जानी बाँकेराय से मारिफ़त तफ़्ता के लिखा था। मैंने उसका जवाब नहीं लिखा, क्योंकि वो जवाबतलब न था। हाँ साहब, अब बाबर बादनुमाँ[5] का हाल तमाम लिख चुका हूँ। अब मुझको ये लिख भेजिए कि वो वो जो मैंने आपको भेजा है, वो कहाँ तक है? 'ख़ात्मा' का फ़िक़रा या शेर जो कुछ हो वो लिखकर भेज दो ताकि मैं वहाँ से लिखकर तुमको दूँ। अब मैं देखूं ये शशमाहा[6] मुझे कब मिलता है। बाद उसके मिलने के अगर आइन्दा माह बमाह कर देंगे तो मैं लिखूंगा, वर्ना इस खिदमत को मेरा सलाम है, अभी बाबर का हाल हुज़ूर में भी नहीं भेजा। कल मसविदा तमाम हुआ है। साफ़ हो रहा है। अब साफ़ कर कर दे दूंगा और माह बमाह

---

१. पीडा का कारण जुखाम या शोथ नहीं। २. शोथ। ३. उत्पात। ४. आगरा। ५. दिशादर्शक। ६. छमाही।

बेमक़दूर हूँ वर्ना क्या सौ-दो सौ से तफ़्ता की इम्रानत[1] न करता। अपने से बेज़ार, यारों से शर्मसार। क्योंकर कोई जाने कि मैं अपने दोस्तों को किस तरह चाहता हूँ। तिहीदस्त[2] की बात क्या और आबरु क्या? हाँ साहब, अगर बाबू हरगोविन्दसिंह आपके पास आएँ तो उनसे मेरी दुआ कहना, और ये मेरा हाल कह देना। और उनको इत्तिला देना कि तुम्हारा ख़त पहुँचा है, जवाब इस राह से नहीं लिखा कि तुम अपना अहवाल[3] मुझको लिखो। अब ज़्यादा क्या लिखूँ? लड़कों को दुआ कह देना। और शेख़ वज़ीरुद्दीन का हाल लिखना। वस्सलाम वल अकराम।

५

(२ जनवरी १८५१)

अपने भाई साहब क़िब्ला[4] की ख़िदमत में वन्दगी अर्ज़ करता हूँ और अपनी भतीजी को दुआ कहता हूँ और अपने प्यारे भतीजे को प्यार करता हूँ। और उसकी तनदुरुस्ती की दुआ माँगता हूँ। सुना मैंने कि फिर उसको दस्त आने लगे। साहब, अँदेशा न करो। जूँ जूँ ये बढ़ता जाएगा और हरारत उसके मिज़ाज में आती जाएगी, वों वों ये हालत रफ़ा होती जाएगी। इन्शा अल्लाह ताला[5] असूल खैरी जवारिशे ऊद[6] व जवारिशे मस्तगी[6], बनवा रखो। हर रोज़, बल्के गाह-गाह[7] उसको चटा दिया करो और ख़ुरिश हाय[8] नागवार मत दिया करो। अब मेरा हाल सुनो। मंजन पहुँचा। दर्द से मर रहा था। वल्लाह, बेतकल्लुफ़ कहता हूँ। मैंने इस पचपन बरस की उम्र में ऐसी सरीउल तासीर[9] दवा नहीं देखी। एक बार के लगाने से दर्द तो फ़ौरन जाता रहा। सुबह को वर्म बिल्कुल न था। डाढ़ के दर्द की मगर अक्सीर ये है लेकिन बावजूद इसके तकलीफ़ न

---

१. सहायता। २. रिक्तहस्त। ३. समाचार (ब० व०)। ४. प्रतिष्ठित। ५. ईश्वर ने चाहा तो। ६. एक यूनानी औषधि। ७. कभी-कभी। ८. अवाञ्छनीय भोजन। ९. शीघ्र प्रभाव करने वाली।

गई। भाई ये दर्द अज़ क़िस्म ओजाए नज़ला व रतूवत[1] नहीं। डाढ़ गिरने को है, जगह छोड़ दी है, ऊपर को उठ आई है। हनोज़ कुछ इलाक़ा मसूढ़े से बाक़ी है। जब वो इलाक़ा जा चुके और डाढ़ गिर चुके तब फ़ुर्सत हो। चार दाँत गिर चुकी हैं, ये पाँचवीं गिरा चाहती है। चूंकि है इन्तिहा, मैं उसको उखाड़ नहीं सकता। बहरहाल आपकी इनायत से वो दर्द और वर्म[2] कि जो मन्शाए आज़ार था, जाता रहा। अब ये क़िस्सा तो जब तक ज़िन्दा हूँ, रहेगा। पाँव भी अब अच्छा है। ज़ख़्म थोड़ा-सा बाक़ी रहा है। ज़हमत व तकलीफ़ व रंज व आशोब[3] नहीं है। तुम्हारा हाल उन दोनों ख़तों से मालूम हुआ। क्या करूँ, कुछ इख़्तियार की बात नहीं। ख़ुदा तुम पर रहम करे। ये मर्ज़ नहीं, रोग है। इस रोग को ख़ुदा खोवे। मियाँ नसीमुल्ला साहब ने अच्छा किया। बेकारी से बेहतर है। अगर क़िस्मत यावरी करेगी और नेकनाम रहेंगे, तरक़्क़ी पा जाएँगे। मौलाना तफ़्ता का हाल मालूम हुआ। अच्छा है कुछ दुनिया का भी धंदा लगा रहे। यक़ीन है कि कहीं से वो ख़त मुझको भी लिखेंगे। मुंशी हरगोविन्दसिंह ने एक ख़त मुझको अकबराबाद[4] से भेजा था। उसमें अपनी मुलाक़ात का हाल जानी बाँकेराय से मारिफ़त तफ़्ता के लिखा था। मैंने उसका जवाब नहीं लिखा, क्योंकि वो जवाबतलब न था। हाँ साहब, अब बाबर बादनुमा[5] का हाल तमाम लिख चुका हूँ। अब मुझको ये लिख भेजिए कि वो वो जो मैंने आपको भेजा है, वो कहाँ तक है? 'जात्मा' का फ़िक़रा या शेर जो कुछ हो वो लिखकर भेज दो ताकि मैं वहाँ से लिखकर तुमको दूँ। अब मैं देखूँ ये शशमाहा[6] मुझे कब मिलता है। बाद उसके मिलने के अगर आइन्दा माह बमाह कर देंगे तो मैं लिखूंगा, वर्ना इस ख़िदमत को मेरा सलाम है, अभी बाबर का हाल हुज़ूर में भी नहीं भेजा। कल मसविदा तमाम हुआ है। साफ़ हो रहा है। अब साफ़ कर कर दे दूंगा और माह बमाह

१. पीडा का कारण जुखाम या शोथ नहीं। २. शोथ। ३. उत्पात। ४. आगरा। ५. दिशादर्शक। ६. छमाही।

की इस्तिदुआ करूँगा । छमाही आखिर होने को थी । इस वास्ते मुतवज्जेह होकर मैंने उसको तमाम किया । इस सबब से फ़ुर्सत तुमको खत लिखने की न हुई । लाहौला वला क़ुव्वता, कि देख रहा हूँ क़लम हाथ से छुटता ही नहीं । वल्लाह, इस वक़्त तुमको अपने पास बैठा हुआ समझा हूँ और तुमसे बातें कर रहा हूँ । सौदाए मुहब्बत इसी को कहते हैं । लिल जुनूने फ़ुनून[1] ।

रोज़े पंजशम्बा, वक़्त सुवह, दोअम जनवरी १८५१ ई० ।

अज़—असदुल्लाह

६

(२ मार्च १८५१)

भाई साहब को वन्दगी पहुँचे । इन दिनों में हुज़ूरवाला हज़रत ख़्वाजा साहब की दरगाह गये थे और अहक़रुल इबाद[2] भी साथ गया था । चुनाँचे आपका नवाज़िश नामा[3] जो मेरे खत के जवाब में था वो मेरे आदमियों ने वहीं दरगाह में मेरे पास पहुँचाया था । फ़ुर्सत जवाब लिखने की नहीं हुई । चार दिन हुए कि मैं दरगाह से शहर में आया । आते ही मैंने फ़स्द खुलवाई । इस सबब से दो दिन खत नहीं लिखा । आज लिखता हूँ । मैं ये समझा हुआ था कि जब दरगाह से आऊँगा तो तुम्हारा खत आया हुआ होगा । वो पाऊँगा । आदमियों से मालूम हुआ कि कोल का कोई खत नहीं आया । नाचार मुशव्विश[4] हुआ । तशवीश की दो वजहें हैं । एक तो ये कि ज़किया की चेचक का हाल पहले खत में लिखा था । अगरचे ये भी लिखा था कि दो-चार दाने नमूद[5] होकर जाते रहे और फ़ुर्सत हो गई, मगर फिर भी खयाल बाक़ी रहा । दूसरी वजहे तशवीश तुम्हारी तरफ़ से आया । मिजाज कैसा है, मर्ज़ का हाल क्या

---

१. अपनी कला में व्यस्त पागल । २. तुच्छ सेवक । ३. कृपापत्र । ४. चिन्ता करने वाला, परेशान । ५. प्रकट ।

है ? अलावा इससे कहीं दौरा, कहीं कसरते कारोबार। ब हर रंग ध्यान तुम्हारी तरफ़ लगा हुआ है। मुझको भी बसबब फ़स्ले वहार[1] के हैजाने ख़ून[2] है। इहितराक़[3] के शदायद[4] बनिस्बत और दिनों के ज्यादा है। लाज़िम यों था कि शाहतरा[5] पीता और मुस्हिल[6] लेता मगर कुछ न हो सका। सिर्फ़ फ़स्द बासलीक़[7] पर किनाअत की और आध सेर ख़ून ले लिया। अब आइन्दा जो कुछ हो सो हो। एजेंट राजपूताना ख़ुद भरतपुर के नवाह[8] में है। यक़ीन है कि जानी बाँकेराय भी होंगे। और मुंशी हरगोपाल तफ़्ता भी साथ होंगे। तुम अपने अजज़ा[9] क्यों नहीं मँगवा भेजते। मैंने सिर्फ़ तुम्हारे लुत्फ़े तवा व ज़ौक़ के वास्ते इल्तेज़ाम[10] उस मशक़्क़त का अपने ऊपर किया है। मँगवाओ और मँगवा कर मुझको इत्तिला दो और निशाने ख़ात्मा इवारत लिखो, ताके बक़िया[11] भी लिख भेजूँ। मुंशी अब्दुल लतीफ़ सल्लमहू अल्लाहो ताला[12] को दुआ पहुँचे। नसीरुद्दीन को दुआ। ज़किया को दुआए दीदाबोसी और उसकी ख़ैर व आफ़ियत[13] की इस्तेदुआ[14]। वस्सलाम।

निगारिश्ता[15] यकशम्बा[16] दोअम मार्च १८५१ ई०।

७

(२८ मार्च १८५१)

भाई साहब को सलाम पहुँचे। भाई अलीबख़्शख़ाँ और भाई तुर्रेबाज़ख़ाँ और मिर्ज़ा ज़ैनुलआबदीनख़ाँ और मजमुए अहबाब[17] सलाम कहते हैं और

---

१. वसन्त ऋतु। २. रक्त की गरमी। ३. जलन। ४. आधिक्य। ५. एक शाक। ६. विरेचन। ७. ढंग का। ८. आसपास। ९. हिस्सा, लेख के अंश। १० उत्तरदायित्व। ११. अवशिष्ट। १२. ईश्वर रक्षा करे। १३. कुशलता। १४. प्रार्थना। १५. लिखित। १६. रविवार। १७. समस्त पारिवारिक जन।

८

(अप्रैल-जुलाई १८५१)

भाई साहब,

ये इनायतानामा भी पाया और जिसकी मुझे फ़िक्र थी वो भी आया। इख्तलाफ़े मुद्दत का मदार हरकारों की तबीयत पर है। हाल मुंशी अब्दुललतीफ़ और ज़किया का मालूम हुआ। गरमी का मौसम है, मैं जानता हूँ उन दोनों को ज़हरमुहरा का इस्तेमाल मुफ़ीद[१] होगा। कभी कभी शरबते नीलोफर[२] में घिस कर पिला दिया करें और चाट लिया करें। भाई लड़कों का घर है। शरबते नीलोफ़र, शरबते बनफ़्शा, अर्क़े नाना[३] की सिकंजबीन अर्क़े कासनी, अर्क़े बादयान[४] इस तरह की चीज़ें घर में तैयार करो। गाह गाह इस्तेमाल में आती रहें। हाँ साहब, नसीरुद्दीन का ज़िक्र आपने ख़त में बहुत दिनों से नहीं लिखा। मगर वो भी कहीं हमारे शेख़ इकरामुद्दीन के साथ आगरे चला गया।

आपकी किताब की फ़िक्र में हूँ। अगर अजल[५] अमान[६] देती है तो अब लिख कर भेजे देता हूँ। हुमायूँ का हाल पन्द्रह सतर के मिस्तर[७] से चार जुज़्व में आया है। एक बात तुमको ये मालूम रहे कि जब हुज़ूर में हाज़िर होता हूँ तो अक्सर बादशाह मुझसे रेख़्ता[८] तलब करते हैं। सो वो कही हुई ग़ज़लें तो क्या पढ़ूँ? नई ग़ज़ल कह कर ले जाता हूँ। आज मैंने दोपहर को एक ग़ज़ल लिखी है। कल या परसों जाकर पढ़ूँगा। तुमको भी लिखता हूँ। दाद देना कि अगर रेख़्ता पायए सहर[९] या ऐजाज़[१०] को पहुँचे तो उसकी यही सूरत होगी या कुछ और शक्ल?

---

१. लाभदायक। २. नीलोत्पल। ३. पोदीने का अर्क। ४. सौंफ का अर्क। ५. काल। ६. शरण। ७. पंक्तियुक्त कागज, जिसे नीचे रख कर लिखते हैं। ८. हिन्दी कविता। ९. जादू। १०. चमत्कार।

कहते तो हो तुम सब कि बुते ग़ालिया मू[1] आय
इक मर्तबा घबरा के कहो कोई कि वो आय
हूँ कशमकशे नज़अ[2] में हाँ जज़्बे मुहब्बत
कुछ कह न सकूँ पर वो मेरे पूछने को आय
है साइक़[3] वो शोलओ[4] सीमाब[5] का आलम
आता है समझ में मेरे आता नहीं गो आय
ज़ाहिर है कि घबरा के न भागेंगे नकीरैन[6]
हाँ मुंह से मगर बादए दोशीना[7] की बू आय
जल्लाद से डरते हैं न वाअज़[8] से झगड़ते
समझे हुए हैं हम उसे जिस भेस में जो आय
हाँ अहले तलब[9] कौन सुने तान ए ना याफ़्त[10]
देखा कि वो मिलता नहीं अपने ही को खो आय
अपना नहीं वो शेवा कि आराम से बैठें
उस दर पै नहीं बार[11] तो काबा ही को हो आय
की हमनफ़सों[12] ने असरे गिरिया[13] में तक़रीर
अच्छे रहे आप इससे मगर मुझको डुबो आय
इस अंजुमने[14] नाज़ की क्या बात है 'ग़ालिब'
हम भी गये वाँ और तेरी तकदीर को रो आय

क़ताची[15] है ग़मे दिल इसको सुनाये न बने
या बने बात जहाँ बात बनाये न बने

---

१. सुगन्धित केशों वाली प्रेमिका। २. मृत्यु का संघर्ष। ३. बिजली। ४. अंगारा। ५. पारा। ६. यमदूत, जो मृत्यु के पश्चात क़ब्र में आते हैं। ७. गत रात्रि की सुरा। ८. उपदेशक। ९. अभ्यर्थी। १०. न मिलने का ताना। ११. भेंट का अवसर। १२. मित्र। १३. रुदन। १४. सभा। १५. छिद्रान्वेषी।

१०

(१८५१ ई०)

भाई साहब को सलाम और मुंशी अब्दुल लतीफ़ और नसीरुद्दीन और प्यारी जक़िया को दुआ पहुँचे। हज़रत अर्क़ पिये जाइए और घबराइए नहीं। देखना क्या फ़ायदा करता है। मुझको तो मुफ़ीद पड़ा। यक़ीन है कि तुमको भी नफ़ा करेगा।

बन्दा पर्वर, पाखल[1] का मुरब्बा और अचार दोनों मौजूद हैं। ख़ुदा हुज़ूर को सलामत रखे। जब चाहूँ माँग लाऊँ; मगर भेजूँ क्योंकर? डाँ डाक—उसका ये हाल है के मर्तबान, कमाल ये है कि टीन में रख कर भेजिए। उल्टा-सीधा लाकलाम[2] होगा। अगर मुरब्बा है तो शीरा, और अगर अचार है तो तेल गिर जाएगा। बहरहाल अचार पाखल का, कि, वो बनिस्बत मुरब्बे के ज़्यादातर सूदमन्द[3] है, ले आया हूँ और मेरे पास रखा है। जिस तरह हुक्म करो, उस तरह भेज दूँ।

हज़रत काले साहब और मियाँ निज़ामुद्दीन और भाई ग़ुलामहुसेनख़ाँ तुर्रेबाज़ख़ाँ और मुग़लअलीख़ाँ और सब साहब सलाम कहते हैं। ज़ैनुल-आबदीनख़ाँ अच्छा है। बीबी भी उसकी फ़ुर्सत पाती चली हैं। मर्ज़ की सूरत ख़तरनाक नहीं रही। ख़ुदा चाहे तो सेहत हो जाये—भाई ख़ुदा के वास्ते हसनअली बेग को समझा दो, कि ये क्या तौर है कि एक लौंडे के वास्ते बीबी को छोड़ दिया है। वालिदा भी तुम्हारी उसकी बात नहीं पूछतीं। वो ग़रीब अपनी ख़ाला[4] के हाँ पड़ी हुई है। अपनी माँ को लिखो कि बहू को मना कर ले आवें और तुम्हारे पास रवाना करें। यानी ये सलाह तुम मिर्ज़ा को समझाओ और बहुत-सा कहो। फ़क़्त।

---

१. गूलर, कुछ लोग पाखल को गूलर से पृथक् एक स्वतंत्र फल मानते हैं। २. निर्विवाद। ३. लाभदायक। ४. मौसी।

११

(१८५१ ई०)

आदाब बजा लाता हूं। बहुत दिन से आपका खत नहीं आया। बेगम में मेरा ध्यान लगा हुआ है। आप अक्सर मुझको भूल जाते हैं। और जब मेरी तरफ़ से शिकायत शुरू होती है तो हज़रत ब अदालते फ़ौजदारी करते हैं और कसरते अशग़ाले सरकारी[1] दस्तावेज़े उज्र बनाते हैं, बहरहाल इतना तो भूलना मुनासिब नहीं। हर हफ़्ते में एक खत आपका और एक खत मेरा आता-जाता रहे। इन दिनों में बसबब ईद के क़सीदे की फ़िक्र के मुझको फ़ुर्सते तहरीर[2] नहीं मिली। क़सीदे जब छापा होकर आएँगे तो मुआफ़िक़े मामूल[3] आपकी ख़िदमत में इरसाल[4] करूँगा।

मेरे एक दोस्त हैं, उन्होंने एक रुपया मुझको दिया है और ये चाहा है कि मैं वो रुपया आपके पास भेजूं और आप अपने भाई साहब के पास हातरस भेज दें। और वो एक रुपये के चाक़ू जैसे कि वहाँ बनते हैं, बहुत ताकीद कर कर और फ़रमाइशी तुहफ़ा बनवा कर आपको भेज दें। और आप ख्वाही[5] किसी के हात, ख्वाही डाक में मुझको भेज दें। मैं हैरान था कि रुपया आप तक क्योंकर पहुँचे ? बारे, मिर्ज़ा साहब आज आ गये और उन्होंने कहा कि मैं कल कोल जाऊँगा। मैंने खत लिखकर मय रुपये के उनको दे दिया। मेहरबानी फ़रमा कर हातरस भेजिए और ताकीद लिखिए कि बहुत अच्छे चाक़ू, जितने आवें, ऐसे कि उनसे बेहतर न हो, बनवा कर भेज दें। जल्द-वस्सलाम।

मुंशी अब्दुललतीफ़ को दुआ पहुँचे। बेगम को और नसीरुद्दीन और अब्दुस्सलाम को दुआ पहुँचे। जनाब मीर तालिबअली छोलस के रईस, कि

---

१. शासकीय कार्यों की अधिकता। २. लिखने का अवकाश। ३. नियमानुसार। ४. प्रेषण। ५. चाहे तो।

जो हैदराबाद के रिसाले में मिर्ज़ा ज़ुल्फ़िक़ार अलीबेग रिसालदार की रिफ़ाक़त[1] में मुदर्रिसे रिसाला हैं, वो अपने को आपके वालिद माजिद का आशना[2] बताते हैं और आपको सलाम कहते हैं।

हक़ ताला तुमको खुश व खुर्रम[3] व तनदुरुस्त, तुम्हारी औलाद के सर पर सलामत रखे और तुम उनका बुढ़ापा देखो और उनके बच्चों को खिलाओ। मुंशी हर गोबिन्द सिंघ आये और बेगम का मुझे पयाम दिया कि चचा मैंने कान छिदवाये हैं। सो तुम मेरी तरफ़ से उसको दुआ कहना और कहना तुमको मुबारक हो और तुमको जमर्रुद[4] और याक़ूत[5] के पत्ते-वालियाँ पहननी नसीब हों।

१२

(४ अगस्त, १८५१ ई०)

भाई साहब,

आपका खत बहुत दिन के बाद आया। खैर व आफ़ियत मालूम हुई। दिल ख़ुश हुआ। अब हवा सर्द हो गई है। इन्शा अल्लाह् ताला शेख इकरामुद्दीन भी माल खैर[6] आ जावेंगे। आपके खत का जवाब जो देर में लिखा है, इस सबब से लिखा है कि तक़रीबे ईद[7] क़रीब आ गई थी। क़सीदे की फ़िक्र में सरगिराँ[8] था। बारे, ईद हो चुकी। क़सीदा पढ़ चुका। अब जवाब आपके खत का लिखा। कहोगे कि क़सीदा मुझको क्यों न भेजा। तिहत्तर शेर हैं और सिर्फ़ मैं लिखने-वाला। ये लिखना फ़िक्रे शेर से कम नहीं। इन्शा अल्लाह लिखूंगा और भेजूंगा।

---

१. साथ। २. मित्र। ३. प्रसन्न। ४. पन्ना। ५. लाल (रत्न) ६. कुशलतापूर्वक। ७. ईद का समारोह। ८. व्यस्त।

तहरीरे तारीख इसी सबब से मुल्तवी रही, अब इस तरफ़ मुतवज्जेह[1] हूँगा। आपके वास्ते लिखवाता हूँ। कातिब के आगे कारे ज़रूरी[2], फ़रमाइश से हाकिम की, आ गया है। उसको वो तमाम करे तब उस तहरीर की तरफ़ तवज्जेह करे। आप खातिर जमा रखें। जब तक आपके पास न पहुँच ले और आप उसको न देख लें तब तक खुद मेरा दिल खुश न होगा।

वा ए बरजाने सुखनगर व सुखन्दाँ न रसद[3]

यहाँ सब तरह खैर व आफ़ियत है। मखदूमज़ादा भी तनदुरुस्त होता चला है। मैं बदस्तूर एहतराक़[4] की बला में मुब्तिला हूँ मगर इल्तिफ़ात[5] नहीं करता। मेरे सबअिख्वान व अहबाब[6] तुमको सलाम कहते हैं।

ज़किया को मेरी तरफ़ से दुआ कह देना और उसको मेरी तरफ़ से प्यार करना। मुंशी अब्दुल लतीफ़ साहब को दुआ और नसीरुद्दीन को दुआ। जब मियाँ अब्दुस्सलाम वतन से आ जायें तो मुझको इत्तिला देना। वस्सलाम।

मुरसिला सेशम्बा, चारुम अगस्त १८५१ ई०।

अज़—असदुल्लाह

१३

(२ सितम्बर, १८५१ ई०)

भाई साहब क़िब्ला,

ज़किया और अब्दुस्सलाम का आना मुबारक हो। बड़े लड़के को भी परवर्दगार तनदुरुस्ती बख्शे। हाँ साहब, अखबार में अकबराबाद और अज़ीमाबाद की वबा[7] की धूम सुनी जाती है। कौल का कहीं ज़िक्र न था। अब आपके लिखने से मालूम हुआ। हक़ताला अपने सब बन्दों को अम्न व आमान[8] में रखे।

---

१. ध्यान देने वाला। २. आवश्यक कार्य। ३. उस कविता पर खेद है, जो किसी काव्यमर्मज्ञ के पास न पहुँचे। ४. जलन। ५. दयादृष्टि। ६. आत्मीय जन। ७. महामारी। ८. शान्ति।

इस शहर में अम्न है मगर हाँ जैसा कि शुरू फ़सल में तग़य्युर[1] हो जाता है और तप व लरज़ा[2] व जुकाम फ़ैल जाता है—वो है। वबा नहीं है। गरमी बहुत पड़ती है। दो दिन से हवा सर्द हो गई है। अब्र आने लगा है। बारिस नहीं हुई। इन्शा अल्लाहो ताला आजकल में मेंह बरसेगा। हुज़ूर वाला[3] क़ुतुब साहब की दरगाह में तशरीफ़ रखते हैं। इस महीने की याने जीक़ाद की बीसवीं को आवेंगे। मुझको दो-चार दिन के वास्ते दरगाह जाना ज़रूर था, मगर मेरे पाँव में दो-एक फोड़े निकले हैं। इस उज्रे लंग[4] से नहीं गया।

तारीख़ का हाल क्या पूछते हो? सिर्फ़ हुमायूँ का हाल लिख चुका हूँ। अकबर बादशाह का अहवाल शुरू भी नहीं हुआ। भाई, मुझसे ये दर्दे सर हो नहीं सकता। बस ये इतना ही रहा। एक क़ातिब हैं, कहुत ख़ुशनवीस और सहीनवीस। उनको मैंने मसविदे दिये और उनसे कहा कि उसकी दो नक़लें मुझको कर दो, एक तुम्हारे वास्ते और एक जानी बाँकेलाल के वास्ते। वो एक लिख कर लाये। मैंने वो जानीजी को भेज दी। ख़याल किया कि भाई को दस रोज़ के बाद भेज दूँगा। नागाह कातिब को एक किताब तारीख़ की सेशन जज ने लिखने को दी। वो लिख रहे हैं। इस सबब से दिरंग[5] हो गई है। आप घबरावें नहीं।

जारूब ला बियार के ईं शिर्के फ़िल वुजूद
बागर्दे फ़र्शो सीना वा ऐवाँ दरावरस्त[6]

---

१. परिवर्तन। २. शीत-ज्वर। ३. बादशाह। ४. लँगड़ाने के कारण। ५. विलम्व। ६. ईश्वर के अस्तित्व में दूसरे को सम्मिलित करना महल के फर्श पर पड़ी हुई धूल के समान है। जिस प्रकार झाड़ू से फर्श की धूल दूर कर दी जाती है उसी प्रकार 'नहीं' (ईश्वर के अतिरिक्त अन्य शक्ति नहीं है) की झाड़ू से हृदय में स्थित ईश्वर के अस्तित्व में किसी दूसरे का सम्मिलन हटा दो। (अरबी में 'ला' झाड़ू के आकार का होता है और उसका अर्थ नकरात्मक है)।

तरकीबे अल्फ़ाज़ यों है कि शिर्के फ़िल वजूद बा गर्दे फ़र्श बराबरस्त व सीना व ऐवाँ बराबस्त याने दिल बमंज़िले ऐवाँ बराबरस्त, याने दिल बमंज़िले ऐवान के है और शिर्क फ़िलवुजूद बमंज़िल गर्दे फ़र्श के है। उस गर्दे फ़र्श को झाड़ा चाहिए। गर्द झाड़ते हैं झाड़ू से लाए नाफ़िया को झाड़ू मुक़र्रर किया। ख़ुलासा मे है के लाए नाफ़िया की झाड़ू ला और दिल के ऐवान[1] से शिर्के फ़िलवुजूद की गर्द झाड़ डाल। अब समझिए के शिर्के फ़िलवुजूद क्या और लाये नाफ़िया क्या? शिर्क कई क़िस्म पर है। शिर्के फ़िल सिफ़ात। शिर्के फ़िल अफ़ाल। इन शिर्कों को सब जानते हैं। मगर शिर्के फ़िलवुजूद बहुत पोशीदा है और सब इसमें मुब्तिला हैं। याने अशिया[2] के वास्ते वुजूद व जुदागाना क़रार देना और ख़ल्क़[3] और खालिक़[4] को अलग अलग समझना। मज़हब, वहदत[5] वुजूद का ये है कि मौजूदे हक़ीक़ी हक़ है और उसके सिवा कोई मौजूद नहीं। ला मौजूद ला इलाहा ला मुअस्सर फ़िल वुजूद व इल्लिल्लाह्[6] वास्ते नफ़ी के हैं। अहले जाहिर[7] ला इलाहा इल्लिल्लाह् को यों समझते हैं कि सिवाय अल्लाह् के कोई लायक़ इबादत के नहीं। बस वो नफ़ी ए इस्तेहक़ाक़[8] इबादत करते हैं और सूफ़िया कहते हैं कि नहीं कोई मौजूद सिवाय अल्लाह् के। पस, ये लोग अशिया की मौजूदियत के अक़ीदे को शिर्के फ़िल वजूद कहते हैं और अहले जाहिर को शिर्के ख़फ़ी[9] जानते हैं।

बालाए तिफ़्ल यक शबा दर ख़म ज़ रास्ती
बा क़ामते ख़मीदए पीराँ बराबरस्त[10]

१. महल। २. सामग्री। ३. संसार। ४. विधाता। ५. एकता। ६. ईश्वर के अतिरिक्त कुछ नहीं है, ईश्वर के अतिरिक्त कोई प्रभावशाली नहीं है। ७. सांसारिक लोग। ८. अस्तित्वहीन। ९. गुप्त रूप से ईश्वर की सत्ता में किसी दूसरे को सहायक मानना। १०. प्रतिपदा का झुका हुआ चाँद ऐसा लगता है जैसे बूढ़ों का झुका शरीर।

ख़याल में होगा कि ये शेर मिनजुम्ला उन अशार के है कि जो माहे नौ[1] की तशबीह[2] में वाक़े हुए हैं। एक तशबीह ये भी है। तिफ़्ले यक शबा[3] पहली रात का चाँद। बाला यहाँ बमाने क़द के है, न बमाने ऊपर के। रास्ती बमाने सच के है, न बमाने सीधे के।

बरदस्ते शाह तेग़ो कमाँ रास्त जायेगाह
बातेग़ों बाकमाँ ब चे बुरहाँ बराबरस्त[4]

वाह भाई, तुम और इस शेर के माने पूछो। ये दो तशबीहें माहे नौ की हैं, तलवार और कमान। शायर कहता है कि तलवार और कमान बादशाह के हाथ में हुआ करती हैं और ये ज़ाहिर है कि हिलाल[5] बादशाह के हाथ में नहीं फिर किस बुरहान[6] से और किस दलील से शोअरा उसको तलवार और कमान के बराबर जानते हैं।

दानम न तेग़े मसकल ए तेग़ बादशास्त
न शिगुफ़्त गर बतेग़ बदीं साँ बरावरस्त[7]

ये बैत[8] मुताल्लिक़ पहली बैत से है। पहले शेर में आपने एक शुबा वारिद ा। कि तलवार बादशाह के हाथ में चाहिए और हिलाल वहाँ नहीं है। पस, उसको तलवार क्यों कर कहिए। अब आप ही मुजीब[9] होता है कि हाँ मैं भी जानता हूँ कि ये तलवार नहीं मगर बादशाह की तलवार का मसकला[10] है और अजब नहीं कि बादशाह की तलवार के बराबर गिना जावे। और हाँ ये

---

१. नया चाँद। २. उपमा। ३. एक रात का शिशु। ४. बादशाह के हाथ में तलवार और धनुष उपयुक्त है। तलवार और धनुष की समता उसके (चाँद के) साथ किस तर्क से की जा सकती है। ५. शुक्लपक्ष की द्वितीया का चाँद। ६. तर्क। ७. मैं तलवार नहीं जानता अपितु वह बादशाह की तलवार का मसकला है। यह विचित्र नहीं कि बादशाह की तलवार का मसकला तलवार के बराबर गिना जाये। ८. पद। ९. उत्तरदाता। १०. धार चढ़ाने की मशीन।

पूछिए कि मसकला क्या ? मसकल आला है तलवार सैकल करने का और वो एक चीज़ है लोहे की, घोड़े के नाल की सूरत।

तेग़े मरा अगर चे बुवद सुफ़्ता दर नियाम
पौलादे वा बदख़्श बदख़्शां बराबरस्त[1]

बदख़्श फ़ारसी में इस्म[2] है याक़ूत[3] का और ये जो शहर का नाम बदख़्शां है, इसी सबब से है कि वहाँ याक़ूत की कान[4] है। तेग़े मरा में जो 'रा' है, ये इज़ाफ़त[5] के माने देता है, यानी मेरी तलवार की फ़ौलाद याने लोहा। अगरचे तलवार म्यान में हो, लेकिन याक़ूत के बराबर यानी सुर्ख़। अगरचे तलवार न खींचूं और किसी को न मारूँ तो भी मेरी तलवार ख़ून आलूदा[6] है और मानिन्द याक़ूत के सुर्ख़ है। ख़ालिक़ ने इसकी सरिश्त[7] में ये सिफ़त वदीअत[8] रखी है। वस्सलाम वलअकराम।

शम्बा, सेशुम[9] सितम्बर १८५१ ई०।

—ग़ालिब

१४

(सितम्बर, १८५१– मार्च, १८५२ ई०)

भाई साहब,

आपका ख़त पहुँचा। हज़रत आपने मौलवी क़मरुद्दीनख़ाँ को इतना तंग नाहक़ किया। मेरा मुद्दआ[10] इसी क़दर था कि ख़त का पहुँचना मालूम हो जाये

---

१. मेरे लिए यह तलवार यद्यपि म्यान में बन्द है, लेकिन उसका लोहा बदख़्शा के लाल की तरह लाल है। २. संज्ञा। ३. लाल (रत्न)। ४. खान। ५. सम्बन्धकारक का चिन्ह। ६. सनी हुई। ७. स्वभाव। ८. धरोहर। ९. तीसरा। १०. अभीष्ट।

और काग़ज़ तल्फ़[1] न हो। वर्ना मुझको उनसे किसी तरह का रंज नहीं है। मैंने अगर कुछ तुमको लिखा था तो लिखना बतरीक़े इख़्तेलात[2] व इनबिसात[3] था, न बसबीले मलाल[4]। बहरहाल मसविदे के पहुँचने से ख़ातिर जमा हो गई। अब उनके ख़त के आने की कुछ हाजत नहीं। मैं उनका ख़ादिम[5] और दोस्त दिली हूँ और उनकी प्यारी प्यारी बातें मुझको पसन्द हैं। अब मेरा ये रुक़्क़ा उनको मुक़र्रर[6] दीजिएगा। यहाँ लड़के-बाले सब ख़ैर व आफ़ियत से हैं। तुमको बन्दगी और अपने भाई-बहनों को सलाम कहते हैं। मेरी तरफ़ से बेगम को दुआ पहुँचे और अब्दुस्सलाम और कुलसूम को दुआ पहुँचे। मुंशी अब्दुललतीफ़ की ख़ैर व आफ़ियत लिखते रहिएगा।

मीर क़ासिमअली का कोई ख़त अगर कहीं से आया हो तो मुझको इत्तिला दीजिएगा।

१५

(६ मार्च, १८५२ ई०)

क़िब्ला माफ़ रखिएगा। कई दिन के बाद आपको ख़त लिखता हूँ। मुंशी हरगोपाल साहब के ख़त से आपकी और लड़के-वालों की ख़ैर व आफ़ियत मालूम होती रहती है और चार-पाँच दिन हुए, आपका नवाज़िशनामा[7] भी आया था। मियाँ तफ़्ता ने कुछ हाल आपके आशोबे चश्म[8] का लिखा था। फिर उनके ही ख़त से ये भी दरियाफ़्त हुआ के कुछ फ़ुर्सत है। हक़ ताला तुम्हारी चश्मे जहाँबीं[9] को रोशन और तुमको तुम्हारे फ़रज़न्दों के सर पर सलामत रखे। मेरे वज उस्सद्र[10] की इतनी फ़िक्र न चाहिए। मेरे अमराज़[11] बेश्तर

---

१. नष्ट। २. मित्रता के कारण। ३. आनन्द। ४. दुःख। ५. सेवक। ६. दुबारा। ७. कृपा-पत्र। ८. आँखों का दुखना। ९. नेत्र। १०. छाती का दर्द। ११. रोग (ब० व०)।

दौरे हैं। आगे एक क़ूलंज[1] का दौरा था। अब वजउस्सद्र का दौरा शुरू हो गया है। जब ये दर्द उठ खड़ा होता है--चार पहर, छ पहर, दो पहर रहता है। फिर रफ़ा हो जाता है। मुंशीजी की ग़ज़लें आई हुई थीं। वो उनका अपने पास पहुँचना जल्द चाहते थे और मुझको उस दिन वो दर्द शुरू हुआ था। मैंने लिख भेजा कि आजकल ग़ज़लों को नहीं देख सकता। बारे, तीसरे दिन मैंने उनकी ग़ज़लें भेज दीं। उन्होंने नाहक़ तुमसे उनका ज़िक्र किया। जो तुम मुतफ़क्किर[2] हुए। क़िस्सा मुख़्तसर, अच्छा हूँ।

हकीम इमामुद्दीन ख़ाँ साहब से अब रुजू नहीं करता। हकीम अहसनुल्लाख़ाँ साहब मेरे चारागर[3] हैं। उन्होंने फ़रमाया कि आमदे फ़सले नौ[4] है, त मुसहिल[5] ले डाल। चुनाँचे दस बारह मुंज़िज[6] और तीन मुसहिल हुए। तीसरा मुसहिल था आज। तब्रीद[7] पीकर तुमको ये ख़त लिख रहा हूँ और आदमी रुक़्क़ा लेकर ख़ाँ साहब के पास गया हुआ है। देखो मुज़्द ए अम्नो फ़राग़[8] लाता है या परसों एक मुसहिल और भी होता है। ये सबब था जो आपके ख़त का जवाब देर में लिखा। अब आप मेहरबानी फ़रमा कर अपने मिज़ाज का हाल उसी तफ़सील से मुझको लिखिए और बच्चों की ख़ैर व आफ़ियत लिखिए।

मुंशी अब्दुललतीफ़ साहब को दुआ पहुँचे। ज़किया बेगम को दुआ पहुँचे और ये मालूम हो कि तुम अब क्या पढ़ती हो और तुम्हारा सबक़ अब कहाँ तक पहुँचा है? इसकी हमको इत्तिला दो। नसीरुद्दीन को और अब्दुस्सलाम

---

१. पसली के नीचे उठनेवाला दर्द, आँतों का रोग। २. चिन्तित। ३. चिकित्सक। ४. नई ऋतु का आगमन। ५. विरेचन। ६. विरेचन से पूर्व मलों को कोमल करने के लिए दी जाने वाली औषधि। ७. ठंडाई। ८. सन्तोष तथा निश्चिन्तता की शुभ सूचना।

को दुआ पहुँचे। मेहमाने नौ रसीदा[1] का नाम भी भूल गया हूँ, उसको दुआ कहिए और उसका नाम मुझको लिखिए।

वस्सलाम माल इक्राम[2] अज़ असदुल्लाह् निगाश्ता[3] सुबह चारशम्बा[4] नहुम मार्च १८५२ ई०। बाद आशमीद ने तब्रीद।[5]

१६

(१५ मई, १८५२ ई०)

भाई साहब,

आज हफ़्ते का दिन, पन्द्रहवीं मई की सुबह का वक़्त है। मैंने दो ख़त तुमको लिखे हैं। एक ख़त तो अभी डाक में रवाना किया है। और एक ख़त हकीम इलाहीबख़्श साहब को देता हूँ। ये साहब शुरफ़ा ए सिकन्दरा[6] में से हैं। और दोस्त और शागिर्द उसके हैं कि जिसका मैं, बग़ैर देखे, आशिक़ हूँ। याने जनाब साहबे आलम साहब मारहरवी सल्लमल्लाहो ताला[7]—ये उनका ख़त मेरे नाम लाये थे। कई महीने यहाँ रहे और हकीम इमामुद्दीन ख़ाँ साहब से 'मुफ़र्रहुल क़ुलूब' पढ़ी। बहुत ख़ूब आदमी और मुहज़्ज़ब[8] हैं। हुस्नेतबा[9] भी रखते हैं। यहाँ उनकी नौकरी का कहीं उस्लूब[10] न हुआ और ज़माने ने मसाअदत[11] न की। अब ये अपने घर जाते हैं। कौल में पहुँच कर आपसे मिलेंगे। उनकी तौक़ीर[12] कीजिएगा। और उनको अपना दोस्ते देरीना[13] तसव्वुर फ़रमाइएगा। और इसका ख़याल आपको रहे कि उस जिले में ठेकेदार

---

१. नवागन्तुक अतिथि। २. दयालु। ३. लिखित। ४. बुधवार। ५. तेल पीने के पश्चात्। ६. सिकन्दरा के प्रतिष्ठित व्यक्ति। ७. महान् ईश्वर तुम्हारा कल्याण करे। ८. सुसंस्कृत। ९. सुरुचि। १०. ढंग। ११. सहायता। १२. आवभगत। १३. चिरमित्र।

और माल गुज़ार बहुत हैं। अगर किसूकी ख़ाहिश तबीब[1] की हो तो उनको इनसे बख़ूबी मिलवा दीजिएगा और इस बाब में कुछ ऐसी जल्दी नहीं है। तुमको ख़याल रहे।

ज्वाला सिंघ कल आया। उसके लाये हुए ख़त का जवाब आज डाक में रवाना हो गया। मिर्ज़ा हसनअली बेग आज़िमे कौल हैं। इन्शा अल्लाह ताला पाख़ल[2] का मुरब्बा या अचार जो हाथ आएगा, वो उनके हात भेज दूंगा। अगर ख़ुदा ने चाहा तो अजज़ाए तारीख़[3] भी उन्हीं को दे दूंगा। औरों को दुआ ख़त में क्या लिखूं? हकीम जी ख़ुद ज़बानी सबसे कह देंगे।

वस्सलाम अज़ असदुल्लाह्, रक़मज़दा[4] सुबह शम्बा, १५ मई १८५२ ई०।

१७

(२१ मई, १८५२ ई०)

भाई साहब,

आगे इससे दो ख़त तुमको भेज चुका हूँ। एक बतरीक़ए डाक और एक हकीम इलाहीबख़्श के हाथ। कल मैं क़िले से आता था। राह में मिर्ज़ा हसनअली बेग मिले। उन्होंने कहा—मैं कल जाऊँगा याने आज। ये तुमको मालूम रहे कि कल पंजशम्बा[5] था। २९ रज्जब और २० मई की। आज जुमा[6] है। ग़र्ज़ कल रात को पाखल का मुरब्बा मर्तबान में रख कर और उसको मोमीजामा में बन्द किया। और उस पर अपनी मुहर कर कर कल्लू के हाथ मिर्ज़ा के पास भिजवा दिया। कल्लू उनको मुरब्बा देकर रात को अपने घर रहा। जब सुबह हुई और कल्लू आया तो उसने बयान किया कि मिर्ज़ा हसनअली बेग ने बन्दगी कही है और कहा है कि मैं कल न जाऊँगा। परसों जाऊँगा।

---

१. चिकित्सक। २. गूलर। ३. इतिहास के अंश। ४. लिखित। ५. गुरुवार। ६. शुक्रवार।

और मर्तबान को अच्छी तरह एहतियात से ले जाऊँगा। हज़रत को मालूम रहे कि हकीम अहसनुल्लाखाँ की इनायत से मुरब्बा हाथ आ गया है वर्ना अक्सर सायलों[1] को सरकारे शाही से अचार मिलता है। मुरब्बा नहीं हाथ आता। अब इख्तियार मिर्ज़ा साहब का है कि जब चाहें और जिस तरह चाहें उसको ले जाएँ। बन्दा बरी उज्जिम्मा[2] है।

अजज़ा ए तवारीख़ तैमूरिया[3] लिखे जाते हैं और क़ायदा ये है कि जो कोई जुज़्व लिखा जाता है, वो मेरे पास आता है। मैं उसके हाशिये पर मानी उल् लुगात[4] लिखता जाता हूँ। चुनाँचे तीन जुज़्व लिख चुका हूँ। याने तीन जुज़्व लिखे हुए मेरे पास आ चुके हैं और मैं उनका हाशिया लिख चुका हूँ। जब सब आ चुके तो बसबीले पार्सल इरसाल[5] करूँगा। छोटी तक़्ती[6] ख़ुशआयन्दा[7] पर ग्यारह सतर के मिस्तर से लिखे जाते हैं। यक़ीन है कि ग्यारह, बारह जुज़्व होंगे। गोया दो सुल्स[8] तहरीर बाक़ी है। ख़ुदा करे जल्द तमाम हो ताकि मेरी शर्मसारी रफ़ा हो।

ज्वालासिंघ दो बार मेरे पास आया। मैंने रुक्क़ा लिख कर एक ऐसे शख्स के पास भेज दिया कि वो मरजा[9] है उस महकमे के अहले मुक़दमे का। अगर हाजत[10] होगी और ज्वालासिंघ ख़ाहिश करेगा तो मैं उसको मौलवी साहब के भी सामने कर दूँगा। तुम मुझको हकीम इलाहीबख्श का हाल लिखो कि वो तुमसे मिले और सिकन्दरा रवाना हो गये।

तफ़्ता का हाल लिखो कि यहीं हैं या अकबराबाद को गये। मेरा दिल गवाही देता है कि आज शाम तक तुम्हारा ख़त मेरे पास आ जाये। अक्सर

---

१. अभ्यर्थी। २. उत्तरदायित्व से मुक्त। ३. तैमूरवंश के इतिहास के अध्याय। ४. शब्दार्थ। ५. प्रेरणा। ६. पुस्तक की लम्बाई-चौड़ाई। ७. रुचिकर। ८. दो तिहाई। ९. जिससे पास रुजू होते हैं। १०. आवश्यकता।

ऐसा हुआ है कि सुबह को मैंने खत डाक में भेजा है और शाम को हरकारे ने तुम्हारा खत आकर दिया है। यहाँ अजब इत्तिफ़ाक़ है कि जेठ का महीना है और रोज मेंह बरसता है और जाड़ा पड़ता है। लोग सब[1] को रज़ाइयाँ ओढ़ते हैं और मैं लिहाफ़। नौ रोज़ से यही सूरत देखता हूँ कि दिन-रात मेंह बरसता है और सर्दी की शिद्दत है। दो दिन गरमी पड़ी और तीसरे दिन मेंह आया और दो-चार दिन बारिश रही। तुम भी लिखो कि तुम्हारे शहर में क्या आलम है।

सुना होगा तुमने मोमिनखाँ मर गये। आज उनको मरे हुए दसवाँ दिन है। देखो भाई हमारे बच्चे मरे जाते हैं। हमारे हम उम्र[2] मरे जाते हैं। क़ाफ़िला चला जाता है और हम पा दर रिकाब[3] बैठे हैं। मोमिनखाँ मेरा हम अस्र[4] था और यार भी था। बयालीस-तेतालीस बरस हुए, याने चौदह-पन्द्रह बरस की मेरी और उस मरहूम[5] की उम्र थी कि मुझमें-उसमें रब्त पैदा हुआ। इस अर्से में कभी किसी तरह का रंज व मलाल दरमियान नहीं आया। हज़रत चालीस बरस का दुश्मन भी नहीं पैदा होता। दोस्त तो कहाँ हाथ आता है। ये शख़्स भी अपनी वज़ा का अच्छा कहने वाला था। तबीयत उसकी मानी आफ़रीं[6] थी। आज अपने दरियाफ़्त किया होगा कि जी चाहा तुमसे बातें करने को, ये मैं बातें कर रहा हूँ। खत नहीं लिखता, मगर अफ़सोस कि इस गुफ़्तगू में वो लुत्फ़ नहीं जो मुकालिम ए ज़बानी[7] में होता है। याने मैं ही बक रहा हूँ। तुम कुछ नहीं कहते। वो बात कहाँ कि मेरी बात का तुम जवाब देते जाओ और तुम्हारी बात का मैं जवाब देते जाऊँ। क्या करूँ, अजब तरह से ज़िन्दगी बसर कर रहा हूँ। मेरे हालात सरासर मेरे खिलाफ़े तबीयत[8] हैं। मैं तो ये चाहता हूँ कि चलता-फिरता रहूँ। महीना भर वहाँ, और दो महीने वहाँ, और सूरत ये के गोया मुश्कें बँधा हुआ पड़ा हूँ, कि हरगिज़

---

१. रात। २. समवयस्क। ३. पाँव घोड़े की रकाब में। ४. समकालीन। ५. स्वर्गीय। ६. अर्थोत्पन्न करने वाली। ७. वार्तालाप। ८. स्वभाव विरुद्ध।

जुंबिश नहीं कर सकता। ला हौल वला क़ुव्वता इल्लाबिल्लाह्[1]। काग़ज तमाम हो गया और हनोज़ बातें बहुत बाक़ी हैं। इस ख़त में मैंने अपने बच्चों को भी दुआ नहीं लिखी। भाई, तुम कह देना। अपने ख़त में उनकी ख़ैर व आफ़ियत लिखना।

२१ मई, १८५२ ई०, बरोज़ जुमा।

१८

(मई या जून, १८५२ ई०)

भाई साहब,

आपका ख़त आया। पाखल के मुरब्बे का पहुँचना मालूम हुआ। यारब, ज़किया और मेरे अब्दुस्सलाम की आँखें अच्छी हो गई हों। बारह जुज़्व अजज़ाए तवारीख़ के पहुँचते हैं। इनकी जिल्द बँधवा लेना, वर्ना औराक़[2] तबाह हो जाएँगे। वो चार रुपये जो आपने शेख़ वस्शुद्दीन के हाथ भेजे थे, वो मैंने नवाब साहब को याने वो जो किताबत[3] करते हैं, दे दिये थे। एक नुस्ख़ा उन्होंने लिखा, वो मैंने उनसे लेकर एक और जगह भेज दिया, फिर उनको कसरते कार[4] से फ़ुर्सत इस तहरीर की न हुई। अब उन्होंने अज़राहे मेहरबानी ये लिख कर मुझको इनायत किये। आपने एक ख़त में मुझको लिखा था कि उजरते कातिब[5] में जो कुछ चाहे हो वो मुझसे मँगवा भेजो। वल्लाह, मैंने अपने पास से कुछ नहीं दिया। सिर्फ़ इसी चार रुपये में काग़ज और मुज़्दएकातिब[6] है। आप ख़ातिर जमा रखिए। महसूल डाक दीजिए और

---

१. ईश्वर के अतिरिक्त किसी अन्य का भय नहीं। २. पृष्ठ (ब. व.)। ३. लिखने का काम। ४. कार्य-आधिक्य। ५. लिखने वाले का पारिश्रमिक। ६. लिखने वाले की मजदूरी।

किताब ले लीजिए, हाँ भाई, शेख़ वज़ीरुद्दीन बहुत तबाह और ख़राब है। इसका दादा मोअ़ज़्ज़िज़ आदमी था और मेरा बड़ा दोस्त था। ये तुम्हारा भी नियाज़मन्द है, हत्तुलवसा[1] ख़याल दौड़ाओ और गुंजाइश निकालो। अगर कहीं नौकरी क़रार पा जाये तो गोया मुझ पर एहसान होगा।

ज्वालासिंघ कल तीन बार मेरे पास आया है। कुछ हरजागो[2] आदमी है। मैंने उसे रुक़्क़ा लेकर एक ऐसे शख़्स के पास भेज दिया था, जो हाकिम की ज़बान और हाकिम के जिगर का टुकड़ा है। मेरा जो काम था मैंने किया। अगर वो कहेगा तो हाकिम से भी मिला दूँगा। कल तफ़्ता का ख़त आगरा से आया, बहुत दिन के बाद। अच्छी तरह हैं। अर्ज़ी शेख़ की पहुँचती है। इसका जवाब मुनासिब लिखिए और कोशिश कीजिए।

भाई, ख़ुदा के वास्ते ग़ज़ल की दाद देना। अगर रेख़्ता[3] ये है तो मीर[4] व मिर्ज़ा[5] क्या कहते थे। अगर वो रेख़्ता था तो फिर ये क्या है ? सूरत इसकी ये है कि एक साहब शाहज़ादागाने तैमूरिया में से लखनऊ से ये ज़मीन[6] लाये। हुज़ूर ने ख़ुद भी ग़ज़ल कही और मुझे भी हुक्म दिया। सो मैं हुक्म बजा लाया और ग़ज़ल लिखी। पहले तुम एक बात मेरी सुन लो, फिर ग़ज़ल पढ़ो। शेख़ वज़ीरुद्दीन बीमार होकर डाक से कौल को रवाना हुआ है। मैं अगरचे ख़िदमतगुज़ारे ख़ल्क़[7] पर उनकी कुछ ख़िदमत ब्रजा न ला सका और उनसे शर्मिन्दा रहा। तुम उनकी दिलजोई करना। आदमी उनके घर भिजवाना और उनकी

---

१. यथासम्भव। २. बकवास करने वाला। ३. हिन्दी कविता। ४. 'मीर' मीर मुहम्मद तक़ी बिन अब्दुल्ला, उर्दू के महाकवि। ५. मिर्ज़ा मज़हर जाने जाना, उर्दू के महाकवि, आचार्य, आध्यात्मिक महापुरुष। ६. गज़ल का अन्त्यानुप्रास, अन्त्यानुप्रास से पहले का अनुप्रास और छन्द। ७. संसार का सेवक।

ख़बर पूछना और भाई अगर हो सके तो किसू के अपने इलाक़े मुख़्तारकारी, सिरश्ते की अरायज़[1], नक़लनवीसी कुछ न कुछ उनके वास्ते कर देना। ज़रूर ज़रूर—

लो अब ग़ज़ल पढ़ो—

सब कहाँ कुछ लाल ओ गुल में नुमायाँ हो गईं
ख़ाक में क्या सूरतें होंगी कि पिन्हाँ[2] हो गईं
याद थीं हमको भी रंगारंगे बज़्म आराइयाँ[3]
लेकिन अब नक़्शो निगारे[4] ताक़े निसियाँ[5] हो गईं
थीं बनातुन्नाश[6] गर्दूं[7] दिन को पर्दे में निहाँ[7]
शब को उनके जी में क्या आई कि उर्यां[8] हो गईं
क़ैद में याक़ूब ने ली गो न यूसुफ़ की ख़बर[9]
लेकिन आँखें रोज़ने दीवार[10] ज़िन्दाँ[11] हो गईं
सब रक़ीबों[12] से हूँ नाख़ुश पर ज़नाने मिस्र से
है ज़ुलेख़ा[13] ख़ुश के मह्‌वे[14] माहे कनआँ[15] हो गईं
जू ए ख़ूँ[16] आँखों से बहने दो कि है शामे फ़िराक़[17]
मैं ये समझूँगा के शम ए दोम्फ़ीरोज़ाँ[18] हो गईं

---

१. प्रार्थना-पत्र (ब. व.)। २. गुप्त। ३. गोष्ठी की सजावट। ४. चित्रकारी, अलंकरण। ५. भूल की ताक। ६. सप्तर्षि (तारे)। ७. गुप्त। ८. नग्न। ९. याक़ूब के बारह पुत्र थे। इनमें से एक का नाम यूसुफ़ था। बड़े भाइयों ने यूसुफ़ को कुएँ में लटका कर पिता को सूचना दी थी कि यूसुफ़ की मृत्यु हो गई। रोते-रोते याक़ूब की आँखें चली गई थीं। १०. दीवार का छिद्र। ११. कारागार। १२. प्रति प्रेमी। १३. मिश्र की रानी, यूसुफ़ की प्रेमिका, आगे चलकर यूसुफ़ ने उससे विवाह किया। १४. तल्लीन। १५. यूसुफ़। १६. ख़ून की नदी। १७. वियोग की रात। १८. अधिक प्रकाशमान।

इन परीज़ादों से लेंगे ख़ुल्द[1] में हम इन्तिक़ाम[2]
क़ुदरते हक़[3] से यही हूरें अगर वाँ हो गईं
नींद उसकी है नसीब उसके हैं रातें उसकी हैं
तेरी ज़ुल्फें जिसके बाज़ू पर परीशाँ हो गईं
मैं चमन में क्या गया गोया दबिस्ताँ[4] खुल गया
बुलबुलें सुनकर मेरे नाले[5] ग़ज़लख्वाँ[6] हो गईं
वो निगाहें क्यों हुई जाती हैं या रब दिल के पार
जो मेरी कोताहि ए क़िस्मत[7] से मिज़्गाँ[8] हो गईं
बस के रोका मैंनें और सीने में उभरें पै ब पै[9]
मेरी आहें बख़िय ए चाके गिरीबाँ[10] हो गईं
वाँ गया भी मैं तो उनकी गालियों का क्या जवाब
याद थीं जितनी दुआएँ सर्फ़े दरबाँ[11] हो गईं
हम मुवहि्हद[12] हैं हमारा केश[13] है तर्के रुसूम[14]
मिल्लतें[15] जब मिट गईं अजज़ाए ईमाँ हो गईं
जाँ फ़िज़ा[16] है बादा[17] जिसके हाथ में जाम[18] आ गया
सब लकीरें हाथ की गोया रगेजाँ[19]
रंग से ख़ूगर[20] हुआ इन्साँ तो मिट जाता है रंज
मुश्किलें मुझ पर पड़ीं इतनी कि आसाँ हो गईं

---

१. स्वर्ग। २. बदला। ३. ईश्वर का सामर्थ्य। ४. पाठशाला। ५. रुदन। ६. गज़ल गायक। ७. भाग्य की अनुदारता। ८. पलकें। ९. पग-पग। १०. फटे गिरीबाँ (कुर्ते का गला) की बखिया। ११. द्वारपाल का ख़र्च। १२. एकेश्वरवादी, एक सम्प्रदाय जो केवल ईश्वर को मानता है। १३. धर्म। १४. रुढ़ियों का निवारण। १५. जाति। १६. आयुवर्धक। १७. शराब। १८. मधुप्याला। १९. महाध्मनी। २०. अभ्यस्त।

यूँ ही गर रोता रहा 'ग़ालिब' तो ऐ अहले जहाँ[1]
देखना इन बस्तियों को तुम के वीराँ[2] हो गईं

१६

(१६ नवम्बर, १८५२ ई०)

भाई साहब,

आपके दो ख़त आये। पहले ख़त में आपने एक बैत के माने पूछे हैं। वो सुनिये—

तू गोई, मगर मेहर ज़ेरे ज़मीं
फ़ीरोज़ाँ फ़ोह बुवद पुरतेनिगीं[3]

ये शेर शबे मेराज[4] तौसीफ़[5] में है कि वो शब ऐसी रौशन थी कि बसबबे रोशनी के ज़मीन ऐसी चमकती थी कि जैसे डाँक[6] से नगीना चमक जाता है। आफ़ताब रात को तहतुल अर्ज़[7] होता है। और डाँक भी नगीने के तले लगाते हैं और नगीना बक़द्रे डाँक की हक़ीक़त के चमकता है। पस, जिस नगीं के नीचे आफ़ताब डाँक होगा, वो नगीं कितना दरख़्शाँ[8] होगा। फ़ोह फ़ारसी लुग़त[9] है बमानी डाँक के।

दूसरे ख़त का जवाब क्या लिखूँ? तुमसे शर्मिन्दा हूँ, पंडित ज्वालानाथ साहब से शर्मसार। मैं तवारीख़े तैमूरिया लिखता हूँ तो सिर्फ़ हालात व

---

१. संसार के लोगों। २. उजाड़। ३. तू कहता है, किन्तु सूर्य जब पृथ्वी के नीचे जाता है, तो उसकी चमक बढ़ जाती है। जैसे नगीने के नीचे डाँक लगाने से वह और चमकता है। ४. जिस रात हज़रत मुहम्मद ने ईश्वर का साक्षात्कार किया। ५. प्रशंसा। ६. चमकदार पन्नी। ७. पृथ्वी के नीचे। ८. प्रकाशमान। ९. शब्द।

वाक़ेआत[1] लिखता हूँ। मुल्क की जमाबन्दी और अज़ला[2] व मुज़ाफ़ात[3] की तहक़ीक़ात से मुझे काम नहीं। और अलीगढ़ कौल का सूबा नहीं, सरकार हो तो हो। और इस तरह का मामूरा[4] नहीं कि कभी किसी अहद में बादशाह का तख़्तगाह[5] रहा हो। जैसे बदायूं और जौनपूर और कड़ा मानिकपूर, कि,ये भी मानिन्द कौल के छोटी-छोटी बस्तियां हैं और तख़्तगाह रही हैं। कौल में कभी ऐसा इत्तिफ़ाक़ नहीं हुआ।

दफ़्तरे शाही का हाल क्या लिखूं? हज़रत फ़िरदौस मंज़िल शाहआलम के अहद का काग़ज़ सो भी वो कि जनरल लार्ड लेक साहब के अरायज़[6] और बादशाह के शुक़्क़ों[7] की नक़ल वो तो हैं और बाक़ी तमाम दफ़्तर मुआफ़िक़ मसल मशहूर के गाव ख़ुर्द हो गया।[8] जो किताबें कि हिन्दुस्तान में मुतारिफ़[9] हैं, वो भी तो नहीं। मुल्क के बँदोबस्त और परगनाबन्दी और जमाबन्दी का क्या जिक्र? जो कुछ पंडित साहब ने अज़ रू ए तर्जुमा आईने अकबरी[10] लिखा है उससे ज़्यादा कहीं से हात न आएगा। अगर रुक़्के में ये लिखा होता कि ये अज़ रू ए तर्जुमा आईने अकबरी है, तो मैं कहीं से आईने अकबरी बहम पहुँचा कर उसमें देखता। अब मैं कहाँ से दरियाफ़्त करूँ? पंडित साहब को मेरा सलाम कहिए और ये ख़त उनको पढ़ा दीजिये। मैं फ़न्ने तारीख़ व मसाहत[11] व सियाक़[12] से इतना बेगाना हूँ कि इन फ़नों को समझ भी नहीं सकता। कारपर्दाज़ाने दफ़्तरे शाही[13] ख़ुलासए हालात अज़ रू ए कुतबे उर्दू में लिख कर मेरे पास भेज देते हैं। मैं उसको फ़ारसी कर कर हवाले करता

१. घटनाएँ। २. जिले। ३. नगर के आसपास का प्रदेश। ४. आबाद। ५. राजधानी। ६. आवेदन-पत्र (ब० व०)। ७. आदेश-पत्र। ८. गाय खा गई, नष्ट हो गया। ९. परिचित। १०. 'आईने अकबरी' के अनुवाद के अनुसार। ११. ज्यामिति। १२. गणित। १३. शाही कार्यालय के व्यवस्थापक।

हूँ। मेरे हाँ एक किताब भी नहीं। मैं इसी क़दर हूँ कि नज़्म व नस्र[1] अपनी इस्तेदाद[2] के लिख सकता हूँ। मुअर्रिख़[3] नहीं हूँ।

मा क़िस्सए सिकन्दरो दारा न ख़ान्दएम
अज़ मा बजुज़ हिकायते मेहरो वफ़ा मपुर्स[4]

भाई साहब, तुम्हारी जान की क़सम। मैं इस फ़न से इतना बेख़बर हूँ कि ये भी अच्छी तरह नहीं समझा कि पंडित साहब ने क्या कुछ लिख लिया है और वो क्या है, जिसकी उनको ख़ाहिश है। मेरे भाइयों में नवाब ज़ियाउद्दीन अहमदख़ाँ ख़ल्फ़[5] नवाब अहमदबख़्शख़ाँ मरहूम[6] के वो फ़ने नज़्म व नस्र में मेरे शागिर्द हैं। अब जो उनकी तबीअत फ़ने तारीख़ की तरफ़ आई तो उसमें यगाना[7] रोजगार और बड़े दाना व होशियार हो गये हैं। मैंने उनसे चाहा था कि कुछ दरियाफ़्त करके लिख भेजूँ। सो उन्होंने कहा कि 'आइने अकबरी' के सिवा और किसी किताब में कुछ पता न पाया जायगा। हाँलाकि कोई किताब उस बाब की ऐंसी नहीं कि उनकी नज़र से न गुज़री हो और ख़ुलासा इसका हाफ़िज़े[8] में मौजूद न हो। मेरा वो हाल जिस पर मुझको भरोसा, उसका ये बयान। बादशाह के कुतुबख़ानों की वो सूरत। बन्दगी और शर्मिन्दगी।

निगाश्ता व ख़ाँ दाश्ता[9] जुमा, १९ नवम्बर, १८५२ ई०।

अज़—असदुल्लाह.

---

१. कविता और गद्य। २. योग्यता। ३. इतिहास लेखक। ४. हमने सिकन्दर और दारा की कहानी नहीं पढ़ी है। हमसे प्रेम-कथा के अतिरिक्त कुछ न पूछो। ५. पुत्र, उत्तराधिकारी। ६. स्वर्गीय। ७. अद्वितीय। ८. स्मरण-शक्ति। ९. प्रेषित।

२०

(८ जनवरी, १८५३ ई०)

भाई,

मुझको तुमसे बड़ा ताज्जुब है कि उस बैत के माने में तुमको ताम्मुल[१] रहा। इसमें वो इस्तिफ़्हाम[२] आ पड़े हैं कि वो बतरीक़े तान व तारीज़[३] माशूक़ से कहे गये हैं।

मौत की राह न देखूँ, क्यों न देखूँ ? मैं तो देखूँ ही गा, कि, बिन आये न रहे। क्योंकि मौत की शान में से ये बात है कि एक दिन आये ही गी। इतिन्ज़ार जाया न जाएगा। तुमको चाहूँ ? क्या ख़ूब ? क्यों चाहूँ कि न आओ तो बुलाये न बने। यानें अगर तुम आपसे आये तो आये और अगर न आये तो फिर क्या मजाल कि कोई तुमको बुला सके। गोया ये आजिज़ माशूक़ से कहता है कि अब मैं तुमको छोड़ कर अपनी मौत का आशिक़ हुआ हूँ। इसमें ये ख़ूबी है कि बिन बुलाये, बग़ैर आये नहीं रहती। तुमको क्यों चाहूँ कि अगर न आओ तो तुमको बुला न सकूँ। बात ये है कि पढ़ने में तुमको चाहूँ, कि, न आओ–ये जुम्ला मिला हुआ समझ में आता है तो आदमी हैरान होता है। तुमको चाहूँ, अलग है कि न आओ तो बुलाये न बने–ये जुम्ला अलग है, तुमने ग़ौर न की वर्ना ख़ुद बख़ुद कैफ़ियत इस तारीज़ व इस्तिफ़्हाम[४] की हासिल हो जाती।

हाँ साहब, अजमेर से ख़त आ गया। पार्सल पहुँच गया। तरद्दुद रफ़ा हुआ। अब जो कुछ होना है वो हो रहेगा। महले तशवीश व तरद्दुद[५] नहीं। हकीम नसीमुल्लाह् साहब की रवानगी में पाँच-छः रोज़ और हैं। अगर

---

१. सन्देह। २. जिज्ञासा। ३. उलहना। ४. आक्षेप और जिज्ञासा। ५. सन्देह और आशंका का स्थान।

हाथ आ गया तो पाखल का मुरब्बा, अचार, जो कुछ होगा उनके हाथ भेज दूँगा।

मुंशी अब्दुललतीफ़ साहब को दुआ पहुँचे। नसीरुद्दीन को दुआ पहुँचे। लो हमारे शेख़ इकरामुद्दीन और तुम्हारे अब्दुस्सलाम को दुआ पहुँचे। लो साहब, अब कोई मुझसे गिला नहीं कर सकता। मैं सब के बाद अपनी प्यारी भतीजी ज़किया बेगम को दुआ लिखता हूँ। हक़ताला उसको जीता रखे और मुझको उसकी सूरत दिखलावे, वर्ना अब आगे बढ़ कर जब वो बीबी साहबज़ादी बन जाएगी तो हमारे सामने काहे को आएगी? हमसे छुपेगी। किस वास्ते कि मैं सचमुच का चचा तो हूँ नहीं, ज़बर्दस्ती अपनी तरफ़ से चचा बन गया हूँ। तफ़्ता को मेरा सलाम कह देना और कह देना कि तुमको अब कोई नई बात नहीं है जो लिखूँ। वस्सलाम।

मुर्हरिरा शम्बा हश्तुम जनवरी १८५३ ई०।

अज़—असदुल्लाह.

२१

(फरवरी-मार्च, १८५३ ई०)

भाई साहब,

कई दिन हुए कि आपका उतूफ़तनामा[1] पहुँचा। जवाब क्या लिखता? हकीम नसीमुल्लाखाँ रवाना हो गये थे। पाखल के मुरब्बे का हाल उनसे ज़बानी कह दिया था। सुन लिया होगा? हयातबख़्श बाग़ ख़ासए ख़ुसरवी[2] में एक दरख़्त है पाखल का। मीज़ान[3] व सुम्बुला[4] में वो बार लाता है। इसका अचार-मुरब्बा बन जाता है। अबके वो नख़ल[5] बार न लाया[6]। नाचार अबके मुरब्बा-अचार न बनाया। तुम्हारा कमतरीन भाई मजबूर है। बन्दा परवर तफ़्ता से मुलाक़ात होती रहती होगी। मुझको लिखिए कि अब वो कैसे हैं और

---

१. कृपा-पत्र। २. बादशाह का निजी। ३. तुला (राशि)। ४. कन्या (राशि)। ५. पेड़। ६. न फलना।

किस फ़िक्र में हैं। अजमेर जाएँगे या नहीं? मुंशी अब्दुललतीफ़ साहब को दुआ पहुँचे। ज़किया बेगम को दुआ पहुँचे। और ये मालूम हो कि तुमने लिखा था वो मुझको मालूम हुआ और मेरी खातिर जमा हुई। परवरदिगार तुमको जीता रखे और इफ़्फ़त[1] व इस्मत[2] व हुर्मत[3] और माल वा दौलत अता करे। नसीरुद्दीन और अब्दुस्सलाम को दुआ पहुँचे।

२२

(१७ मार्च, १८५३ ई०)

लो भाई, अब तो ज़किया हमारे-तुम्हारे बराबर हो गई। आख़िर हम तुम भी तो इस उम्र में सूर ए मुबारिका अलम नश्रह[4] पढ़ते होंगे। इन्शा अल्लाह् ताला अम्मा यतासालून[5] का सीपारा[6] तमाम न होगा कि मैं आनकर उनका सबक़ सुनूँगा। वल्लाहुअला कुल्ले शईन क़दीर।[7]

मुसहिल मैंने इस वास्ते लिया था कि मेरे आज़ा[8] में दर्द रहता था। और फ़ुज़ूल मेरे मेदे में जमा हो गये थे, सो इनायते एज़्दी[9] से मक़सूद[10] हासिल हो गया। अब मैं सबुकसार[11] और तनदुरुस्त हूँ। इमामुद्दीनख़ाँ से मेरा ऐतक़ाद, उनकी मुझ पर इनायत बदस्तूर, लेकिन अहसनुल्लाख़ाँ साहब से रब्त बढ़ गया और अक्सर मुलाक़ात होती रहती है और ये भी पाय ए इल्म व अमल[12] में किसी से कम नहीं हैं; इस वास्ते नहीं कि राय के मुताबिक़ तन्क़िया[13] किया गया।

---

१. पवित्रता। २. निष्कलंकता। ३. मर्यादा। ४. क़ुरान का एक आरम्भिक सूरा (अध्याय)। ५. अम्मायतासालून नामक कुरान का एक खंड। ६. कुरान का एक खंड। ७. ईश्वर प्रत्येक पदार्थ पर अपनी सामर्थ्य रखता है। ८. अंग। ९. ईश्वरीय कृपा। १०. अभीष्ट। ११. हल्का, मुक्त १२. ज्ञान और योग्यता। १३. विरेचन, आँत की सफ़ाई।

हकीम नसीमुल्लाह साहब तुमसे मिलें या मुंशी अब्दुललतीफ़ से मिलें और कुछ न कहें, मुझको इससे कुछ काम नहीं। मुद्दआ ये कि पाखल के मुरब्बे का पयाम उनकी तह् वील[1] है। वो आपसे कह दें। हरचन्द वो क्या है जो कहा चाहिए। मगर मुझ पर से एहतिमाले[2] क़ुसूर जाता रहता है और वो पयाम ये है कि पाखल का हयातबख़्श बाग़ में कुल एक दरख़्त है और वो अक्तूबर-नवम्बर में बार लाता है। उसके असमार[3] का अचार-मुरब्बा बना लेते हैं। अब के साल वो दरख़्त कमबख़्त बारवर[4] न हुआ। इस राह से मुरब्बा हाथ न आया।

जैपूर से हनोज़ कोई अम्रे फ़ैसल[5] नहीं मालूम हुआ। किताब और अर्ज़ी राजा साहब के पास भेजी है और वो खुश हुए हैं। और दीवान को अपनी नज़र में रखते हैं, और पहुँचने वाले से अर्ज़ी के जवाब का वादा है। नये एजेंट के आने का हंगामा था। वो भी ख़त्म हुआ। अब देखिए क्या होता है। दिल बुझ गया है, जो इब्तिदा में रंग उम्मीद का था वो अब नहीं है।

नीम की पत्तियाँ तुम पीते हो। ख़ूब करते हो—ये के इसको खाकर एक बेसन की टिकिया घी डाल कर खाते हो। ये तरकीब आमियाना[6] है। हाँ, ये मुसल्लम, कि, चने की रोटी इन अमराज़[7] में अगर ग़िज़ा मुन्हसिर[8] इसी पर की जाए और एक मुद्दत तक ये तरीक़ निभ जाए तो बहुत नाफ़े[9] है। मैं एक बात तुम्हें और बताता हूँ। तुम नीम की मस्ती[10] पिया करो, याने बाज़ा नीम रिसता है और उसमें से एक रतूबत[11] निकल कर जम जाती है। इसे नीम की मस्ती कहते हैं। सबील[12] इसकी यही है कि वो पैसे भर से शुरू करो और पाँच माशा बढ़ाते जाओ। जब पाँच तोला पर आ जाओ तो परहेज़ बदस्तूर। बेश्तर चने की रोटी खाया

---

१. अधिकृत, हस्तान्तरित। २. सन्देह। ३. फल (ब. व.)। ४. फलवाला। ५. निर्णय। ६. सामान्य, साधारण जनता की। ७. रोग (ब. व.)। ८. निर्भर। ९. लाभकर। १०. नीम का मद जल। ११. द्रव। १२. उपाय।

करो। दवा पीकर टिकिया खानी ज़ायद है। चने की रोटी के साथ वक़्तग़िज़ा[1] के घी बक़दरे बर्दाश्ते तबा[2] खाओ। घिया, तोरी, ख़िरफ़े का साग, वथवे का साग, खीरा, ककड़ी, जिसका क़लिया[3] मोरग़ूब[4] हो खाओ। देखो तो ये तरकीब मुआफ़िक़ आती है या नहीं। बमुंशी अब्दुललतीफ़ दुआ व रसद। नसीरुद्दीन व ज़किया बेगम व अब्दुस्सलाम व कुलसूम बेगम दुआ ख़ानन्द[5]।

पंजशम्बा,[6] १७ मार्च १८५३ ई०।

—अज़-असदुल्लाह

२३

(४ अप्रैल, १८५३ ई०)

हज़रत,

अजब तमाशा है। मुंशी हरगोबिन्दसिंघ का इज़हार तो ये है के मुंशी साहब तो मेरे सामने हातरस से हो आये और क़रीना[7] वाँ इस पर है कि तुम हनोज़ हातरस हो और कौल नहीं आये। क़रीना ये कि ख़त आपने मुझको नहीं लिखा। क़सीदे के लिफ़ाफ़े की रसीद नहीं लिखी। क्यों साहब मैंने क्या तक़्सीर[8] की है? मेरी क्या ख़ता है? मुझको आप क्यों भूल गये? मैं भी तुमको ख़त न लिखता लेकिन क्या करूँ? मुंशी हरगोबिन्दसिंघ ने बेगम का पयाम भेजा। नाचार उसका जवाब लिखना पड़ा। इस ज़िम्न में तुमको भी कई सतरें लिखी हैं। वो कहते थे, कि बेगम ने कहा है, कि, चचा मैं क़ुरान पढ़ती हूँ। पस, मेरी तरफ़ से दुआ कहा चाहिए और कहा चाहिए कि

---

१. भोजन करते समय। २. जितना सहन हो सके। ३. भूना मांस। ४. रुचिकर। ५. आशीर्वाद माँगना। ६. गुरुवार। ७. अनुमान। ८. अपराध।

बुआ तुम बहुत भला करती हो कि क़ुरान पढ़ा करती हो। परवरदिगार तुमको उम्र, दौलत व इस्मत[1] और तनदुरुस्ती और राहत दे। मुंशी अब्दुललतीफ़ साहब को दुआ और नसीरुद्दीन व अब्दुस्सलाम और कुलसूम को दुआ पहुँचे।

हाँ भाई साहब, अब मैं जुदा ख़त क्या लिखूँ, ज़रूर ज़रूर याद कर कर मुंशी हरगोपाल साहब को मेरी दुआ कहो और ये कहो के भाई वो तो मैं तुमको इत्तिला दे चुका हूँ कि अहाली ए राज जैपूर[2] ने हरदेवसिंघ से बाद होली रुख़सत करने का वादा किया है और जानी साहब ने उसके वास्ते साँडनी भेजनी चाही है। अगर वादा वफ़ा[3] हुआ होता और हरदेवसिंघ अजमेर पहुँचा होता तो अलबत्ता राजा का शुक़्क़ा[4] और रावल का ख़त और वो मेरे भेजे हुए लिफ़ाफ़े बाबू साहब मुझको भेज देते और उनवाने-चिगूनगी ए रुख़्सत[5] से इत्तिला देते। नहीं मालूम कि रुख़सत अमल में आई या न आई। अगर आई तो जानीजी शायद अजमेर में नहीं हैं। भरतपूर गये हुए हैं। अब मुझे वो तशवीश लाहक है। एक तो ये जिसका ज़िक्र किया, बल्कि सच पूछो ये कुछ नहीं एक बाग़ीचा है। असल तशवीश बाबू साहब की तरफ़ से है। तुम अगर वहाँ नहीं हो, मगर, बनिस्बत मेरे, तुमको इत्तिला होती रहती है। क़िस्सा मुख़्तसर, जो कुछ तुमको मालूम हुआ है, फ़ौरन मुझको लिख भेजो। बल्कि मैं उस वक़्त तक मुंतज़िर[6] हूँ कि शायद कोई ख़त तुम्हारा आ जाये। भाई तुमको मेरे सर की क़सम। ये सतरें मियाँ तफ़्ता को पढ़ा देना। वस्सलाम।

मुहर्रिरा शम्बा, चारुम अप्रैल १८५३ ई०।

अज़्र-असदुल्लाह

---

१. पातिव्रत्य। २. जयपुर राज्य के अधिकारी। ३. ऊँटनी। ४. राजा का आदेश। ५. अवकाश कैसे प्राप्त होगा इसके सम्बन्ध में। ६. प्रतीक्षक।

२४

(१० अप्रैल, १८५३ ई०)

भाई साहब,

कैसी तारीख़ और कैसी नक़ल? क्या फ़रमाते हो? पहले मुझसे हक़ीक़त तो पूछ लिया करो। मेरा तो ये अक़ीदा[1] है कि जो नज़्म व नस्र तुम्हारी नज़र से न गुज़रे वो ज़ाये है।

वाये बरजाने सुख़न गर बसुख़न्दाँ न रसद[2]

अब सुनिए माजरा क्या है? जब हुमायूँ के हाल तक पहुँचा तो मैंने अज़राहे उज़्र व हीला, बल्कि बसबीले इज़हारे हक़ीक़त वाक़ई हकीम साहब कार फ़रमा से कहा कि, मुझसे इन्तिख़ाबे हालात[3] मुमकिन नहीं। आप मुद्दआ कुतुबे सियर[4] निकाल कर ज़बाने उर्दू में एक मसविदा इसका लिखवा कर मेरे पास भेज दिया कीजिए। मैं उसको फ़ारसी कर कर तुमको दे दिया करूँगा। उन्होंने उसको क़ुबूल कर के इब्तिदाए आफ़रीनश[5] आलम व आदम से मेरे पास मसविदए उर्दू भेजा तो अब गोया एक और किताब लिखनी पड़ी। मैंने उसका छोटा-सा दीबाचा[6] लिखकर एक और ही अन्दाज़ की इबारत में लिखना शुरू किया। आदम से लेकर चंगेज़ख़ाँ तक उन्होंने मेरे पास मसविदा भेजा। मैंने अपने तौर पर लिखा और मसविदा हवाले किया। रमज़ान के महीने से, कि, आज उसको दस महीने हुए वो मसविदा आना मौक़ूफ़ हो गया। बहमाजहत[7] चार जुज़्व[8] होंगे। दो-चार बार मैंने उनसे

१. विश्वास। २. यदि काव्यमर्मज्ञ ने कविता न पढ़ी तो वह व्यर्थ है। ३. घटनाओं का चुनाव। ४. आत्मकथा। ५. सृष्टि का आरम्भ। ६. भूमिका। ७. प्रत्येक प्रकार से। ८. फर्मा (छपाई)।

तक़ाज़ा किया। यही जवाब सुना कि अब रमज़ान है। फिर कहा कि ईद का हंगामा है। मैंने सोचा कि मुझको क्या? मैं क्यों तालिबे मशक़्क़त[1] हूँ। तक़ाज़ा मौक़ूफ़ किया। वो चार जुज़्व मेरे लिखे हुए हकीम साहब के पास होंगे। अब कहाँ उनसे माँगूँ और क्यों माँगूँ? जाने दो। दूर करो। जो बिना उठी ही नहीं उससे ग़र्ज़ क्या?

जैपूर का हाल क्या पूछते हो? एक गदाई[2] की तरह निकली थी। एक दोस्त मददगार हुआ और उस तरह को उसने कमाल को पहुँचाया। रावल मुख़्तारराज और सादुल्लाख़ाँ वकीले राज ये दोनों ज़रियए हुसूले मुद्आ[3] ठहरे। वहाँ का रंग ये हो गया कि रावल भागता फिरता है और वकील इस्तीफ़ा बग़ल में दाबे रहता है। राजा लड़का है और कोई मुहर्रिक[4] नहीं। बस, अब इस अम्रेख़ास[5] को भी हमने फ़ेहरिस्ते हसरते हाए देरीना[6] में लिख दिया। वल्लाहो अला कुल्ले शइन क़दीर[7]। सब बच्चों को, खुसूसन बेगम को दुआ कहना और मेरी तरफ़ से प्यार करना।

यकशम्बा दहुम अप्रैल, १८५३ ई०। वस्सलाम।

—अज़—असदुल्लाह

२५

(१०-२३ अप्रैल, १८५३ ई०)

भाई,

यहाँ बादशाह ने क़िले में मुशाइरा मुक़र्रर किया है। हर महीने में दो बार मुशाइरा होता है पन्द्रहवीं को और उन्तीसवीं को। हुज़ूर फ़ारसी का

---

१. श्रम का इच्छुक। २. भिक्षावृत्ति। ३. वाञ्छनीय वस्तु की प्राप्ति के साधन। ४. प्रस्तावक। ५. विशेष कार्य। ६. दीर्घकालीन आकांक्षाओं की सूची। ७. ईश्वर का प्रभुत्व सब वस्तुओं पर है।

मुंशी नबी बख़्श 'हकीर' के नाम

एक मिस्रा और रेख़्ता का मिस्रा तरह करते हैं।[1] अबके जमादिउस्सानी[2] को तीसवीं को जो मुशाइरा हुआ उसमें मिस्र[3]ए फ़ारसी ये था--

'ज़ीं तमाशागाह गिरियाँ मी रवद'[4]

रेख़्ता का मिस्रा ये था--

ख़ुमारे इश्क़ हमें किस क़दर है क्या कहिए
नज़र है क्या कहिए, ख़बर है क्या कहिए

मैंने एक ग़ज़ल फ़ारसी और एक रेख़्ता मुआफ़िक़ तरह के और दूसरा रेख़्ता इसी तरह में से एक और सूरत निकाल कर लिखा। वो तीनों ग़ज़लें तुमको लिखता हूँ। पढ़ लेना और मियाँ तफ़्ता को भी दिखा देना। बच्चों को दुआ कह देना। तुम्हारा दूसरा ख़त मय रुक़्क़ए मलफ़ूफ़ा[5] पहुँच गया है।

वस्सलाम वल इक्राम।

चाक अज़ जेबम ब दामाँ मी रवद
ता चे बर चाक अज़ गरीबाँ मी रवद[6]
जौहरे तबअम दरख़्शानस्त लेक
रोज़म् अन्दर अब्र पिन्हाँ मी रवद[7]

---

१. समस्यापूर्त्ति के लिए एक चरण देते हैं। २. एक मास का नाम। ३. चरण। ४. इस मनोरंजन-गृह से रोता हुआ जाता है। ५. लिफ़ाफ़े में बन्द रुक्के के साथ। ६. जेब से लेकर दामन तक कुर्त्ता फट गया है। इस फटाव का क्या होगा जो गले से प्रारम्भ हुआ है। ७. मेरे स्वभाव की विशेषता चमकती है किन्तु मेरा दिन घनघोर बादलों में छिप जाता है।

गर वुवद मुश्किल म रंज, ऐ दिल के कार
चूं रवद अज़ दस्त आसाँ मी रवद[1]
जुज़ सुख़न कुफ़्र व ईमाने कुजास्त
ख़ुद सुख़न दर कुफ़्रो ईमाँ मी रवद[2]
हर शमीमे रा मुशामे दर ख़ुरस्त
बू ए पैराहन ब कनआँ मी रवद[3]
आयद व अज़ ज़ौक़ न नासम के कीस्त
ता रवद पिन्दास्ती जाँ मी रवद[4]
मी वुरद अम्मा न यकजा मी वुरद
मी रवद अम्मा परीशाँ मी रवद[5]
हर के वीनद दर रहश गोयद हमी
क़िब्ल ए आतिश परस्ताँ मी रवद[6]

---

१. हे मन, कोई कार्य कठिन हो तो दुःखी मत हो, काम हाथ से छूट जाता है तो सरल हो जाता है। २. 'पाप' और 'पुण्य' शब्द के अतिरिक्त कुछ नहीं हैं। कथन स्वयं पाप और पुण्य में विलीन हो जाता है। ३. प्रत्येक सुगन्धि के सूँघने के लिए अच्छी नाक होनी चाहिए। कपड़े की गन्ध कनआँ तक जाती है। (कनआँ = यसुफ़ के पिता याक़ूब का निवास-स्थान) यूसुफ़ के भाइयों ने यूसुफ़ को कुएं में लटका कर, पिता से कहा था कि यूसुफ़ को भेड़िया खा गया। भाई यूसुफ़ के कपड़े ले गए थे। पिता को इन वस्त्रों से यूसुफ़ की गन्ध आई थी। ४. वह प्रेमी आता है किन्तु मैं अपने आनन्द में ऐसा डूबा हुआ हूँ कि उसे पहचान नहीं सकता। जब चला जाता है तो अनुभव करता हूँ कि मेरे प्राण ही चले गए। ५. ले जाता है किन्तु एक साथ नहीं ले जाता है। समय बीतता है किन्तु कष्ट से बीतता है। ६. जो उसे रास्ते में देखता है, यही कहता है—अग्नि-पूजक जिसकी पूजा करते हैं वह जा रहा है।

अव्वले माहस्तो अज़ शर्मे तो माह
आख़िरे शब अज़ शबिस्ताँ मी रवद[1]
बुगुज़र अज़ दुश्मन दिलश सख़्तस्त सख़्त
आबरू ए तीरो पैकाँ मी रवद[2]
कीस्त ता गोयद बदाँ ऐवाँ नशीं
ऊँचे बर 'ग़ालिब' ज़े दरबाँ मी रवद[3]

दिया है दिल अगर उसको बशर[4] है क्या कहिए
हुआ रक़ीब[5] तो हो नामाबर[6] है क्या कहिए
ये ज़िद के आज न आये और आये बिन न रहे
क़ज़ा[7] से शिकवा[8] हमें किस क़दर कहिए
रहे है यूँ गहो बेगह[9] के कू ए दोस्त[10] को अब
अगर न कहिए के दुश्मन का घर है क्या कहिए
ज़ है करिश्मा के यूँ दे रखा है हमको फ़रेब
के बिन कहे भी हमें सब ख़बर है क्या कहिए
समझ के करते हैं बाज़ार में वो पुरसिशे हाल[11]
के ये कहे के सरे रह[12] गुज़र है क्या कहिए

---

१. दूज का चाँद तुम्हें देखकर इतना शरमाता है कि वह रात के पिछले पहर में (आकाश से) चला जाता है। २. शत्रु का हृदय कठोर होता है अतः तू शत्रु से बच। तीर की तीक्ष्णता और तीर का प्रताप उसके आगे लुप्त हो जाता है। ३. राजप्रासाद में बैठे हुए उस (प्रेमी) से कौन कहे कि 'ग़ालिब' और द्वारपाल में कैसा बर्ताव हो रहा है। ४. मनुष्य। ५. प्रतिप्रेमी। ६. पत्रवाहक। ७. मृत्यु। ८. शिकायत। ९. समय-असमय। १०. मित्र की गली। ११. कुशल-प्रश्न। १२. मार्ग में।

तुम्हें नहीं है सरिश्तए[1] वफ़ा का खयाल
हमारे हाथ में कुछ है मगर है क्या कहिए
उन्हें सवाल पै ज़ामे जुनूँ[2] है क्यों कुढ़िए
हमें जवाब से क़त ए नज़र[3] है क्या कहिए
हसद[4] सज़ाए कमाले सुखन है क्या कीजे
सितम बहाए म ताए[5] हुनर है क्या कहिए
कहा ये किसने कि 'ग़ालिब' बुरा नहीं लेकिन
सिवाए इसके कि आशुफ़्ता सर[6] है क्या क़हिए

कहूँ जो हाल तो कहते हो मुद्दआ[7] कहिए
तुम्हीं कहो कि जो तुम यों कहो तो क्या कहिए
न कहियो तान[8] से फिर तुम के हम सितमगर हैं
मुझे तो खू[9] है कि जो कुछ कहो बजा कहिए
वो नैशतर[10] सही पर दिल में जब उतर जाये
निगाहे नाज़ को फिर क्यों न आशना[11] कहिए
नहीं ज़रिय ए राहत[12] जराहते पैकाँ[13]
वो ज़ख्मे तेग़ है जिसको कि दिलकुशा[14] कहिए
जो मुद्दई बने उसके न मुद्दई बनिए
जो ना सज़ा कहे उसको न ना सज़ा कहिए
कहीं हक़ीक़ते जाँ कहिए मरज़ लिखिए
कहीं मुसीबते नासाज़ी ए दवा कहिए

---

१. प्रेम का ढंग। २. उन्माद। ३. उपेक्षा। ४. ईर्ष्या। ५. कला की सम्पत्ति। ६. विक्षिप्त (प्रेमी)। ७. अभीष्ट। ८. व्यंग, उलहना। ९. स्वभाव। १०. नश्तर, शल्य। ११. परिचित। १२. छुटकारे का उपाय। १३. तीर का घाव। १४. चित्ताकर्षक।

कभी हिकायते रंजे गिरांनशीं[1] कीजे
कभी शिकायते सब्रे गुरेजपा[2] कहिए
रहे न जान तो क़ातिल को खूं बहा दीजे
कटे जबान तो खंजर को मरहबा[3] कहिए
न हो निगार[4] मे उल्फ़त[5] निगार तो है
रवानिए रविशो मस्तिए अदा कहिए
न हो बहार[6] को फ़ुर्सत न हो बहार तो है
तरावते चमनो[7] खूबिए हवा[8] कहिए
सफ़ीना[9] जब के किनारे पै आलगा 'ग़ालिब'
खुदा से क्या सितमो जौरे नाखुदा[10] कहिए

२६

(१३ अप्रैल, १८५३)

भाई साहब,

बड़ा ताज्जुब है तुम इस शेर के माने पूछते हो—

अव्वले माहस्त अज शर्मे तो माह
आखिरे शब अज शबिस्तां मी रवद

'अव्वल माह' यहाँ जमानी महीने के है और अव्वल से ८, ९, १० तारीख मक़सूद[11] है। अव्वल रातों में बाद आधी रात के चाँद छिप जाता है। बस शाइर कहता है कि हनोज इब्तिदाए हाल है और क़मर[12] जायदुन्नूर[13] है और

१. अटल दुःख। २. टालमटोल। ३. धन्य-धन्य। ४. चित्र। ५. प्रेम। ६. वसन्त। ७. उद्यान की सरसता। ८. वायु की विशेषता। ९. जहाज। १०. नाविक का अत्याचार। ११. अभीष्ट। १२. चाँद। १३. प्रकाश की अधिकता।

तुम्हें नहीं है सरिश्तए[1] वफ़ा का खयाल
हमारे हाथ में कुछ है मगर है क्या कहिए
उन्हें सवाल पै ज़ामे जुनूँ[2] है क्यों कुढ़िए
हमें जवाब से क़त ए नज़र[3] है क्या कहिए
हसद[4] सज़ाए कमाले सुखन है क्या कीजे
सितम वहाए म ताए[5] हुनर है क्या कहिए
कहा ये किसने कि 'ग़ालिब' बुरा नहीं लेकिन
सिवाए इसके कि आशुफ़्ता सर[6] है क्या कहिए

———

कहूँ जो हाल तो कहते हो मुद्दआ[7] कहिए
तुम्हीं कहो कि जो तुम यों कहो तो क्या कहिए
न कहियो तान[8] से फिर तुम के हम सितमगर हैं
मुझे तो खू[9] है कि जो कुछ कहो बजा कहिए
वो नैशतर[10] सही पर दिल में जब उतर जाये
निगाहे नाज़ को फिर क्यों न आशना[11] कहिए
नहीं ज़रिय ए राहत[12] जराहते पैकाँ[13]
वो ज़ख्मे तेग़ है जिसको कि दिलकुशा[14] कहिए
जो मुद्दई बने उसके न मुद्दई बनिए
जो ना सज़ा कहे उसको न ना सज़ा कहिए
कहीं हक़ीक़ते जाँ कहिए मरज़ लिखिए
कहीं मुसीबते नासाज़ी ए दवा कहिए

१. प्रेम का ढंग। २. उन्माद। ३. उपेक्षा। ४. ईर्ष्या। ५. कला की सम्पत्ति। ६. विक्षिप्त (प्रेमी)। ७. अभीष्ट। ८. व्यंग, उलहना। ९. स्वभाव। १०. नश्तर, शल्य। ११. परिचित। १२. छुटकारे का उपाय। १३. तीर का घाव। १४. चित्ताकर्षक।

कभी शिकायते रंजे गिरांनशीं[1] कीजे
कभी शिकायते सब्रे गुरेज़पा[2] कहिए
रहे न जान तो क़ातिल को खूँ वहा दीजे
कटे जबान तो खंजर को मरहवा[3] कहिए
न हो निगार[4] में उल्फ़त[5] निगार तो है
रवानिए रविशो मस्तिए अदा कहिए
न हो वहार[6] को फ़ुर्सत न हो वहार तो है
तरावते चमनो[7] खूबिए हवा[8] कहिए
सफ़ीना[9] जब के किनारे पै आलगा 'ग़ालिब'
खुदा से क्या सितमो जौरे नाखुदा[10] कहिए

२६

(१३ अप्रैल, १८५३)

भाई साहब,

वड़ा ताज्जुब है तुम इस शेर के माने पूछते हो—

अव्वले माहस्त अज़ शर्मे तो माह
आखिरे शव अज शविस्तां मी रवद

'अव्वल माह' यहाँ बमानी महीने के है और अव्वल से ८, ९, १० तारीख़ मक़सूद[11] है। अव्वल रातों में वाद आधी रात के चाँद छिप जाता है। वस शाइर कहता है कि हनोज़ इब्तिदाए हाल है और क़मर[12] ज़ायदुवन्नूर[13] है और

१. अटल दुःख। २. टालमटोल। ३. धन्य-धन्य। ४. चित्र। ५. प्रेम। ६. वसन्त। ७. उद्यान की सरसता। ८. वायु की विशेषता। ९. जहाज। १०. नाविक का अत्याचार। ११. अभीष्ट। १२. चाँद। १३. प्रकाश की अधिकता।

बावजूद इस रोज़ अफ़ज़ूनी ए दौलत[1] के तेरी शर्म से आखिर शब को भाग जाता है और तमाम रात तेरे मुक़ाबिल नहीं रह सकता। इसको हुस्ने तालील[2] कहते हैं। याने चाँद का अवायल माहेमरी[3] में 'आख़िरे शब[4] गुरूब[5] होना ज़रूरी है। शाइर ने उसकी एक और वजह क़रार दी है। फ़क़त।

वारे, मियाँ तफ़्ता की सुहबत ग़नीमत है। मेरी जगह खाली। अफ़सोस, कि, मैं नहीं। अब्दुल लतीफ़ मेरी जान है, मेरा जिगर है, मेरा फ़र्ज़न्द है। तुम उसके मुक़दमे में बोलने वाले और वास्तए हुसूले मुद्दआ[6] होने वाले कौन? उसको किसने मना किया है? उसको कौन मना करता है? नज़्म व नस्र जो उसको मंज़ूर हो, मेरे पास भेजे, तक़ाज़ा न करे। मैं अपने तौर पर देखूंगा और तुमको भेजूंगा। इस शर्म ने मुझको मारा। जब अब्दुस्सलाम पैदा हुआ और मैंने मुबारकबाद लिखी, तो जनाब मुंशी साहब याने मियाँ अब्दुललतीफ़ ने जवाब न लिखा। आख़िर तुमने मुझको लिखा कि भाई वो तो शरमाता है, तुमको जवाब क्या लिखे। अब ये नस्र का, वास्ते इस्लाह[7] के भेजना भी कोई ऐसा अम्र है कि जिसमें हज़रत को शर्म आती है। ख़ुदा की पनाह। ज़किया बेगम को दुआ कहो—ज़्यादा ज़्यादा।

१३ अप्रैल १८५३ ई०।

२७

(२६ मई, १८५३)

भाई साहब,

आपका इनायतनामा[8] मुक़ाम हातरस से पहुँचा। बेगम का कोल में आ जाना ख़ूब हुआ। देखिए, तुम कब तशरीफ़ लाते हो? ख़त का न लिखना

---

१. वृद्धिगत। २. भ्रान्तिमान् अलंकार। ३. चान्द्रमास का प्रारम्भ। ४. रात का उत्तरार्द्ध। ५. अस्त। ६. अर्थसिद्धि। ७. संशोधन। ८. कृपा-पत्र।

फ़रामोशकारी[1] की राह से नहीं है। ये ख़याल कि अभी हातरस से न आये हों मान ए तहरीर[2] रहा। मुंशी हरगोपाल साहब को एक ख़त में कुछ हाल जैपूर का लिखा था। सो ये भी उनको लिखा था कि अगर भाई हातरस से आ गये हों तो उनको ये ख़त पढ़वा देना। और जब वो आवें तो मुझको ख़बर करना। आज इस बात को सात दिन हुए। उनका अभी कोई ख़त नहीं आया।

गरमी का क्या हाल पूछते हो? मेरा तो वाऐनहीं[3] वो हाल होता है जो ज़बान से पानी पीनेवाले जानवरों का होता है। वक़ील ज़ुहूरी।

"हाले सग हाले गुरबा हाले शिग़ाल[4]"

जब मुझको इस मौसम में देखो तो जानों कि मैं क्यों कर जिन्दगी बसर करता हूँ।

एक नई बात सुनो। शहर में एक बबा[5] आई है। याने वकीले कम्पनी ने सनीने माज़िया[6] के काग़ज़ देख कर रुसूमे सरकारी जिस शख़्श पर लेनी थीं उसका मुतालिबा किया है और मुतालिबा क्या मुआख़ज़ा[7] याने बहुत शिद्दत, अज़ाँ जुम्ला मुझ पर भी बाबत रुसूमे सरकारी पान सौ रुपये आठ आने निकले और उसकी तलब बक़ैदे हुक्म क़ैद हुई। मैं आठ आने को मुहताज पान सौ कहाँ से लाऊँ? बारे, हज़रत, अँगरेज़ी तनख़ाह में से पाँच रुपये महीने बतरीक़े क़िस्त मुकर्रर कर दिया। बासठ रुपये आठ आने महीना पाता था। सत्तावन रुपये आठ आने रह गये। पाँच रुपये महीने का साठ रुपये सालाना हुआ। अब ये तवक़्क़ो कहाँ कि पूरी तनख़ाह पाऊँगा। यों समझिए कि

---

१. भुला देना। २. लेखन में बाधा। ३. यथार्थ में। ४. कुत्ते का हाल, बिल्लो का हाल, लोमड़ी का हाल, ५. महामारी। ६. गत वर्ष। ७. प्रतिकार, भूल की खोज।

सत्तावन रुपये का पेन्शनदार हूँ। बारे, कल फ़ैसला हुआ। तीन दिन तक सवार न हुआ और क़िले न गया। कल गया था। और आज गया था। अब खैर व आफ़ियत है। चूँकि लड़के-बालों में से कोई तुम्हारे पास नहीं है और मैं ख़त बमुक़ाम हातरस भेजता हूँ, इस वास्ते किसी को दुआ नहीं लिखता, पर देता हूँ दुआ।

वस्सलाम माल इकराम २९ मई १८५३ ई०।

—अज़ असदुल्लाह

२८

(२२ जून, १८५३ ई०)

भाई साहब का इनायतनामा पहुँचा। आपका हातरस से कौल आ जाना हमको मालूम हो गया था। हमारा एक वक़ाए निगार[1] उस ज़िले में रहता है। हक़ताला उसको जीता रखे।

गरमी का हाल क्या पूछते हो? इस साठ बरस में ये लू और ये धूप और ये तपिश नहीं देखी। छठीं-सातवीं रमज़ान को मेंह ख़ूब बरसा। ऐसा मेंह जेठ के महीने में भी कभी नहीं देखा था। अब मेंह खुल गया है, अब्र घिरा रहता है, हवा अगर चलती है तो गरम नहीं होती और अगर रुक जाती है तो क़यामत[2] आती है। धूप बहुत तेज़ है। रोज़ा रखता हूँ मगर रोज़े को बहलाये रहता हूँ। कभी पानी पी लिया, कभी हुक़्क़ा पी लिया, कभी कोई टुकड़ा रोटी का खा लिया। यहाँ के लोग अजब फ़हम और तुर्फ़ा रविश[3] रखते हैं। मैं तो रोज़ा बहलाता रहता हूँ और ये साहब फ़रमाते हैं कि तू रोज़ा नहीं रखता। यें नहीं समझते कि रोज़ा न रखना और चीज़ है और रोज़ा बहलाना और बात है।

---

१. संवाददाता। २. प्रलय। ३. अमीरों की चाल-ढाल।

हाँ, और किसका होगा, या मेरा, या मेरे भाई का। वल्लाह, क्या शेर है! ये रविश ख़ास[1] है। हर कोई इसको नहीं जानता।

बारे, इन दिनों में दो आदमियों की ज़बानी आपकी खैर व आफ़ियत मालूम हुई। एक तो महबूबख़ाँ रिसलदार और दूसरे मियाँ मुहम्मद हुसैन दिल्ली के रहने वाले, कि वो सदरुस्सुदूर[2] की मुलाक़ात को कौल गये थे। ग़ज़ल भी तुम्हारी उन्होंने मुझको दिखाई। सारी ग़ज़ल खूब है। मगर इस शेर का आलम और है।

आप मेरे अज़्म[3] को बिल्कुल वैसा ही बिल जज़्म[4] तसव्वुर कीजिएगा। बादशाह अच्छे हो गये। ग़ुस्ले सेहत करने की देर है। ग़ुस्ले सेहत का दरबार हुआ और मैंने मुबारकबाद का क़सीदा या क़ता पढ़ा और रुख़सत ली और डाक गाड़ी में बैठा और कौल पहुँचा। और वहाँ आठ पहर रहा और आगे को रवाना हुआ।

एक शेख़ मोमिनअली साहब सदर अमीन कौल यहाँ आये थे। एक दिन वो मेरे हाँ तशरीफ़ लाये। मैं सवार हो गया था, न मिला। दो दिन के बाद उनके हाँ गया। मिला। तुम्हारा भी ज़िक्र आया। तुम्हारी बहुत तारीफ़ करते थे। मैं मुन्तज़िर था कि वो अब फिर आएँगे, ता[5], ये कि, दिन चारेक हुए कि मैंने क़िले में हकीम इमामुद्दीनख़ाँ से पूछा कि सदर अमीन कौल जिनका आप इलाज करते थे, वो अब कैसे हैं। उन्होंने फ़रमाया कि वो कौल को गये। ग़र्ज़ ये कि अगर आपसे मुलाक़ात हो तो फ़रमाइएगा कि असदुल्लाह, रूसियाह[6] बाद सलाम अर्ज़ करता है कि वो रुतबा मेरा तो कहाँ कि मैं आप से शिकवा करूँ कि मुझसे मिलकर आप न गये, मगर हाँ अफ़सोस करता हूँ कि मुझको ख़बर क्यों न हुई, वर्ना मैं तौदी[7] को पहुँचता।

---

१. विशेष शैली। २. प्रधान न्यायाधीश। ३. इच्छा। ४. दृढ़ निश्चय। ५. जिससे। ६. काला मुँह वाला। ७. विदा।

हज़रत, बहुत दिन से मुंशी हरगोपाल साहब का ख़त नहीं आया। ख़ुदा जाने सिकन्दराबाद में हैं या कहीं और तश रीफ़ ले गये हैं। तमाशा ये कि बाबू जानी बाँकेलाल का ख़त भी बहुत दि न से नहीं आया। कुछ उनका हाल मालूम नहीं। आपको उन दोनों साहबों का हाल जो कुछ मालूम हो मुझको लिखिए। मुंशी अब्दुल लतीफ़ और मियाँ नसीरुद्दीन और बी ज़किया बेगम और अब्दुस्सलाम को दुआ पहुँचे।

निगाश्ता एक शम्बा सोंअम सितम्बर १८५३ ई०।

—अज़ असदुल्लाह

३१

(२ अक्तूबर, १८५३ ई०)

भाई साहब,

तुम्हारा ख़त आया और हाल जीतसिंघ ा का मालूम हुआ। फिर वो बिरहमन[1] साहब आये। उनकी ज़बानी आप की ख़ैर व आफ़ियत मालूम हुई। हक़ ताला तुमको, मय फ़र्ज़न्दों के, सलामत रखे और मुझको तुम्हारी मुलाक़ात से और बच्चों के दीदार[2] से शाद[3] करे। भा ई मैं वो क़िस्मत लाया हूँ कि जो चाहूँ वो न हो।

मरा मादर दुआ क र्दस्त गोई
के अज़ तू दूर बादा उ चे जूई[4]

डाक के सफ़र की ख़ुशी, कौल पहुँचने की मसर्रत[5] भाई से मिलने की फ़रहत,[6] फ़र्ज़न्दों के देखने का लुत्फ़, राह में जाबजा[7] आम ख़रीदने का ज़ौक़[8]

---

१. ब्राह्मण। २. दर्शन। ३. प्रसन्न। ४. तुम यह समझ लो कि मेरी माता ने मुझे यह आशीर्वाद दिया है कि ैं जिसकी खोज करूँ वह मुझसे दूर रहे। ५. हर्ष। ६. आनन्द। ७. यत्र-तत्र ा। ८. खुशी।

क्या कहूँ कि कैसी हसरत रह गई। तुमको मालूम है, रुपया फ़ुतूह[1] का आया हुआ था। चाहता था कि उसको इस सफ़र में खर्च करूँ। यहाँ ये रंग दरपेश आया। अब सुनता हूँ कि हुज़ूर बाद मुहर्रम जश्ने गुस्ले सेहत[2] करेंगे। अज़्म[3] मेरा बदस्तूर मगर रुपिया कहाँ? बहरहाल रुख़सत के माँगने का मौक़ा तो आये। क़र्ज़-वाम[4] कर कर भी क़स्द[5] करूँगा। अगर इस असना[6] में कोई शोबदा[7] ताज़ा न उठा।

मुन्शी हरगोविन्द सिंघ कौल आये हैं। आपसे मुलाक़ात हो तो मेरा सलाम कहना और ये फ़रमाना के आपका खत आया। हाल ज़ाहिर हुआ। दुआएँ माँगता हूँ कि तुम्हारा फिर तुमको मिल जाये और तुम दिल्ली में आओ।

मुन्शी हरगोपाल तफ़्ता भरतपुर में और जानी जी आगरे गये हुए हैं।

लेफ़्टिनेंट गवर्नर बरेली में मर गये। देखिए अब उनकी जगह कौन मुक़र्रर होता है। देखो, इस क़ौम का क्या इन्तिज़ाम है। हिन्दुस्तान का अगर कोई इतना बड़ा अमीर मरा होता तो क्या इन्क़िलाब[8] हो जाता। यहाँ किसी के कान पर जूँ भी नहीं फिरती कि क्या हुआ और कौन मर गया।

मुंशी अब्दुललतीफ़ साहब को बाद दुआ के मालूम हो कि मियाँ रफ़अली कौल से आये और मुझसे मिले। तुम्हारी बहुत तारीफ़ करते थे। नसीरुद्दीन और ज़किआ बेगम व अब्दुस्सलाम व कुलसूम बेगम को दुआ पहुँचे।

यकशम्बा, दोअम अक्तूबर १८५३ ई०।

—अज़ असदुल्लाह.

---

१. ऊपर की आय। २. स्वास्थ्य लाभ के स्नान का उत्सव। ३. इच्छा, संकल्प। ४. ऋण। ५. इच्छा। ६. समय, अन्तर (समय का)। ७. चमत्कार। ८. क्रान्ति।

क्या कहूँ कि कैसी हसरत रह गई। तुमको मालूम है, रुपया फ़ुतूह[1] का आया हुआ था। चाहता था कि उसको इस सफ़र में खर्च करूँ। यहाँ ये रंग दरपेश आया। अब सुनता हूँ कि हुजूर बाद मुहर्रम जश्ने ग़ुस्ले सेहत[2] करेंगे। अज़्म[3] मेरा बदस्तूर मगर रुपिया कहाँ? बहरहाल रुख़्सत के माँगने का मौक़ा तो आये। क़र्ज़-वाम[4] कर कर भी क़स्द[5] करूँगा। अगर इस असना[6] में कोई शोबदा[7] ताजा न उठा।

मुन्शी हरगोविन्द सिंघ कौल आये हैं। आपसे मुलाक़ात हो तो मेरा सलाम कहना और ये फ़रमाना के आपका खत आया। हाल जाहिर हुआ। दुआएँ माँगता हूँ कि तुम्हारा फिर तुमको मिल जाये और तुम दिल्ली में आओ।

मुन्शी हरगोपाल तफ़्ता भरतपुर में और जानी जी आगरे गये हुए हैं।

लेफ़्टिनेंट गवर्नर बरेली में मर गये। देखिए अब उनकी जगह कौन मुक़र्रर होता है। देखो, इस क़ौम का क्या इन्तिज़ाम है। हिन्दुस्तान का अगर कोई इतना बड़ा अमीर मरा होता तो क्या इन्क़िलाब[8] हो जाता। यहाँ किसी के पर जूँ भी नहीं फिरती कि क्या हुआ और कौन मर गया।

मुंशी अब्दुललतीफ़ साहब को बाद दुआ के मालूम हो कि मियाँ अशरफ़अली कौल से आये और मुझसे मिले। तुम्हारी बहुत तारीफ़ करते थे। नसीरुद्दीन और ज़किशा बेगम व अब्दुस्सलाम व कुलसूम बेगम को दुआ पहुँचे।

यकशम्बा, दोअम अक्तूबर १८५३ ई०।

—अज़ असदुल्लाह

---

१. ऊपर की आय। २. स्वास्थ्य लाभ के स्नान का उत्सव। ३. इच्छा, संकल्प। ४. ऋण। ५. इच्छा। ६. समय, अन्तर (समय का)। ७. चमत्कार। ८. क्रान्ति।

३२

(६ अक्तूबर, १८५३ ई०)

भाई साहब,

ये नई तर्ज़ रविश है कि ख़त की रसीद तो नहीं लिखते और उल्टा शिकवा करते हो। ज़ाहिरा ये लतीफ़ा[1] ख़याल में आया होगा कि यारां फ़रामोश करदन्द इश्क़[2]। और ये दर्ज न हो सकता था बग़ैर शिकायत के।

नाचार ख़त के भेजने से क़तै नज़र[3] की। डाक किताब मय रसीद मेरे पास मौजूद है। रोज़े यकशम्बा[4], दोग्रम अक्तूबर १८५३ ई० को ख़त रवाना हुआ है। मज़ा इसमें ये है कि आपका ख़त यकशम्बा दोग्रम[5] अक्तूबर का लिखा हुआ है। तुम ख़याल करो। मुझमें तुममें अक्सर ऐसा वाक़ै[6] होता है कि जिस दिन मैं तुमको ख़त लिखता हूँ, उसी दिन तुम मुझको ख़त लिखते हो।

अगली ग़ज़ल पहले तो मियाँ हुसेन मुहम्मद देहलवी लाये और फिर आपने अपने ख़त में भेजी। एक शेर इसमें मेरे अन्दाज़ का था। वो मैंने आपको लिख भेजा था और बाक़ी और अशार[7] सब अच्छे और बे-ऐब और हमवार। अगर जगह इस्लाह[8] की होती तो मैं कभी चश्मपोशी न करता। तुमसे मेरा ये मामला नहीं है कि ख़ुशामद करूँ। तुम्हारा कलाम, मेरा कलाम। तुम्हारा नक़्स मेरा नक़्स[9]। अब देखो इस ग़ज़ल में एक शेर मौक़ूफ़ कर दिया गया और मत्ले[10]

---

१. चुटकुला, कहावत। २. मित्रों ने स्नेह भुला दिया। ३. उपेक्षा। ४. रविवार। ५. दूसरी। ६. घटित। ७. शेर (कविता, ब० व०)। ८. संशोधन। ९. त्रुटि। १०. ग़ज़ल का पहला शेर जिसके दोनों चरणों में अन्त्यानुप्रास होते हैं।

में और एक बैत[1] में तग़य्युरे अल्फ़ाज[2] हो गया। जिन शेरों पर साद[3] है वो बहुत ख़ूब हैं। वाह वाह, सुभान अल्लाह, और जिन पर साद नहीं वो ख़ूब है बस।

अजी पीर व मुर्शद, ये नस्र जिसको आपने खत ताबीर[4] किया है और वाक़ई कि वो खत है, मगर 'मोना बाज़ार' के बराबर या 'सेनसी जुहूरी' के बराबर या आधी 'पंज आहंग' के बराबर। आप उसके कातिब का नाम इनायतुल्लाखाँ लिखते हैं। कहीं सह्‌व[5] न हुआ हो। अताउल्लाखाँ साहब एक बुज़ुर्ग वहाँ हैं। शायद उनकी तहरीर हो।

बायदमताए नेको अज़ हर दुकाँ के बाशद[6] क्या कहना है, बहुत ख़ूब है और बहुत पाक़ीज़ा। फैलावा कितना अच्छा है। मज़ामीन[7] कैसे बुलन्द हैं। तरक़ीबे अल्फ़ाज़[8] कितनी दुरुस्त है। मैं आपका एहसानमन्द और शुक्रगुज़ार हूँ कि आपकी इनायत से ये नज्म व नस्र मैंने देखा। मैं हक़ गुज़ारे सुखन और हवाख़ाहे अहले सुखन[9] हूँ। जहाँ इस्लाह की जगह होती है, वहाँ फ़र व गुज़ाश्त[10] नहीं करता। माहाज़ा[11] फ़िज़ूल नहीं हूँ। कलाम बे ऐब व बेसक़ल[12] में दखल नहीं करता। आप ये औराक़ उन साहब को दे दीजिये और मेरा सलाम कहिए और ये सतरें उन्हें दिखला दीजिए।

बाद मुहर्रम सुना जाता है कि जश्ने ग़ुस्ले सेहत होगा। बादशाह अच्छे हैं। रहा ज़ोफ़[13] वो लाज़िम ए उम्र[14] बहर तक़दीर बाद अश्र ए मुहर्रम[15] तालिबे

---

१. एक शेर। २. शब्द परिवर्तन। ३. ठीक होने का चिह्न। ४. वर्णित। ५. भूल। ६. कोई दूकान हो, हमें चीज़ अच्छी मिलनी चाहिए। ७. विषय। ८. वाक्य-विन्यास। ९. कवियों का शुभचिन्तक। १०. भूल-चूक। ११. अतः। १२. निर्दोष और शुद्ध। १३. दुर्बलता। १४. आयु की अनिवार्यता। १५. मुहर्रम की दसवीं तारीख के पश्चात्।

रुख़सत[1] हूँगा। मगर मौक़ा देख और तदबीर मसारिफ़े सफ़र[2] कर कर। कल दिन भर ताबिशे आफ़ताब[3] और गरम हवा ऐसी रही कि जैसी जेठ-असाढ़ में होती है। शाम होते-होते वो सर्दी हो गई कि अग़निया[4] ने दुशाले तोशाख़ाने[5] में से निकलवाये और ग़ुरबा[6] ने गठड़ियाँ खोल-खोल कर रज़ाई और पट्टू निकाले। अब्रे स्याह[7] तमाम रात मुहीत आसमान[8] पर रहा, मगर मेंह नहीं बरसा। अब सुबह होते वो पानी पड़ा कि जल-थल भर गये। क़िले नहीं जा सका। मेंह बरस रहा है और मैं ये ख़त लिख रहा हूं, अगर यही आलम है तो आज इस ख़त को नहीं भेज सकूंगा। बड़े ज़ोर से मेंह बरस रहा है। पंजशम्बा[9] ६ मार्च माहे अक्तूबर १८५३ ई०।

बच्चों को दुआ। परवर्दगार सब को जीता रखे और मुझको उनका दीदार दिखलावे। यहाँ चना, गेहूँ, बेसन, बाईस सेर और घी दो सेर-सवा दो सेर है। उधर का हाल आप लिखिए, कि क्या है। यहाँ मंगल को चांद दिखलाई दिया। बुध को मुहर्रम की पहली ठहरी। आज दूसरी है। वहाँ का हाल मुक़र्रर लिखिएगा। फ़क्त।

२ मुहर्रम [१२७० हि०] पंजशम्बा, ६ माहे अक्तूबर १८५३ ई०।

३३

(८ नवम्बर, १८५३ ई०)

भाई साहब,

ये आपके दिल में किसने शुबा डाल दिया कि गिरियाँ[10] और अफ़्शाँ[11] को

---

१. अवकाश का प्रार्थी। २. यात्रा-व्यय का यत्न। ३. सूर्य की तपन। ४. अमीर लोग। ५. भण्डार। ६. दरिद्र। ७. काले बादल। ८. घेरनेवाला। ९. गुरुवार। १०. रुदनशील। ११. छिड़का हुआ।

मुंशी अब्दुललतीफ़ साहब को और ज़किया बेगम को और मियाँ नसीरुद्दीन को और जो लड़के-वाले यहाँ हैं उनको दुआ पहुँचे।

दो शम्बा, हफ़्तुम नवम्बर १८५३ ई०।

—अज़्-असदुल्लाह,

३४

(२२ दिसम्बर, १८५३ ई०)

भाई साहब,

मैं भी तुम्हारा हमदर्द हो गया, याने मंगल के दिन, १८ रबीउल अव्वल को शाम के वक़्त वो फूफी, कि, बचपन से आज तक उसको माँ समझा था और वो भी मुझको बेटा समझती थी, मर गई। आपको मालूम रहे कि परसों-मेरे गोया नौ आदमी मरे। तीन फूफियाँ और तीन चचा और एक बाप और एक़ दादी और एक दादा—याने इस मरहूमा[1] के होने से मैं जानता था कि ये नौ आदमी ज़िन्दा हैं और उसके मरने से मैंने जाना कि ये नौ आदमी आज यक बार मर गये इन्नालिल्लाह व. इन्नाइलहे राजेऊन[2]।

निगारिश्ता पंजशम्बा, २० रबीउल अव्वल (१२७० हि०) २२ दिसम्बर, १८५३ ई०।

—अज़-असदुल्लाह,

३५

(२३ जनवरी, १८५४ ई०)

भाई जान,

तुम्हारा वो ख़त कि जो शेख़ रहमतुल्ला साहब के ज़रिये के ख़त के जवाब में था—पहुँचा। तफ़क़्क़ुद[3] उनके हाल पर मबज़ूल[4] रहे।

---

१. स्वर्गीया। २. हम उसी के हैं, हमको उसी की तरफ़ जाना है।

यहाँ चेचक का ज़ोर-शोर नहीं, बल्कि इन दिनों में उसका कहीं मज़कूर[१] नहीं। कौल में अतफ़ाले खुर्दसाल[२] की खैर रहे। ज़किया व अब्दुस्सलाम का हनोज़ आगरे में रहना मुनासिब है। ये हंगामा जहाँ होता है, चन्दरोज़ा होता है। जब ये बबाए खास[३] जाती रहे और हवा साफ़ हो जावे, तब आवें।

वो मस्नवी[४] और ऐलाननामा मैंने तुम्हारे पास भिजवाया है। वजह ये कि जब हुज़ूर ने हुक्म के अमायद[५] अहले तसन्नुस[६] जो अतराफ़ व जवानिब[७] देहली में हैं, एक-एक नक़ल उनको भेजो जाये। मैंने दफ़्तर में वक़ैदे अलीगढ़ कौल मुफ़्ती सद्रुद्दीनखाँ साहब का और तुम्हारा नाम लिखवा दिया और कालपी में नवाब अनवारुद्दौला और बरेली में सैयद अहमद का नाम लिखवा दिया। और कोई ऐसा सुन्नी गिरामाया[८] में न आया।

मिर्ज़ा नजफ़अलीखाँ मरहूम तुम्हारे दोस्त होंगे। वो यहाँ मर गये। उनके फ़र्ज़न्दे अर्जुमन्द[९] मिर्ज़ा यूसुफ़अलीखाँ को मैं अपने फ़र्ज़न्द की जगह मानता हूँ और उनकी सआदत-मन्दियाँ[१०] और खूबियाँ क्या बयान करूँ कि मैं उनका आशिक़ हूँ। वो अब कौल को गए हैं। तुमको लाज़िम है कि उनके हाँ जाओ और फ़ातिहा[११] पढ़ो और उनका हाल उनकी ज़बानी सुनो। वो साहबज़ादए नाज़ पर्वर्दा[१२] गर्म व सर्द ज़माना नादीदा[१३] हैं। दो-एक हवेलियाँ उनके वालिद माजिद की वहाँ हैं। खुदा जाने वो क्या करेंगे। आपको उनकी मुरब्बीगीरी[१४] करनी चाहिए, मगर वो पंजशम्बा को रवाना होने वाले हैं।

---

१. वर्णित। २. शिशु, कम आयु के बालक। ३. विशेष महामारी। ४. कविता की एक शैली, एक ही छन्द में कोई कहानी या उपदेश रहता है। ५. सामन्त, सरदार। ६. सुन्नीबन्धु। ७. आसपास। ८. सुन्नी धनी व्यक्ति। ९. सुपुत्र। १०. आज्ञाकारिता। ११. मृतक के लिए की जाने वाली प्रार्थना। १२. प्यार से पाले हुए। १३. सुख-दुःख के अनुभव से रहित। १४. पालन-पोषण।

आज दोशम्बा को ये ख़त मैं तुमको भेजता हूँ। यक़ीन है कि कल पहुँचेगा। बमुजर्रिद[1] इसके पहुँचने के आप उनसे मिलिएगा। मातमज़दा[2] का बुलाना मुनासिब नहीं। आपको बतरीक़े ताज़ियत[3] जाना चाहिए और जो ख़त आपके नाम का है उनको पढ़वा दीजिएगा।

मौलवी अब्दुललतीफ़ की ख़िदमत में मेरी तरफ़ से ये शेर मौलाना शर्फ़ुद्दीन मुसन्निफ़[4] 'नाम ए हक़' का पढ़ दीजिएगा—

दर तलब करदने हक़ीक़ते कार
अज़ ख़ुदा शर्मदारो शर्म मदार[5]

रक़मज़दा[6] व ख़ाँदादाश्ता[7] चाश्तगहे[8] दोशम्बा, २३ जनवरी १८५४ ई०, ज़रूरी व जवाब तलब।

—अज़-असदुल्लाह

३६

(२३ फ़रवरी, १८५४ ई०)

भाई साहब,

मैं नहीं जानता कि तुम कहाँ हो। तन्हा मियाँ अब्दुललतीफ़ को अलीगढ़ में समझा हुआ था। कल मुंशी हरगोपाल साहब का ख़त आया। उससे मालूम हुआ कि आप भी यहीं हैं। बारे, कहिए कि ज़किया व अब्दुस्सलाम कब आयेंगे। मुझसे तो वो अगर कोल में हैं, तो भी दूर हैं। मगर तुम्हारे वास्ते पूछता हूँ कि उनकी दूरी पर शाक़[9] है।

---

१. साथ ही। २. शोकग्रस्त। ३. शोक प्रकाशन के लिए। ४. लेखक। ५. पत रखने वाले ईश्वर से अपनी आकांक्षा की पूर्ति में किसी प्रकार की झिझक न रख। ६. लिखित। ७. प्रेषित। ८. पूर्वाह्न। ९. कठिन, दूभर।

लो हज़रत, यहाँ भी चेचक का ज़ोर शुरू हुआ। वारे, य खुदा का फ़ज़्ल है के अंजाम वख़ैर[1] है। जिस ज़माने में आपने लिखा था कि कौल में शिद्दत है, उस ज़माने में यहाँ कुछ ज़िक्र न था। अब हंगामा गर्म है। ज़ाहिरा कौल की राह से तशरीफ़ लाई हैं, बहरहाल बच्चों की खैर व आफ़ियत और उनके आने का हाल के आ गये और अगर नहीं आये तो कब आएँगे, मुफ़स्सल लिख भेजिएगा। मुंशी अब्दुललतीफ़ साहब को दुआ पहुँचे।

२३ फ़रवरी, १८५४ ई०। —असद

३७

(२७ मार्च, १८५४ ई०)

भाई साहब,

आपका खत आया। हाल लड़के-वालों का और तुम्हारा मालूम हुआ। हक़ताला तुमको और उन सबको सलामत रखे। ये काफ़िर इह्तेराक़[2] की बीमारी जिस रंग से ज़ुहूर करे, ज़ायल[3] होना नहीं जानती। तख़फ़ीफ़[4] इसमें बमंजिले सेहत है। मुझको देखो, अगरचे मेरे-तुम्हारे हालात मुत्तफ़ावित[5] हैं, लेकिन असल मर्ज़ एक है। अब के मेरे हाँ उसका ज़ुहूर बसूरते तप व लरज़ा[6] के हुआ। आठ दिन ग़िज़ा न खाई। अब अगर तपन रही, लेकिन और अवारिज़[7] पैदा हो गये। चुनाँचे कल पाँचवीं मुस्हिल[8] था और कल फिर होगा।

मिर्ज़ा तफ़्ता से इन्दल मुलाक़ात[9] कह देना कि ये औराक़े अशार[10] जो तीसरी बार आये हैं, हनोज़ उनके देखने की फ़ुर्सत नहीं हुई।

---

१. सकुशल। २. दुष्ट जलन। ३. दूर होना। ४. कमी। ५. भिन्न। ६. कम्पन, जाड़े की थरथराहट। ७. रोग। ८. विरेचन ९. भेंट के समय। १०. शेर के पृष्ठ।

सनाउल्लाख़ाँ 'सना' फ़तहपूरी मस्जिद के एक हुजरे में मय अपने फ़र्ज़न्द के रहते हैं। इहेतरामुद्दौला हकीम अहसनुल्लाख़ाँ बहादुर से उनको मिलवा दिया। आज पाँचवाँ दिन है कि जनाब हकीम साहब मेरे देखने को आये थे। सनाउल्लाख़ाँ मय क़सीदे के मौजूद थे। उनसे क़सीदा पढ़वा दिया। दूसरे दिन वो उनके घर गये। उन्होंने पाँच रुपये उनको दिये। फिर उनको मय क़सीदे के भाई ज़ियाउद्दीनख़ाँ, जो छोटे बेटे नवाब अहमदबख़्शख़ाँ के हैं, उनके पास भेजा। पाँच रुपये उन्होंने दिये। ये दहाका वसूल हो गया है। कल सनाउल्लाख़ाँ मेरे पास नहीं आये। आज शायद आयें। अब वो छोंटम नामी एक रंडी है। महाराज हिन्दूराव की नौकर है। इसको वो अपना शागिर्द बताते हैं उससे रुख़सत होने की फ़िक्र में हैं। जब वो उनको कुछ देगी तब वो कौल को तुम्हारे पास रवाना होंगे।

मुंशी अब्दुललतीफ़ को आया मेरी दुआ कहते हो या नहीं। मैं उनकी नस्र के देखने का मुश्ताक़[1] हूँ। बाक़ी और सब लड़के-वालों को, ख़ुसूसन[2] बेगम को दुआ पहुँचे। भाई, औरतों के वास्ते इतना काफ़ी है कि हर्फ़शनास[3] हो जायें और क़ुरान शरीफ़ नाज़िरा[4] पढ़ लिया करें। उस पर पढ़ने के वास्ते शिद्दत न किया करो।

दोशम्बा, २७ मार्च १८५४।

—असदुल्लाह.

३८

(४ जून, १८५४ ई०)

भाई साहब,

अलहम्दुलिल्लाह[5], कि, और तो सब तरह ख़ैर व आफ़ियत है, मगर

---

१. इच्छुक। २. विशेष रूप से। ३. साक्षर। ४. दृष्टि से देखकर। ५. प्रशंसा ईश्वर की।

गरमी की वो शिद्दत है कि अयाजन बिल्लाह[1] मैं आप हृतराक़[2] का मारा दूसरे ये मुसीबत। एक वक़्त का खाना खाने वाला सो वो अब मौक़ूफ़। गिज़ा मुन्हसिर[3] दही पर है। कहाँ तक दही खाऊँ? क्या करूँ? अगरचे ताब मुझ में रोज़ा रखने की कहाँ, मगर बदतर रोज़ादारों से हूँ। रोज़ादारों को क्या कहूँ, क्या हाल है? मेरे चार खिदमत गुज़ार हैं। चारों रोज़ादार, आखिरे रोज़ मुझको यों नज़र आता है कि चार मुर्दे फिर रहे हैं। ये परेशानी और ये बेसामानी, न खसखाना न बर्फ़ आब[4]—

आराम के असबाब कहाँ से लाऊँ?
सामाने खुरो ख़ाब[5] कहाँ से लाऊँ?
रोज़ा मेरा ईमान है 'ग़ालिब' लेकिन
खसखाना व बर्फ़ाब कहाँ से लाऊँ?
इफ़्तारे सोम[6] की जिसे कुछ दस्तगाह[7] हो
उस शख्स को ज़रूर है रोज़ा रखा करे
जिस पास रोज़ा खोल के खाने को कुछ न हो
रोज़ा अगर न खाये तो नाचार क्या करे?

ये रुबाई और ये क़ता कल हुज़ूर में पढ़ा था। बहुत हँसे और खुश हुए। हृतराक़ में मर रहा हूँ, मगर आमों को ताकता हूँ कि कब निकलें। बंगाले में यक़ीन है कि आम चल निकले होंगे। दो बरस कलकत्ते में रहा हूँ। जून महीने में आम बिकते हैं। दिन तीनेक हुए एक मेवाफ़रोश पाँच आम लाया था। मज़ा न था, लू के पके हुए थे।

---

१. ईश्वर रक्षा करे। २. जलन। ३. निर्भर। ४. बर्फ़ का पानी। ५. खाना और सोना। ६. दिन भर रोज़ा रखकर सन्ध्या का भोजन करना। ७. सामर्थ्य।

भला ये तो सब बातें हो लीं, मगर अँगरेज़ी डाक का हाल कहिए। नहीं मालूम क्या बंदोबस्त हुआ है कि बिल्कुल डाक का इंतिज़ाम व ऐतमाद जाता रहा। एक-दो खत अँगरेज़ों, एक फरंगी के तल्फ़[1] हो गए। उसने यहाँ की डाक में गुफ़्तगू की, कोई उसका मुजीब[2] न हुआ। उसने बड़े पोस्ट-मास्टर से शिकायत की। जवाब पाया के कुछ जवाब न पाओगे। तुमने दिया, हमने भेज दिया। अब पहुँचे या न पहुँचे। मेरठ से भी फ़रियाद आई है। आगरे के खतों से भी सुना जाता है। अगरचे मेरा कोई खत अब तक तल्फ़ नहीं हुआ है, मगर बवाए आम[3] में बचाव कहाँ? नाचार मैंने ये क़ायदा क़रार दिया है कि आगरे में मेजर जान जाकूब साहब और कोल में तुम और बाँदा में मेरा मामूँ का बेटा भाई है, और दो-एक दोस्त अज़लाए मुतफ़र्रिका[4] में उनको लिख भेजा है कि वो मुझको और मैं उनको खत बैरंग भेजा करूँ। भाई, हिसाब बराबर है, मगर इस सूरत में खातिर जमा रहती है। अब अगर तुम्हारा खत पोस्ट पेड़ आएगा तो मैं आज़ुर्दा हूँगा। बैरंग भेजा करो और मुंशी हरगोपाल को भी समझा दो, बल्कि ये तहरीर दिखा दो। बहुत पोस्ट पेड़ खत ज़ाया होते हैं। बैरंग पर ऐतमाद है।

लड़के-वालों को दुआ पहुंचे। बहुत दिन हुए कि खैर व आफ़ियत नहीं सुनी। सब का हाल लिखो। खुसूसन बेगम की खैरियत। हुसेनअली कोर्निश[5] अर्ज़ करता है।

जुमा, ४ जून १८५४ ई०।

—असदुल्लाह

---

१. नष्ट। २. उत्तरदाता। ३. सामान्य जनों की महामारी। ४. विभिन्न जिले। ५. अभिवादन।

३९

(१८ जून, १८५४ ई०)

भाई साहब,

क्या कहूं कि कितना हँसा हूं तुम्हारी इस बात पर, कि, तू तो क़ता या रुबाई कह कर अलग हो गया और मुझको तीस रोज़े रखने पड़े। गोया अलग-अलग मुझ पर और तुम पर रोज़े फ़र्ज़ न थे, बल्कि एक काम ब शराक़त[1] मुझको और तुमको सुपुर्द हुआ था। इसमें मैंने तो कुछ न किया और आपने अपने हिस्से और मेरे हिस्से का काम सिर्फ़ तुमने किया। खुदा हज़रत को सलामत रखे।

भाई साहब, मैं न समझा कि ज़किया बेगम अम्मायतसा सा अलून का सिपारा पढ़ चुकी या हिफ़्ज़[2] कर चुकी। अल्लाहो अकबर[3] अगर हिफ़्ज़ किया है तो बड़ा काम किया है और बहुत बड़ा काम करे, अगर तीसों सिपारे हिफ़्ज़ करे। बारे, ये तो कहो कि तुमने तो उसको पढ़ते सुना होगा। हर्फ़शनास[4] हो गई है और और मुफ़र्रदात[5] निकाल कर आप उनको पैवन्द दे लेती है या यों ही तोते की तरह 'हक़ अल्लाह, पाकज़ात अल्लाह' पढ़ती है।

मुंशी अब्दुललतीफ़ और हमारे शेख इकरामुद्दीन और शेख नसीरुद्दीन और कुलसूम बेगम और बी हाफ़िज़ा[6] बेगम जिनका ज़िक्र हो चुका है, सबको दुआ पहुँचे और सब बख़ैर बख़ूबी सलामत रहें।

---

१. साझे में। २. कंठस्थ। ३. ईश्वर, महान्। ४. साक्षर। ५. वर्णमाला के अक्षर। ६. जिसे कुरान कंठस्थ होती है।

दिल कुढ़ता है मिर्ज़ा हुसेनअली बेग रिसालदार के हाल पर, बीवी ने उनका पाँच-छै हज़ार रुपया नक़्द व जिन्स तबाह कर दिया। रुपये क्या गोया घर खाक में मिला दिया। अब वो ग़रीब क्या करे? मेरे पास दो-तीन बार आये। एक दिन तन्हाई में अपना हाल कहा। मैं देखता था कि इस शख़्स को अब रोना आता है। सच है—

जने बद दर सराये मर्दे निको
हम दरीं आलमस्त दोज़खे ऊ[1]

यहाँ दिल्ली में एक इस्तेलाह[2] नये नवाब की और ये लफ़्ज़ आम है। हिन्दू हो या मुसलमान, इस पर सादिक़[3] आ जाता है। सूरत ये कि जहाँ कोई शख़्स मरा, बशर्ते आँ के दौलतमन्द हों, उसका बेटा माल पर मुतसर्रिफ़[4] हुआ। बदमाश लोग फ़राहम हुए और उसको खुदावन्दे नेमत, जनाबे आली कहना शुरू किया। फ़लानी रंडी आप पर मरती है, फ़लाना अमीर अपनी मजलिस में आपकी यों तारीफ़ करता था। आपको लाज़िम है उस रंडी का बुलाना और उस अमीर की दावत करनी, दुनिया इसी वास्ते है। रुपया साथ-साथ नहीं जाता। आपके बाबा क्या ले गये जो आप ले जायेंगे। ग़र्ज़, कि, बन्दा आज तक तीन नये नवाब देखा चुका है। एक तो खत्री टोडरमल लाख रुपये का आदमी था। पान-सात बरस में सब कुछ खोकर शहर से निकल गया और मफ़क़ूदुल खबर[5] हो गया। दूसरा एक पंजाबी लड़का—सआदत नाम। पचास-चालीस हज़ार रुपये खोकर तबाह हो गया। तीसरा खान मुहम्मद नाम, सादुल्लाखाँ का बेटा, कि, वो भी बीस-पच्चीस हज़ार रुपये लुटा कर और बग्घियों पर चढ़कर अब जूतियाँ चटकाता फिरता है। ग़र्ज़, कि, मर्दों को नदे-

---

१. सभ्य मनुष्य के घर में कर्कश स्त्री हो तो उसके लिए इसी संसार में नरक है। २. परिभाषा। ३. सच्चा। ४. अधिकार करने वाला। ५. जिसका कोई समाचार न मिले।

नवाब वनते सुना था, औरतों में इस नेकवख्त को देखा। असल उसकी ये है—एक खानगी है मक्कारा और अय्यारा। अव वुढ़ापे में उसने मेरे हक़ीक़ी साले याने ज़ैनुलआवदीनखाँ मरहूम के मामूँ को दाम[1] में लाकर उनके घर में वैठी है। और नेकवख्त वहू-बीवियों को लूटती-फिरती है। उसी ने रिसालदार की बीवी से मिलकर उसको नया नवाव वनाया और सारा घर लुटवाया। चुनाँचे रिसालदार की जवानी आपको मुफ़स्सल मालूम होगा। वेचारे ने हरचन्द चाहा कि ये मेरे साथ चले, हरगिज़ न गई—

दर कुंजे दमाग़म मतलव जाए नसीहत
कीं हुजरा पुरज़ ज़मज़मए चंगो रवावस्त[2]

अव ये तन्हा आपके पास आते हैं। उनकी रामकहानी उनकी ज़वानी सुनिएगा।

हुसैनअली आपको वन्दगी और अपने वहन-भाइयों को आला क़दरे मरातिव[3] सलाम-वन्दगी कहता है। अ, व, ज, ह, ख पढ़ता है। खुदा मेरी शर्म रख ले और इसमें कोई इस तरह का क़ुसूर न रह जाये, जो लोग मुझको नाम रखें कि क्या वुरी तरह परवरिश की।

निगाश्ता दोशम्वा, २२ रमज़ान १२७० हि० व १८ जून १८५४ ई०।

लो साहव अव के जुमे को अलविदा और अगले मंगल या वुध को ईद होगी।

—अज़-असदुल्लाह्

---

१. जाल। २. मेरे मस्तिष्क के किसी कोने से उपदेश मत माँग, मस्तिष्क का कक्ष चंग और रवाव की गुंजन से भरा है। ३. अत्यधिक प्रतिष्ठा के साथ।

४०

भाई साहब,

ये जो आपने लिखा कि तेरे वो अशआर सुने जाते हैं कि जो कभी नहीं सुने थे, हाल ये है कि मैंने इन दिनों में दो ग़ज़ले लिखी हैं। एक तो 'दरिया न हुआ, सहरा न हुआ,' सो वो आपके पास भेज चुका। दूसरी ग़ज़ल—'खाँ क्यों हो और गुमाँ क्यों हो, वो अब भेजता हूँ। इन दो ग़ज़लों के अलावा हाल में कोई ग़ज़ल नहीं कही। पस, अगर इसके सिवा कोई कुछ आपके सामने पढ़े तो वो या मेरा कलाम न होगा या साबिक़ की कोई ग़ज़ल होगी कि वो आगे आपने न सुनी होगी।

बन्दा परवर, पन्द्रह रोज़ों का अज्र[1] जो आपने मुझको दिया वो फ़ौरन मैंने उलटा फेर दिया। मेरे किस काम का ? न आम हैं कि खाऊँ, न शरबत है के पीऊँ ?

भाई, अब तहनियते ईद[2] में दो क़सीदे किस अन्दाज़ के लिखे हैं कि देखोगे तो हज़[3] उठाओगे। परसों या अतरसों रवाना करूँगा, हरगोपाल साहब को भी दिखा दीजिएगा। रिसालदार के घर के बाब में जो कुछ तुमने कहा, वो मुताबिक़े वाक़िआ[4] नहीं है। याने उस नेकबख्त ने ज़िद से ये काम नहीं किया। ईं हिकायत राबयाने दीगरस्त[5]। एक ज़ने मर्दे[6] अफ़गन बदरविश, बदफ़न ने उसको लूट-खाया। मेहमानदारी ए हर रोज़ा व गुल व मेवा व नक़्श व निगार, रंग व बू[7]। ये ऐयाशी व बदमाशी है, न आज़ुर्दगी[8] व दिल आज़ारी।

१. प्रतिफल। २. ईद की बधाई। ३. आनन्द। ४. घटना के अनुसार। ५. इस कहानी की बात दूसरी है। ६. ऐसी स्त्री जिसने पुरुष को परास्त कर दिया। ७. गंध। ८. खिन्नता।

मुंशी नबी बख्श 'हक़ीर' के नाम

मैं अपने बच्चों को प्यार करता हूँ और दुआएँ देता हूँ। हुसैनअली तुमको बन्दगी और बड़े भाई मुंशी अब्दुललतीफ़ को आदाब और बहनों को सलाम और भतीजा-भतीजी को इस राह से कि वो उम्र में और रिश्ते में छोटे हैं, दुआ कहता है—

किसी को देके दिल कोई नवा संजे फ़ुग़ाँ[1] क्यों हो?
न हो जब दिल ही सीने में तो फिर मुँह में ज़बाँ क्यों हो?
वो अपनी ख़ू[2] न छोड़ेंगे हम अपनी वज़ा क्यों छोड़ें?
सबुकसर[3] बन के क्या पूछें कि हमसे सरगिराँ[4] क्यों हो?
वफ़ा[5] कैसी, कहाँ का इश्क़ जब सर फोड़ना ठैरा
तो फिर ऐ संगदिल[6] तेरा ही संगे आस्ताँ[7] क्यों हो?
क़फ़स[8] में मुझसे रुदादे चमन[9] कहते न डर हमदम[10]
गिरी है जिस पै कल बिजली वो मेरा आशियाँ[11] क्यों हो?
ये कह सकते हो, हम दिल में नहीं हैं, पर ये बतलाओ
कि जब दिल में तुम्हीं तुम हो तो आँखों से निहाँ[12] क्यों हो?
ग़लत है जज्बे दिल[13] का शिकवा देखो जुर्म किसका है
न खींचो गर तुम अपने को कशाकश दरमियाँ क्यों हो?
यही है आज़माना तो सताना किसको कहते हैं
अदू[14] के हो लिये जब तुम तो मेरा इम्तिहाँ क्यों हो?
कहा तुमने कि क्यों हो ग़ैर के मिलने में रुस्वाई
ब जा[15] कहते हो, सच कहते हो, फिर कहियो के हाँ क्यों हो?

---

१. आर्त्तनाद का गायक। २. स्वभाव। ३. ओछा। ४. अप्रसन्न। ५. प्रेम। ६. पत्थर का हृदय रखने वाला। ७. पत्थर की देहली। ८. पिंजरा। ९. उद्यान की कहानी। १०. मित्र। ११. घोंसला। १२. परोक्ष। १३. हृदय की भावना। १४. शत्रु। १५. उचित।

निकाला चाहता है काम क्या तानों से तू 'ग़ालिब'
तेरे बेमेह्र[1] कहने से वो तुझ पर मेह्रबाँ क्यों हो ?
क़िता-इफ़्तारे सोम[2] की जिसे कुछ दस्तगाह हो
उस शख़्स को ज़रूर है रोज़ा रखा करे
जिस पास रोज़ा खोल के खाने को कुछ न हो
रोज़ा अगर न खाये तो नाचार क्या करे ?

४१

(जुलाई, १८५४ ई०)

भाई साहब,

क़सीदा मदहिया[3] हज़रत वली अहद बहादुर[4] में 'शीन' की ज़मीर[5] मत्ले[6] से लेकर दूर तक वतर्फ़ के राजे है—

ज़ हैं बुताने मुग़ाँ शेवा दाद ख्वाहानश
ज़े दस्त हाए हिना बस्ता गुल बदामानश[7]

ज़ है का मोरिद मज़कूर नहीं याने माशूक़। शायर कहता है वाह अजब माशूक़ है कि बुताने मुग़ाँ शेवा दाद खाह उसके हैं, मुग़ाँ शेवा सिफ़त है बुतां की। मेरे माशूक़ के दादखाह उसके हैं ऐसे माशूक़ कि जो मुग़ाँ शेवा हैं। और मुग़ों की जहाँ रविशें हैं, एक ये भी है कि हाथों में मेहँदी लगाये रहते हैं और माशूकों के हाथ भी हिनाई[8] होते हैं। और दादखाह का काम दामन

---

१. निष्करुण। २. रोजा खोलना। ३. प्रशंसात्मक। ४. युवराज। ५. तृतीय पुरुष में 'श' का प्रयोग। ६. गजल का पहला शेर। ७. उस (प्रेयसी) के हाथ मेंहदी से रचे हुए हैं और आंचल फूल से भरा है। अतः वह प्रशंसा की पात्री है। ८. मेंहदी के।

पकड़ना है। जब माशूक़ उसके दामनगीर हुए और हाथ उनके हिनाई हैं तो गोया वो दस्तहाए रंगीन फूल हैं। उसके दामन में अल हासिल इस बैत तक–गहे ज़ मेहरे बदल जागुज़ीदा पैकानश।

'शीन' की जमीर बतरफ़े माशूक़ राजै है। बाक़ी और अशार में और तरफ़ है कि क़रीना[1] इस पर दाल है।

तुम किस रेख्ते को नया समझते हो ? "कहा किये और हुआ किये"— ये ग़ज़ल पुरानी है। "दरिया मेरे आगे—सहरा मेरे आगे" इस पर भी एक साल गुज़र चुका है। क़िले मुबारक के मुशाअरे की ग़ज़ल है—

बाज़ीचए अतफ़ाल[2] है दुनिया मेरे आगे
होता है शबो रोज़ तमाशा मेरे आगे
इक खेल है औरंगे सुलेमाँ[3] मेरे नज़दीक
इक बात है ऐजाज़े मसीहा[4] मेरे आगे
जुज़[5] नाम नहीं सूरते आलम[6] मुझे मंज़ूर
जुज़ वहम नहीं हस्तिए अशिया[7] मेरे आगे
होता है निहाँ[8] गर्द में सहरा[9] मेरे होते
घिसता है जबीं[10] खाक पै दरिया मेरे आगे
मत पूछ कि क्या हाल है मेरा तेरे पीछे
तू देख कि क्या रंग है तेरा मेरे आगे

---

१. क्रम। २. बच्चों का खिलौना। ३. सुलेमान का सिंहासन। सुलेमान का शासन जलचरों तथा नभचरों पर भी था। ४. ईसा मसीहा का चमत्कार, वे प्राणियों को जीवित कर सकते थे। ५. अंश। ६. विश्वदर्शन। ७. पदार्थ का अस्तित्व। ८. गुप्त। ९. रेगिस्तान। १०. माथा।

सच कहते हो ख़ुदबीं[1] व ख़ुदारा[2] हूँ न क्यों हूँ ?
बैठा है बुते आईना सीमा[3] मेरे आगे
फिर देखिए अन्दाज़े गुल अफ़्शानिए गुफ़्तार[4]
रख दे कोई पैमानए सहबा[5] मेरे आगे
नफ़रत का गुमाँ गुज़रे है मैं रश्क से गुज़रा
क्यों कर कहूँ, लो नाम न उनका मेरे आगे
ईमाँ मुझे रोके है जो खींचे है मुझे कुफ़्र
काबा मेरे पीछे है कलीसा[6] मेरे आगे
आशिक़ हूँ पै माशूक़ फ़रेबी है मेरा काम
मजनूँ को बुरा कहती है लैला मेरे आगे
ख़ुश होते हैं पर वस्ल[7] में यूँ मर नहीं जाते
आई शबे हिज्राँ[8] की तमन्ना मेरे आगे
है मौजज़न[9] इक क़ुल्ज़ुमे ख़ूँ[10] काश यही हो
आता है अभी देखिए क्या क्या मेरे आगे
गो हाथ को जुम्बिश[11] नहीं आँखों में तो दम है
रहने दो अभी साग़रो मीना[12] मेरे आगे
हमपेशा[13] व हममश्रबो[14] हमराज़ है मेरा
'ग़ालिब' को बुरा क्यों कहो अच्छा मेरे आगे

१. आत्मदर्शी। २. ईश्वर के लिए। ३. माथा, सैनाणी। ४. वार्तालाप की फुहार। ५. शराब का प्याला। ६. गिरजाघर। ७. संयोग। ८. वियोग की रात। ९. तरंगित। १०. रक्त का समुद्र। ११. गति। १२. चषक और शराब का जग। १३. समव्यवसायी। १४. एक स्थान पर पीने वाला।

४२

(१० अगस्त, १८५४ ई०)

भाई साहब,

आपके इनायत नामे से भाबी साहिबा के मिज़ाज की नासाज़ी[1] और बच्चों की नाखुशी मालूम हुई। परवर्दगार सबको अपनी अमान[2] में रखे। दिन बुरे हैं। यहाँ भी तप का मर्ज़ आम है, मगर अंजाम बखैर है। ये सब ख़ूबियाँ मेंह न बरसने की हैं। ख़ुदा से दुआ माँगता हूँ और आपसे चाहता हूँ कि अब जल्द आप सब की खैर व आफ़ियत लिखें।

मिर्ज़ा यूसुफ़अलीखाँ अगर अभी वहाँ से न चले हों तो उनको मेरी दुआ कहना और ये कहना कि मियाँ तुम्हारा ख़त आया। तुम्हारे सब दोस्तों को सलाम कह दिया। वो सब सलाम कहते हैं। अब तुम मुंशी साहब पर सब उमूर[3] हवाले करके चले आओ। दिरंग[4] न करो।

ग़ज़ल देखी। भाई साहब, इन ज़मीनों[5] मज़ामीने आशिक़ाना[6] की गुंजाइश कहाँ? मुआफ़िक इस ज़मीन के अशार मरबूत[7] हैं।

मुंशी अब्दुललतीफ़ और उनके फ़र्ज़न्द, बेगम और उसकी हमजोलियों को दुआ।

रोज़े जुमा आज़ दहुम, अगस्त १८५४ ई०।

अज़-असदुल्लाह्

---

१. अस्वस्थता। २. शरण। ३. विषय। ४. विलम्ब। ५. गजल का अन्त्यानुप्रास, पूर्वान्त्यानुप्रास और छन्द। ६. श्रृंगार रस सम्बन्धी विषय। ७. अभ्यस्त।

४३

(१५ अगस्त, १८५४ ई०)

भाई साहब,

परसों शाम को मिर्ज़ा यूसुफ़अलीख़ाँ शहर में पहुँचे और कल मेरे पास आये। बेगम की पर्दानशीनी और घर में बहुत लोगों की बीमारी और फिर तुम्हारी उनके हाल पर इनायतें और शाम की सुहबतों में सुख़नवरों[1] की हिकायतें[2] सब बयान कीं, हैरान हूँ कि मेंह हर तरफ़ ख़ूब बरस रहा है, फिर बीमारी का शीवा[3] क्यों है? यहाँ भी अक्सर लोग तप में मुब्तिला हैं। हक़ताला अंजाम बख़ैर करे और अपने बन्दों पर रहम फ़रमाए।

अगले ख़त में लिख चुका हूँ कि मरीज़ों की सेहत की ख़बर जल्द लिखिएगा। ज़ाहिरा अब तक कुछ न कुछ क़िस्सा चला आता है कि आपका इनायतनामा अब तक नहीं आया।

हकीम इलाहीबख्श सिकन्दराबादी आपके पास पहुँचे हैं। बहुत नेकबख़्त और माक़ूल आदमी हैं। उनकी परवरिश का ख़याल रहे और शेख़ रहमतुल्लाह साहब जो आगे आपकी बदौलत कामयाब हो चुके हैं, अगर वहाँ हों तो उनका भी आपको ख़याल रहे और मेरा सलाम कह दीजिए और अगर वहाँ न हों तो उनका हाल मुझको लिखिए।

मिर्ज़ा यूसुफ़अलीख़ाँ कहते थे कि आप उस क़सीदे के तालिब[4] हैं, जो बतरीक़े मर्सिया[5] लिखा गया है और उसमें शाह अवध की मदह[6] भी मुन्दरिज है, अगर हाथ आ गया तो छापे का वर्ना क़लमी भेज दूंगा। बादशाह

१. कवि। २. वृत्तान्त। ३. प्रकटीकरण ४. आकांक्षी। ५. करुण रस लिखी जानेवाली कविता की एक शैली। ६. प्रशंसा।

अवध तक पहुँच गया है। अगर कुछ ज़ुहूर[1] में आया तो वो भी तुमको लिखूँगा।

बेगम को दुआ पहुँचे। क्यों भई, अब हम कोल आये भी तो तुमको क्यों कर देखेंगे? क्या तुम्हारे मुल्क में भतीजियाँ चचा से पर्दा करती हैं। भाई, ख़ुदा के वास्ते सब की ख़ैर व आफ़ियत जल्द लिखो। मुंशी हरगोपाल के ख़त से इतना मालूम हुआ कि मियाँ अब्दुल लतीफ़ के घर में अच्छी तरह हैं, औरों का हाल नहीं मालूम हुआ।

वस्सलाम माल अक्राम। सेशम्बा, १५ माहे अगस्त १८५४ ई०।

—अ़ग-असदुल्लाह

४४

(१५ सितम्बर, १८५४ ई०)

भाई साहब को बन्दगी पहुँचे। यहाँ का माजरा अर्ज़ करूंगा। पहले ये तो पूछिए कि यहाँ कोल का क्या वाक़ा मशहूर है। ला हौल विला क़ुव्वत इल्लाह बिल्लाह[2]। हर अंजुमन में यही ज़िक्र कि, कोल में बड़ी खानाजंगी[3] हुई और हिन्दू-मुसलमानों में तलवार चली। दस-बीस आदमी तरफ़ैन[4] के मारे गये। मैं चाहता था के तुमको लिखूँ कि इस अर्से में तुम्हारा ख़त आ गया और हाल मालूम हुआ। मैं जानता हूँ ऐसा ही मशहूर होगा कि दिल्ली में तलवार चली। सो हज़रत न तलवार चली, न खानाजंगी हुई। दो दिन हिन्दू-दुकानदारों ने दूकानें बन्द कर दी थीं। सो, साहब मजिस्ट्रेट बहादुर और कोतवाल ने सारे शहर का

---

१. प्रकट में रूप में। २. ईश्वर के अतिरिक्त और कोई सामर्थ्य नहीं है। ३. गृह-युद्ध। ४. दोनों पक्ष।

गश्त किया। बमुलातफ़त[1] व मुलायमत[2] बताकीद[3] व तहदीद दूकानें खुलवाईं। बकरियाँ भी क़ुर्बान हुईं, गायें भी।

मैंने अबके ईद को क़सीदा नहीं लिखा। एक मुजल्लद[4] इस तारीख़ का तमाम कर कर वो नज़्र किया।

इसका हाल सुनिए कि वो सूरत जो पहले थी वो नहीं रही। आगे आग़ाज़ अमीर तैमूर के हाल से था। अब शुरू तहरीर आफ़रीनशे आलम[5] व ज़ुहूरे आदम[6] से है। मैंने किताब का नाम 'परतोस्तान' रखा और दो मुजल्लद[7] पर मुन्क़सिम[8] किया। पहला मुजल्लद इब्तिदाए आलम से हज़रत नसीरुद्दीन हुमायूँ तक, इसका नाम 'मेहरे नीमरोज़' रखा। दूसरा मुजल्लद जलालुद्दीन अकबर के हाल से हज़रत वाली अस्र[9] तक। इसका नाम माहे नीममाह, सो वो 'मेहरे नीम रोज़' तमाम हुआ और नज़रे हुज़ूर किया। अब अगर ज़ीस्त[10] वफ़ा करेगी तो 'माहे नीममाह' लिखा जाएगा। तौक़ीए ख़ुशनूदी[11] मुझको मिल गया, याने शुक़्क़ा[12] मुश्तमिल तहसीन[13] व इज़हारे इनायत[14] पर। इसी को ख़िलते फ़ाख़िरा[15] और जागीर तसव्वुर करता हूँ। मुझमें कहीं जाने का दम नहीं। अगर बादशाह का तवस्सुल[16] न होता तो भी यहीं पड़ा रहता। बस मैं इसको ग़नीमत जानता हूँ। मेरा क़द्रदाँ कौन कि मैं उस पर नाज़ करूँ। बक़ौल डूम के—जो समझे वो हमारा ग़ुलाम, जो न समझे हम उसके ग़ुलाम।

१. दया के साथ। २. कोमलता। ३. चेतावनी के साथ। ४. जिल्दबन्द पुस्तिका। ५. युगादि। ६. आदम का प्रकटीकरण। ७. जिल्दबन्द। ८. विभक्त। ९. समकालीन नरेश। १०. जीवन। ११. प्रशंसा का प्रमाण-पत्र (शाही)। १२. शाही आदेश। १३. साधुवाद। १४. कृपा-प्रदर्शन। १५. बहुमूल्य वेश (राज्य द्वारा प्रदत्त)। १६. आधार।

ज़िन्दगी वर गर्दनम उफ़्ताद 'वेदिल' चारा नीस्त
चार वायद ज़ेस्तन नाचार वायद ज़ीस्तन[1]

हाँ साहव, युसुफ़अलीखां ने लखनऊ वाले क़सीदे का छापा जहाँखां की मारिफ़त तुमको भेजा है। नहीं जानता जहांखाँ कौन है। यूसुफ़अलीखाँ की ज़वानी लिखता हूँ। पस, अगर पहुँच गया तो ख़ैर, वर्ना तुम जहाँखाँ से माँग लो।

साहव, यहाँ एक तप फैली है कि कोई घर न होगा, जिसके आधे आदमी तप में मुब्तिला न हों। कल्लू दारोग़ा, उसकी माँ, मदारी की घरवाली, उसके वच्चे सव वीमार। तुम्हारी भावी याने मेरी वीवी और हुसेन अलीखाँ की पालने वाली के वो घर की मदारुलमहाम[2] है, वीमार। मज़ा ये कि उन दोनों का रोज़े नौवत[3] एक है। ख़ुदा का शुक्र है कि हुसेनअली अच्छा है। आपको वन्दगी कहता है और अपनी वहन को सलाम और अपनी चाची को आदाव। मैं अव से वेगम को ज़किया वेगम न कहूँगा। अव मैं उसको हाफ़िज़जी[4] लिखा करूँगा। हाफ़िज़जी को मेरी दुआ पहुँचे और मुंशी अव्दुललतीफ़ को और उनके वच्चों को दुआ। वस्सलाम।

जुमा, १५ सितम्वर १८५४ ई०।

—असदुल्लाह

४५

(३ अक्तूबर, १८५४ ई०)

भाई साहव,

जी चाहता है वातें करने को। हक़ताला अव्दुस्सलाम की माँ को शिफ़ा[5]

---

१. जीवन मेरे लिए भार वन गया है। कोई उपाय नहीं है। चाहे प्रसन्नता से चाहे विवशता से, इसे विताना ही पड़ेगा। २. मंत्री। ३. वारी का दिन। ४. जिसे कुरान कंठस्थ हो। ५. स्वास्थ्य-लाभ।

दे और उनके बच्चों पर रहम करे। ये जो तप और खाँसी मुज़मिन[1] हो जाती है तो ये बीमारी नहीं है, रोग है। इस तरह के मरीज़ बरसों जीते हैं और अगर क़िस्मत में होता है तो अच्छे भी हो जाते हैं। कुलसूम को माँ का दूध न पिलाओ। दाई रख लो। मरीज़ा[2] को भी इफ़ाक़त[3] रहेगी और लड़की भी राहत पाएगी।

मुझको देखो, ग़म न दारी बुज़ बख़र[4]। कहाँ ज़ैनुल आबदीन और उसकी बीबी मरे और दो बच्चे छोड़ जाये और उनमें से एक मैं ले लूं। मुख़्तसर[5] कहता हूँ, आज तेरहवाँ दिन है के हुसेनअली ने आँख नहीं खोली दिन-रात तप और ग़फ़लत और बेख़ुदी[6]। कल बारहवें दिन मुहसिल दिया था। चार दस्त आये। मदार दो-चार बार दवा और एक-दो आशे जौ[7] पर है। अंजाम अच्छा नज़र नहीं आता। दादी उसकी बीमार, रोज़ दोपहर को लरज़ा चढ़ता है। आख़िरे रोज़[8] फ़ुर्सत हो जाती है। ज़ुहर क़ज़ा[9] और अस्र[10] वक़्त पर पढ़ लेती है। तमाशा ये के तारीख़ दोनों के तप की एक है। भाई, बीबी की तो इतनी फ़िक्र नहीं लेकिन हुसेनअली की बीमारी ने मार डाला। मैं उसको बहुत चाहता हूँ। ख़ुदा उसको बचा ले और मैं उसको दुनिया में छोड़ जाऊँ। सूख कर कांटा हो गया है। मैंने आगे तुमको नहीं लिखा। यहां बड़ी बीमारी फैल रही है और कोई बीमारी, ये तपे हैं रंगारंग, बेश्तर बारी की यानी अगर घर में दस आदमी हैं तो छै बीमार होंगे और चार तनदुरुस्त और उन छै में से तीन अच्छे हो जाएँगे तो वो चार बीमार होंगे। आज तक अंजाम बख़ैर था। अब लोग मरने लगे। हवा में समिय्यत[11] पैदा हो गई। मैं क़िस्से तो यों रहे—

---

१. जीर्ण। २. रोगिणी। ३. चैन। ४. यदि मनुष्य को कोई चिन्ता न हो तो बकरी ख़रीदो। ५. संक्षिप्त। ६. मूर्च्छा। ७. जौ का [illegible]। ८. सायंकाल। ९. अपराह्न की नमाज़। १०. दिन ढले की नमाज़। ११. ज़हरीलापन।

रात-दिन गर्दिश में हैं सात आस्माँ
हो रहेगा कुछ न कुछ घबराएँ क्या ?

ये डाक का निरख़ता क्या बिगड़ा मैंने अपने नजदीक अज़रुए एहतियात[1] बैरंग ख़त भेजना इख़्तियार किया था। गो बमुक़्तज़िए वहम हो, ख़त जब डाक घर में जाता था रसीद मिलती थी। पोस्ट पेड की लाल मुहर, बैरंग की स्याह मुहर, ख़ातिर जमा हो जाती थी। डाक किताब को देख कर याद आ जाता था के फ़लाना ख़त किस दिन भेजा है और किस तरह भेजा है। अब डाक घर में एक सन्दूक़, मुँह खुला हुआ, न रसीद, न मुहर, न मुशाहिदा[2]। ख़ुदा जाने वो ख़त रवाना होगा या न होगा। अगर रवाना भी हुआ तो वहां पहुँचने पर डाक के हरकारे को न इनाम का लालच न सरकार को महसूल की तमा[3]। न दिया हरकारे को या दिया। हरकारे ने न पहुँचाया। अगर ख़त न पहुँचा तो भेजने वाला किस दस्तावेज से दावा करेगा। मगर हाँ, चार आने देकर रजिस्ट्री करवाइए। हम दूसरे-तीसरे दिन जा—बजा[4] ख़त भेजने वाले रुपये आठ आने रजिस्ट्री को कहाँ से लायें ? अहयानन[5] हमने तीन माशे समझ कर आध आने का स्टाम्प लगा दिया। वो ख़त दो रत्ती बढ़ती निकला। मकतूबअलै[6] से दूना महसूल लिया गया। ख़ाही न ख़ाही काँटा-बाँट रखिए। कांटे का ख़ार ख़ार[7] अलग, तोलने का क़िस्सा अलग। ख़त भेजना न हुआ, एक झगड़ा हुआ, एक मुसीबत हुई। आज दसवीं मुहर्रम को ये ख़त लिखा है। कल इस्टाम्प के टुकड़े मँगाऊँगा। सरनामे पर लगा कर रवाना करूँगा। अँधेरी कोठरी का तीर है। लगा लगा, न लगा न लगा।

ख़ुदा के वास्ते इस ख़त का जवाब जल्द लिखना। अब्दुस्सलाम की माँ का मुफ़स्सल हाल लिखना। बदहवास हूँ। मुझको माफ़ रखना। हाफ़िज जी को दुआ। मुंशी अब्दुललतीफ़ को दुआ।

---

१. सावधानी की दृष्टि से। २. साक्षी। ३. लोभ। ४. यत्र-तत्र। ५. कभी-कभी। ६. जिसे पत्र लिखा गया। ७. परेशानी।

निगाश्ता दहुम[1] मुहर्रम, १२७१हि० मुताबिक़ सोअम[2] अक्तूबर १८५४ ई०, व मुरसिला चारशम्बा, ११ मुहर्रम व ४ अक्तूबर।

—अज़-असदुल्लाह

४६

(६ अक्तूबर, १८५४ ई०)

हाय हाय, वो नेक बख़्त न बची। वाक़ई ये के तुम पर और उसकी सास पर क्या गुज़री होगी? लड़की तो जानती ही न होगी कि मुझ पर क्या गुज़री? लड़का शायद याद करेगा और पूछेगा के अम्माँ कहाँ हैं? ये उसका पूछना और तुमको रुलाएगा। बहरहाल चारा जुज़[3] सब्र नहीं है। ग़म करो, मातम रखो, रोओ-पीटो। आख़िर ख़ूने जिगर खाकर चुप रहना पड़ेगा। हक़ताला अब्दुललतीफ़ को और तुमको और यतीमों की दादी और फूफियों को सलामत रखे और तुम्हारे दामन में उतूफ़त व आग़ोशे राफ़त[4] में उनको पाले।

हुसैनअली का हाल अगले ख़त में लिख चुका हूँ। आज सोलहवाँ दिन है तप को और नवाँ दिन है कि दाना नहीं खाया। सूख कर काँटा हो गया है। आज हुक़ना हो रहा है। मुझमें देखने की ताब नहीं। मैं दीवानख़ाने में बैठा लिख रहा हूँ। महल में मर्दाना है। बादशाही ख़ाश तराश हुक़ना कर रहा है। देखिए क्या हो? मुझको तो यास[5] है।

जुमा ६ अक्तूबर १८५४ ई०।

—असदुल्लाह

१. दशम। २. तीसरी। ३. धैर्य के अतिरिक्त कोई उपाय नहीं है। ४. दया का आँचल। ५. निराशा।

४७

(१५ अक्तूबर, १८५४ ई०)

भाई साहब,

आपका ख़त आया और मुंशी अब्दुललतीफ़ की दुख़्तर[1], बुलन्दअख़्तर[2] का अपनी फूफियों के साथ अकबराबाद जाना मालूम हुआ। यक़ीन के अब्दुस्सलाम अपनी माँ को याद करे, हक़ ब जानिब तुम्हारे है। वाक़ई, के, बड़ा हादिसा[3] तुम पर गुज़रा है। ख़ुदा तुमको सब्र भी दे और सब्र का अज्र[4] भी दे। इन्नालिलहे मअस्सावरीन[5]।

हुसैनअली अब अच्छा है, याने तप नहीं, पेशाब में रेग[6] आती है। मेदे में सलाबत[7] है। ज़ोफ़[8] की कुछ हद नहीं। ख़ुदा करे बच जाये और बिल्कुल अच्छा हो जाये।

सआदत व इक़बाल निशाँ[9] मिर्ज़ा यूसुफ़ अलीख़ाँ ताले उम्रहू[10] पहुँचते हैं। मेरी तरफ़ से भी मरासिमे ताज़ियत[11] बजा लाएँगे और हाल मेरी ग़मज़दगी और ख़स्तगी का कहेंगे।

१५ अक्तूबर १८५४ ई०।

—अज़-असदुल्लाह्

---

१. बेटी। २. सौभाग्यशाली। ३. दुर्घटना। ४. प्रतिफल। ५. ईश्वर सन्तोष करने वाले के साथ है। ६. रेत। ७. कठोरता। ८. दुर्बलता। ९. सौभाग्यशाली। १०. ईश्वर दीर्घायु करे। ११. शोक प्रकाशन की रस्म।

४८

(५ नवम्बर, १८५४ ई०)

आदाब बजा लाता हूँ और जाजिम[1] का सलाम करता हूँ। ये तकल्लुफ़ क्यों की ? इसकी ज़रूरत क्या थी ।

यूसुफ़अलीखाँ की ज़बानी तुम्हारे सामा[2] व शाम्मा[3] का हाल मालूम हुआ भाई, वल्लाह् बिल्लाह् । मेरा मुद्दत से यही हाल है कि न कान में आवाज़ आती है, न नाक में बू । बाआँ कि[4] मैं यहाँ मौजूद हूँ और हुकमा[5] मेरे दोस्त हैं, मेरी तदबीर नहीं हो सकी । तुम जो वहाँ बैठे चाहते हो कि यहाँ से तुमको कोई दवा या कोई नुस्ख़ा ऐसा भेज दिया जाये कि फ़ौरन सेहत हासिल हो जाये ये क्यों कर हो सके । फ़ुर्सत चाहिए, मशक़्क़त चाहिए । मुसहिल लिए जायें, माजूनें खाई जायें, अर्क़ पिये जायें । आइन्दा फ़ायदा हो या न हो, हरचन्द हकीम अहसनुल्लाखाँ साहब ने अज़राहे इनायत चाहा कि मुआलिजा[6] करें, मैंने जब्र उठाना गवारा न किया । ख़ैर ये क़िस्से और हैं । बात यही है कि इस अमराज़ का इलाज मुन्हसिर कसरते तनक़िया[7] में है और उसको हुज़ूरे तबीअत[8] व फ़रारा[9] ख़ातिर शर्त है।

ज़ियाउद्दीनख़ाँ बहादुर को मैंने कहला भेजा है। जब वो अपनी नसब नामा नक़्ल मेरे पास भिजवा देंगे तो मैं आपको भेज दूंगा। यूसुफ़अलीख़ाँ कहते थे कि अब्दुस्सलाम व कुल्सूम आगरे से आ गये, अच्छा हुआ । माँ तो ग़रीबों की है ही नहीं । अपने दादा-दादी के पास आराम से रहें ।

---

१. पृथ्वी तक झुककर । २. श्रवण-शक्ति । ३. घ्राण-शक्ति । ४. बावजूद ५. राज्याधिकारी । ६. चिकित्सा । ७. विरेचन की अधिकता । ८. निश्चिन्तता ९. अवकाश ।

मियाँ नसीरुद्दीन भी शाइर हुए हैं। आपने तखल्लुस[1] उनको क्या दिया है? मुझको इत्तिला दीजिए।

बेगम का हाल तुम्हारी तहरीर से मालूम हुआ कि अक्सर बीमार हो जाती है। खुदा उसका हाफ़िज़[2] रहे। पढ़ने में उस पर शिद्दत न किया करो। इस मेहनत को उस पर सहल कर दो। औरतों को इल्म इतना ही काफ़ी है कि हर्फ़ शनास[3] हों और कलाम मजीद[4] नाज़िरा[5] दुरुस्त पढ़ लें। खुदा उसको जीता रखे। सवादे हर्फ़ शनासी[6] हो गया है। क़ुरान पढ़ लेगी। शिद्दत न करो।

हुसैनअली अच्छा हो गया मगर सलाबते मेदा[7] और फ़म्मे मेदा[8] की हाँ वरम[9] बाक़ी है। कई दिन के बाद कल फिर तप चढ़ आई। आखिरे शब तप उतरी। आज अच्छा है। कल देखूँगा क्या हो। इसका हक़ीक़ी दादा याने ज़ैनुल आबदीनख़ाँ के वालिद और मेरे हमज़ुल्फ़[10] नवाब गुलाम हुसैनख़ाँ मर गये। बहुत अफ़सोस की बात है। ये शख्स बहुत साहबे मुरव्वत और साहबे मेहर व मुहब्बत था।

यकशम्बा, पंजुम[11] नवम्बर १८५४ ई०।

—असद

४६

(२३ नवम्बर, १८५४ ई०)

भाई साहब,

अस्सलामलेकुम। हक़ताला तुमको और तुम्हारे बच्चों को सलामत रखे।

---

१. काव्यनाम। २. रक्षक। ३. साक्षर। ४. कुरान। ५. देखते हुए। ६. अक्षर पहचानने की क्षमता। ७. मेदे की कठोरता। ८. आमाशय का मुख-कौड़ी। ९. शोथ। १०. साढ़ू, साली का पति। ११. पंचम।

मुंशी अब्दुललतीफ़ का ज़ौफ़े दिल व दिमाग़ गोया ख़िल्की[1] है। इसकी फ़िक्र ज़्यादा न करो। नौशदारू[2] व ख़मीरए गावज़ुवाँ, ख़मीरए अब्रेशम, दवा उलमिश्क[3], इस तरह के मुरक्कबात[4] का इस्तेमाल चला जाये। न अलद्दवाम[5] वल्के गाह गाह[6]।

यहाँ का हाल ताज़ा ये है कि मियाँ जौक़ मर गये। हुज़ूरे वाला[7] ने ज़ौके शेर व सुख़न[8] तर्क किया। सच तो ये है कि ये शख़्स अपनी वज़ा का एक, और इस अस्र[9] में ग़नीमत था। नज़्म व नस्र नवाव ज़ियाउद्दीन अहमदख़ाँ 'नय्यर' तख़ल्लुस पहुँचती है। तवा मानीयाब[10] व ज़वाने नुक़्ता संज रखते हैं। ख़ूब लिखते हैं।

सब को मेरी दुआ पहुँचे और सब की ख़ैर व आफ़ियत मुझको लिखो। ख़ुसूसन बेगम की ख़ैर व आफ़ियत। वस्सलाम।

रोज़ पंजशम्बा, २३ नवम्बर १८५४।

—अज़-असदुल्लाह.

५०

(८ दिसम्बर, १८५४ ई०)

भाई साहब,

ख़ुदा के वास्ते माजिरा क्या है. न तो अपनी और अपने बच्चों की ख़ैर व आफ़ियत लिखते हो न मेरी ज़ीस्त की ख़बर पूछते हो। नवाब ज़ियाउद्दीनख़ाँ

---

१. जन्मजात। २. नौसादर। ३. यूनानी औषधियाँ। ४. मिश्रण (ब. व.)। ५. सदा नहीं। ६. कभी-कभी। ७. बादशाह। ८. कविता का आनन्द। ९. युग। १०. अर्थपूर्ण।

मुहताज न रहूँ रात भर मुझको बेचैनी रहती है और तुम्हारे ख़त के न आने का ख़याल और अब्दुललतीफ़ की बीमारी के तसव्वुर में मलाल रहता है। या रब[1], आज आख़िरे रोज़ जो वक़्त डाक के हरकारों के आने का है, क़ासिद[2] आ जाये और तुम्हारा ख़त लाये और उसमें ख़ैर व आफ़ियत अब्दुललतीफ़ की ख़ुसूसन[3], औरों की उमूमन[4] मुंदरिज हो।

क़िले को सवार होता हूँ। ये रुक़्क़ा लिख कर कहार को दे चला हूँ। वो डाक में डाल आएगा। ज़क़िया बेगम को दुआ पहुँचे।

इस ख़त का जवाब, क़सम खाता हूँ कि इस साल में नहीं आने का मगर १८५५ में लिखोगे।

निगाश्ता यकशम्बा सी व यकुम[5] दिसम्बर १८५४ ई० वक़्त सुबह।

—अज-असदुल्लाह

५२

(८ मार्च, १८५५ ई०)

भाई साहब का इनायतनामा पहुँचा। मेरा ख़त न लिखना तग़ाफ़ुल[6] व तसाहुल[7] से न था। आप अपने दौरे का जाना लिख चुके थे। मैं चाहता था कि जब आप अलीगढ़ आयें और मुझको इत्तिला दें तो मैं ख़त लिखूँ। हाफ़िज़ा बेगम को दुआ पहुँचे। हक़ताला तुमको सलामत और तनदुरुस्त रखे और दोनों सिपारे हिफ़्ज़[8] करने की तौफ़ीक़[9] दे।

मुंशी अब्दुललतीफ़ का हाल मालूम हुआ। ख़ुदा पर नज़र रखो और

---

१. हे ईश्वर। २. पत्रवाहक। ३. विशेष रूप से। ४. सामान्यतया। ५. ३१। ६. उपेक्षा। ७. असावधानी। ८. कंठस्थ। ९. सामर्थ्य।

तक़वियत[1] की रिआयत[2] किये जाओ। लिख चुका हूँ और फिर लिखता हूँ कि जदवार[3] बहुत मुफ़ीद[4] होगी। अगर वहाँ अच्छी न मिले तो मुझको लिख भेजो, मैं यहाँ से भेज दूँ। 'महरे नीमरोज़' तुम्हारे पास है। अब और क्या करोगे? अगर ऐसी ज़रूरत है तो लिख भेजो। मैं दो-तीन मुजल्लद[5] और भेज दूँ। इन दिनों में दो रुबाइयाँ उर्दू में लिखी हैं। इनको बनज़रे इस्लाह[6] देखो—

कहते हैं कि वो मर्दुम आज़ार[7] नहीं
उश्शाक़[8] की पुर्सिश[9] से उसे आर[10] नहीं
जो हात, कि, ज़ुल्म से उठाया होगा
क्योंकर मानूँ, कि, उसमें तलवार नहीं

हम गर चे हुए सलाम करने वाले
करते हैं दिरंग[11] काम करने वाले
कहते हैं कहीं ख़ुदा से अल्लाह्, अल्लाह्
वो आप हैं सुबहो शाम करने वाले

मुरसिला पंजशंबा १८ जमादिस्सानी (१२७१ हि०) ८ मार्च १८५५ ई० ।

—अज़-असदुल्लाह्

५३

(१६ मई, १८५५ ई०)

पीर व मुर्शिद,

मुझ पर इताब[12] क्यों है? न मैं तुम तक आ सकता हूँ न तुम तशरीफ़ ला

---

१. सान्त्वना, बल। २. रक्षा। ३. निर्विषी। ४. लाभदायक। ५. सजिल्द। ६. आलोचना की दृष्टि से। ७. मनुष्य को सताने वाला। ८. प्रेमी। ९. पूछताछ। १०. लज्जा। ११. विलम्ब। १२. अप्रसन्न।

सकते हो। सिर्फ़ नामा[1] व पयाम[2], सो आप ही याद कीजिए कि कितने दिन से आपने अपनी और बच्चों की ख़ैर व आफ़ियत नहीं लिखी।

शेख वजीरुद्दीन पहुँचे होंगे। मिर्ज़ा हसनवेग पहुँचे होंगे। वारे फ़रमाइए उनसे रमज़ानुल मुबारक[3] तशरीफ़ लाये हैं। कल दिन भर तो गर्मी रही और शाम से पानी तो वर्फ हो गया है और हवा का ये आलम है कि रात को मैंने रज़ाई ओढ़ी थी। इस हवा का एतबार नहीं। अभी मंज़िल दूर है।

हाँ साहब, मियाँ तफ़्ता हम पर ख़फ़ा हो गये हैं। दो-दो हफ़्ते से उनका ख़त नहीं आया। ख़ुदा जाने कहाँ हैं, क्या करते हैं। किस शग़ल में हैं। आपको अगर उनका हाल मालूम हो तो मुझको भी इत्तिला दीजिए।

हमने घरों में ये रस्म देखी है कि जहाँ लड़का आठ-सात बरस का हुआ और रमज़ान आया तो उसको रोज़ा रखवाते हैं और नमाज़ पढ़वाते हैं। मुझको शव को ये ख़याल आया कि कहीं ऐसा न हो कि बेगम को अब के साल आप रोज़ा रखवायें। अभी उसकी उम्र क्या है? नवें-दसवें बरस रोज़ा रखवाना। बहरहाल इस हाल से मुझे आगाही दो और अपना और अपने रोज़ा व शग़ले हर रोज़ा[4] का हाल लिखो।

मुंशी अब्दुललतीफ़ का हाल लिखो कि वो कैसे हैं। रोज़ा ज़रा समझ कर रखें। कहीं ऐसा न हो कि गर्मी की ताव न लायें और रोज़ा रख कर रंजूर[5] हो जायें।

मेरी तरफ़ से सब को दुआ पहुँचे और हुसैनअलीख़ाँ की तरफ़ से बन्दगी और सलाम और शायद जैसे अब्दुस्सलाम और बेगम हैं, उनको दुआ पहुँचे।

निगाश्ता १९ मई १८५५ ई०, २ रमज़ान (१२७१ हि०)

—अज़-असदुल्लाह

---

१. पत्र। २. सन्देश। ३. रमज़ान का शुभ मास। ४. प्रतिदिन की कार्य व्यवस्तता। ५. दुःखी।

५४

(मई, १८५५ ई०)

या इलाही[1] किस पर शक करूँ ? माल व दौलत, जाह व शौक़त[2] पर तो मैं किसी का भी हासिद[3] नहीं हुआ। शेख वज़ीरुद्दीन पर और मिर्ज़ा हसनअली बेग रिसालदार पर हसद[4] क्योंकर न करूँ कि मेरे भाई को देखते हुए और उनसे बातें करते हुए आये हैं। मक़सूद इस निगारिश[5] से ये है कि दोनों साहब जुदा-जुदा आये और आपकी खैर व आफ़ियत उनसे मालूम हुई। शेख़ वजीरुद्दीन कुछ 'महरेनीमरोज़' के मुक़दमे[6] में कहते थे मगर मैं जो बहरा हूँ। तो कुछ समझा नहीं कि वो क्या कहते थे। शायद यही कहते होंगे कि जो अब फिर छापी जायें तो एक नुस्ख़ा जनाब मुंशी साहब को और भेजना।

अब्दुस्सलाम को मैं अज़राहे निसियाँ[7] छोटा समझा हुआ था। अब शेख़जी के इज़हार से मालूम हुआ कि वो बातें करता है और हुसेनअली के बराबर है। उनके कहने से मुझको याद आया कि कम व बेश[8] चार बरस का हुआ होगा। यक़ीन है कि अब बिस्मिल्लाह्[9] भी हो और वो पढ़ने बैठे। इसकी मुझको इत्तिला दीजिएगा कि बिस्मिल्लाह् उसकी कब होगी ?

बेगम को दुआ कह देना। यक़ीन है कि अब पाँचवाँ सिपारा शुरू किया होगा या शुरू करे। यहाँ के सब हालात बदस्तूर हैं। हक़ीम नूरुद्दीन साहब

---

१. हे ईश्वर। २. प्रतिष्ठा और ऐश्वर्य। ३. ईर्ष्या करने वाला। ४. डाह। ५. लेखन। ६. भूमिका। ७. भूल के कारण। ८. अधिक। ९. विद्यारम्भ।

और उनके भाई हकीम नसीरुद्दीन और हकीम मेहरअली वग़ैरा यहाँ आये थे। नवाब ज़ीनत महल बेगम के हक़ीक़ी मामूँ अमीनुर्रहमानख़ाँ उनके मुरीद[1] हैं। इनके बेटे की शादी की तक़रीब[2] में आये थे, उन्हीं के हाँ उतरे थे। मैं एक दिन हकीम नूरुद्दीन साहब से मिलने गया। क़ज़ारा[3] वो तो थे मगर हकीम नसीरुद्दीन और मेहरअली इनमें से कोई न था। बादशाह से दो मुलाक़ातें हुईं। एक तो ख़्वाजा साहब की दरगाह में और एक, जिस दिन हकीम साहब अकबराबाद जाते थे। हस्बुल तलब[4] हुज़ूर क़िले में गये और बादशाह से मिलकर रुख़सत होकर अपने शहर को तशरीफ़ ले गये। हकीम साहब आबिद व ज़ाहिद[5] आदमी हैं। सुलहा[6] में हैं, फ़ुक़रा[7] में नहीं हैं। हल्क़ा[8] और तवज्जोह और मुराक़िबा[9] और मुकाशफ़ा[10] और अज़कार[11] और अशग़ाल[12] और मसायले[13] तौहीद[14] व तसव्वुफ़ का बयान। ये बातें बिल्कुल नहीं हैं। सिर्फ़ औराद[15] पर मदार है। तालीम व तल्क़ीन[16] भी शायद औराद ही की हो। जिक्रे शग़्ल का ज़िक्र ही न हो। बहरहाल ख़ुश औक़ात आदमी हैं और ग़नीमत हैं।

लो भई, अब आठ बजे गये। नौ बजा चाहते हैं। तुम कचहरी जाओ मैं क़िले हो आऊँ। यार बाक़ी—सुहबत बाक़ी। अस्सलामलेकुम व अलेकुमस्सलाम[17]।

---

१. शिष्य। २. उपलक्ष्य। ३. संयोगवश। ४. इच्छानुसार। ५. उपासक और धार्मिक। ६. सदाचारी व्यक्ति (ब. व.)। ७. फ़क़ीर (ब.व.)। ८. क्षेत्र। ९. ध्यान। १०. रहस्योद्घाटन। ११. ईश्वर-चर्चा (ब. व.)। १२. व्यस्तता। १३. समस्याएँ। १४. ईश्वर की एकता। १५. जप-जाप। १६. शिक्षा-दीक्षा। १७. अभिवादन-प्रत्यभिवादन।

५५

(२५ मई, १८५५ ई०)

भाई साहब,

कहिए, क्या गर्मी पड़ती है और क्यों कर गुज़रती है। खूब हुआ जो बेगम को रोज़ा न रखवाया। खुदा करे, बुखार का आना भी मौक़ूफ़ हो गया हो। मुझको इत्तिला दीजिएगा। आपने इस ख़त मे लिखा कि अब्दुल रशीद की बिस्मिल्लाह्[1] शाबान के महीने में होगी। मैं नहीं जानता कि अब्दुल रशीद कौन। ज़ाहिरा अब्दुस्सलाम को, अब्दुलरशीद सह्व[2] से लिख गये हो। इसका भी जवाब लिखिएगा।

मुंशी अब्दुललतीफ़ साहब एहतियात करें और रोज़ा न रखें, वर्ना जाने तबीयत में क्या फ़साद पैदा हो।

वाक़ई, मियाँ तफ़्ता दीवान की नक़ल कर रहे हैं और लाहौर भेजेंगे। मुझसे ख़फ़ा हैं। हुक्म था कि उस दीवान का दीबाचा[3] लिखो। मैंने कहा—साहब, तुम हर साल एक दीवान लिखोगे, मैं दीबाचा कहाँ तक लिखा करूँगा। इसके बाद उन्होंने ख़त नहीं भेजा। मैं भी उनको ख़त न लिखूँगा और देखूँ कब तक मुझको याद नहीं करते। दीबाचा लिखना, भाई, क्या आसान है? कलेजा खिरचना पड़ता है। नस्र की फ़िक्र नज़्म से कम नहीं। इस गर्मी में कहाँ लिखूँ? क्या लिखूँ? एक बार उनकी ख़ातिर कर दी और एक दीबाचा लिख दिया। सो उस बार भी उसका सिला[4] मुझको ये मिला था कि आप नाख़ुश हो गये थे और मुझको लिखा था कि तूने मेरी हज्वेमलीह[5] की है।

---

१. विद्यारम्भ। २. भूल। ३. भूमिका। ४. प्रतिफल। ५. ऐसी निन्दा जो प्रशंसा प्रतीत हो।

जब मैंने लिखा कि भाई तुम मेरे मुक़ाबिल नहीं, मेरे मुआरिज़[1] नहीं, मेरे यार हो, शागिर्द कहलाते हो। लानत उस यार पर, कि यार की हज्वेमलीह लिखे और हज़ार लानत उस उस्ताद पर कि अपने शागिर्द पर चश्मक[2] चले और उसकी हज्वेमलीह लिखे। तब कुछ शर्मिंदा होकर चुप हो रहे थे। तुम्हारी जान की क़सम, दीवाचा न लिखना इस राह से नहीं है, बल्कि मुझमें अब दम बाक़ी नहीं। ख़ुदा जाने मैं जीता क्यों कर हूँ। ईद, बक़रीद, नौरोज़ के क़सायद[3] ग़ौर करो वो दो-दो, तीन-तीन बरस से बिलकुल मौक़ूफ़ हैं। ग़र्ज़ इस तहरीर से ये है कि मेरा उज़्र बजा और उनका ग़ुस्सा बेजा है। आपको मालूम रहे। ज़्यादा ज़्यादा।

बेगम की ख़ैर व आफ़ियत और अब्दुलरशीद और अब्दुस्सलाम का हाल ज़रूर लिखिए और मियाँ अब्दुललतीफ़ के रोज़े का हाल भी लिखिए।

हुसेनअली अच्छा है। लमयकुन के सूरे तक पहुँच गया है।

९ रमज़ान (१२७१ हि०) २५ मई १८५५ ई०।

—अज़-असदुल्ला ह.

५६

(३ जून, १८५५ ई०)

लो साहब, और तमाशा सुनो। आप मुझको समझाते हैं कि तफ़्ता को आज़ुर्दा न करो। मैं तो उनके ख़त के आने से डरा था कि कहीं मुझसे आज़ुर्दा न हों। बारे, जब तुमको लिखा और तुमने बआईने मुनासिब उनको तसल्ली दी तो उन्होंने मुझको ख़त लिखा। चुनांचे परसों मैंने उस ख़त का जवाब भेज

1. विरोधी। 2. मनमुटाव। 3. क़सीदे।

दिया। तुम्हारी इनायत से वो जो एक अंदेशा था, रफ़ा हो गया। खातिर मेरी जमा हो गई। अब कौन-सा क़िस्सा बाक़ी रहा कि जिसके वास्ते आप उनकी सिफ़ारिश करते हैं। वल्लाह्, तफ़्ता को मैं अपने फ़र्ज़न्द[1] की जगह समझता हूँ और मुझको नाज़ है कि खुदा ने मुझको ऐसा क़ाबिल फ़र्ज़न्द अता किया है। रहा दीबाचा, तुमको मेरी खबर ही नहीं, मैं अपनी जान से मरता हूँ।

गया हो जब अपना ही जीवड़ा निकल
कहाँ की रुबाई कहाँ की ग़ज़ल

यक़ीन है कि वो और आप मेरा उज़्र क़ुबूल करें और मुझको माफ़ रखें। खुदा ने मुझ पर रोज़ा-नमाज़ माफ़ कर दिया है। क्या तुम और तफ़्ता एक दीबाचा माफ़ न करोगे।

अब्दुस्सलाम की की मकतब[2] नशीनी मुझको और आपको और उसके बाप को मुबारक हो। मकतबनशीनी के बाब में सह्व[3] से अब्दुलरशीद लिखना शगून नेक है याने ये रशीद[4] होगा।

मुंशी अब्दुललतीफ़ का हाल सुनकर जी खुश हुआ। हकीम हो, डाक्टर हो, अपने काम से काम है। बायद मताए नेक अज़ हर दुकाँ के बाशद[5]।

भाई उस ग़रीब को बन्दे तअह्हुल[6] में फँसाते हो। बक़ा ए नाम[7] के वास्ते खुदा जीता रखे अब्दुस्सलाम व कुलसूम काफ़ी हैं। मैं तो भाई इब्ने यमीन[8] का मोतक़िद[9] हूँ—

---

१. पुत्र। २. पाठशाला प्रवेश। ३. भूल। ४. शिक्षित। ५. जो चीज़ जहाँ अच्छी मिले, उस दूकान से ले लीजिए। ६. घर-गिरस्ती का बन्धन। ७. कुल का नाम चलाने के लिए। ८. मौलाना बिन अमीर हसन सहसवानी, सर्वप्रथम शम्सुलउलेमा की उपाधि के प्राप्त-कर्त्ता। अनेक पुस्तकों के रचयिता। ९. अनुयायी।

जब मैंने लिखा कि भाई तुम मेरे मुक़ाबिल नहीं, मेरे मुआरिज़[1] नहीं, मेरे यार हो, शागिर्द कहलाते हो। लानत उस यार पर, कि यार की हज्वेमलीह लिखे और हज़ार लानत उस उस्ताद पर कि अपने शागिर्द पर चश्मक[2] चले और उसकी हज्वेमलीह लिखे। तब कुछ शर्मिंदा होकर चुप हो रहे थे। तुम्हारी जान की क़सम, दीवाचा न लिखना इस राह से नहीं है, बल्कि मुझमें अब दम बाक़ी नहीं। खुदा जाने मैं जीता क्योंकर हूँ। ईद, बकरीद, नौरोज के क़सायद[3] ग़ौर करो वो दो-दो, तीन-तीन बरस से बिलकुल मौक़ूफ़ हैं। ग़र्ज़ इस तहरीर से ये है कि मेरा उज्र बजा और उनका ग़ुस्सा बेजा है। आपको मालूम रहे। ज्यादा ज्यादा।

बेगम की खैर व आफ़ियत और अब्दुलरशीद और अब्दुस्सलाम का हाल ज़रूर लिखिए और मियाँ अब्दुललतीफ़ के रोज़े का हाल भी लिखिए।

हुसैनअली अच्छा है। लमयकुन के सूरे तक पहुँच गया है।

९ रमज़ान (१२७१ हि०) २५ मई १८५५ ई०।

—अज़-असदुल्लाह

५६

(३ जून, १८५५ ई०)

लो साहब, और तमाशा सुनो। आप मुझको समझाते हैं कि तफ़्ता को आज़ुर्दा न करो। मैं तो उनके खत के आने से डरा था कि कहीं मुझसे आज़ुर्दा न हों। बारे, जब तुमको लिखा और तुमने बआईने मुनासिब उनको इत्तिला दी तो उन्होंने मुझको खत लिखा। चुनाँचे परसों मैंने उस खत का जवाब भेज

---

१. विरोधी। २. मनमुटाव। ३. कसीदे।

दिया। तुम्हारी इनायत से वो जो एक अँदेशा था, रफ़ा हो गया। ख़ातिर मेरी जमा हो गई। अब कौन-सा क़िस्सा बाक़ी रहा कि जिसके वास्ते आप उनकी सिफ़ारिश करते हैं। वल्लाह, तफ़्ता को मैं अपने फ़र्ज़न्द[1] की जगह समझता हूँ और मुझको नाज़ है कि ख़ुदा ने मुझको ऐसा क़ाबिल फ़र्ज़न्द अता किया है। रहा दीवाचा, तुमको मेरी ख़बर ही नहीं, मैं अपनी जान से मरता हूँ।

गया हो जब अपना ही जीवड़ा निकल
कहाँ की रुबाई कहाँ की ग़ज़ल

यक़ीन है कि वो और आप मेरा उज़्र क़ुबूल करें और मुझको माफ़ रखें। ख़ुदा ने मुझ पर रोज़ा-नमाज़ माफ़ कर दिया है। क्या तुम और तफ़्ता एक दीबाचा माफ़ न करोगे।

अब्दुस्सलाम की की मकतब[2] नशीनी मुझको और आपको और उसके बाप को मुबारक हो। मकतबनशीनी के बाब में सह्व[3] से अब्दुलरशीद लिखना शगून नेक है याने ये रशीद[4] होगा।

मुंशी अब्दुलतीफ़ का हाल सुनकर जी ख़ुश हुआ। हकीम हो, डाक्टर हो, अपने काम से काम है। बायद मताए नेक अज़ हर दुकाँ के बाशंद[5]।

भाई उस ग़रीब को बन्दे तअह्हुल[6] में फँसाते हो। बक़ा ए नाम[7] के वास्ते ख़ुदा जीता रखे अब्दुस्सलाम व कुलसूम काफ़ी हैं। मैं तो भाई इब्ने यमीन[8] का मोतक़िद[9] हूँ—

---

१. पुत्र। २. पाठशाला प्रवेश। ३. भूल। ४. शिक्षित। ५. जो चीज़ जहाँ अच्छी मिले, उस दूकान से ले लीजिए। ६. घर-गिरस्ती का बन्धन। ६. कुल का नाम चलाने के लिए। ८. मौलाना बिन अमीर हसन सहसवानी, सर्वप्रथम शम्सुलउलेमा की उपाधि के प्राप्त-कर्त्ता। अनेक पुस्तकों के रचयिता। ९. अनुयायी।

मर्द आँ के बदुनियाँ न कुनद मैले दोकार
बजहाँ हरके तलबगार सलामत बाशद
ज़न न ख़ाहद अगरश दुख़्तरे क़ैसर बेंदिहन्द
वाम न सितानद अगर वादा क़यामत बाशद[1]

कहीं ये न हो के उसका जी न चाहता हो और तुम जबरदस्ती उसको बला में फँसाते हो। उसके हमराज़ों[2] से उसका माफ़ी उज्ज़मीर[3] मालूम कर लो, अगर वो भी राज़ी तो खैर वर्ना मेरे नज़दीक तो जब्र है।

हुसैनअली अपने दादा और दादी को बन्दगी और बहन भाई को सलाम कहता है। बेगम को मेरी दुआ कहना। मुंशी अब्दुललतीफ़ को पेशगी मुबारकबाद देना। ज़्यादा क्या लिखूं?

यक शम्बा १७ रमज़ान व ३ जून।

—अज़्-असदुल्लाह्

५७

(२३ जून, १८५५ ई०)

अलहम्दुलिल्लाह् के हरारते सौमी[4] और हरारते यौमी[5] बाहम रफ़ा हो गईं। याद करो वो २७ तारीख की रात जिसको शबे क़दर कहते हैं। अयाज़न बिल्लाह्, वो हवा ए गर्म और तारीकी[6], बारे, अब लू नहीं चलती। परसों

१. वही मनुष्य है जो संसार में निम्नलिखित दो बातों की इच्छा नहीं करता—(१) यदि कैसर (रोम का बादशाह) की पुत्री भी दी जाये तब भी स्त्री की कामना न हो और प्रलय के दिन के वादे पर भी ऋण मिलता हो तो ऋण न लिया जाये। २. मित्र। ३. अन्तःकरण का भाव, हृदय की बात। ४. क्षुधा के कारण जो गर्मी अनुभव होती है (रमज़ान की भूख के कारण)। ५. दिन में पड़ने वाली गर्मी। ६. अँधेरी।

हवा अगरचे पानी को बिगाड़ती है, लेकिन सर्द तो है। दो-एक दिन कुछ बूँदियाँ भी पड़ीं। अब्र हमेशा मौजूद रहता है।

अब के ईद में मैंने क़स्द[1] क़सीदे का न किया बल्कि क़ता व रुबाई भी नहीं। उसी वक़्त दो-तीन शेर वहीं लिख कर पढ़ दिये और उनका मसविदा न रखा।

मुंशी अब्दुललतीफ़ सर ता सर[2] रमज़ान कैसे रहे और अब उनका क्या रंग है और उनके निकाहे ताज़ा[3] की क्या ख़बर है?

तुमको ख़बर देता हूँ कि ज़ैनुल आबदीन की माँ, यानी दादी हुसेन-अलीख़ाँ की पंचशंबा के दिन २८ रमज़ान को मर गई। ज़ैनुल आबदीन का बड़ा बेटा बाक़रअलीख़ाँ वो भी मेरे पास आ गया।। देखते हो भाई, चर्ख़े सितमगर[4] क्या शोवदाबाज़ी[5] कर रहा है। बोझ पर बोझ मुझ पर डाल रहा है। ज़ख़्म पर ज़ख़्म लगा रहा है। कुछ बन नहीं आती। आमद[6] वही, मसारिफ़[7] बढ़ गये। अगर मसलन बेमुरव्वती और खुदा नातरसी[8] करूँ तो कहिए। उन लड़कों को किससे कहूँ कि तू अपने लड़कों को सँभाल, मुझमें मक़दूर[9] नहीं। बहरहाल चुप हूँ और मुतहय्यर[10] हूँ। मेरी शर्म रखे।

बेगम को दुआ कहो और उनकी ख़ैर व आफ़ियत मुझको लिखो। अब्दुस्सलाम व कुलसूम को दुआ। न तन्हा हुसेनअली बल्कि उसका बड़ा भाई बाक़रअलीख़ाँ दोनों आपको बन्दगी कहते हैं।

---

१. विचार, निश्चय। २. पूरी तरह, आरम्भ से अन्त तक। ३. ताज़ी शादी। ४. अत्याचारी आकाश (भाग्य)। ५. करतब। ६. आय। ७. व्यय। ८. ईश्वर का डर न हो। ९. सामर्थ्य। १०. चकित।

रोज़ जुमा, २३ जून १८५५ ई० व हफ़्तुम शव्वाल (१२७१ हि०)।

यहाँ ईद यकशंबा की हुई है।

—अज़-असदुल्लाह,

५८

(५ जुलाई, १८५५ ई०)

भाई जान,

मुंशी अब्दुललतीफ़ की शादी पहले उस पर फिर उसके वालिदैन[1] पर और उसकी बहनों पर और भाइयों पर मुबारक हो, फिर कहता हूँ कि खुदा करे ये अम्र[2] उसकी खुशी और रज़ामन्दी से वाक़ै हुआ हो, ज़किया बेगम की निस्बत[3] मुबारक हो।

हवा खूब हो गई है। मेंह रोज़ बरसता है। यकुम जुलाई से आज तक झड़ी की सूरत है। यक़ीन है कि वहाँ भी यही मौसम हो गया होगा।

न किश्तो ज़रश्रा शनासेम वो ने हदीक़ ओ बाग़
ज़े बहरे बादा तलबगारे बादो बाग़ नेम[4]

अब के आपका ख़त बहुत इंतिज़ार के बाद आया। कई दिन से चाहता था कि शिकायत लिखूं। मेंह फ़ुर्सत नहीं देता था कि आदमी डाकघर जा सके। बारे, परसों आपका ख़त आ गया। कल मेंह बरसता रहा। आज कुछ

---

१. माता-पिता। २. विषय। ३. सगाई, सम्बन्ध। ४. न हम खेती से परिचित हैं और न बाग़-बगीचे से। हम जो हवा-पानी की इच्छा करते हैं वह केवल सुरापान के लिए।

खुल गया है, याने बारिश नहीं है। क़िले भी गया और तुमको भी ख़त लिखा। वस्सलाम वल इक्राम।

निगाश्ता चाश्त रोज़[1] पंजशंबा, पंजुम जुलाई १८५५ ई०।

५६

(२६ जुलाई, १८५५ ई०)

भाई साहब,

मेंह का ये आलम है कि जिधर देखिए उधर दरिया है। आफ़ताब[2] का नज़र आना बर्क़[3] का चमकना है, याने गाहे दिखाई दे जाता है। शहर में मकान बहुत गिरते हैं। इस वक़्त भी मेंह बरस रहा है। ख़त लिखता तो हूँ मगर देखिए डाकघर कब जात्रे। कहार को कम्मल उढ़ाकर भेजूँगा।

आम अब के साल ऐसे तबाह हैं कि अगर बमसल[4] कोई शख़्स दरख़्त पर चढ़े और टहनी से तोड़कर वहीं बैठकर खाये तो भी सड़ा हुआ और गला हुआ पाये। ये तो सब कुछ है, मगर तुमको तफ़्ता की भी कुछ ख़बर है। पितम्बरसिंघ, उसका लाड़ला बेटा मर गया। हाय, उस ग़रीब के दिल पर क्या गुज़री होगी।

चे कुनद बन्दा के गर्दन न नेहद फ़रमा रा
चे कुनद गोई के तनदर न देहद चौगाँ रा[5]

---

१. पूर्वाह्‌ण। २. सूर्य। ३. बिजली। ४. कहावत के अनुसार। ५. आदेश के सम्मुख नतमस्तक होने के अतिरिक्त मनुष्य क्या कर सकता है? चौगान की इच्छा मानने के अतिरिक्त गेंद के लिए उपाय क्या है?

तुम अब ख़त लिखने में बहुत देर करते हो। आठवें दिन अगर ख़त लिखते रहो तो ऐसा क्या मुश्किल है।

यहाँ दोनों लड़के अच्छी तरह हैं। अब वहाँ के लड़कों की ख़ैर व आफ़ियत लिखिए।

पंजशम्बा २६ जुलाई १८५५ ई०।

—असद

६०

(४ अगस्त, १८५५ ई०)

अयाज़न बिल्लाह,

ये सख़्त माजरा है मुंशी अब्दुललतीफ़ कहाँ और मेरठ कहाँ। एक साहबज़ादा नाज़ पर्वर्दा ये भी न जानता होगा कि शहर में अनाज क्या भाव है और गोश्त क्या सेर बिकता है। सुबह उठे और बाप के हाँ की सवारी पर चढ़े। कचहरी चले गये। आये तो अपनी बीबी-बच्चों में मिलकर रोटी खाई। वालिदैन[1] से मुफ़ारक़त[2] और फिर खानादारी[3] की मशक़्क़त। सवारी रखनी, तीन आदमी से कम काम न निकलेगा। नौकरी ऐसी क्या है कि जिसमें ये मदारिज[4] तै कर-कर कुछ बच रहे। साहब ये सूरत तो बहुत बुरी है। वल्लाह, जितना मलाल तुमको हुआ है, उससे कम मुझको नहीं है। मैं भी उतना ही मलूल हूँ। बारे, अब इत्तिला दीजिए कि वो किस तारीख़ को रवाना होंगे। ज़ाहिरा यकुम अगस्त से इस दफ़्तर में मुलाज़िम हुए होंगे।

ज़किया बेगम की ख़ैरियत लिखो। आँखों की ज़र्दी[5] और हरारत जाती रही या अभी कुछ बाक़ी है।

---

१. माता-पिता। २. पृथकता। ३. गृहस्थी। ४. पद-प्रतिष्ठा। ५. पीलापन।

बाक़रअली और हुसैनअली दोनों अच्छे हैं। तप दफ़ा हो गई। आप अब्दुल-लतीफ़ का और बेगम का हाल लिखिए।

८ माहे अगस्त १८५५ ई०।

६१

(१६ सितम्बर, १८५५ ई०)

हज़रत,

बहुत दिन से हाल तुम्हारा और बच्चों का और खुसूस मुंशी अब्दुल्लतीफ़ का मालूम नहीं। आज सुबह को घबरा कर तुमको ये ख़त लिखता हूँ। ख़ुदा करे शाम को डाक का हरकारा तुम्हारा ख़त लाये और ख़ैर व आफ़ियत सब की मालूम हो जाये।

नसीरुद्दीन को दुआ पहुँचे।

हमने तुम्हारे अशआर एक तज़्किरे में देखे और जाना के छिपे रुस्तम हो। अपने शेर हमसे इसलिए छिपाये होंगे कि ये मज़मून चुरा न ले।

बेगम को दुआ पहुँचे। अब्दुस्सलाम और कुलसूम को दुआ पहुँचे। जल्द सब की ख़ैर व आफ़ियत लिखिए। ज़्यादा क्या अर्ज़ करूँ ?

यक शम्बा १६ सितम्बर १८५५ ई०।

—अज़ असद

६२

(२४ सितम्बर, १८५५ ई०)

पीर व मुर्शद,

बात को भी समझते हो या यों ही शिकवा करने को मौजूद हो जाते

ने क़सीदा लिखना मौक़ूफ़ किया। मौक़ूफ़ क्या किया, मुझसे लिखा ही नहीं जाता। क़ता या रुबाई इदैन[1] को लिख कर नज़र कर देता था। अब के हकीम साहब ने बहुत शिद्दत की और कहा कि साहब ये तो नज़्रे ईद[2] न हुई। जैसे मुअल्लिम[3] लड़कों को ईदी के दो शेर लिख देते हैं। ये तो वैसी ईदी है। नाचार मैंने ये मस्नवी की रविश पर चालीस-बयालीस बैत[4] लिख कर नज़्र कर दी। अगर आपने दीवान के हाशिये पर ये शेर चढ़ाये हुए हों तो क़सम ले लो। ये है क्या कि मैं तुमको भेजता। अफ़सोस है कि तुमको मेरे हाल की खबर नहीं। अगर देखो तो जानो—

"जिस दिल पै नाज़ था मुझे वो दिल नहीं रहा"

कोई दम ऐसा नहीं है कि मुझको दमे वापसी का ख़याल न हो। साठ बरस का हो चुका, अब कहाँ तक जीऊँगा। ग़ज़ल, क़सीदा, क़ता, रुबाई फ़ारसी-उर्दू में बारह हज़ार बैत कह चुका, अब कह चुका। अब कहाँ तक कहूँगा। ज़िन्दगी बुरी-भली जिस तरह बनी काटी, अब फ़िक्र ये है कि देखें मौत कैसी होती है और बाद मौत के क्या दरपेश आता है—

उम्र भर देखा किये मरने की राह
मर गये पर देखिए दिखलायें क्या

न भेजना इन अशार का सिर्फ़ अफ़्सुर्दगी[5] से था गोया ये शेर कहे ही नहीं। दीवान में रखता और तुमको न भेजता इसके माने क्या, जब दीवान ही में न रखे तो तुमको क्या भेजूं?

मुंशी अब्दुललतीफ़ का जो हाल मैं समझा हुआ था, वो ही तुमने लिखा। इसका वहाँ दिल न लगना और मुशाहरा[6] का मसारिफ़[7] ज़ात को काफ़ी न

---

१. दोनों ईदें। २. ईद की भेंट। ३. अध्यापक। ४. शेर (दो चरण)। ५. खिन्नता। ६. मासिक वृत्ति। ७. व्यय।

होना और तुम्हारा और उसकी वालिदा का बेचैन रहना ये सब ऐसे उमूर नहीं हैं कि बग़ैर तुम्हारे लिखे ख़याल में न हों। भाई रोज़गार पेशगी में ऐसा ही होता है। तरक़्क़ी ए मनासिब[1] का उम्मीदवार रहना चाहिए। काश, अब्दुललतीफ़ को नौकरी अदालत दीवानी में होती तो ये महीने तातील के अपने घर में रहता।

नसीरुद्दीन का हाल मालूम हुआ। मैंने हँसी से लिखा था वर्ना मैं जानता था कि शेर तुम्हारे हैं।

पलंग के पाये ढूंढ़ता हूं। यक़ीन है कि मिल जाएँगे, मगर ये लिखो कि शादी किस महीने में क़रार पाई है। इसकी ज़रूर इत्तिला दो। ज़्यादा इससे क्या लिखूं? लड़कों को दुआ और लड़कों की तरफ़ से बन्दगी।

मुहर्रिरा दोशम्बा, २४ सितम्बर १८५५।

—अज़ असदुल्लाह्

६३

(३ अक्तूबर, १८५५ ई०)

भाई,

तुम्हारा ग़ुस्सा मेरे सर आँखों पर। वल्लाह ये नहीं है जो तुम समझे हो। अलबत्ता ये ख़याल तो मुझको आया कि देखो भाई को मेरे कलाम से उन्स[2] नहीं है वर्ना ऐसी चीज़ को हाथ से जाने न देते, न ये कि उसका देना बाइस[3] इसका हुआ हो कि और नुस्ख़ा तुमको न भेजूं। छापेख़ाने वालों ने सौदागरों के हाथ बतरीके पेशगी सौ-सौ, दो-दो सौ मुजल्लद[4] बेच डाले थे। छापेख़ाने से जो मैंने मँगाया तो मुझको न मिला। अब मुतफ़र्रिक़[5] किताबफ़रोशों से

---

१. पदवृद्धि। २. प्रेम। ३. कारण। ४. सजिल्द। ५. विभिन्न।

कह दिया है। कोई नुस्खा हाथ आया और मैंने भेजा। मेरा तो ये हाल है कि जो कुछ मैंने कहा, फिर जब तक तुम्हारे पास न भेज लूं मुझको चैन नहीं आता। तुमको सुखनफ़हम[1] जानता हूं। रात को एक ग़ज़ल कई बरस के बाद लिखी है। अब सुबह दम तुमको लिखता हूँ। खुदा के वास्ते ग़ौर करना के ग़ज़ल इसको कहते हैं।

ईद की मस्नवी सिर्फ़ रुपये बचाने की थी, याने अगर वो न होती तो मुझको चार रुपये नज़्र देने पड़ते। जब मसविदों में न लिखूं और दीवान में न लिखूं तो हज़रत को क्यों भेजूं ?

पलंग के पाये ढूंढ़ रहा हूँ, खातिर-आतिर इस तरफ़ से जमा रहे। लो ग़ज़ल सुनो, मगर ग़ौर से दिल लगा कर। इसकी नक़ल जहाँ चाहो वहाँ भेजो—

ऐ ज़ौक़े नवासंजी बाज़म बखरोशावर
ग़ौग़ा ए शबे खूनी बर बुंगहे होशावर
गर खुद बिजिहद अज़ सर अज़ दीदा फ़िरो बारम
दिल खूं कुनो आँ खूं रा दर सीना ब जोशावर
हाँ हमदमे फ़रज़ाना दानी रहे वीराना
शमै के नख़ाहद शुद अज़ बार खमोशावर
शोरा ब एई वादी तल्खस्त अगर रादी
अज़ शहर बसू ए मन सर चश्म ए नौशावर
दानम के ज़रेदारी हर जा गुज़रे दारी
मैं गर न देहद सुल्तां अज़ बादा फ़रोशावर
गर मुग़ बकदूरीज़द बर कफ़ न हो राही शो
बर शह बसुबू बख़्शद बरदारी बदूशावर

---

1. काव्य-मर्मज्ञ।

(४ जून, १८५६ ई०)

भाई साहब,

कई दिन इस शर्म से तुम को लिखा मगर जो लिखना था वो भूल गया।

. . . .

१. हे कवित्व के स्नेह, तुम मुझे फिर उत्साह दो। रात्रि के वध के कोलाहल को मेरी चेतना के स्थान पर स्थापित करो। यदि वह मस्तिष्क से निकल जाये तो मैं आँखों से बहाऊँगा, मेरे हृदय को रक्तमय बना दो और उसे मेरे वक्षस्थल में प्रवाहित करो। इस जंगल का पानी कटु है, यदि तुम उदार हो तो नगर से मेरे लिए मधुर स्रोत लाओ। मुझे ज्ञात है, तुम्हारे पास द्रव्य है, मुझे ज्ञात है तुम्हारे पास स्वर्ण है, तुम सभी स्थलों पर जाते हो, यदि बादशाह शराब न दे तो शराब बेचने वाले से लाओ। यदि कलाल का बेटा सुरा को कमंडल में डाल दे तो उसे हथेली पर ले लो और रास्ते पर चल दो। यदि बादशाह घड़े में भर दे तो उठा लो और कंधे पर रख कर लाओ। शीशे से गन्ध आ रही है, सुरा की कलकल-ध्वनि से गायन प्रकट हो रहा है। उसे लाकर दृष्टिगोचर कराओ और कलकल-ध्वनि को कर्णगोचर कराओ। कभी तो स्फूर्ति के साथ मुझे उस सुरा से बेसुध बना दो और कभी मस्ती का राग सुना कर होश में लाओ। 'ग़ालिब' कहता है जो जीवित रहे

न से तीस है। बहरहाल कल ईद है। तुमको और तुम्हारे बच्चों को मुबारक हो। बेगम मगर दायर-सायर[1] है। कभी अकबराबाद, कभी मरसान। दायर-सायर का साल भर में एक दौरा होता था। ये ग़रीब शायद चार महीने कौल में आराम से न रहती होगी।

मुंशी अब्दुललतीफ़ की तनहाई ने ये तक़रीब[2] पैदा की कि लोग अकबराबाद चले गये। अरफ़तो रब्बी व फ़स्खुल अज़ायम[3]।

'महरे नीमरोज़' आपको मुबारक। मोल लीजिए और अहबाब को भेजिए। मैं ऐसी खुराफ़ात का मुश्ताक़ नहीं जो आप मुझसे पूछते हैं कि अगर तू कहे तो मैं तुझको भी भेज दूं। सत्यानाश जाये उस किताबफ़रोश का, कि, जो ये रिसाले कौल ले गया और आपने मुझको ताना दिया। भाई, ये तो मैं जानता हूँ कि ये तुमने मेरे छेड़ने को लिखा है वर्ना वहाँ ये नुस्खे न पहुँचे होंगे। अगर किसी दोस्त के वास्ते तुमको दरकार हो तो एक-आध नुस्खा मैं भेज दूं। ख़फ़ा न हो, मुझको लिख भेजो।

हज़रत तुम तफ़्ता का हाल क्या लिखते हो। अब तफ़्ता तफ़्ता नहीं, अज़ ख़ुदरफ़्ता[4] है। ख़ुदा उसको जीता रखे। ये शख्स भी ग़नीमत है। बड़ा सदमा उठाया है।

गर्मी की क्यों शिकायत करते हो? अब के साल न आगे की-सी गर्मी पड़ी न लू चली और अब पाँच-चार दिन से तो खासी सर्दी पड़ती है कि रात को रजाई और ज़ईफ़ा[5] लिहाफ़ ओढ़ती है। हवा सर्द, पानी सर्द। ज़ाहिरा कहीं ओले पड़े हैं, वर्ना इस मौसम में ये सर्दी कहाँ? मगर ये सर्दी मेहमान है। अभी जौज़ा[6] का आफ़ताब है। दिन बढ़ता जाता है। इस आरज़ी सर्दी

---

१. भ्रमणशील, दौरा करने वाला। २. समारोह। ३. मैंने असफलता से ईश्वर को पहचाना। ४. बेसुध। ५. बुढ़िया। ६. मिथुन (राशि)।

के रफ़ा होने के बाद गर्मी पड़ेगी। बहरहाल इन दिनों में यहाँ शिद्दत अमराज़[1] की नहीं। शहर में अम्न व आमान[2] है।

तुम्हारे दोनों बच्चे बाक़रअलीख़ाँ व हुसेनअलीख़ाँ अच्छे हैं। दिन भर में तीन-चार बार रोज़ा खोलते हैं और इफ़्तार के वक़्त[3] रोज़ेदारों के हल्क़ के दरबान बन जाते हैं।

बेगम वग़ैरा के अकबराबाद से आन की खबर लिखनी होगी।

—ग़ालिब

६६

(२७ जुलाई, १८५६ ई०)

भाई साहब,

शुक्र है खुदा का कि तुम्हारी ख़ैर व आफ़ियत मालूम हुई। तुम भी खुदा का शुक्र बजा लाओ के मेरे हाँ भी इस वक़्त तक ख़ैरियत है। दोनों लड़के खुश हैं। आम-आम करते फिरते हैं। कोई इनको नहीं देता। इनकी दादी को ये वहम है कि पेट भर रोटी उनको खाने नहीं देती।

ये तुमको याद रहे कि वलीअहद[4] के मरने से मुझ पर बड़ी मुसीबत आई। बस, अब मुझको इस सल्तनत से ताल्लुक बादशाह के दम तक है। खुदा जाने कौन वलीअहद होगा। मेरा क़द्रशनास[5] मर गया। अब मुझको कौन पहचानेगा। अपने आफ़रीदगार[6] पर तकिया किये बैठा हूँ। सरेदस्त ये नुक़सान कि वो ज़ैनुलआबदीनख़ाँ के दोनों बेटों को मेवा खाने को दस रुपये महीना देते थे। अब वो कौन देगा?

---

१. रोगों की अधिकता। २. शान्ति। ३. सायंकाल रोज़ा खोलते समय। ४. युवराज। ५. गुणों को जानने वाला। ६. कर्त्ता (ईश्वर)।

दो दिन से शिद्दते हवा ए ववाई[1] कम है। मेंह भी वरसता है। हवा ठंडी चलती है। इन्शा अल्लाह् ताला वक़िया आशोव[2] भी रफ़ा हो जाएगा।

तुम अपने शहर का हाल लिखो और वच्चों की खैर व आफ़त भेजो।

जव तक ये हवा है, हर यक शम्वा को खत लिखा करो। मैं भी ऐसा ही करूँगा। हर हफ़्ते में एक वार तुमको लिखता रहूँगा। मुंशी अव्दुललतीफ़ को मेरी दुआ कहो और ये कहो कि क्यों साहव मेरठ से, कौल से कभी हमको खत न लिखा। वाक़ी और सव लड़कों को, लडकियों को दुआ कह देना, वेगम को खुसूसन।

यकशम्वा २७ जुलाई १८५६ ई०।

—गालिव

६७

(२ अगस्त, १८५६ ई०)

भाई साहव,

खत के न पहुँचने की शिकायत के क्या माने ? शम्वे से जुमे तक को हफ़्ता गिनता हूँ। सो इस हफ़्ते में खत भेज चुका। अव के हफ़्ते में जुमे तक मुझको इख्तियार है। कल मंगल को आपका खत आ गया। वऐ नहीं[3] यहाँ भी वही हाल है जो वहाँ है। ववा[4] कम, कल से सूरत आफ़ताव की नज़र आने लगी, वो इस तरह—

दीदार मी नुमाई व परहेज़ मी कुनी[5]
नज़र आया और छिप गया।

---

१. महामारी की हवा। २. आफ़त। ३. प्रत्यक्षतया। ४. महामारी। ५. तुम दर्शन देते भी हो और परहेज़ भी करते हो।

तप की बड़ी शिद्दत है । दोनों लड़कों को तप आती है । बड़े को इतवार से, कि, आज बुध, चौथा दिन है । छोटे को पीर[1] से, कि, आज तीसरा दिन है । मुग़लानी मुतवफ़्फ़िया[2] की जगह जो मुग़लानी रखी गई थी, वो तपज़दा हो कर सरासीमा[3] अपने घर गई । मेरा एक खिदमतगार, ग़ुलाम हुसेन नाम, तप में बेख़ुद पड़ा है ।

मुंशी अब्दुललतीफ़ का यहाँ होना सुनकर जी ख़ुश हुआ । मेरी दुआ कहना । अब तो मेरठ में भी वो शिद्दत नहीं है ।

ज़किया बेगम को दुआ कहना और मेरी तरफ़ से और उसकी चची याने मेरी बीबी की तरफ़ से प्यार करना । मियाँ नसीरुद्दीन को दुआ पहुँचे । बाक़ी ख़ैर व आफ़ियत है ।

चारशम्बा, २ माहे अगस्त १८५६ ई० ।

—ग़ालिब

६८

(५ अगस्त, १८५६ ई०)

भाई साहब,

यकशम्बा का लिखा हुआ ख़त परसों दोशम्बे को यहाँ पहुँचा । अज़ीज़ों की सलामते हाल पर ख़ुदा का शुक्र बजा लाया । आज मंगल के दिन मैं आपको ख़त लिखता हूँ । हर हफ़्ते में एक ख़त लिखूं और एक तुम लिखो । तुम्हारे वास्ते यकशम्बा की क़ैद है । मैं यकशम्बा का पाबन्द क्यों रहूँ ? मंगल-बुध को मैं भेजा करूँ, इतवार को तुम भेजा करो ।

यहाँ हवाए वबाई बदस्तूर है । लोग मरते हैं मगर वो शिद्दत नहीं ।

---

१. सोमवार । २. स्वर्गीया । ३. आकुल ।

यकशम्बा के दिन अब्र आया। दिन भर बूंदा-बाँदी रही। आधी रात से ज़ोर का मेंह बरसा। पीर के दिन दोपहर तक बराबर मूसलधार पानी पड़ा। कल दोपहर से मेंह बरसना मौक़ूफ़ है। अब्र मौजूद है। मैं और बीबी और दोनों लड़के ख़ैर व आफ़ियत से हैं। हक़ताला तुमको, तुम्हारी बीबी को और बच्चों को ख़ैर व आफ़ियत से रखे।

मेरठ का हाल मालूम हुआ। पर्वरदिगार अपने बन्दों का हाफ़िज़[1] है।

हाँ साहब, तुम तफ़्ता की खबर नहीं लिखते। आया वो वहाँ हैं या नहीं? अब के यकशम्बा को जो खत लिखो तो लड़के-वालों की खैर व सलाह के बाद उनका भी ज़िक्रे खैर लिखो। सब को दुआ-सलाम कहो।

सेशम्बा पंजुम अगस्त।

६९

(९ दिसम्बर, १८५६ ई०)

भाई साहब को सलाम और हुस्ने इंतमाम शादी[2] की और माल खैर मुआविदत[3] की मुबारकबाद। हँसी आती है मगर अकेला क्या हँसूं? वाह सुभान अल्लाह्। क्या दुलहन और क्या उसकी.......? ख़ुदा जीता रखे। हज़रत, आपका भाई बनकर मैं भी मिस्ल आपके अदीमुलफ़ुर्सत[4] बन गया।

बीस-बाइस दिन से हुज़ूरवाला रोज़ दरबार करते हैं। आठ-नौ बजे जाता हूँ, बारह बजे आता हूँ। या रोटी खाने में ज़ुह्र[5] की अज़ाँ होती है या हाथ धोने में। सब मुलाज़मीन का हाल यही है। और कोई रोटी खा कर जाता होगा। मुझसे बाद खाना खाने के चला नहीं जाता। [illegible]

१. रक्षक। २. विवाह के शुभ समारोह। ३. सकुशल [illegible] ४. अवकाश रहित। ५. दोपहर की नमाज़।

कुछ था सो था, परसों से अज़ राहे इनायत हुक्म दिया है कि शाम को रेत में लबेदरिया[1] पतंगबाज़ी होती है, तू भी सलीमगढ़ पर आया कर। खुलासा ये के सुबह को जाता हूँ, दोपहर को आता हूँ। खाना खाकर पांच-चार घड़ी दम लेकर जाता हूँ। चिराग़ जले आता हूँ। भाई, तुम्हारे सर की क़सम। रात को मज़दूरों की तरह थक कर पड़ रहता हूँ। आज चौथे दिन तुम्हारे खत का जवाब लिखने की फ़ुर्सत पाई है सो फ़ुर्सत क्या, खाना खाकर लेटा नहीं, तुमको ख़त लिखा।

मीर क़ासिमअलीख़ाँ लखनऊ से आये हैं। कहते थे कि कोल में मुंशीजी के मकान पर गया था। उनके आदमी कहते थे कि वो कल आएँगे। मैंने उनसे कह दिया कि मुझको उनका खत आया है, वो कोल आ गये और बेगम की शादी से फ़ुर्सत पाई। यक़ीन है कि वो भी तुमको खत लिखेंगे।

मुंशी अब्दुललतीफ़ को दुआ कहना और उनकी मेरठ की रवानगी की मुझको इत्तिला देना। और जब बेगम आ जाये तो उसके आने की ख़बर लिखना।

रोज चार शम्बा, ९ दिसम्बर १८५६ ई० वक़्त नमाज़ जुह्र।

—अज़-असदुल्लाह,

७०

(२२ सितम्बर, १८५८ ई०)

भाई साहब,

आपका इनायतनामा पहुँचा। हाल मालूम हुआ। मियाँ का उज्र क़बूल व मस्मूअ[2], हक़ताला उनको ज़िन्दा और तनदुरुस्त और ख़ुश व ख़ुर्रम[3]

---

१. नदी (यमुना) के किनारे। २. श्रुत, स्वीकृत। ३. प्रसन्न।

रखे और दौलत व इक़बाल[1] अता करे। बिलफ़ैल मिर्ज़ा हातिमअली साहब का ख़त आया। उन्होंने जो सूरत छै किताबों की आराइश[2] की जिस तफ़रीक़[3] से ठैराई है वो मुझको बहुत पसन्द आई है। कल मैंने इजाज़त इसी तरह की तज़ईन[4] की लिख भेजी है। हाल तस्हीह[5] का बतसरीह[6] आपको लिख चुका हूँ। इसी पर अमल रहे। मैंने मिर्ज़ा तफ़्ता को कि वो 'ग़यासुल्लुग़ात'[7] के बहुत मोतक़िद[8] हैं इस अम्र की इत्तिला कर दी है।

भाई जान, मैंने एक क़सीदा जनाब मलिक ए मुअज़्ज़मा[9] इंग्लिस्तान की मदह[10] में लिखा है। साठ शेर हैं। छै सफ़े याने तीन वर्क़ पर छपकर 'दस्तम्बू' से पहले शीराज़े[11] में शामिल कर दिये जायें तो किताब की इब्तिदा से इज़्ज़त और क़सीदे को किताब के सबब से शोहरत हो जाएगी। कल जनाब मिर्ज़ा साहब को लिख चुका हूँ। यक़ीन है कि वो भी आप से कहेंगे और आप और मिर्ज़ा साहब और मिर्ज़ा तफ़्ता और मुंशी शिवनारायन साहब इस ख़्वाहिश को मंज़ूर और क़सीदे को मक़बूल करेंगे। और जब बइत्तिफ़ाक़[12] तुम चारों साहब पसन्द करोगे या [illegible] कौन्सिल इस क़ानून का इजरा[13] मंज़ूर हो जाएगा और उम्मीदवार हूँ कि इजरा ए क़ानून से पहले मुझको मंज़ूरी की इत्तिला हो जाये ताकि मसविदा इस क़सीदे का भेज दूँ। मुहतमिम मतबे[14] को अगर कुछ ताम्मुल[15] हो तो हो, वर्ना बात आसान है।

मुंशी अब्दुललतीफ़ को दुआ कहना और उनके बच्चे के [illegible] होने की उनको इत्तिला देना।

---

१. ऐश्वर्य। २. सजावट। ३. अन्तर, भेद। ४. [illegible]। ५. शुद्धि। ६. व्याख्या सहित। ७. फ़ारसी का एक शब्दकोश। ८. अनुयायी, भक्त। ९. साम्राज्ञी (विक्टोरिया)। १०. प्रशंसा। ११. जिल्द बाँधने से पहले पुस्तक का सिया हुआ संचय। १२. संयोगवश। १३. प्रचलन। १४. छापाख़ाना, मुद्रणालय। १५. विरोध।

बेगम को दुआ पहुँचे और सब लड़के-वालों को। यहाँ बाक़र अली और हुसेनअली तुमको बन्दगी और अपने भाई-बहनों को अला क़दरे मरातिब बन्दगी-सलाम-दुआ कहते हैं।

हाँ हज़रत, अब एक अम्रे मुख्तसर[1] के वास्ते जुदागाना खत मिर्ज़ा तफ़्ता को क्या लिखूँ ? मेरी तरफ़ से दुआ कहकर उनको कहिएगा कि अखबार गुज़िश्ता के औराक़[2] मय खत मुहतमिम मतबए 'आफ़ताब आलमताब' हकीम साहब को पहुँच गये। कल वो चार रुपये की हुंडवी और उनके खत का जवाब रवाना करेंगे। आप चतरभुज सहाय से कह दीजिएगा और ताकीद कर दीजिएगा कि चार लम्बर साबिक़ का मुंतखब[3] कातिब[4] से नकल करवा कर जल्द भेज दें।

भाई, मुझको इस मुसीबत में क्या हँसी आती है कि ये हम-तुम और मिर्ज़ा तफ़्ता में मुरासलत[5] गोया मुकालमत[6] हो गई है। रोज बातें करते हैं। अल्लाह, अल्लाह, ये दिन भी याद रहेंगे। खत से खत लिखे गये हैं। मुझको अक्सर औक़ात[7] लिफ़ाफ़े बनाने में गुज़रते हैं। अगर खत न लिखूँगा तो लिफ़ाफ़े बनाऊँगा। ग़नीमत है कि महसूल आधा आना है वर्ना बातें करने का मज़ा मालूम होता। चारशम्बा २२ सितम्बर १८५८ ई०। जो बातें जवाब तलब हैं उनका जवाब तलब है।

७१

(१८ जनवरी, १८५९ ई०)

भाई साहब,

मैं तुमको इत्तिला देता हूँ कि आज मेरे पास लखनऊ से एक पार्सल

---

१. छोटा-सा काम। २. पृष्ठ (ब. व.)। ३. चुना हुआ। ४. लिखने वाला ५. पत्र-व्यवहार। ६. संवाद। ७. समय (ब. व.)।

क़ी रसीद आ गई। दूसरा भी यक़ीनी पहुँच गया होगा। ख़ातिर जमा रखो। जनाब आर्नल्ड साहब बहादुर आज तशरीफ़ ले गये। सुनता हूँ कि कलकत्ते जाएँगे। मेम और बच्चों को विलायत भेजकर फिर आएँगे। मुझसे वो सुलूक कर गये हैं और मुझ पर वो एहसान कर गये हैं कि क़यामत तक उनका शुक्र गुज़ार रहूँगा। मिर्ज़ा हातिम अली साहब मेहर अगर आ जाएँ तो उनको मेरा सलाम कहना। मिर्ज़ा तफ़्ता को अगर कभी खत लिखो तो मेरी दुआ कहना।

मरक़ूमा[1] दोशम्बा हफ़्त दहुम जनवरी १८५९ ई०।

—अज़ ग़ालिब

---

१. लिखित।

मुंशी अब्दुललतीफ़[1] के नाम

१

(१० मार्च, १८५१ ई०)

बरखुरदार[2] नूरचश्म[3] मुंशी अब्दुललतीफ़ सल्लमहूवल्लाहो[4] ताला। बाद दुआए दवामे दौलत[5] वतूले उम्र[6] मालूम करें कि भाई साहब के कहने से मालूम हुआ कि तुम्हारे हाँ बेटा पैदा हुआ। बहुत मुझको खुशी हुई। अल्लाह ताला तुमको मुबारक करे और तुमको तुम्हारे बाप के साय ए अतूफ़त[7] और उसको तुम्हारे ज़िल्ले राफ़त[8] में सलामत रखे। उसकी औलाद तुमको दिखावे। मालूम है कि भाई साहब दौरे को गये हैं। उनके नाम का खत तुम्हारे खत के साथ बेलिफ़ाफ़ा भेजता हूँ, उसको पढ़ लेना और क़तए तारीख[9] की नक़ल ले लेना और खत को अपनी अर्ज़ी में मलफ़ूफ़[10] करके अपने वालिद माजिद[11] को भेज देना और जो नाम रखो उससे मुझको इत्तिला देना। मैं चाहता हूँ कोई नाम ऐसा मिले कि जिसके आदाद[12] से साले विलादत[13] ज़ाहिर हो। वद्दुआ।

मुरसिला[14] दोशम्बा १० मार्च १८५१ ई०।

---

१. मुंशी अब्दुललतीफ़, मुंशी नबीबख्श 'हकीर' के पुत्र थे। २. सुपुत्र। ३. नेत्र की ज्योति। ४. ईश्वर उसकी रक्षा करे। ५. स्थायी सम्पत्ति। ६. दीर्घायु। ७. दया की छाया। ८. अनुकम्पा की छाया। ९. वह पद जिसमें कुछ शब्दों से किसी घटना के संवत् का पता चले। १०. लिफ़ाफ़े में बन्द। ११. पूज्य पिता। १२. संख्या। १३. जन्म-संवत्। १४. लिखित।

२

(८ दिसम्बर, १८५८ ई०)

साहब,

आगे तुम्हारा एक ख़त, फिर बारह किताबों और एक जन्तरी का पार्सल पहुँचा। बाद इसके कल एक खत और आया। रीड साहब के वहाँ आने का हाल मालूम हुआ। आज ६ दिसम्बर की है। ७ को बमूजिब तुम्हारे[1] लिखने के वो वहाँ से आनेवाले हैं और मुझको मालूम है कि मेरठ आएँगे। दो दिन के बाद बमुक़ाम मेरठ ख़त रवाना करूँगा। खातिर जमा रखो। वो साहबे मेहर जैसा लिखें मुझको इत्तिला देना। रही तुम्हारी मुहर, उसका कुछ ख़याल न करो। वो जिस तरह तुमने लिखा है बन जाएगी। मगर भाई सन् ५८ ई० में दिन कै बाक़ी रहे हैं। आज ६ दिसम्बर की है। २४, २५ दिन बाक़ी हैं। सन ५९ ई० जनवरी के महीने में ख़ुदा चाहे तो खुद जाएगी। तुन मेरे बजाए फ़र्ज़न्द[2] हो, मेरे भतीजे हो। जो तुम्हारा काम हो बेतकल्लुफ़ कहो। शर्म क्या और तकल्लुफ़ क्यों? ये मुहर का खुदना कौन-सा काम है?

मिर्ज़ा हातिम अली साहब मिलें तो मेरा सलाम कहना और मिर्ज़ा तफ़्ता को खत लिखो तो मेरी सिफ़ारिश लिखना। वो मुझसे खफ़ा हो गये हैं और ख़त नहीं लिखते।

६ दिसम्बर १८५८ ई०।

—ग़ालिब

---

१. तुम्हारे अनुसार। २. पुत्र के समान।

नवाब अमीनुद्दीन अहमदख़ाँ के नाम

१

भाई साहब,

साठ बरस से हमारे-तुम्हारे बुजुर्गों में क़रावतें बहम पहुँचीं। निज का मेरा-तुम्हारा मामला ये कि पचास बरस से मैं तुमको चाहता हूँ, वे इसके कि चाहत तुम्हारी तरफ़ से भी हो। चालीस बरस से मुहब्बत का जुहूर तरफ़ैन[१] से हुआ। मैं तुम्हें चाहता रहा, तुम मुझे चाहते रहे। वो अम्रे आम[२] और ये अम्रे खास क्या मुक़्तज़ी[३] इसका नहीं कि मुझमें-तुममें हक़ीक़ी[४] भाइयों का-सा इखलास[५] पैदा हो जाये। वो क़रावत[६] और ये मुवद्दत[७] क्या पैवंदे खून[८] से कम है? तुम्हारा ये हाल सुनूं और बेताब न हो जाऊँ, और वहाँ न आऊँ? मगर क्या करूँ, मुबालगा[९] न समझो, मैं एक क़ालिबे बेरूह[१०] हूँ।

यके मुर्दा शख्सम बमर्दीखाँ[११] इज्म्हेलाल[१२] रूह का रोज़ अफ़ज़ूँ[१३] है। सुबह को तब्रीद[१४], क़रीब दोपहर के रोटी, शाम को शराब। अगर इसमें से जिस दिन एक चीज़ अपने वक़्त पर न मिली, मैं मर गया। वल्लाह[१५], नहीं आ सकता, बिल्लाह[१६] नहीं आ सकता। दिल की जगह मेरे पहलू में पत्थर भी

---

१. दोनों ओर। २. सामान्य विषय। ३. इच्छित। ४. वास्तविक, सगा। ५. शील। ६. निकटता। ७. दोस्ती। ८. रक्त का सम्बन्ध। ९. अत्युक्ति। १०. मृत। ११. मैं एक शव हूं, ऐसा शव जो आदमी से चलता-फिरता है। १२. निर्बलता। १३. नित्य वृद्धिशील। १४. ठंडाई। १५-१६. ईश्वर का नाम लेकर कहता हूँ।

तो नहीं। दोस्त न सही, दुश्मन भी तो न हूँगा। मुहब्बत न सही, अदावत[1] भी तो न होगी। आज तुम दोनों भाई इस ख़ानदान में शर्फ़ुद्दौला और फ़ख़्रुद्दौला की जगह हो। मैं लम यलिद वलम यूलद[2] हूँ। मेरी जौजा[3] तुम्हारी बहन, मेरे बच्चे तुम्हारे बच्चे हैं। खुद जो मेरी हक़ीक़ी भतीजी है, उसकी औलाद भी तुम्हारी ही औलाद है। न तुम्हारे वास्ते बल्के इन बेकसों के वास्ते तुम्हारा दुआगो हूँ और तुम्हारी सलामती चाहता हूँ। तमन्ना ये है और इंशाअल्लाह्[4] ताला ऐसा ही होगा कि तुम जीते रहो और तुम दोनों के सामने मैं मर जाऊँ ताकि इस काफ़िले को अगर रोटी न दोगे तो चने दोगे और अगर चने भी न दोगे और बात न पूछोगे तो मेरी बला से। मैं तो मुआफ़िक अपने तसव्वुर[5] के मरते वक़्त इन फ़लकज़ादों[6] के ग़म में न उलझूँगा।

जनाब वालिद ए माजिदा[7] तुम्हारी यहाँ आना चाहती हैं और ज़ियाउद्दीन अहमदख़ाँ इसी वास्ते वहाँ पहुँचते हैं। सुनो, बाद तब्दीले आब व हवा[8] दो फ़ायदे और भी बहुत बड़े हैं—कसरते अतिब्बा[9], सुहबते अहिब्बा,[10] तनहाई[11] से ग़ामलूल[12] रहोगे, हर्फ़ व हिकायत[13] में मशग़ूल रहोगे। आओ, आओ, शिताब आओ भाई।

मिर्ज़ा अलाउद्दीन ख़ाँ, तुमको क्या लिखूँ जो वहाँ तुम्हारे दिल पर गुज़रती होगी यहाँ मेरी नज़र में है। ख़ैर, दुआ ए मज़ीद[14] उम्र व दौलत।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

१. शत्रुता। २. मैं निस्सन्तान हूँ, मेरा कोई मित्र नहीं। ३. पत्नी। ४. ईश्वर ने चाहा। ५. कल्पना के अनुसार। ६. विपत्तिग्रस्त। ७. पूज्य माता। ८. जलवायु का परिवर्तन। ९. वैद्यों की अधिकता। १०. मित्रों का साथ। ११ एकान्त। १२. प्रसन्न। १३. बातचीत। १४. और आशीर्वाद।

२

(२२ जून, १८६८ ई०)

अख़े मुकर्रम[1] के ख़ुद्दामे किराम[2] की ख़िदमत में बाद इहदा ए सलामे मसनून मुल्तमिस[3] हूँ। तुम्हारा शहर में रहना मूजिबे तक़वीयते दिल[4] था। गो न मिलते थे पर एक शहर में तो रहते थे।

भाई, एक सैर देख रहा हूँ। कई आदमी तयूरे आशियाँ गुम कर्दा[5] की तरह हर तरफ़ उड़ते फिरते हैं। इनमें से दो-चार भूले-भटके कभी यहाँ भी आ जाते हैं। लो साहब, अब वादा कब वफ़ा करोगे। अलाई को कब भेजोगे? अभी तो शब[6] को चलने और दिन को आराम करने के दिन हैं। बारिश शुरू हो जाएगी तो आपकी इजाज़त भी काम न आएगी, चलनेवाला कहेगा मैं रहरवे[7] चालाक हूँ, तैराक नहीं। लोहारू से देहली तक कश्ती बग़ैर क्यों कर जाऊँ? दुख़ानी जहाज़[8] कहाँ से लाऊँ।

ऐ ज़े फ़ुर्सत बेख़बर दर हर चे बाशी ज़ूद बाश[9]

उस्ताद मीर जान साहब को सलाम।

यौमख़मीस[10], १७ मुहर्रम १२८१ हि०।

अलाई के दीदार का तालिब

—ग़ालिब

---

१. प्रतिष्ठित भाई। २. पूज्यजनों के सेवक। ३. अभिवादन के पश्चात् प्रार्थी। ४. धैर्य का कारण। ५. जिन पक्षियों का घोंसला खो गया है। ६. रात। ७. पथगामी। ८. स्टीमर। ९. तुम आलस्य के कारण निश्चिन्त हो, जो कुछ करना हो, जल्दी करो। १०. गुरुवार।

३

(२६ मई, १८६५ ई०)

बिरादर साहब जमीलुल मनाक़िब अमीमुल एहसान,[1] सलामत, तुम्हारी तफ़रीहे तबा[2] के वास्ते एक ग़ज़ल नई लिख कर भेजी है। ख़ुदा करे पसंद आये और मुतरिब[3] को सिखाई जाये।

आज शहर के अखबार[4] लिखता हूँ। सवानेहे लैल व निहार[5] लिखता हूँ। कल पंजशम्बा २५ मई को अव्वले रोज़[6] बड़े ज़ोर की आँधी आई। फिर खूब मेंह बरसा। वो जाड़ा पड़ा कि शहर कुरहे ज़महरीर[7] हो गया। बड़े दरीबा का दरवाज़ा ढाया गया। क़ाबिल अत्तार के कूचे का बक़िया मिटाया गया। कश्मीरी कटरे की मस्जिद ज़मीन का पैवन्द हो गई। सड़क की वसत[8] दो-चन्द हो गई। अल्लाह, अल्लाह, गुम्बद मस्जिदों के ढाये जाते हैं और हुनूद[9] की डेवढ़ियों की झंडियों के पर्चम[10] लहराते हैं। एक शेर ज़ोरावर और पीलतन[11] बंदर पैदा हुआ है। मकानात जा बजा[12] ढाता फिरता है। फ़ैज़ल्लाख़ाँ बंगश की हवेली पर जो गुलदस्ते हैं, जिनको अवाम[13] गुमज़ी कहते हैं, उनमें से हलाहला कर एक-एक की बुनियाद ढा दी, ईंट से ईंट बजा दी। वाह रे बन्दर, ये ज्यादती और फिर शहर के अंदर। रेगिस्तान के मुल्क से एक सरदारज़ाद ए कसीरुल अयाल[14] असीरुलहाल[15] अरबी-फ़ारसी-अंग्रेज़ी तीन ज़बानों का आलिम दिल्ली में वारिद हुआ है। बल्लीमाराँ के मुहल्ले में ठहरा

१. सब के लिए कृपा करने वाला। २. मनोरंजन। ३. गायक। ४. समाचार ५. रात और दिन की घटनाएँ। ६. प्रातः। ७. उत्तरी तथा दक्षिणी ध्रुव, जहाँ अत्यधिक ठंड पड़ती है। ८. चौड़ाई। ९. हिन्दुओं। १०. ध्वजा। ११. मोटा-ताजा। १२. यत्र-तत्र। १३. सामान्य लोग। १४. अधिक बाल बच्चों वाला। १५. विपत्तिग्रस्त।

है। बहस्बे ज़रूरत हुक्कामे शहर[1] से मिल लेता है। बाक़ी घर का दरवाज़ा बंद किये बैठा रहता है। गाह गाह, न हर शाम व पगाह[2] ग़ालिब अली शाह दरवेश के तकिये पर आ जाता है। अहले शहर हैरान हैं कि खाता कहाँ से है। गर कोई कहता है कि ये बाप से फिर गया है, मैं जानता हूँ कि बेसबब बाप की नज़र से गिर गया है। देखिए, अंजामे कार[3] क्या हो? ग़ालिबअली शाह का क़ौल ये है कि कुल का भला हो।

जुमा, २६ मई १८६५ ई०।

४

(२६ जुलाई, १८६५ ई०)

बिरादर साहिब जमीलुल मनाक़िब अमीमुल एहसान सलामत।

बाद सलाम मसनून[4] व दुआ ए बक़ाए दौलत रोज़ अफ़्ज़ूं अर्ज़ किया जाता है कि अतूफ़तनामे[5] के रू से फ़ारसी दो ग़ज़लों की रसीद मालूम हुई। तीसरी ग़ज़ल 'गौहर न तवाँ गुफ़्त, अख़्तर न तवाँ गुफ़्त' जो तुम्हारे हस्बुल तलब[6] भेजी गई है, क्या नहीं पहुँची? बेशुबा पहुँची होगी। तुम भूल गये होगे। वकील हाज़िरबाश दरबारे असदुल्लाही याने अलाई मौलाई ने अपने मुवक्किल की खुशनूदी[7] के वास्ते फ़क़ीर की गर्दन पर सवार होकर एक उर्दू की ग़ज़ल लिखवाई। अगर पसन्द आए तो मुतरिब को सिखाई जाये। झंझोटी[8] के ऊँचे सुरों में राह रखवाई जाये। अगर जीता रहा तो जाड़ों में आकर मैं भी सुन लूंगा। वस्सलाम माल इकराम[9]।

चहार शम्बा, २ रबीउल अव्वल १२८२ हि०, मुताबिक २६ जुलाई १८६५ ई०।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

---

१. शहर के अधिकारी। २. भोर, तड़का। ३. परिणाम। ४. [illegible]। ५. कृपा-पत्र। ६. मांगने के अनुसार। ७. प्रसन्नता। ८. एक रागनी। ९. ईश्वर रक्षा करे और कृपा करे।

ग़ज़ल

मैं हूँ मुश्ताक़े जफ़ा[1] मुझ पै जफ़ा[2] और सही
तुम हो बेदाद से ख़ुश, इससे सिवा और सही
ग़ैर की मर्ग[3] का ग़म किस लिए ऐ ग़ीरते[4] माह
है हवस पेशा बहुत वो न हुआ और सही
तुम हो बुत फिर तुम्हें पिन्दारे ख़ुदाई[5] क्यों हैं ?
तुम ख़ुदावन्द ही कहलाओ ख़ुदा और सही
हुस्न में हूर से बढ़ कर नहीं होने के कभी
आपका शेव[6] ए अन्दाज़ो अदा और सही
तेरे कूचे[7] का है माइल[8] दिल मुज़्तर[9] मेरा
काबा इक और सही क़िब्लानुमा[10] और सही
कोई दुनिया में मगर बाग़ नहीं है वाइज़[11],
ख़ुल्द[12] भी बाग़ है, ख़ैर, आबो हवा और सही
क्यों न फ़िरदौस[13] में दोज़ख़[14] को मिला लें या रब
सैर के वास्ते थोड़ी-सी फ़ज़ा[15] और सही
मुझको वो दो कि जिसे खा के न पानी माँगूँ
ज़हर कुछ और सही आबे बक़ा[16] और सही
मुझसे 'ग़ालिब' ये अलाई ने ग़ज़ल लिखवाई
एक बेदादगरे रंजे फ़िज़ा[17] और सही

१. अत्याचार का इच्छुक । २. अत्याचार । ३. मृत्यु । ४. प्रतिस्पर्द्धा । ५. गर्व । ६. ढंग । ७. गली । ८. आसक्त । ९. व्याकुल । १०. दिग्दर्शक । ११. धर्मोपदेशक । १२. स्वर्ग । १३. स्वर्ग । १४. नरक । १५. खुला मैदान । १६. सुरा । १७. दुःख बढ़ाने वाला ।

५

(१५ नवम्बर, १८६६ ई०)

भाई साहब,

आज तक सोचता रहा के बेगम साहबा क़िब्ला के इंतिकाल के बाब में क्या लिखूं? ताज़ियत[1] के वास्ते तीन बातें हैं—इज़हारे ग़म, तल्क़ीने सब्र[2] दुआए मग़फ़िरत[3]। सो भाई, इज़हारें ग़म तकल्लुफ़े महज़ है। जो ग़म तुमको हुआ है, मुमकिन नहीं कि दूसरे को हुआ हो। तल्क़ीने सब्र बेदर्दी है। ये सानह ए अज़ीम[4] ऐसा है जिसने ग़मे रेहलत[5] नवाबे मग़फ़ूर[6] को ताज़ा किया। पस, ऐसे मौक़े पर सब्र की तल्क़ीन[7] क्या की जाये। रही दुआ ए मग़फ़िरत, मैं क्या और मेरी दुआ क्या? मगर चूंकि वो मेरी मुरब्बिया[8] व मुहसिना[9] थीं, दिल से दुआ निकलती है। माहाज़ा[10] तुम्हारा यहाँ आना सुना जाता था, इस वास्ते खत न लिखा। अब जो मालूम हुआ कि दुश्मनों की तबीयत नासाज़ है और इस सबब से आना न हुआ, ये चंद सतरें लिखी गई। हक़ताला तुमको सलामत और तन्दुरुस्त और खुश रखे।

१५ नवम्बर १८६६ ई०।

तुम्हारी खुशी का तालिब
—ग़ालिब

६

(२२ जून, १८६७ ई०)

जमीलुल मनाक़िब अमीमुल एहसान सलामत—बाद सलामे मसनून व

---

१. संवेदना, शोक प्रकाशन। २. धैर्य रखने का उपदेश। ३. मृतक की आत्मा को शान्ति प्रदान करने की प्रार्थना ४. महान दुर्घटना। ५. मृत्यु का शोक। ६. स्वर्गीय। ७. उपदेश। ८. पालन करने वाली। ९. उपकार करने वाली। १०. साथ ही।

दुआ ए बक़ाए दौलते रोज़ अफ़्ज़ूँ अर्ज़ किया जाता है कि उस्ताद मीर जान और उनकी ज़बानी तुम्हारी खैर व आफ़ियत मालूम हुई। खुदा तुमको ज़िन्दा व तनदुरुस्त व शाद व शादाँ[1] रखे।

यहाँ का हाल क्या लिखूँ ? बक़ौल सादी अलेहिर्रहमा[2]—"न मुन्द आब जुज़ चश्मे दुर्रे यतीम"[3] शबव रोज़[4] आग बरसती है या खाक। न दिन को सूरज नज़र आता है, न रात को तारे। ज़मीन से उठते हैं शोले, आसमान से गिरते हैं शरारे[5]। चाहा था कि कुछ गर्मी का हाल लिखूं। अक़्ल ने कहा—देख नादान, क़लमे अँग्रेज़ो दियासलाई की तरह जल उठेगी और काग़ज़ को जला देगी। भाई, हवा की गर्मी तो बड़ी बला है, गाह गाह जो हवा बन्द हो जाती है, वो और भी जाँगुज़ा[6] है।

खैर, अब फ़सल से क़तै नज़र एक कोदके[7] ग़रीबुल वतन[8] के एख़्तलात[9] की गर्मी का ज़िक्र करता हूँ कि वो जाँसोज़[10] नहीं बल्कि दिल अफ़्रोज़[11] है। परसों फ़र्रुख मिर्ज़ा आया। उसका बाप भी उसके साथ था। मैंने उससे पूछा कि क्यों साहब, मैं तुम्हारा कौन हूँ और तुम मेरे कौन हो ? हाथ जोड़ कर कहने लगा, हज़रत आप मेरे दादा हैं और मैं आपका पोता हूँ। फिर मैंने पूछा कि तुम्हारी तनखा आई ? कहा—जनाबे आली आका जान[12] की तनखा आ गई है, मेरी नहीं आई। मैंने कहा, "तू लोहरू जाये तो तनखा पाये।" कहा—"हज़रत, मैं तो आका जान से रोज़ कहता हूँ कि लोहारू चलो। अपनी हुकूमत छोड़कर दिल्ली की रैयत में क्यों मिल गये।"

१. प्रसन्न। २. उन पर ईश्वर की दया हो। ३. दुर्रे यतीम (स्वाति की बूँद से बनने वाले अखण्ड मोती) के अतिरिक्त आँखों में कुछ नहीं है—अर्थात् आँखों में आँसू ही आँसू हैं। ४. रात-दिन। ५. स्फुलिंग। ६. प्राणलेवा। ७. बालक। ८. परदेशी। ९. प्रेम। १०. दिल दुखानेवाला। ११. मन प्रसन्न करने वाला। १२. पिता (तुर्की में भाई)।

सुभान अल्लाह; बालिश्त भर का लड़का और ये फ़हमे दुरुस्त[1] और तब ए सलीम[2]। मैं इस खूबी ए खू[3] और फ़र्रुखि ए सीरत[4] पर उसको फ़र्रुखसियर कहता हूँ। मुसाहिब बेबदल है। तुम उसको बुला क्यों नहीं भेजते ? मगर भाई, ग़ुलाम हुसेनखाँ मरहूम के मत्तबे[5] हो कि जैनुल आबदीन व हैदरहसन और उनकी औलाद को कभी मुँह न लगाया। अलाउद्दीनखाँ जैसा होशमंद व हमादाँ[6] बेटा; फ़र्रुखसियर जैसा दानिशवर, बज्लासंज[7] और शीरीं सुखन[8] पोता, ये दो अतिय ए उज्मा[9] व मोहिबते कुबरा[10] हैं तुम्हारे वास्ते मिनजानिबिल्लाह्[11]।

अगर दरयाफ़्ती बर दानिश्त बोस
वगर ग़ाफ़िल शुदी अफ़सोस अफ़सोस[12]

आज २२ जून की है। आफ़ताब सरतान[13] में आ गया। नुक्त ए इन्क़लाबे सैफ़ी[14] में दिन घटने लगा। चाहिए कि तुम्हारा ग़ैज़ो ग़ज़ब[15] हर रोज कम होता जाये।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

---

१. उपयुक्त बुद्धि। २. अच्छा स्वभाव। ३. स्वभाव की अच्छाई। ४. अच्छा स्वभाव। ५. अनुयायी। ६. प्रकाण्ड विद्वान्। ७. विनोदी। ८. मधुरभाषी। ९. बड़ा दान। १०. महान् देन। ११. ईश्वर की ओर से। १२. यदि तुमने परिचय पा लिया तो अपनी बुद्धि की सराहना करो। यदि असावधान हो तो दुःख है, दुःख है। १३. कर्क (राशि)। १४. २२ जून। १५. अत्यधिक क्रोध।

नवाब ज़ियाउद्दीन अहमदख़ाँ के नाम

१

जनाब क़िब्ला[1] व काबा[2],

आपको दीवान के देने में ताम्मुल[3] क्यों है ? रोज़ आपके मुताले[4] में नहीं रहता। वग़ैर उसके देखे आपको खाना हज़म न होता हो, ये भी नहीं। फिर आप क्यों नहीं देते ? एक जिल्द हज़ार जिल्द वन जाये, मेरा कलाम शोहरत पाये, मेरा दिल ख़ुश हो, तुम्हारी तारीफ़ का क़सीदा अहले आलम[5] देखें, तुम्हारे भाई की तारीफ़ की नस्र सव की नज़र से गुज़रे, इतने फ़वायद[6] क्या थोड़े हैं ? रहा किताव के तलफ़[7] होने का अँदेशा ये ख़फ़क़ान[8] है। किताब क्यों तलफ़ होगी ? अहयानन[9] अगर ऐसा हुआ और दिल्ली-लखनऊ की अर्ज़ेराह[10] में डाक लुट गई तो मैं फ़ौरन वसवीले डाक रामपूर जाऊँगा और नवाब फ़ख़्रुद्दीनखाँ मरहूम के हाथ का लिखा हुआ दीवान तुमको ला दूँगा। अगर ये कहते हो कि अव वहाँ से लेकर भेज दो वो न कहेंगे कि वहीं से क्यों नहीं भेजते ? हाँ ये लिखूँ कि नवाब ज़ियाउद्दीनख़ाँ साहब नहीं देते, तो क्या वो ये नहीं कह सकते कि जव वो तुम्हारे भाई और तुम्हारे क़रीव होकर नहीं देते तो मैं इतनी दूर से क्यों दूँ ? अगर तुम ये कहते हो कि तफ़ज़्ज़ुल से लेकर भेज दो, वो अगर न दें तो मैं क्या करूँ ? अगर दें तो मेरे किस काम का ? पहले तो नातमाम[11], फिर नाक़िस[12]। बाज़ बाज़ क़सायद[13] इसमें

१. आदरणीय व्यक्तियों के लिए सम्बोधन। २. पूज्य। ३. सोच-विचार। ४. अध्ययन। ५. जन-साधारण। ६. लाभ (ब. व.)। ७. नष्ट। ८. पागलपन। ९. संयोगवश। १०. मार्ग की दूरी। ११. अपूर्ण। १२. त्रुटिपूर्ण। १३. कसीदे।

से और के नाम कर दिये गये हैं और उसमें इसी ममदूह[1] साबिक़ के नाम पर हैं। शहाबुद्दीनख़ाँ का दीवान जो यूसुफ़ मिर्ज़ा ले गया है, उसमें ये दोनों क़बाहतें[2] मौजूद। तीसरी ये कि सरासर ग़लत, हर शेर ग़लत, हर मिस्रा ग़लत। ये काम तुम्हारी मदद के बग़ैर अंजाम न पाएगा और तुम्हारा कुछ नुक़सान नहीं। हाँ, एहतिमाले नुक़सान[3] वो भी अज़ रुए वसवसा[4] व वहम। इस सूरत में मैं तलाफ़ी[5] का कफ़ील[6], जैसा कि ऊपर लिख आया हूँ। बहरहाल राज़ी हो जाओ और मुझको लिखो तो मैं तालिब[7] को इत्तिला दूँ और तलब उनकी जब दोबारा हो तो किताब भेज दूँ।

रहम व करम का तालिब
—ग़ालिब

---

१. प्रशंस्य। २. त्रुटियाँ। ३. हानि की आशंका। ४. दुविधा के कारण। ५. नाश। ६. जमानत देने वाला। ७. इच्छुक।

मिर्ज़ा क़ुर्बान अलीबेगख़ाँ 'सालिक' के नाम

१

मेरी जान किन औहाम[1] में गिरफ़्तार है ? जहाँ बाप को पीट चुका, अब चचा को भी रो। तुझको ख़ुदा जीता रखे और तेरे ख़यालात व एह्‌तिमालात[2] को सूरते वक़ोई दे। यहा ख़ुदा से भी तवक़्क़ो बाक़ी नहीं, मख़लूक़[3] का क्या ज़िक्र ? कुछ बन नहीं आती, अपना आप तमाशाई बन गया हूँ। रंज व ज़िल्लत से ख़ुश होता हूँ, याने मैंने अपने को अपना ग़ैर तसव्वुर किया है। जो दुःख मुझे पहुँचता है, कहता हूँ—लो ग़ालिब के एक और जूती लगी। बहुत इतराता था कि मैं बड़ा शाइर और फ़ारसीदाँ हूँ। आज दूर-दूर तक मेरा जवाब नहीं। ले, अब तो क़र्ज़दारों को जवाब दे। सच तो यों है, ग़ालिब क्या मरा, बड़ा मुल्हिद[4] मरा, बड़ा काफ़िर मरा, हमने अज़राहे ताज़ीम जैसा बादशाहों को बाद उनके 'जन्नत आरामगाह' व 'अर्शनशीं' ख़िताब देते हैं, चूँकि ये अपने को शाहे क़लमरवे सुख़न जानता था, 'सकर मक़र' और 'हाविया ज़ाविया' ख़िताब तजवीज़ कर रखा है, आइए 'नज्मुद्दौला बहादुर' एक क़र्ज़दार का गरीबाँ में हाथ, एक क़र्ज़दार भोग सुना रहा है। मैं उनसे पूछ रहा हूँ—अजी हज़रत नवाब साहब, नवाब साहब कैसे ? ओग़लान साहब[5] आप सलजूक़ी[6] और अफ़रासयाबी[7] हैं। ये क्या बेहुरमती हो रही है ? कुछ तो उकसो, कुछ तो बोलो।

१. भ्रम (ब. व.)। २. आशंकाएँ। ३. प्राणी। ४. धर्मभ्रष्ट। ५. जनाब (तुर्की।)। ६. तुर्क सरदार सलजूक़ जो अपने घर से निकाल दिया गया था, उसके वंश का व्यक्ति। ७. तूरान का शासक, जिसने ईरान पर अ[illegible] किया था किन्तु थोड़े समय में ही क़त्ल कर दिया गया।

बोले क्या बेहया बेग़ैरत ! कोठी से शराब, गंधी से गुलाब, बज़ाज़ से कपड़ा, मेवाफ़रोश से आम, सर्राफ़ से दाम क़र्ज़ लिये जाता था। ये भी सोचा होता कहां से दूँगा। बलिल रहमान अल्ताफ़ुन ख़फ़ी[1], ख़ैर व आफ़ियत तुम्हारी मालूम हुई। दम ग़नीमत है, जान है तो जहान है। कहते हैं कि ख़ुदा से ना उमीदी कुफ़्र है। मैं तो अपने बाब में ख़ुदा से नाउमीद हो कर काफ़िरे मुतलक़ हो गया हूँ। मुआफ़िक़े अक़ीद ए अहले इस्लाम[2] जब काफ़िर हो गया तो मग़फ़िरत की भी तवक़्क़ो न रही। चल भई, न दुनिया, न दीन। मगर तुम हत्तल व सा[3] मुसलमान बने रहो और ख़ुदा से नाउमीद न हो। इन्ना माल उस्रे युस्रा[4] को अपना नस्बुल ऐन[5] रखो।

दर तरीक़त हरचे पेशे सालिक आयद ख़ैरे ऊस्त[6]

घर में तुम्हारे सब तरह ख़ैर व आफ़ियत है। मुहम्मद मिर्ज़ा पंजशम्बा और जुमे को दास्तान के वक़्त आ जाता है। रिज़्वाँ हर रोज़ शब को आता है। यूसुफ़अलीख़ाँ अज़ीज़े सलाम और बाक़र और हुसैनअली बन्दगी कहते हैं। कल्लू दारोग़ा कोर्निश अर्ज़ करता है, औरों को ये पाया हासिल नहीं कि वो कोर्निश भी बजा लायें। ख़त भेजते रहा करो। बद्दुआ।

—अपनी मर्ग का तालिब[7]

---

१. ईश्वर की कृपा परोक्ष रहती है। २. मुसलमानों के विश्वास के अनुसार। ३. यथाशक्ति। ४. प्रत्येक कष्ट के साथ सुख और शान्ति मंगल है। ५. ध्येय। ६. जो सद्गृहस्थ तरीक़त (आत्मशुद्धि) के मार्ग पर चलता है उस पर जो विपत्ति पड़ती है, वह मंगलदायक होती है। ७. अपनी मृत्यु का इच्छुक।

मिर्ज़ा शम्शादअलीबेगख़ाँ 'रिज़्वाँ' के नाम

१

(४ नवम्बर, १८६५ ई०)

फ़र्ज़न्दे दिलबन्द शम्शादअलीबेगख़ाँ को, अगर ख़फ़ा न हों तो दुआ, अगर आज़ुर्दा[1] हों तो बन्दगी। ग़ाज़ियाबाद से जाकर तब ए अक़्दस[2] नासाज़ हो गई। अज़ आमदने काबा पशेमाँ शुदा बाशी[3]।

क़ुर्बानअलीबेगख़ाँ को दुआ कहना और उनका हाल लिखना।

आज शम्बा[4], ४ नवम्बर की है। परसों नवाब साहिब दौरे को गये। फ़रमा गये हैं कि दो हफ़्ते में आऊँगा। आकर चार रोज़ यहाँ रहेंगे, फिर नुमाइशगाहे बरेली की सैर को जाएँगे। वहाँ से फिर कर जब आएँगे तो साहिब कमिश्नर बरेली का इंतिज़ार फ़रमाएँगे। वो पंजुम[5] दिसम्बर तक आ जाएँगे। तीन दिन तक जश्न[6] रहेगा, उसके दो चार रोज़ बाद ग़ालिब रुख़्सत होगा। ख़ुदा करे तुम तक ज़िन्दा पहुँच जाये।

पीरजी बहुत याद आते हैं। उनको दुआ कहना। और ये काग़ज़ पहले तुम पढ़ना, फिर सालिक को पढ़ाना। फिर मियाँ दादा अमान और हकीम [illegible] ख़ाँ को दिखाना, फिर मिर्ज़ा अब्दुल्ला हुसैनख़ाँ के पास ले जाना। इस क़सीदे के साथ की नज़्र नवाब ज़ियाउद्दीनख़ाँ या मिर्ज़ा साहिब से माँग

१. दुःखी। २. गुन प्रकृति। ३. आने से लौटने पर कुछ लज्जित हुए होंगे। ४. शनिवार। ५. पाँच। ६. उत्सव।

लेना और उसकी नक़ल कर लेना और 'क़ात ए बुरहान' का हाल लिखना। मैंने तीस रुपये की हुंडवी, सौ रुपये की बाक़ी, हकीम जी को भेज दी है। हज़रत ने रसीद भी नहीं लिखी। उनसे रसीद लिखवा भेजो और सब जिल्दों के शीराज़े बंध जाएँ और मोटा काग़ज़ दोनों तरफ़ लग जाए। ख़बरदार कोई नुस्ख़ा बेजिल्द न रहे। तीन सौ मुजल्लद[1] के तैयार होने की ख़बर और बक़िया हिसाब मेरे पास भेज देना या रुपया फ़ौरन भेज दूंगा या आकर दूंगा।

गवर्नर का हाल लिखो। कौन-कौन हाज़िर हुआ? किस किस की मुलाक़ात हुई? फ़र्रुख़सियर के दादा साहब आये या नहीं? अगर आये हैं तो रूदाद[2] मुफ़स्सल[3] लिखो। हाँ भाई साहब टोंकवाले सय्यद सिराज अहमद का भी हाल ज़रूर लिखना। अली नक़ीख़ाँ वज़ीर शाहे अवध की हक़ीक़त भी ज़रूर लिखना और मुझको इन मक़ासिद[4] के जवाब का मुंतज़र समझना। आज दोशंबा, ४ नवम्बर की है। आठ दिन में ख़त की आमदो शुद यक़ीनी है। नौ दिन राह देखूंगा, दसवें दिन अगर तुम्हारा ख़त न आया तो मैं राफ़ज़ी[5] बन जाऊँगा। मतालिब मुन्दर्जा[6] के जवाब का तालिब—

४ नवम्बर १८६५ ई०।

—ग़ालिब

२

(अगस्त, १८६६ ई०)

मिर्ज़ा, रस्मे तहरीरे ख़ुतूत[7] बसबबे ज़ोफ़[8] तर्क होती जाती है। [illegible]

---

१. सजिल्द। २. विवरण। ३. विस्तृत। ४. उद्देश्य (ब. व.)। ५. राफ़िज़ा—शिया मुसलमानों का एक सम्प्रदाय, राफ़ज़ी—राफ़िज़ा सम्प्रदाय का व्यक्ति। ग़ालिब सुन्नी थे। शिया बनने की धमकी देते हैं। ६. उल्लिखित। ७. पत्रों का लेखन। ८. निर्बलता।

का तारिक[1] नहीं हूँ बल्कि मतरूक[2] हूँ। अब मुझे वैसा न समझो, जैसा छोड़ गये हो। रामपूर के सफ़र में ताब व ताक़त, हुस्ने फ़िक्र[3] लुत्फ़े तबीयत[4] ये सब असबाब लुट गये। अगर तुम्हारे खत का जवाब न लिखूँ तो महले तरह्हुम[5] है, न मुक़ामे शिकायत। सुनो, मेरे खत न पहुंचने से तुमको तशवीश क्यों हो ? जब तक ज़िन्दा हूँ, ग़मज़दा व अफ़्सुर्दा, नातवाँ[6] व नीमजाँ[7] हूँ। जब मर जाऊँगा तो मेरे मरने की खबर सुन लोगे। पस, जब तक मेरे मरने की खबर न सुनो, जानो कि ग़ालिब जीता है। खस्ता व रंजूर व दर्दमन्द[8]। ये सतरें लिखकर इस वक़्त तुम्हारे भाई के पास भेजता हूँ। मगर उनको हमेशा सफ़र दरवतन[9] है। बफ़र्ज़े महाल[10] अगर घर में हैं तो इनायतुल्ला उनको, वर्ना मुहम्मद मिर्ज़ा को दे आएगा।

रबीउस्सानी जुमे का दिन सुबह का वक़्त है।

१. त्यागी। २. परित्यक्त। ३. चिन्तन-शक्ति। ४. सुस्वभाव। ५. कृपा का स्थान। ६. निर्बल। ७. अर्धमृत। ८. दुःखी। ९. प्रदेशों की यात्रा। १०. कठिनाई से।

मिर्ज़ा बाक़रअलीख़ाँ 'कामिल' के नाम

१

(१६ नवम्बर, १८६७)

इक़बाल निशान[1] बाक़रअलीख़ाँ को ग़ालिबे नीमजाँ की दुआ पहुँचे। बहुत दिन हुए कि तुम्हारा ख़त आया। मगर तुमने अपने मकान का पता तो लिखा ही न था। फ़क़त अलवर का नाम लिखकर छोड़ दिया। मैं क्यों कर ख़त भेजता? बारे, अब शहाबुद्दीनख़ाँ की ज़बानी पता मालूम हुआ, तो अब मैं तुमको ख़त लिखता हूँ। जुनिया बेगम[2] अच्छी तरह है। मेरे पास आती रहती है और तुम्हारे घर में सब तरह ख़ैर व आफ़ियत है। अक्तूबर के महीने की तुम्हारी तनखा तुम्हारे घर भेज दी। मिर्ज़ा हुसैनअलीख़ाँ बन्दगी अर्ज़ करता है।

तहरीर १६ नवम्बर १८६७।

—असदुल्लाह.

२

(७ दिसम्बर, १८६८)

इक़बाल निशान मिर्ज़ा बाक़रअलीख़ाँ को ग़ालिबे नीमजाँ की दुआ पहुँचे। तुम्हारा ख़त आया। तुम्हारे रोज़गार की दुरुस्ती आगे सुन चुका था,

---

१. सौभाग्यशाली। २. बाक़रअलीख़ाँ की बेटी।

अब तुम्हारे लिखने से देख भी ली। दिल मेरा ख़ुश हुआ और तुम ख़ातिर जमा रखो, जैसा कि महाराज[1] ने तुम से कहा है, तुम्हारी तरक़्क़ी इंशा अल्लाह जल्द होगी। मुझसे जो तुम गिला[2] करते हो ख़त के न भेजने का, भाई अब मेरी उँगलियाँ निकम्मी हो गई हैं और बसारत[3] में भी ज़ोफ़ आ गया है। दो सतरें नहीं लिख सकता। अतराफ़ व जवानिब[4] के ख़ुतूत आये हुए धरे रहते हैं। जब कोई दोस्त आ जाता है, मैं उससे जवाब लिखवा देता हूँ। परसों का तुम्हारा ख़त आया हुआ धरा था। अब इस वक़्त मिर्ज़ा युसूफ़अलीख़ाँ आ गये हैं, मैंने उनसे ये ख़त लिखवा दिया। तुम्हारी दादी अच्छी तरह है। भाई अच्छी तरह है। तुम्हारे घर में सब ख़ैर व आफ़ियत है। तुम्हारी लड़की अच्छी तरह है। कभी रोज़ कभी दूसरे-तीसरे मेरे पास आ जाती है।

३

(७ दिसम्बर, १८६८ ई०)

नूरे चश्म व राहते जाँ[5] मिर्ज़ा बाक़रअलीख़ाँ को फ़क़ीर ग़ालिब की दुआ पहुँचे। तुम्हारा ख़त जो मेरे ख़त के जवाब में था वो मुझको पहुँचा। इसमें कोई बात जवाब तलब न थी। इस ख़त में एक नए अम्र की इत्तिला देता हूँ। वो अम्र ये है कि मैंने अगले महीने में 'सब्दचीं' की एक जिल्द में अर्ज़ी, इक़बाल निशान मीर तफ़ज़्ज़ुल हुसेनख़ाँ के मारिफ़त अलवर को भिजवाई थी, सो अब के हफ़्ते में हुज़ूरे पुरनूर महाराव राजा बहादुर का ख़त उन्हीं की मारिफ़त मुझको आया। हुज़ूर ने अज़राहे बन्दा पर्वरी व क़द्रे अफ़्ज़ाई अलक़ाब[6] बहुत बड़ा मुझे लिखा और ख़त में फ़िक़्रे[7] बहुत इनायत और इल्तिफ़ात[8]

१. अलवर-नरेश शिवदानसिंह। २. शिकायत। ३. दृष्टि। ४. आसपास। ५. नेत्र की चमक तथा हृदय की शान्ति। ६. उपाधियाँ। ७. वाक्य। ८. प्रेम।

के भरे हुए दर्ज किये। तुम तो वहीं हो, तुमको इसकी इत्तिला हो गई थी या नहीं ? और अगर हो गई थी तो तुमने मुझको क्यों नहीं लिखा ? अब मैं तुमसे ये पूछता हूँ कि कभी दरबार में कुछ मेरा भी जिक्र आता है या नहीं ? और अगर आता है है तो किस तरह आता है ? हुज़ूर सुन कर क्या फ़रमाते हैं ?

७ दिसम्बर, १८६८ ई० ।

—ग़ालिब

मीर सरफ़राज़ हुसेन के नाम

१

नूरे चश्म राहते जान मीर सरफ़राज़ जीते रहो। तुम्हारे दस्तख़ती ख़त ने मेरे साथ वो किया जो बूए पैरहन ने याक़ूब[१] के साथ किया। मियाँ, ये हम-तुम बूढ़े हैं या जवान हैं, तवाना[२] या नातवाँ हैं, बड़े बेशक़ीमत हैं। याने बहरहाल ग़नीमत हैं। कोई जला-भुना कहता है—

यादगारे ज़माना हैं हम लोग
याद रखना फ़साना[३] हैं हम लोग

वही बालाख़ाना है और वही मैं हूँ, सीढ़ियों पर नज़र है कि वो मीर मेहदी आये, वो यूसुफ़ मिर्ज़ा आये.....वो मीरन आये, वो यूसुफ़अलीख़ाँ आये। मरे हुवों का नाम नहीं लेता। बिछड़े हुवों में से कुछ गिने हैं। अल्लाह, अल्लाह, अल्लाह—हज़ारों का मैं मातमदार हूँ, मैं मरूँगा तो मुझको कौन रोएगा? सुनो ग़ालिब, रोना-पीटना क्या, कुछ इख़्तिलात[४] की बातें करो। कहो मीर सरफ़राज़ हुसेन से कि ये ख़त मीर मेहदी को पढ़वाओ और मीरन साहब को

१. भाइयों ने यूसुफ़ को कुएँ में लटका दिया और उसके कपड़े ले कर अपने पिता याकूब के पास आये। भाइयों ने बताया यूसुफ़ मर गया, ये उसके कपड़े हैं। उन कपड़ों में अपने पुत्र यूसुफ़ की गन्ध पाकर याकूब विह्वल होकर रोने लगे। २. हृष्ट-पुष्ट। ३. कहानी। ४. मित्रता, प्यार।

बुलवाओ। कल शाम को या परसों शाम को मीर अशरफ़अली साहब मेरे पास आये थे। कहते थे कि कल या परसों पानीपत को जाऊँगा। मैंने उनको ज़बानी कुछ पयाम मीरन साहब को भेजा है, अगर भूल न जाएँगे, पहुँचाएँगे। खुलासा इसका ये है कि साहिबे इब्न नहीं है, न हो; गुलाम अशरफ़ नहीं है, न हो, अगर मंज़ूर कीजिये तो मैं सूफ़ी हूँ। 'हमाऊस्त'[1] का दम भरता हूँ। बमूज़िबे मिस्रा—

दिल बदस्तावर के हज्जे अकबरस्त[2]

तुमसे कब इन्कार करता हूँ, अगर मिर्ज़ा गौहर की जगह मानो तो खुश, अगर ग़ुलाम अशरफ़ मानो तो राज़ी। रात को अपने घर मे बातें बनाओ, दिन को मुझसे जी बहलाओ। क़िस्सा मुख्तसर, आओ जल्दी आओ। अलवर का जो हाल लिखते हो वो सच है। राजपूत ऐसा ही कुछ करते हैं, मगर महाराजा मुसलमानों का दम भरते हैं। कुछ दिन जाते हैं कि ये लोग फिर वहाँ आते हैं, क्या मजमा बरहम हुआ है! मुझको कैसा ग़म हुआ है। तुम इस जर्गे[3] से जुदा हो, तुमको क्या अंदेशा है? मीर क़ुर्बान अलीसाहब जैसा लिखें, वैसा करो। मीर मेहदीसाहब सारा ख़त पढ़कर कहेंगे। मुझको दुआ भी लिखी। भाई मेरी दुआ पहुंचे। मीर नसीरुद्दीन एक दिन मेरे हाँ आये थे। अब मैं नहीं जानता, यहाँ है या वहाँ। हों तो दुआ कहना। मीरन साहब के नाम तो इतना कुछ पयाम है। दुआ-सलाम की हाजत क्या? देखो हम अपना नाम नहीं लिखते, भला देखें तो सही तुम जान जाते हो कि ये ख़त किसका है?

---

१. सर्वं खल्विदं ब्रह्म। २. लोगों के हृदय को वश में करना सबसे बड़ा आनन्द है। ३. श्रेणी, समूह। ४. अपने युग का निर्माता।

२

(२७ मार्च, १८६६ ई०)

मेरी जान के चैन मुज्तहदुल अस्र[1] मीर सरफ़राज़ हुसेन, तुमको और तुम्हारे भाई को और तुम्हारे दोस्त को दुआ और फिर ये बयान कि ग़दर के पहले हर दरबार में ख़िलत पाता था। बाद ग़दर दरबार और ख़िलत और मुलाक़ात सेक्रेट्ररों की ये सब मौक़ूफ़, अब जो लेफ़्टंट गवर्नर पंजाब आये तो उन्होंने ख़ुद मुझे बुला भेजा और खिलत दिया और फ़रमाया कि ये हम अपनी तरफ़ से अज़राहे मुहब्बत देते हैं और ये नवीद[2] अलावा कि गवर्नर जनरल बहादुर के हाँ का भी दरबार और खिलत खुल गया। अम्बाले जाओगे तो पाओगे। मैं अम्बाले न जा सका। बिलफ़ैल नायब गवर्नर के ख़िलत पर क़नाअत[3] की। इस ख़िलत के बशर्ते हयात[4] और वक़्त पर मौक़ूफ़ रखा।

हिमल्टन साहब अलवर में आ गये। राजा साहब दरबार रोज़ करते हैं। अहले अग़राज़[5] के अरायज़[6] जो हुज़ूर में गुज़रते हैं, वो हुज़ूर पंचों के पास भेज देते हैं। खरीता याने हुक्म इख़्तियार पाने का अभी नहीं आया। यक़ीन है कि लार्ड साहब बाद इख़्तितामे सफ़र[7] जब शिमला पहुँचेंगे, तो खरीता जारी होगा। आज जुमा, सातवीं शव्वाल की और सत्ताईसवीं मार्च की है। चार घड़ी दिन चढ़ा है। मैं ये ख़त लिख कर भेजता हूँ। तुम भी पढ़ो और मीर मेहदी को भी पढ़ाओ, अब शायद थोड़े दिनों तक मैं ख़त न लिख सकूँ। तफ़्सील इसकी ये कि रज्जब के महीने में सीधे हाथ पर एक फुन्सी हुई, फुन्सी-फोड़ा हो गई, फोड़ा फूट कर ज़ख़्म बना, ज़ख़्म बिगड़ कर ग़ार हो गया। अब बक़दर एक कफ़ेदस्त[8] वो गोश्त मुर्दार हो गया। अम्बाले न जाने की भी यही

१. अपने युग का निर्माता २. निमंत्रण, शुभ-समाचार। ३. सन्तोष। ४. यदि जीवित रहा। ५. अभ्यर्थी लोग। ६. प्रार्थना-पत्र। ७. यात्रा की समाप्ति। ८. हथेली।

वजह हुई। दो हफ़्ते से अंग्रेज़ी इलाज होता है। काला डाक्टर रोज़ आता है। आज उसने इरादा इस मुर्दार गोश्त के काटने का किया है अब वो आता होगा। जल्द-जल्द ये लिख कर रवाना करता हूँ, ताकि फिर हाथ के पुर्ज़े उड़ा दूँ।

७ शव्वाल १२७९ हि० मुताबिक़ २७ मार्च १८६६ ई०।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

मीर अफ़ज़लअली उर्फ़ मीरन के नाम

१

(६ नवम्बर, १८५८ ई०)

सआदत व इक़बाल निशान मीर अफ़्ज़लअली साहब अलमारूफ़[1] बमीरन साहब ! ख़ुदा तुमको सलामत रखे और फिर तुम्हारी सूरत मुझको दिखावे। तुम्हारा ख़त पहुँचा। आँखों से लगाया, आँखों में नूर आया। दिल पर रखा, मज़ा पाया। कल तक इस नाम को सुनकर शरमाते थे और आप ही आप घुले जाते थे। अब बन-बन कर बातें बनाते हो और हमको कड़ियाँ सुनाते हो। काश, कि तुम यहाँ आ जाओ। तब इस तहरीर का मज़ा पाओ। मीर मेहदी साहब वो तहरीर तुम्हारी, बनिस्बत मेरे, देख कर बहुत ख़फ़ा हुए। चुनाँचे अब जो तुम्हारी उनकी मुलाक़ात होगी तो तुमको मालूम होगा।

भाई, तुम्हारे साले बहुत ग़ुरूर के पुतले हैं। दो-एक बार मैंने उनको बुलाया। उन्होंने करम न फ़रमाया। तुम सच कहते हो, ये लोग और ही आब व गिल[2] के हैं। तुम्हारी और उनकी कभी न बनेगी और गहरी न छनेगी। वहीं बैठे रहो, देखो ख़ुदा क्या करता है। इंशा अल्लाह् ताला ये रंज व अज़ाब[3] का ज़माना जल्द गुज़रता है।

मीर सरफ़राज़ हुसेन साहब को मेरी दुआ कहना और कहना भाई वो ज़माना आया है कि सैकड़ों अज़ीज़ राही ए मुल्के अदम[4] हुए, सैकड़ों ऐसे मफ़क़ूदुल ख़बर[5] हो गये कि उनके मर्ग व ज़ीस्त[6] की ख़बर नहीं। दो-चार

१. परिचित। २. पानी और मिट्टी। ३. यातना। ४. यमलोक के यात्री। ५. लुप्त। ६. मृत्यु और जीवन।

जो बाक़ी रहे हैं, खुदा जाने कहाँ बसते हैं कि हम उनके देखने को तरसते हैं। मीर नसीरुद्दीन को पहले बन्दगी फिर दुआ।

दो शम्बा ९ नवम्बर १८५८ ई० बैनुज्जुह्र वलअस्र[1]।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

२

(६ जुलाई, १८५९ ई०)

बरख़ुर्दार[2], कामगार, मीर अफ़ज़लअली उर्फ़ मीरन साहब तालल्लाहु उम्रहू[3]। बाद दुआ के वाज़े राए सआदत इन्तिमाए[4] हो। आपका ख़त पहुँचा। अगरचे मैंने सिर्फ़ पढ़ा, मीर मेहदी के जलाने को लिखता हूँ कि मैंने आँखों से लगाया। हाँ साहब, तुमने जो लिखा है कि क़िब्ला व काबा कहने से वो साहब बहुत खुश होते हैं, क्यों न खुश हों? खुशी की बात है। तुम्हारे सर की क़सम, मैं गोया देख रहा हूँ और मेरी नज़र में फिर रहा है, वो मीर सरफ़राज़हुसेन का शरमा कर आँखें नीची करना और मुस्कराना। ख़ुदा कभी मुझको भी वो सूरत दिखाये। मीर नसीरुद्दीन यहाँ आ गये हैं। तुम मुज्तहदुल अस्र हकीम मीर अशरफ़अली को मेरी दुआ कहना और मीर मेहदी पूछें तो कहना कि तुम को कुछ नहीं लिखा। कल मैंने खबर मँगवाई थी, सो लड़की को अभी तप आये जाती है। यक़ीन है कि तुमने वहाँ पहुँचकर मौलवी मज़हरअली को ख़त लिखा होगा। हाँ, तुम को ज़रूर है, [illegible] नामा व पयाम[5] की रस्म रखनी। बदुआ। नहार शम्बा, शशुम जुलाई १८५९ ई०।

—ग़ालिब

---

१. मध्याह्न और अपराह्न की नमाज़ के बाद। २. सौभाग्यशाली। ३. ईश्वर उनकी आयु बढ़ाये। ४. वृद्धि। ५. पत्र-व्यवहार। ६. दूरी।

३

(२ जुलाई, १८६४ ई०)

मेरी जान,

तुम्हारा रुक़्क़ा पहुँचा, और न खुला कि मीर सरफ़राज़हुसेन जैपुर क्यों जाते हैं? बहरहाल मीर मेहदी को दुआ कहना और मीर सरफ़राज़हुसेन से ये पूछना कि तुम जैपूर चले, मैंने तुमको ख़ुदा को सौंपा, तुम मुझे किसको सौंप चले।

जवाब का तालिब

—ग़ालिब

ख़्वाजा गुलामगौसख़ाँ 'बेख़बर' के नाम

१

(६ दिसम्बर, १८५७ ई०)

पीर व मुर्शिद,

ये ख़त है या करामत ? साफ़[1] सफ़ा ए ज़मीर[2] व कश्फ़े हुजुब[3] की अलामत[4] है। मुद्दआ ज़रूरी उत्तहरीर[5] और अंदेश ए निशाने मस्कन[6] दामनगीर। अगर ये ख़त कल न आ जाता तो आज ख़त क्यों कर लिखा जाता ? सुभानअल्लाह् ! जिस दिन यहाँ मुझको वो मतलबे तहरीर[7] पेश आया है, उसी दिन आपने वहाँ लिखने को क़लम उठाया है। आपको आरिफ़े कामिल[8] क्यों कर न लिखूँ और क्या कहूँ, वली न कहूँ ? मुद्दआ बयान करता हूँ, मगर ये गुमान करता हूँ कि ये ख़त पहुँचने न पाएगा कि राज़े सरबस्ता[10] आप पर खुल जाएगा। याने एक शंबा, २८ नवम्बर को दो ख़त और दो पार्सल, एक में 'दस्तम्बू' का एक मुजल्लद और एक में तीन मआन[11] बवसीले डाकख़ाना कर चुका हूँ। ख़तों का चौथे-पाँचवें दिन, पार्सलों का छठे-सातवें दिन पहुँचना ख़याल करता हूँ। पार्सलों के उन्वान[12] पर ख़तों की मख़्ब्बत[13] रक़म की है और ख़तों के सरनामे पर पार्सलों के इर्साल[14] की इत्तिला दी है। तीन किताब वाले पार्सल और एक ख़त पर जनाब मुंशी

---

१. शुद्ध। २. अन्तःकरण। ३. पर्दे का खुलना। ४. लक्षण। ५. लिखने की आवश्यकता। ६. घर। ७. श्रेष्ठ उद्देश्य। ८. ज्ञानी। ९. [illegible]। १०. गुप्त। ११. साथ ही। १२. शीर्षक। १३. नाम। १४. प्रेषण।

बहादुर का नामे नामी है, और एक किताब वाले पार्सल और एक ख़त पर जनाब चीफ़ सेक्रेतर साहब दोअ्रम[1] का इस्मे सामी[2] है। आज पाँचवाँ दिन है। ख़त दोनों अगर पहुँच गये हों तो क्या अजब है, बल्कि सच तो यों है कि अगर न पहुँचे हों तो बड़ा ग़ज़ब है। अगले अरायज़ के न पहुँचने में कुछ शक नहीं। जवाबे अम्र आख़िरी दफ़्तर में इसका पता आज तक नहीं। अब कारपरदाज़ाने डाक[3] डाकू न बन जायें और मेरे इन दोनों ख़तों और पार्सलों को बएहतियात पहुँचायें। सर्फ़े[4] इनायत की गुंजाइश तो आप जब पायें कि वो ख़त और पार्सल पहुँच जाएँ। अभी तो आप से मुझको उनके पहुँचने न पहुँचने का सवाल है। किस वास्ते कि जब तक आप मुझको इत्तिला न देंगे, उनके न पहुँचने की भी ख़बर मुझ तक पहुँचनी मुहाल है। बहरहाल ये नियाज़नामा[5] जिस दिन पहुँचे उसके दूसरे दिन जवाब लिखिए। जैसा मैंने जल्द लिखा ऐसा ही आप भी शिताब लिखिये। आपके इनायतनामे में कोई अम्र ऐसा न था कि जिसका जवाब लिखा जाये या इस बाब में कुछ और अर्ज किया जाये। लोहारू की रवानगी का ख़त आएगा, लोहरू को भेज दिया जाएगा, जनाब मुंशी नवाबख़ाँ साहब और जनाब मुंशी इज़हार हुसेन साहब में और आप में अगर रब्ते बेतकल्लुफ़ हो तो उन दो साहिबों की ख़िदमत में मेरा सलामे नियाज़ पहुँचने में न तवक़्क़ुफ़[6] हो।

तुम सलामत रहो क़यामत तक। २ दिसम्बर १८५७ ई०।

२

क़िबला,

इस नाम ए मुख़्तसर[7] ने ो किया जो पार ए अब्र[8] किस्त ए ख़ुश्क[9] से

१. द्वितीय। २. श्रेष्ठ नाम। ३. डाक के कार्यकर्ता। ४. व्यय। ५. कृपा-पत्र। ६. विलम्ब। ७. संक्षिप्त पत्र। ८. बादल का टुकड़ा। ९. सूखी खेती।

करे, यानें खत और पार्सल का पहुँच जाना ऐसा नहीं कि उसकी खबर पाकर बख़्त[1] की रसाई का सिपास गुज़ार[2] न हूँ। ये तो हज़रत को लिख चुका हूँ कि दूसरा पार्सल और खत एक साथ भेजा गया है और हरगूना तवक़्क़ो का खयाल इसी पार्सल पर है, किस वास्ते कि उस खत में हाकिमें आज़म के नाम की अर्ज़ी मलफ़ूफ़[3] है। जानता हूँ कि महकमा एक, डाक एक, दोनों लिफ़ाफ़े एक दिन पहुँचे होंगे। मगर दिल नहीं मानता और कहता है कि न मानूंगा, जब तक कि हज़रत इस सिरिश्ते से मालूम करके न लिखेंगे। अब आप जानिये और ये दिल सौदाज़दा[4]। मैं इसकी सिफ़ारिश करने वाला और इसके मुद्दआ का गुज़ारिश करने वाला कौन? हाँ, इतनी बात है कि आप लिख सकते हैं, बल्कि ये भी आप मुझ पर हाली कर सकते हैं कि नज़्र[5] विलायत की, विलायत को रवाना हुई या नहीं? मेरी जिगरकावी[6] की क़द्रदानी हुई या नहीं? पेशगाह से मुआफ़िक़ दस्तूर के खत का उम्मीदवार हूँ या नहीं? अपने हुस्नेतबा[7] का शुक्रगुज़ार हूँ या नहीं? इस खत का जवाब जितना जल्द इनायत कीजिएगा, मुझको जिला दीजिएगा। लोहारू का खत एक मोतमद[8] के हाथ भेज दिया गया।

३

(दिसम्बर १८५८ ई०)

क़िब्ल ए हाजात[9]

अतूफ़त[10] के आने से आपका भी शुक्रगुज़ार हुआ और अपने बख़्त और क़िस्मत को भी आफ़रीं कही और डाक के कारपरदाज़ों का एहसान माना। वारे, दोनों पार्सल और दोनों लिफ़ाफ़े पहुँच गये।

---

१. भाग्य। २. अभिनन्दनकर्ता। ३. लिफ़ाफ़े में बन्द। ४. पागल। ५. भेंट। ६. कठिन परिश्रम। ७. गुण-स्वभाव। ८. [illegible]। ९. आशाओं के केन्द्र। १०. अनुग्रह-पत्र।

ख़्वाजा ग़ुलामग़ौसख़ाँ 'बेख़बर' के नाम

ता निहाले दोस्ती कै बर दिहद
हालिया रफ़्तेम वतुख्मे काश्तेम[1]

ये किताब जो मुरसिलइलै[2] के मुतालै[3] में है, फिर बनिस्बत उस दूसरी किताब के क़िस्मत की अच्छी है, याने ख़ुद मुलाहिज़ा फ़रमा रहे हैं और अगर कहीं कुछ पूछना होगा तो यक़ीन है कि आपसे पूछेंगे। दूसरी किताब देखिये मुझको क्या दिखाए ? जिनको उसके देखने का हुक्म हुआ है वो अहले इल्म व फ़ज़्ल[4] में से है, लेकिन ये तर्ज़े तहरीर[5], मैं नहीं कहता कि ये नादिर[6] है, मगर बेगाना व ना आशना[7] है, ख़ुदा करे वो जो उसके सर पर मामूर[8] है, इन औराक़[9] को बमशवरत[10] आपके देखा करें और कहीं-कहीं आप से पूछ लिया करें। क्यों कर लिखूं, नहीं लिख सकता। तुम सब कुछ जानते हो। जहाँ गुंजाइश पाओगे, जैसा मुनासिब जानोगे, जो कुछ कर सकोगे, वो करोगे। लोहारु का ख़त बकमाले एहतियात रवाना हो गया। ख़ातिरे अक़्दस जमा रहे। जवाब तलब, ज़्यादा हद्दे अदब।

४

(३ जनवरी, १८५९ ई०)

जनाब आली,

आज दोशंबा, ३ जनवरी १८५९ ई० की है। पहर दिन चढ़ा होगा कि अब्र घिर रहा है, तरश्शोह[11] हो रहा है, हवा सर्द चल रही है, पीने को कुछ मयस्सर नहीं। नाचार रोटी खाई है—

१. देखना है यह मित्रता का पौधा कब फल देगा, हम गये और हमने बीज बो दिये। २. पत्र-प्राप्तकर्त्ता। ३. अध्ययन। ४. कृपा। ५. लिखने का ढंग। ६. अलभ्य। ७. अपरिचित। ८. नियुक्त। ९. पृष्ठ (ब. ब.)। १०. परामर्शानुसार। ११. फुहार।

उफ़ुक़ हा पुर अज़ अब्रे बहमन मिहि
सिफ़ा लीना ए जामे मनज़ मय तिहि[1]

ग़मज़दा व दर्दमन्द बैठा था के डाक का हरकारा तुम्हारा ख़त लाया। सरनामे को देख कर इस राह से के दस्तख़ते ख़ास का लिखा हुआ है, बहुत बहुत ख़ुश हुआ। ख़त को पढ़कर इस रू से कि हुसूले मुद्दआ के ज़िक्र पर शामिल न था, अब अफ़्सुर्दगी हासिल हुई—

मा ख़ाना ग़मीदगाने ज़ुल्मेम
पैग़ामे ख़ुश अज़ दयारे मा नीस्त[2]

इस अफ़्सुर्दगी[3] में जी चाहा कि हज़रत से बातें करूँ। बा आँ कि[4] मुझे जवाब तलब न था, जवाब लिखने लगा।

पहले तो ये सुनिये कि आपके दोस्त को आपका ख़त पहुँच गया, मगर वो दो बार मुझको लिख चुका है कि मैं जवाब इसका निशाने मरक़ूमए लिफ़ाफ़े[5] के मुताबिक़ डाक में भेज चुका हूँ, जवाबुल जवाब[6] का मुन्तज़िर हूँ।

आप जानते हैं कि कमाले यास[7] मुन्तहा ए दस्तिगाह[8] है, पस अब इससे ज़्यादा यास क्या होगी कि बउमीदे मर्ग[9] जीता हूँ। इस राह से कुछ मुतवहिम[10] होता चला हूँ कि दो-ढाई बरस की ज़िन्दगी और है, इस तरह गुज़र जायेगी।

---

१. बहमन (मास) के क्षितिज पर बादल छाये हैं किन्तु मेरा मिट्टी का मधु-प्याला सुरा से रिक्त है। २. हम अत्याचारों से आक्रान्त हैं। हमारे नगर से प्रसन्नता का कोई समाचार नहीं मिल सकता। ३. खिन्नता। ४. यद्यपि। ५. लिफ़ाफ़े पर लिखित पते के अनुसार। ६. [illegible] ७. निराशा। ८. [illegible] ९. मृत्यु की [illegible] १०. निर्मोह।

जानता हूँ कि तुमको हँसी आएगी कि ये क्या बकता है। मरने का ज़माना कौन बता सकता है? चाहे इल्हाम[1] समझिए चाहे ओहाम[2] समझिए बीस बरस से ये क़ता लिख रखा है—

मन के बाशम के जाविदाँ बाशम
चूँ नज़ीरी नमून्दो तालिब मुर्द
बर बगोयन्द दर कुदामी साल
मुर्द 'ग़ालिब' बेगो के 'ग़ालिब मुर्द'[3]

अब बारह सौ पछत्तर हैं और 'ग़ालिब मुर्द' बारह सौ सतहत्तर हैं। इस अर्से में जो कुछ मसर्रत पहुँचनी हो, पहुँच ले, वर्ना फिर हम कहाँ।

५

(३० जनवरी, १८५९ ई०)

क़िब्ला,

कभी आप को ये भी ख़याल आता है कि कोई हमारा दोस्त जो ग़ालिब—कहलाता है, वो क्या खाता-पीता है, और क्यों कर जीता है? पेन्शन क़दीम इक्कीस महीने से बन्द और मैं सादा दिल फ़ुतूहे जदीद[4] का आरज़ूमन्द पेन्शन का इहात ए पंजाब के हुक्काम पर मदार है, सो उनका ये शेवा और शिआर[5] है कि न रुपया देते हैं, न जवाब, न मेहरबानी करते हैं न इताब[6]। ख़ैर इससे क़तै

१. देववाणी। २ कल्पना। ३. मेरी क्या हस्ती है जो मैं सदैव इस संसार में रहूँ। नज़ीरी नहीं रहा और तालिब भी मर गया। यदि कोई पूछे कि ग़ालिब किस वर्ष मरा तो कह दो 'ग़ालिब मुर्द' (सन् १२७७ हि०) 'ग़ालिब मर गया'। ४. नई अतिरिक्त आय। ५. ढंग और चलन। ६. अप्रसन्नता।

नज़र की, अब सुनिए उधर की, १८५६ ई० से बमूजिबे तहरीरे वज़ीर[1] फ़र्माए शाही[2] का उम्मीदवार हूँ। तक़ाज़ा करते हुए शर्माऊँ। अगर गुनहगार हूँ, गुनहगार ठहरता, गोली या फाँसी से मरता। इस बात पर कि मैं बेगुनाह हूँ, मुक़य्यद[3] और मक़तूल[4] न होने से आप अपना गवाह हूँ। पेशगाहे गवर्नमेन्ट कलकत्ता में जब कोई काग़ज़ भिजवाया है, बक़लम चीफ़ सेक्रेतर बहादुर उसका जवाब पाया है। अब की बार दो किताबें भेजीं, एक पेशकशे गवर्नमेन्ट और एक नज़्रे शाही है। न उसके क़ुबूल की इत्तिला, न उसके इर्साल[5] से आगाही है। जनाब विलियम म्यूर साहब बहादुर ने भी इनायत न फ़रमाई। तहरीर मुझको न आई। ये सब एक तरफ़, अब ख़बरें हैं मुख़्तलिफ़। कहीं उनको भी काई हैं कि चीफ़ सेक्रेतर बहादुर लेफ़्टंट गवर्नर हुए। ये कोई नहीं कहता कि उनकी जगह कौन से साहबे आलीशान चीफ़ सेक्रेतर हुए? मशहूर है कि जनाब विलियम म्यूर साहब बहादुर सदर बोर्ड में तशरीफ़ ले गये। ये कोई नहीं बताता कि लेफ़्टंट गवर्नरी के सेक्रेतर का काम किसको दे गये? [illegible] का हाल कोई नहीं कहता कि अब कहाँ है? हाँ अज़ रूए क़्यास[6] जानता हूँ कि आप उसी मन्सब और उसी दफ़्तर में शाद व शादमाँ[7] हैं। जो अब लेफ़्टंटी के सेक्रेतर हुए होंगे, उनसे इलाक़ा रहता होगा। म्यूर साहब बहादुर से काहे को मिलना होता होगा। लेफ़्टंट गवर्नरी और सदर बोर्ड ये दोनों महकमे इलाहाबाद आ गये या आएँगे। बहरहाल आप अब कहाँ जाएँगे।

नवाब गवर्नर जनरल बहादुर की रवानगी की ख़बर में इख़्तिलाफ़ है। कोई कहता है कि २० जनवरी को गये, कोई कहता है फ़रवरी में कूच फ़रमाएँगे। मैं तो उधर से भी हाथ धो बैठा, हर तरह अपनी क़िस्मत को रो बैठा।

---

१. मन्त्री के लिखने के अनुसार। २. शाही अनुदान। ३. [illegible]। ४. जिसे क़त्ल किया गया। ५. भेजना। ६. अनुमान के अनुसार। ७. प्रसन्न और प्रफुल्ल।

मगर ये चाहता हूँ, हक़ीक़ते वाक़ई पर कमाहक़्क़हू[1] इत्तिला हासिल हो, ताकि तसल्ली ए ख़ातिर और तस्कीने दिल[2] हो। अगर इन मतालिब का जवाब, न मुजमल[3] बल्के मुफ़स्सल[4] न बदेर बल्कि जल्द मरहमत कीजिएगा तो गोया मुझको मोल ले लीजिएगा। ज़्यादा इससे क्या लिखूँ ?

६

(३१ जनवरी, १८६०)

क़िब्ल ए हाजात,

क़ते में जो हज़रत ने इल्हाम[5] दर्ज किया है, वो तो एक लतीफ़ा बसबीले दुआ है, मगर हाँ ये कश्फ़[6] यक़ीनी है और मख़दूम[7] की रोशन दिली और दूरबीनी[8] है कि जो सवालात मैंने ३० जनवरी को किये उनके जवाब तुमने २७ जनवरी को लिखकर भेज दिये। क्यों न कहूँ रोशन ज़मीर[9] हो। अगरचे जवान हो मगर मेरे पीर हो, ख़ुलासा तक़रीर के ३० जनवरी को आख़िरे रोज़[10] मैंने डाक में ख़त भिजवाया और ३१ को डाक का हरकारा पहर दिन चढ़े तुम्हारा ख़त लाया। सवालात में एक सवाल का जवाब बाक़ी रहा, याने जनाब एडमिन्स्टन साहब बहादुर की जगह चीफ़ सेक्रेतर गवर्नमेंट कलकत्ता कौन हुआ ? ये दिल में पेच व ताब बाक़ी रहा।

किताब के बाब में जो कुछ लिखा है, वाक़ई ये दुरुस्त और बजा[11] है। जो कुछ वाक़ा हुआ उसको मुफ़ीदे मतलब फ़र्ज़ करूँ, लेकिन अगर इजाज़त

१. यथोचित। २. हृदय की सान्त्वना। ३. स्पष्ट। ४. विस्तृत। ५. देववाणी। ६. उद्घाटन। ७. सेव्य। ८. दूर दृष्टि। ९. शुद्ध अन्तःकरण वाले। १०. अपराह्न। ११. उचित।

पाऊँ तो उसी बाब में ये अर्ज़ करूँ कि पेशगाहे गवर्नमेंट में बतवस्सुत[1] चीफ़ सेक्रेतर बहादुर साबिक़ और लेफ्टंट गवर्नर बहादुर हाल दो मुजल्लद पेश किये हैं। एक नज्र गवर्नमेंट और दूसरी के वास्ते ये सवाल कि मेरी इज्ज़त बढ़ाई जाये और ये मुजल्लद हुजूरे शहंशाही में भिजवाई जाये। अच्छा, नज्रे गवर्नमेंट में तो मौलवी इज़हार हुसेन साहब का वो इज़हार है, नज्रे सुल्तानी के इर्साल[2] व अदमे इर्साल[3] में क्या दारोमदार है? दो नुस्ख़े जो उन दोनों साहबों के पेशकश मुक़र्रर हुए उनमें से एक सदर बोर्ड के हाकिम और लेफ्टंट गवर्नर हुए। रद व क़बूल, नफ़रीं व आफ़रीं[4] कुछ भी नहीं। क़यासन[5] जो चाहूँ सो करूँ, यक़ीन कुछ भी नहीं।

१७ दिसम्बर १८५६ ई० का लिखा हुआ हुक्म वज़ीरे आज़म का विलायत की डाक में मुझको आया है कि क़सीदे के सिले[6] और जायज़े के वास्ते कि जो बतवस्सुत लार्ड एलनबरा, सायल[7] भिजवाया है, ख़िताब और खिलअत और पिन्शन की तजवीज़ ज़रूर है, जो हुक्म सादर होगा, सायल को बतवस्सुत गवर्नमेंट उसकी इत्तिला देनी ज़रूरी है। ये हुक्म नौश्ता १७ दिसम्बर १८५६ ई० आख़िर जनवरी १८५७ ई० में मैंने पाया। फ़रवरी, मार्च, अप्रैल ख़ुशी और तवक्क़ो में गुज़रे। मई १८५७ ई० में फ़लक ने ये फ़ितना उठाया। अब इस किताब और दूसरे क़सीदे के जाने का नज्र करने का ये सबब है कि सायल महकमए विलायत को याददिहानी करना है और गवर्नमेंट से तहसीन[8] तलब है। जब यहाँ से नवीदे तहसीन[9] नहीं तो विलायत से नज्र के इर्साल का भी यक़ीन नहीं। तहसीन और आफ़रीं[10] से क़तअ नज़र है विलायत जाने का यक़ीन क्यों कर हासिल हो, जहाँ ये तनज़्ज़ुल[11] और बेइल्तिफ़ाती[12] और ये दुश्वारी और ये मुश्किल हो। जी में आता है कि नवाब गवर्नर जनरल

१. द्वारा। २. प्रेषण। ३. न भेजना। ४. धिक्कार और प्रशंसा। ५. अनुमानतः। ६. प्रतिफल। ७. प्रार्थी। ८. प्रशंसा। ९. प्रशंसा का संदेश। १०. धन्यवाद। ११. पतन। १२. घृणा।

बहादुर और हाकिमे सदर बोर्ड को एक अरीज़ा[1] जुदा-जुदा लिखूँ। फिर ये सोचता हूँ कि अँग्रेज़ी लिखवाऊँ, फ़ारसी लिखूँ और दोनों सूरतों में क्या लिखूँ? कल का भेजा हुआ ख़त और ये आज का ख़त यक़ीन है कि दोनों माअन[2] एक वक़्त मे पहुँचे। वो तो जवाब तलब नहीं, इसका जवाब लिखिए और बहुत शिताब[3] लिखिये।

७

(मार्च, १८६० ई०)

हुज़ूर खुदा का शुक्र, फिर आपका शुक्र बजा लाता हूँ कि आपने ख़त लिखा और मेरा हाल पूछा। ये पुर्सिश[4] हुक्म नश्तर का रखती है। अब रगे क़लम की ख़ूनाबा फ़िशानी[5] देखो। गवर्नर आज़म ने मेरठ में दरबार का हुक्म दिया। साहब कमिश्नर बहादुर देहली ने सात जागीरदारों में से जो तीन बक़ीयतुस्सैफ़[6] थे, उनको हुक्म दिया और दरबारे आम में से सिवाय मेरे कोई न था, या चन्द महाजन। मुझको कोई हुक्म न पहुँचा। जब मैंने इस्तिदुआ की तो जवाब मिला कि अब नहीं हो सकता। जब ये सरज़मीन मुख़य्यम ख़यामे[7] गवर्नरी हुई, मैं अपनी आदते क़दीम के मुताबिक ख़ीमागाह[8] में पहुँचा। मौलवी इज़हारहुसेन ख़ाँ साहब बहादुर से मिला। चीफ़ सेक्रेतर बहादुर को इत्तिला की। जवाब आया कि फ़ुर्सत नहीं। मैं समझा कि इस वक़्त फ़ुर्सत नहीं, दूसरे दिन फिर गया। मेरी इत्तिला के बाद हुक्म हुआ कि अय्यामे

१. प्रार्थना पत्र। २. एक साथ। ३. शीघ्र। ४. पूछ-ताछ। ५. रक्त रूपी जल की वर्षा। ६. तलवार के घाट न उतारे गये। ७. गवर्नर के मण्डप से अभिमण्डित। ८. मण्डप।

ग़दर[1] में तुम बाग़ियों से इख़लास[2] रखते थे। अब गवर्नमेंट से क्यों मिलना चाहते हो? उस दिन चला आया, दूसरे दिन मैंने अंग्रेज़ी ख़त उनके नाम लिखकर उनको भेजा। मज़मून ये कि बाग़ियों से मेरा इख़लास मसनूई[3] महज़ है, उमीदवार हूँ कि इसकी तहक़ीक़ात हो, ताकि मेरी सफ़ाई और बेगुनाही साबित हो। यहाँ कि मुक़ामात पर जवाब न हुआ, अब माहे गुज़िश्ता याने फ़रवरी में पंजाब के मुल्क से जवाब आया कि लार्ड साहब बहादुर फ़रमाते हैं कि हम तहक़ीक़ात न करेंगे। पस, ये मुक़दमा तै हुआ। दरबार व खिलत मौक़ूफ़, पिन्शन मसदूद[4] वजह नामालूम। ला मौजूद इल्लिल्लाह मौस्सिर फ़िल वुजूद इल्लिल्लाह[5]।

१८५५ ई० में नवाब यूसुफ़अली ख़ाँ बहादुर वाली रामपुर[6] कि मेरे आशनाए क़दीम[7] हैं, इस साल (१८५५ ई०) मेरे शागिर्द हुए। नाज़िम उनको तख़ल्लुस दिया गया। बीस-पच्चीस ग़ज़लें उर्दू की भेजते, मैं इस्लाह देकर भेज देता। गाह-गाह कुछ रुपया उधर से आता रहता। किले की तनख़्वाह जारी, अंग्रेजी पिन्शन खुला हुआ, उनके अताया[8] फ़ुतूह[9] गिने जाते थे। जब वो दोनों तनख़्वाहें जाती रहीं तो ज़िन्दगी का मदार उनके अताये पर रहा। बाद फ़तहे देहली वो हमेशा मेरे मक़दम[10] के ख़्वाहाँ[11] रहते थे। मैं नज़र बन्द था। जब जनवरी १८६० ई० में गवर्नमेंट से वो जवाब पाया कि इधर लिख आया हूँ तो मैं आख़िर जनवरी में रामपुर गया। दो-मास वहाँ रह कर दिल्ली आया। यहाँ आप का ख़त मुहर्रिरा ए. ८ मार्च पाया। जवाब भेजा जाता है।

---

१. १८५७ के विद्रोह के समय। २. सम्पर्क। ३. [illegible]। ४. बन्दित। ५. ईश्वर के अतिरिक्त कुछ नहीं है, अर्थात प्रभावशाली वस्तु में ईश्वर का अस्तित्व है। ६. रामपुर के शासक। ७. संयोग। ८. पुरस्कार। ९. ऊपरी आय। १०. आगमन। ११. इच्छुक।

८

मार्च, १८६३ ई०)

दर नौमीदी बसे उमीदस्त
पायाने शबे सिया सुपेदस्त[1]

क़ब्ला,

आज आपकी ख़ुशी और ख़ुशनूदी के वास्ते अपनी रुदाद[2] लिखता हूँ।

तूतिया[3]—१८६० ई० में लार्ड साहब बहादुर ने मेरठ में दरबार किया। साहब कमिश्नर बहादुर देहली को साथ ले गये। मैंने कहा मैं भी चलूँ, फ़रमाया के 'नहीं'। जब लश्कर मेरठ से दिल्ली में आया, मुआफ़िक़ अपने दस्तूर के, रोज़े वुरूदे लश्कर मुख़य्यम[4] में गया। मीर मुंशी साहब से मिला। उनके ख़ीमे में से अपने नाम का टिकट साहब सेक्रेतरी बहादुर के पास भेजा। जवाब आया कि तुम ग़दर के दिनों में बादशाहे बाग़ी की ख़ुशामद किया करते थे, अब गवर्नमेंट को तुमसे मिलना मंज़ूर नहीं। मैं गदा ए मुबर्रम[5] इस हुक्म पर ममनू[6] न हुआ। जब लार्ड साहब बहादुर कलकत्ता पहुँचे, मैंने क़सीदा हस्बे मामूले क़दीम[7] भेज दिया। मय इस हुक्म के वापिस आया कि अब ये चीज़ें हमारे पास न भेजा करो। मैं मायूस होकर बैठ रहा और हुक्कामे शहर से मिलना तर्क किया।

वाक़िया[8]—अवाख़िरे माहे गुज़िश्ता[9] यान फ़रवरी १८६३ ई० में नवाब

१. निराशा में भी आशा छिपी है। प्रत्येक रात के अंधकार की परिणति प्रकाश में होती है। २. विवरण। ३. भूमिका। ४. जिस दिन लश्कर ने तम्बू ताने। ५. दृढ़ होकर माँगने वाला। ६. निषिद्ध। ७. प्रथा के अनुसार। ८ घटना। ९. गत मास के अन्त में।

लेफ्टंट गवर्नर पंजाब दिल्ली आये। अहाली ए शहर[1], साहब डिप्टी कमिश्नर बहादुर, साहब कमिश्नर बहादुर के पास दौड़े और अपने नाम लिखवाये। मैं जो बेगाना महज़[2] और मतरूदे हुक्काम[3] था। जगह से न हिला, किसी से न मिला। दरबार हुआ, हरेक कामगार हुआ। शम्बा, ८ फ़रवरी को आज़ादाना मुंशी मनफूल सिंघ साहब के खीमे में चला गया। अपने नाम का टिकट साहब सेक्रेटरी बहादुर के पास भेजा। बुलाया गया। मेहरबाँ पाकर नवाब साहब की मुलाज़मत की इस्तिदुआ[4] की। वो भी हासिल हुई। दो हाकिम जलीलुलक़द्र[5] से वो इनायतें देखीं जो मेरे तसव्वुर में भी न थीं।

जुम्ल ए मौतरिज़ा[6]—मीर मुंशी लेफ्टंट गवर्नर से साबिक़ा तार्रुफ़[7] न था, पर बतरीक़े हुस्ने तलब मेरे ख़ाहाँ[8] हुए तो मैं गया। जब हुक्काम बतरीक़े इस्तिदुआ मुझसे बेतकल्लुफ़ मिले तो मैं क़यास कर सकता हूँ कि मीर मुंशी की हुस्ने तलब बईमा ए हुक्काम[9] होगी। बहरहाल [illegible] [illegible][10]।

बक़िया रूदाद ये है कि दोशम्बा दोयम मार्च को नवाबे [illegible][11] [illegible] नवाब गवर्नरी हुआ। आख़िर रोज़ मैं अपने शफ़ीक़े क़दीम[12] जनाब मौलवी [illegible] [illegible] बहादुर के पास गया। असनाए गुफ़्तगू[13] में फ़रमाया कि [illegible] दरबार व ख़िलअत बदस्तूर बहाल व बरक़रार है। [illegible][14] [illegible]

पूछा कि हज़रत क्यों कर? हज़रत ने कहा कि हाकिमे हाल ने विलायत से आकर तुम्हारे इलाक़े के सब क़ाग़ज़, अंग्रेज़ी व फ़ारसी देखे और वइजलासे कौन्सिल हुक्म लिखवाया कि असदुल्लाख़ां का दरबार और नम्बर और खिलत वदस्तूर बहाल व बरक़रार रहे। मैंने पूछा कि हज़रत ये अम्र किस अस्ल[1] पर मुतफ़र्रे[2] हुआ? फ़रमाया कि हमको कुछ मालूम नहीं। बस इतना जानते हैं कि ये हुक्म दफ़्तर में लिखवाकर १४ या १५ दिन बाद उधर को रवाना हुए हैं। मैंने कहा—सुभान अल्लाह्—

कारसाज़े मा वफ़िक्रे कारे मा
फ़िक्रे मा दरकारे मा आज़ारे मा[3]

सेशम्बा ३ मार्च को बारह बजे नवाब लेफ़्टंट गवनर बहादुर ने मुझको बुलाया, खिलत अता किया और फ़रमाया कि लार्ड साहब बहादुर के 'हाँ का दरबार और खिलत भी बहाल है, अम्बाला जाओगे तो दरबार और खिलत पाओगे। अर्ज़ किया गया—हुजूर के क़दम देखे, खिलत पाया, लार्ड साहब का हुक्म सुन लिया, निहाल हो गया। अब अम्बाले कहाँ जाऊँ? जीता रहा तो और दरबार में कामयाब हो रहूँगा।

कारे दुनिया कसे तमाम न कर्द
हर चे गीरेद मुख़्तसर गीरेद[4]

१. आधार, जड़। २. मूल में से निकलने वाली शाखा। ३. हमारा सहायक (ईश्वर) हमारे कामों में लगा रहता है। हमें अपने कामों की चिन्ता करना व्यर्थ है। ४. ऐसा कोई मनुष्य उत्पन्न नहीं हुआ जिसने सभी काम पूरे किये हों। जो कुछ लेना है थोड़ा-सा लो।

९

(३ जनवरी, १८५९ ई०)

जनाबे आली,

एक शेर उस्ताद का मुद्दत से तहवीले हाफ़िज़ा[1] चला आता है—

> ज़ालिम तू मेरी सादा दिली पर तो रहम कर
> रूठा था तुझसे आप ही और आप बन गया

मैंने अज़ राहे तसर्रुफ़ शेर की सूरत बदल डाली—

> इन दिल फ़रेबियों से न क्यों उस पै प्यार आए
> रूठा जो बेगुनाह तो बे उज़्र मन गया

तुम इख़वानुस्सफ़ा[2] में से हो। तुम्हारी आज़ुर्दगी औरों की मेहरबानी से ख़ुशतर है।

हाँ, हज़रत, कहिये मुमताज़अलीख़ाँ की नस्र[4] भी मसरूर[3] होगी? वो मजमूअ ए उर्दू छपा या छुपा ही रहेगा? अहबाब उसके तालिब हैं, बल्कि ताज ने तलब को बसरे हद्दे तक़ाज़ा पहुँचा दिया है।

मेरा हाल सुनिये। लार्ड केनिंग साहब ने बादे फ़तहे देहली मेरा क़सीदा मुझको वापिस भेज दिया। साहब सेक्रेटरी ने मुझसे कह दिया कि तुम अय्यामे ग़दर[5] में बादशाहे बाग़ी के मुसाहिब रहे, अब गवर्नमेंट को तुम से

---

१. स्मरण शक्ति के अधिकार में। २. बसरा नगर में ९८३ ई० में स्थापित विद्वानों की एक संस्था। इस संस्था के सदस्यों ने विविध विषयों पर ५२ पुस्तकें लिखीं। इस संस्था के सदस्य इख़वानुस्सफ़ा भी कहलाते। शाब्दिक अर्थ पवित्र भाई है। ३. प्रसन्न। ४. गद्य। ५. ग़दर के समय।

राह व रस्मे आमेज़िश[1] मंज़ूर नहीं। नाचार चुप हो रहा। बेहया हूँ, लार्ड एलगिन साहब बहादुर के वक्त में फिर मुआफ़िक़े मामूल क़सीदा शिमले के मुक़ामात पर भेज दिया। ख़िलाफ़े तसव्वुर बहस्बे दस्तूरे क़दीम चीफ़ सेक्रेतर बहादुर का ख़त आ गया, वही अफ़शानी काग़ज़, वही अल्क़ाब[2], वही तहसीने कलाम, वही इज़हारे ख़ुशनूदी। अब जो ये अमीरे कबीर[3] वाइसराय क़लमरवे हिन्द[4] हुए, मैं ख़िदमते देरीना बजा लाया। १३ फ़रवरी १८६४ ई० हाल को क़सीदा मयअर्ज़दाश्त इर्साल किया। आज तक, कि, ७ मार्च की है, जवाब नहीं पाया। बावजूद सवाबिक़े मारिफ़त रस्मे क़दीम का अमल में न आना ख़ातिर आशोब[5] क्यों न हो?

बेदिल नयम हनोज़ बेबीनम चे मी शवद[6]।

१०

(१८६४ ई०)

क़िब्ला,

मेरा एक शेर है—

> ख़ुद पेशे ख़ुद कफ़ीले गिरफ़्तारीए मनस्त
> हरदम ब पुरसिशे दिले मायूस मी रसद[7]

ये मामला मेरा और आपका है। ख़ारिज[8] से मसमूअ[9] हुआ कि मैंने जो

१. मिलना। २. उपाधियाँ। ३. बड़ा अमीर। ४. हिन्दुस्तान देश के। ५. बेचैनी का कारण। ६. मैं अभी उदास नहीं हुआ, आगे जो होगा देखूँगा। ७. मेरी गिरफ़्तारी स्वयं मेरा भरण-पोषण करती है, वही मेरे निराश हृदय की पूछ-ताछ करती है। ८. त्यक्त। ९. अंगीकृत।

अग़लाते 'बुरहाने क़ातै'[1] के निकाल कर एक नुस्ख़ा मौसूम[2] ब 'क़ातै बुरहान' लिखा है और एक मुजल्लद उसका आपको भी भेज दिया है, आप उसकी तरदीद[3] में कोई रिसाला[4] लिख रहे हैं। अगरचे बावर नहीं आया, लेकिन अजब आया। एक मौलवी नजफ़अली हैं, बावजूदे फ़ज़ीलतें[5] इल्मे अरबी, फ़ारसी में उनका नज़ीर नहीं। वो जो एक शख्स मजहूलुलहाल[6] ने यहाँ देहली में से मेरे कलाम की तरदीद में किताब तसनीफ़ की है मुसम्मा[7] ब 'मुहर्रिके क़ातै बुरहान'। उन्होंने उसकी तौहीन और नस्खिदे की तफ़ज़ीह[8] में दो जुज़्व का एक नुस्ख़ा मुख़्तसर लिखा है और एक तालिबे इल्म मुसम्मी ब अब्दुलकरीम ने सआदतअली मौल्लिफ़[9] "मुहर्रिके क़ातै" से सवालात किये हैं और एक महज़र उसने बफ़हवा ए उलमा ए शहर[10] मुरत्तिब[11] किया है। एक मेरे दोस्त ने बसर्फ़े ज़र[12] उसको छपवाया है। एक नुस्ख़ा उसका आज इसी ख़त के साथ बसबीले पार्सल इर्साल किया है।

इस शहर में एक मेला होता है, फूलवालों का मेला कहलाता है। भादों के महीने में हुआ करता है। उमरा ए शहर से लेकर अहले हिर्फ़ा[13] तक कुतुब जाते हैं, दो-तीन हफ़्ते तक वहीं रहते हैं। मुसल्मान व हुनूद[14] दोनों फ़िर्के तो शहर में दुकानें बन्द पड़ी रहती हैं। भाई ज़ियाउद्दीनख़ाँ और अलाउद्दीनख़ाँ और मेरे दोनों लड़के सब क़ुतुब गये हुए हैं। अब दीवानख़ाने में एक मैं हूँ और एक दारोग़ा और एक बीमार ख़िदमतगार। भाई-साहब यहाँ से जायेंगे तो मुक़र्रर[15] आप को ख़त लिखेंगे। वो पहाड़ से उतरे, ऐसे पहाड़ पर जा गये। अदम तहरीर[16] की वजह ये है।

११

(१८६४ ई०)

मैं सादा दिल आज़ुर्दगी ए यार से ख़ुश हूँ
याने सबक़े शौक़ मुकर्रर न हुआ था

पीर व मुर्शिद,

ख़फ़ा नहीं हुआ करते। यों सुना मुझे बावर न आया, यहाँ तक तो मैं मौरिदे इताब[1] नहीं हो सकता। झगड़ा इस्तेजाब[2] पर है, महले इस्तेजाब वो है कि आपका दोस्त कहता है कि मीर मुंशी नवाब लेफ़्टंट गवर्नर बहादुर मेरे शागिर्द हैं और वो "क़ाते बुरहान" का जवाब लिख रहे हैं। औलिया का ये हाल है वाए बरहाले हम अशक़िया[3] के। ये हिकायत है, शिकायत नहीं। मैं दुनियादारी के लिबास में फ़क़ीरी कर रहा हूँ, लेकिन फ़क़ीरे आज़ाद हूँ, न गव्याद[4] न कव्याद[5]। सत्तर बरस की उम्र है, बेमुबालग़ा कहता हूँ। सत्तर हज़ार आदमी नज़र से गुज़रे होंगे। ज़ुम्र ए ख़ास[6] में से, अवाम[7] का शुमार नहीं। दो मुख़लिस सादिक़ुल विला[8] देखे—एक मौलवी सिराजुद्दीन रहमतुल्ला अलै[9]; दूसरा मुंशी ग़ुलाम ग़ौस सल्लमुल्लाह ताला[10] लेकिन वो मरहूम हुस्ने सूरत नहीं रखता था और ख़ुलूसे इख़्लास[11] उसका ख़ास मेरे साथ था। अल्लाह, अल्लाह, दूसरा दोस्त ख़ैरख़ाहे ख़ल्क़[12], हुस्न व जमाल[13] चश्मे

१. क्रोध का पात्र। २. आश्चर्य। ३. हम अभागों पर धिक्कार है। ४. कलन्दर, फ़क़ीरों का एक सम्प्रदाय। ५. ढोंगी। ६. विशेष समूह। ७. साधारणजन। ८. सच्चे निश्छल मित्र। ९. उन पर ईश्वर की कृपा हो। १०. ईश्वर रक्षा करे। ११. सच्चा स्नेह। १२. संसार का शुभेच्छु। १३. सौन्दर्य।

बददूर[1] कमाले महरो वफ़ा सिद्क़ो सफ़ा[2] नूरुन् अली नूर[3]। मैं आदमी नहीं आदमशनास[4] हूँ—

निगहम नक़्व हमो ज़द बनिहाँ ख़ान ए दिल
मुज़्दा बाद अहले रिया रा के ज़ मैदां रफ़्तम्[5]

इनायत, मेहर व मुहब्बत जिसके मलके[6] का तुमको मालिक समझता हूँ वो बनिस्बत अपने इस क़द्र यक़ीन करता हूँ कि पहले दो आदमियों को पास मातनदार समझा हुआ था। एक को तो मैं रो लिया, अब अल्लाह, आमीन का एक दोस्त रह गया। दुआएँ माँगता हूँ कि, ख़ुदाया, उसका दाग़ न मुझे दिखाइयो। उसके सामने मरूँ। मियाँ, मैं तुम्हारा आशिक़े सादिक़[7] हूँ। भाई अभी क़ुतुब से नहीं आये। 'दाफ़े हिज़यान' के दो मुजल्लद और भेज दूँगा।

१२

(१८६४ ई०)

पीर व मुर्शिद,

कोई साहब डिप्टी कलक्टर हैं कलकत्ता में, मौलवी अब्दुलग़फ़ूर उनका नाम, और 'नस्साख़' उनका तख़ल्लुस है। मेरी उनसे मुलाक़ात नहीं। उन्होंने अपना दीवान छापे का मौसूम ब 'दफ़्तरे बेमिसाल' मुझको भेजा।

---

१. बुरी नज़र न लगे। २. सफ़ाई। ३. सच्चाई पर सच्चाई और पर नूरानी। ४. मनुष्य को पहचानने वाला। ५. [illegible] के आदर्शों से मेरी दृष्टि ने यह ठान ली कि छल और कपटी लोगों को मुझे समझा मिल जाये—मैं मैदान से चला गया हूँ। ६. कौशल, गुण। ७. सच्चा प्रेमी।

उसकी रसीद में ये ख़त मैंने उनको लिखा। चूँकि ये ख़त मज्मूअ ए नस्र उर्दू[1] के लायक़ है, आपके पास इर्साल करता हूँ और हाँ हज़रत, वो मज्मूआ छपेगा बिलफ़तह[2] या छुपेगा बिलज़म्म[3]? छप चुका हो तो हक़्क़े तस्नीफ़[4] की जितनी जिल्दें मुंशी मुम्ताज़अलीख़ाँ साहब की हिम्मत इक़्तज़ा[5] करे फ़क़ीर को भेजिये। वस्सलाम।

१३

(७ जुलाई, १८६५ ई०)

क़िब्ला,

आपका ख़त पहला आया और मैं उसका जवाब लिखना भूल गया। कल दूसरा ख़त आया मगर शाम को उसी वक़्त पढ़ लिया। आदमी के हवाले किया। उसने आज सुबह दम मुझको दिया। मैं जवाब लिख रहा हूँ। बाद इख़्तितामे तहरीर[6] मुअनवन[7] करके डाक में भिजवा दूंगा।

वाली ए रामपूर को ख़ुदा सलामत रखे। अप्रैल, मई, इन दोनों महीनों का रुपया मुआफ़िक़ दस्तूरे क़दीम आया। जून माहे आइन्दा का रुपया ख़ुदा चाहे तो आ जाये। जुमा, ७ जुलाई है, मामूल ये है कि दसवीं–बारहवीं को रईस का ख़त मयहुंडी आया करता है। मैंने क़सीद ए तहनियते जुलूस भेजा, उसका जवाब आ गया। अब मैं नज़्म व नस्र[8] का मस्विदा नहीं रखता। दिल इस फ़न से नफ़ूर[9] है। दो-एक दोस्तों के पास उसकी नक़ल है, उनको इस

१. उर्दू गद्य का संकलन। २. अकार युक्त (छ)=(छपेगा)। ३. उकारयुक्त (छ)=छुपेगा। ४. लेखन का पारिश्रामिक। ५. सामर्थ्य के अनुसार। ६. लिखने की समाप्ति पर। ७. शीर्षक। ८. पद्य और गद्य। ९. घृणा करने वाला।

वक़्त कहला भेजा है, अगर आज आ गया कल, और अगर कल आया, परसों भेज दूँगा। भाई अमीनुद्दीनख़ाँ के इसरार[1] से खुसरो की ग़ज़ल पर एक ग़ज़ल लिखी है। अलाउद्दीनख़ाँ ने उसकी नक़ल उनको भेज दी है। मैं दीवान पर नहीं चढ़ाता, मस्विदा भेजता हूँ। तक़्दीम[2] व ताख़ीर[3] हिस्सों[4] के मुताबिक़ मन्ज़ूर रहे। गर्मी की शिद्दत से हवास बजा[5] नहीं, माहाज़ा अमराज़े जिस्मानी[6] व आलामे रूहानी[7]।

१४

(१० जून, १८६६ ई०)

बन्द ए गुनहगार शर्मसार[8] अर्ज़ करता है कि परसों ग़ाज़ियाबाद का [illegible] हुआ ग्यारह बजे अपने घर पर मिस्ले बला ए नागहानी[9] नाज़िल हुआ हूँ—

बायद के कुनम हज़ार नफ़रीं बरख़ीश
अम्मा बजबाने आद ए राह नगल[10]

राजा साहब की रेहलत[11] का अन्दोह[12] बक़द्रे फ़ुर्स[13] व अन्दाज़ा[14] [illegible] और व अन्दाज़े मेह्र व मुहब्बत मुझको। वो मग़फ़ूर[15] मेरा क़द्रदान और मुझ पर मेहरबान था। हक़तआला उनको आला इल्लीईन[16] में बख़्शीशे दवाम[17] [illegible]

---

१. अनुरोध। २. बहाना। ३. ढील, कमी। ४. [illegible]। ५. ठीक, [illegible] पर। ६. शारीरिक रोग। ७. आत्मिक वेदनाएँ। ८. लज्जित और अपराधी [illegible]। ९. ईश्वरीय कोप के समान। १०. मुझे अपने ऊपर [illegible] धिक्कार करना चाहिए किन्तु यह [illegible] [illegible]। ११. मृत्यु। १२. शोक। १३. [illegible] के अनुसार। १४. [illegible]। १५. [illegible]। १६. स्वर्ग में स्थान दे। १७. [illegible]।

दे। रामपूर ही में था कि 'अवध अख़बार' में हज़रत की ग़ज़ल नज़र फ़िरोज़[1] हुई। क्या कहना है! इबदा[2] इसको कहते हैं, जिद्दततर्ज़[3] इसका नाम है। जो ढंग ताज़ा निवायाने ईरान[4] के ख़याल में न गुज़रा था, वो तुम बरूए कार लाये। ख़ुदा तुमको सलामत रखे और मेरे और दखनी साहिबे "बुरहान क़ातै" के झगड़े में बख़िलाफ़ और फ़ारसीदानो के तौफ़ीक़े इन्साफ़[5] अता करे। लो अब इसका जवाब जल्द भेजो ता[6] ये तरीक़ा मुसलसिल हो जाये।

१५

मौलाना, बन्दगी।

आज सुबह के वक़्त शौक़े दीदार में बेइख़्तियार, न रेल, न डाक, तौसने हिम्मत[7] पर सवार चल दिया हूँ। जानता हूँ के तुम तक पहुँच जाऊँगा, मगर ये नहीं जानता कि कहाँ पहुँचूँगा। इतना बेख़ुद हूँ कि जब तक तुम जवाब न दोगे, मैं न जानूँगा कि कहाँ पहुँचा और कब पहुँचा।

आप का पहला ख़त रामपूर से दिल्ली आया, मैं राह में था। फ़िर दिल्ली से ख़त रामपूर पहुँचा, मैं वहाँ भी न था। ख़त दिल्ली रवाना हुआ। अब कई दिन हुए कि मैंने डाक से पाया। इस हाल में कि मैं बीमार था, माहाज़ा जाड़े की शिद्दत, महावट का महीना, धूप का पता नहीं, पर्दे छूटे हुए, नशेमन[8] तारीक[9], आज नय्यरे आज़म[10] की सूरत नज़र आई। धूप में बैठा हूँ, ख़त लिख रहा हूँ। हैरान हूँ कि क्या लिखूँ? इस ख़त के मज़ामीन अन्दोहफ़िज़ा[11] ने दिल को मुज़महिल[12] कर दिया। जानता था कि ख़्वाज़ासाहब मग़फ़ूर तुम्हारे मामूँ

१. चमकदार, आकर्षक। २. आविष्कार। ३. शैली का आविष्कार। ४. ईरान निवासी। ५. न्याय की सामर्थ्य। ६. जिससे। ७. साहस का अश्व। ८. घर। ९. अन्धकारपूर्ण। १०. सूर्य। ११. दुःखद विषय। १२. क्लान्त।

हैं, मगर उनके और तुम्हारे मुआमलात मेहर व विला[1] जैसे कि तुम्हारी तहरीर से अब मालूम हुए, मेरे दिल नशीं न थे। ऐसे मुहीब का फ़िराक़[2] और फिर बक़ैदे दवाम[3] क्यों कर जाँगुज़ा[4] न हो। हक़ताला उनको बख़्शे और तुमको सब्र दे।

हज़रत मैं भी अब चिराग़े सहरी[5] हूँ। रज्जब १२८२ हि० हाल की आठवीं तारीख से इकहत्तरवाँ साल शुरू हो गया। ताक़त सल्ब[6], हवास मफ़क़ूद[7], अमराज़ मस्तूली[8] बक़ौले निज़ामी—

यके मुर्दा शख़्सम् बमर्दी र वाँ

आज मैं और भी बातें करता मगर मेरा ख़ास तराश[9] आ गया। महीने भर से हजामत नहीं बनवाई। ख़त लपेट कर डाक में भेजता हूँ और ख़त बनवाता हूँ।

१६

(१८६६ ई०)

क़िब्ला,

पीरी व सद ऐब[10] सातवीं दहाके के महीने गिन रहा हूँ। क़ौलंज[11] आगे दौरी था, अब दायम हो गया। महीने भर में पाँच-सात बार फ़िज़ूले मुज्तमिआ[12] दफ़ा हो जाते हैं और यही मंशा ए हयात[13] है। ग़िज़ा कम होते-होते अगर

---

१. प्रेम और मित्रता के सम्बन्ध। २. वियोग। ३. आजीवन कारावास। ४. प्राणलेवा। ५. प्रातःकाल का दीपक। ६. दूरीकृत। ७. लुप्त। ८. शक्तिशाली। ९. नाई। १०. बुढ़ापा और सौ दोष। ११. पसली के नीचे उठने वाला दर्द। १२. संचित। १३ जीवन की इच्छा।

मादूम[1] न कहो तो बमंजिले मफ़क़ूद[2] कहो। फिर गर्मी ने मार डाला। एक हरारते ग़रीबा[3] ज़िगर में पाता हूँ। अगर चे जुरआ जुरआ[4] पीता हूँ, मगर सुबह से सोते वक़्त तक नहीं जानता कि कितना पानी पी जाता हूँ।

मेरे एक रिश्ते के भतीजे ने 'बोस्ताने ख़याल' का उर्दू में तर्जुमा किया है. मैंने उसका दीबाचा[5] लिखा है। एक दोवर्क़ा उसका बसूरते पार्सल बल्कि बहय्यते ख़त[6] भेजता हूँ। आपका मक़सूद दीबाचा है, सो नक़ल कर लीजिए। मेरा मुद्दआ इस दोवर्क़े के इर्साल से ये है कि अगर आप के पसन्द आवे या और अशख़ास ख़रीद करना चाहें तो छै रुपये क़ीमत और महसूल बजिम्मा ख़रीदार है।

१७

क़िब्ला,

मैं नहीं जानता कि इन रोज़ों में बक़ौले हिन्दी अख़्तर शनासों[7] के कौन-सी खोटी गिरह आई हुई है कि हर तरफ़ से रंज व ज़हमत[8] का हुजूम है। मौलवी साहब से मेरी एक मुलाक़ात हुई, जब वो दिल्ली आये थे और मीर ख़ैराती के घर उतरे हुए थे। शुरफ़ा[9] में तार्रुफ़[10] बिना ए मुहब्बत[11] व मवद्दत[12] है, चे जाए आँ कि मुआनिक़ा[13] और मुकालिया[14] और मुशाअरा[15] वाक़ै हुआ हो। रोज़े मुलाक़ात से उस दिन तक के हज़रत दकन को रवाना हों, कोई अम्र ऐसा कि बाअसे नाख़ुशी[16] का हो, दरमियान नहीं आया और मेरे इस क़ौल की, इस राह से कि मौलवी साहब आपके हमनशीं व हमदम थे और मुझमें-आप में पैवन्दे

१. नष्ट। २. लुप्त। ३. बाहर की गर्मी। ४. घूंट-घूंट। ५. भूमिका। ६. पत्र के रूप में। ७. ज्योतिषियों। ८. कष्ट। ९. कुलीन लोग। १० परिचय ११ स्नेह का कारण। १२. मित्रता। १३. आलिंगन। १४. वर्तालाप। १५. कवि-सम्मेलन। १६. अप्रसन्नता का कारण।

बिलाए रूहानी[1] मुतहक़्क़िक़[2] है, आप भी गवाह हो सकते हैं। अगर खुदा न ख़ास्ता[3] मुझ में उनमें रंज पैदा होता तो आप बहुत जल्द इस्लाह बैनुज़्ज़ातैन[4] की तरफ़ मतवज्जेह होते। अब सुनिये हाल मुंशी हबीबुल्ला का, मैंने उनको देखा हो तो आँखें फूटें। तीन-चार बरस हुए कि नागाह एक ख़त हैदराबाद से आया, उसमें दो ग़ज़लें। ख़त का मज़मून ये कि मैं मुख़्तारुल मुल्क के दफ़्तर में नौकर हूँ। आपका तलम्मुज़[5] इख़्तियार करता हूँ। इन दोनों ग़ज़लों को इस्लाह दीजिये। इस अम्र के वो बादी[6] नहीं, बरेली और लखनऊ और कलकत्ता और बम्बई और सूरत से अक्सर हज़रत नज़्म व नस्र फ़ारसी और हिन्दी भेजते रहते हैं। मैं ख़िदमत बजा लाता हूँ और वो साहब मेरे हक्क व इस्लाह[7] को मानते हैं। कलाम का हुस्न व क़ुब्ह[8] मेरी नज़र में रहता है और हरेक का पाया और दस्तगाह[9], फ़न्ने शेर[10] में, मालूम हो जाता है। आदात[11] व इन्दियात[12] अदमे मुलाक़ात ज़ाहिरी[13] के सबब मैं क्या जानूं। आमदम बरसरे मुद्दआ[14] मुंशी हबीबुल्ला 'ज़का' के अशार आते रहे और मैं इस्लाह देकर भेजता रहा। बाद वारिद होने मौलवी साहब के एक ग़ज़ल उनकी आई और उन्होंने ये लिखा कि मौलवी गुलाम इमाम शहीद अकबराबादी की ग़ज़ल पर ये ग़ज़ल लिखकर भेजता हूँ। मैंने हस्बेमामूल ग़ज़ल को इस्लाह देकर भेजा और ये लिखा कि मौलाना शहीद अकबराबाद के नहीं, लखनऊ और इलाहाबाद के हैं। इस कल्मे[15] से ज़्यादा कोई बात मैंने नहीं लिखी। इसमें से तौहीन के माने मुस्तंबत[16] हों तो मैं उनका मुस्तहन[17] सही। अब मैं

---

१. हार्दिक मित्रता। २. निश्चित, प्रमाणित। ३. ईश्वर न चाहे। ४. दोनों के बीच परिमार्जन। ५. शिष्यत्व। ६. आरम्भकर्त्ता। ७. संशोधन। ८. सौन्दर्य और दोष। ९. सामर्थ्य। १०. कवित्व। ११. स्वभाव। १२. भावना। १३. प्रत्यक्ष भेंट के अभाव में। १४. विषय पर आता हूँ। १५. शुद्ध, बात। १६. परिणमित, निकला हुआ। १७. अपमान करने वाला।

नहीं जानता कि मुंशी साहब ने मौलवी साहब से क्या कहा और मौलवी ने आप को क्या लिखा।

१८

(१८६६ ई०)

हज़रत पीर व मुर्शिद,

इससे आगे आपको ख़त लिख चुका हूँ कि मुंशी मुम्ताज़अलीख़ाँ साहब से मेरी मुलाक़ात है और वो मेरे दोस्त हैं। ये भी लिख चुका हूँ कि मैं साहबे फ़राश हूँ, उठना-बैठना नामुमकिन है, ख़ुतूत लेटे-लेटे लिखता हूँ। इस हाल में दीबाचा क्या लिखूँ? ये भी लिख चुका हूँ कि तफ़्ता को मैंने ख़त नहीं लिखा। अशार उनके आये, इस्लाह दे दी, मंशाए इस्लाह जा बजा हाशिये पर लिख दिया। कल जो इनायतनामा आया उसमें भी दीबाचा का इशारा और तफ़्ता के ख़ुतूत का हुक्म मुन्दरिज[1] पाया। नाचार तहरीरे साबिक़ का इआदा[2] करके हुक्म बजा लाया।

नाज़रीने[3] 'क़ातै बुरहान' पर रोशन होगा कि 'नामुराद' और 'बेमुराद' का ज़िक्र मबनी[4] इस पर है कि अब्दुलवासे 'हाँसवी' बेमुराद को सही और नामुराद को ग़लत लिखता है। मैं लिखता हूँ कि तरकीबें दोनों सही लेकिन 'बेमुराद' ग़नी[5] को कहते हैं और नामुराद मुहताज को, अब आपके नज़दीक अगर इन दोनों का महले इस्तेमाल[6] एक ही हो तो मेरा मुद्दआए अस्ली याने 'नामुराद' की तरकीब का अलैरग़्म[7] अब्दुलवासे के सही होना फ़ौत नहीं। शेर मिर्ज़ा साएब—

१. अंकित। २. दोहराना। ३. पाठक। ४. निर्भर। ५. सम्पन्न। ६. प्रयोग-स्थल। ७. विपरीत।

नामुरादी ज़िन्दगी बरख़ीश आसाँ कर्दनस्त
तर्के जमियत दिले ख़ुदरा बसामाँ कर्दनस्त[१]

यहाँ 'नामुरादी' 'बेमुरादी' के माने क्यों कर देगी ? अग़निया[२] ख़ाह अहले तवक्कुल[३], ख़ाह अहले तमव्वुल[४], मुतवल्लीन पर कभी काम आसान नहीं होता, बल्कि मुख़लिसों से ज़्यादा उन पर मुश्किलें हैं। रहे अहले तवक्कुल उनकी सिफ़तें और हैं। वो अहलुल्लाह, हैं, मुक़र्रवाने बारगाहे किब्रिया[५] हैं। दुनिया पर पुश्ते पा[६] मारे हुए हैं। काम उन पर कब मुश्किल था कि उन्होंने उसको आसान कर दिया ? 'नामुराद' सीग़ए मुफ़रद[७] है मसाकीन का, असनाफ़ें मसाकीन[८] का, असनाफ़े मसाकीन की शरह[९] ज़रूर नहीं। सख़्तीकशी, बेनवाई, तिहीदस्ती, गदाई ये औसाफ़[१०] हैं मसाकीन के। इन सिफ़ात में से एक सिफ़त जिसमें पाई जाये वो मिसकीं वो नामुराद। अलबत्ता मसाकीन पर, न एक काम बल्कि सब काम आसान हैं। न पासे नामूस[११] व इज़्ज़त, न हुब्बजह[१२] व...मुकनत[१३]। न किसी के मुद्दई, न किसी के मुद्दआअलै। दिन-रात में दो बार रोटी मिली बहुत ख़ुश, एक बार मिली बहरहाल ख़ुश। ख़ुदा के वास्ते मौलाना साहब के शेर में से नामुराद बमानी कसे के हीच मुराद न दाश्ता बाशद[१४] क्यों कर साबित होता है ? मसाकीन की ज़िन्दगी जैसा कि मैं ऊपर लिख आया हूँ आसान गुज़रती है या अग़निया की ? रहा मौलवी मानवी अलैउर्रहम का ये शेर—

---

१. निराशा जीवन को सरल बनाती है। समाज से दूर रहने पर हमारा हृदय सुख की सामग्री जमा कर लेता है। २. सम्पन्न लोग (ब. व.)। ३. ईश्वर-विश्वासी लोग। ४. धनी लोग। ५. ईश्वर के निकट निवास करने वाले। ६. लात। ७. असंयुक्त। ८. भेद की विशेषताएँ। ९. व्याख्या। १०. विशेषताएँ। ११. लज्जा। १२. प्रेमी। १३. सामर्थ्य। १४. जिसका कोई उद्देश्य न हो।

ख़्वाजा ग़ुलाम ग़ौशख़ाँ 'बेख़बर' के नाम

आक़िलाँ अज़ बेमुरादीहाए ख़ीश
बाख़बर गश्तन्द अज़ मौलाए ख़ीश[1]

मैंने मसनवी के एक नुस्ख़े में आक़िलाँ की जगह आशिक़ाँ देखा है। बहर सूरत माने ये हैं कि उश्शाक़[2] या उक़ला[3] बाद रियाज़ते शाक़्क़ा[4] मासिवाए अल्लाह से एराज़[5] करके बेमुराद और बेमुद्आ हो गये। ये पाय ए तस्लीम व रज़ा है, अलबत्ता इसी रुतबे के आदमी को ख़ुदा से लगाव पैदा होगा।

बाख़बर गश्तन्द अज़ मौलाए ख़ीश

यहाँ भी 'बेमुरादी' से 'नामुरादी' के माने नहीं लिये जाते मगर हाँ—

बेमुरादी मोमिनाँ अज़ नेकों बद[6]

दूसरा मिस्रा—

दर वकुल्ली बेमुरादत दाश्ती[7]

इन दोनों मिस्रों में 'नामुराद' और 'बेमुराद' के माने में ख़ल्त[8] वाक़ै हो गया है। ख़ैर 'बेमुराद' और 'नामुराद' एक सही। हरचन्द दूसरे मिस्र ए मौलवी में बेमुराद के माने बेहाजत के दुरुस्त होते हैं। मगर—

मन के रिन्दम शेव ए मन नीस्त वहस[9]

ज़्यादा तकरार क्यों करूँ ? माहाज़ा मिस्र ए अव्वल की कुछ तौजीह[10]

१. बुद्धिमान् व्यक्ति अपनी असफलताओं के कारण ईश्वर से परिचित हो गये। २. प्रेमी (ब. व.)। ३. बुद्धिमान् (ब. व.)। ४. कठिनाई। ५. विमुखता। ६. ईश्वर भक्त (मुसलमान) पाप-पुण्य से पूरी तरह तटस्थ हो गये। ७. उसने पूर्णतया निष्काम बना दिया। ८. सम्मिलन। ९. जब कि मैं रिन्द (मद्यप, मस्त) हूँ, मेरा काम विवाद करना नहीं। १०. स्पष्टीकरण, व्याख्या।

भी नहीं कर सकता। 'नामुराद' की तरकीब की सेहत अलैरग़म अब्दुल वासे साबित हो गई। फ़सबतुल मुद्दआ[1] कमाल ये के मानिन्द 'नाचार' व 'बेचारा' और 'नाइन्साफ़' और 'बेइन्साफ़' के नामुराद व 'बेमुराद' का भी मूरिदे इस्तेमाल[2] मुश्तरिक[3] रहा। वस्सलाम।

१९

(१८६६ ई०)

वन्दा पर्वर,

अगर एक बन्द ए क़दीम उम्र भर फ़र्मा पिज़ीर[4] रहा हो, बुढ़ापे में एक हुक्म बजा न लाये तो मुजरिम नहीं हो जाता। मजमूअए नस्रे उर्दू[5] का इंतिबा[6] अगर मेरे लिखे हुए दीवाचे पर मौक़ूफ़ है तो उस मजमूए का छप जाना, बिल फ़तह[7] मैं नहीं चाहता बल्कि छुप जाना बिल जम[8] चाहता हूँ। सादी अलैइर्रहमा फ़रमाते हैं—

रस्मस्त के मालिकाने तहरीर
आज़ाद कुनन्द बन्द ए पीर[9]

आप भी इसी गिरोह याने मालिकाने तहरीर में से हैं; फिर इस शेर पर अमल क्यों नहीं करते? हज़रत वो शेर बंगाली ज़बान का लो। १८२९ ई० में ज़ियाफ़ते तब ए अहबाब[10] के वास्ते कलकता से अर्मुग़ाँ[11] लाया हूँ। सही यों है—

---

१. हमारी बात सिद्ध हो गई। २. प्रयोगस्थल। ३. संयुक्त। ४. आज्ञापालक। ५. उर्दू गद्य का संकलन। ६. मुद्रण। ७. अकारयुक्त (छपना)। ८. उकारयुक्त (छुपना)। ९. पुराने समय से यह परम्परा है कि स्वामी बूढ़े दास को स्वतन्त्र कर देता है। १०. स्वजन लोगों की रुचि का प्रीतिभोज। ११. उपहार।

तुम कहे थे रात में आएँगे सो आए नहीं
क़िब्ला बन्दा रात भर उस ग़म से कुछ खाये नहीं

वस्सलाम वउलूफ़िल एहतराम[1] । १२ ।[2]

२०

(१८६६ ई०)

क़िब्ला,

कल ख़त आया । आज जवाब लिखता हूँ । पहले आपका एक फ़िक़्रा लिख कर इतना हँसूँ कि पेट में बल पड़ जाएँ और आँख से आँसू निकल आएँ । फ़िक़्रा—बुढ़ापे में क्या जानिये कहाँ की हरारत मिज़ाज में आ गई है" फ़क़्त । क्यों साहब, तुमने बूढ़ों में अपना नाम लिखवाया तो मुझको लाज़िम है मैं अपने को अमवात[3] में गिनूँ । तुम्हारी उम्र मेरे नज़दीक पचास से मुतजाविज़[4] न होगी । अगर तजावुज़[5] किया होगा तो दो-तीन बरस से वो तजावुज़ ज़्यादा न होगा । भाई ज़ियाउद्दीनख़ाँ और तुम हमउम्र हो । वो कुछ कम पचास, तुम कुछ ऊपर पचास । अभी दोनों साहबों को एक सौ बीस बरस में से सत्तर बरस या कुछ कम सत्तर बरस बाक़ी हैं ।

'बिना ब आब रसीदन' लाज़मी[6] और "बिना ब आब रसाद्रन' मुताद्दी[7] व इज्मा ए जम्हूर इज़दाद[8] में से है, हम बमानी इस्तेहकाम[9] व हम बमानी इन्हिदाम[10] । दर सूरते इस्तेहकाम नींव का गहरा खोदना मलहूज़ है और दर

१. बहुत सम्मान के साथ अभिवादन । २. समाप्ति का चिह्न (१२) । ३. मृत (ब० व०) ४. अधिक । ५. आधिक्य । ६. अकर्मक (क्रिया) । ७. सकर्मक (क्रिया)। ८. सर्वमान्य । ९. दृढ़ता ।१०. ध्वंस ।

सूरते इन्हिदाम लत्म ए अमवाजे सैलाव[1] मद्दे नज़र हैं। आपके लिखे हु
दोनों शेर मुफ़ीदे मानें ख़रावी हैं। सायव—

बिनाए उम्रे मसीहो ख़िज्र व आव रसीद[2]

याने वीरान हो गई, ढै गई, हालाँ कि वो यक़ीनन जावदानी[3] थी।

हनोज़ तिश्न ए ख़ूनस्त तेग़े मिज़्गानिश[4]

बाअाँ के तेग़े मिज़ा ने दो ज़िन्द ए जावीद[5] को मारा मगर अब तक तिश्न ए ख़ून[6] है। तिश्ना बमाने मुस्ताक़ और ख़ून बमाने क़त्ल और बिना ए उम्र बआव रसीदन इस्तिआर ए इहलाक[7]।

हज़ार मैकदा रा मुहतसिव व आव रसान्द
बिना ए सौम ए शय्यद हम चुनाँ बरपास्त[8]

बिना ए मैकदा ग़लत, हज़ार मैकदा सही है। कलीम के दीवान में मौजूद है। बमाने इस्तेहकाम नेमतख़ाँ आली कहता है—

नीस्त मुहकम गर रसद बुनियादे दुनिया ता बआव
चूँ हवाव ईं ख़ानए बे बुनियाद मी साज़ेम मा[9]

---

१. बाढ़ की लहरों का प्रहार। २. ईसामसीह और ख़िज्र (एक चिरजीवी देवदूत) के जीवन का आधार पानी में बह गया है। ३. स्थायी। ४. उसकी पलकों की तलवार अभी ख़ून की प्यासी है। ५. अमर। ६. रक्त की प्यास। ७. ध्वंस का रूपक। ८. मुहतसिब (पाप-पुण्य लेखक, चित्रगुप्त) ने हज़ारों मधुशालाओं को पानी में डुबा दिया, किन्तु धोखेबाजी के मन्दिर की नींव ज्यों की त्यों बनी हुई है। ९. यदि संसार की नींव पानी तक चली जाये तब भी स्थिर नहीं रहती। हम पानी के बुदबुदे की भाँति निराधार घर की रचना करते हैं।

[illegible] है—

[illegible]
[illegible]

[illegible] । [illegible] ।

[illegible] है कि [illegible] के [illegible] के [illegible] में [illegible], [illegible] मालूम होती है । [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] । [illegible] हुए । [illegible] [illegible] है—

[illegible]
[illegible]

[illegible] और [illegible] में [illegible] हुए कि "[illegible]" [illegible] कहा कि '[illegible]' [illegible] [illegible] है, जिसकी हिन्दी [illegible] । [illegible] । [illegible] के दीवान में से ये मतला निकला ।

वक़्ते [illegible] न [illegible] [illegible] यार [illegible]
[illegible] न [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]"

---

१. प्रकाशदाता दीपक (मोमबत्ती) ईर्ष्या के कारण क्यों नहीं पिघलेगा ? तुम्हारे चेहरे के आगे दर्पण पानी हो गया । २. सीमा का चिह्न, इति । ३. गुरु, आचार्य (ब० व०) ४. निरीक्षण । ५. तन्मय । ६. गायब । ७. आत्मा पर शरीर का पर्दा कब तक रहेगा ? यह कोश इस उजाड़ बियाबान में कब तक रहेगा ? ८. आक्षेपकर्त्ता । ९. पुनः । १०. वास्तविक शब्द । ११. हठी । १२. तुमने किसी क्षण में भी अपने हृदय को चिन्ता नहीं की । उजाड़ बियाबान में गड़े हुए कोश से तुमने कोई लाभ नहीं उठाया, दुःख है ।

२१

(१८६६ ई०)

किब्ला,

आज तीसरा दिन है कि मैं 'बिनाबेव आब रसीदन' व 'बाब रसान्दन' की हक़ीक़त व इस्तिनादे अशआरे असातिज़ा[1] लिखकर बसवीले डाक भेज चुका हूँ। आज इस वक़्त भाई जियाउद्दीनख़ाँ साहब आए और इस अम्रे ख़ास में कलाम के बादी[2] हुए। मेरी तक़रीर सुन कर कहने लगे कि 'आब दर बिना रसीदन' व 'आब दर बिना रसान्दन' के बाब में मुतरद्दिद[3] हैं के आया ये तरकीब जायज़ है या नहीं? अब मैं मुतनब्बेह[4] हुआ के वाक़ई जो मैंने लिखा वो सवाल दीगर, जवाब दीगर था। सत्तर बरस का पीरे ख़रफ़[5] हवास मारिज़े[6] तलफ़[7]। अगरचे सवाल को ग़लत समझा लेकिन जवाब ग़लत नहीं लिखा। रसीदन बिना बआब हम बमाने इस्तेहकाम बिना व हम बमाने इन्हिदामे बिना, दुरुस्त। फ़क़्त।

अब 'आब दर बिना रसीदन' वो 'रसान्दन' की कैफ़ियत सुनिये, फ़क़ीर ने असातिज़ा के कलाम में कहीं ये तरकीब नहीं देखी, पर मैं इसकी सेहत[8] और ग़ल्ती में कलाम नहीं कर सकता। जानिबे ग़लती मेरे नजदीक राजे[9] है। आप जब तक कलाम अहले ज़बान में न देख लें, उसको जायज न जानिएगा मगर कलामे सादी व निज़ामी व हज़ीं और उनके अमसाल[10] व नज़ायर[11] का

१. आचार्यों की कविता के प्रमाण के बिना। २. आरम्भकर्ता। ३. चिन्तित। ४. सावधान। ५. बुद्धिहीन बूढ़ा। ६. अभिज्ञान। ७. नष्ट। ८. शुद्धि। ९. विपरीत। १०. दृष्टान्त। ११. उदाहरण।

मोतमद अलै[1] है, न आरज़ू और वाक़िफ़ और क़तील वग़ैरहिम का। मेरा एक मत्ला है—

अज़ जिस्मे बंजाँ नकाब ताकै
ई गंज दरीं ख़राब ताकै

एक गिरोह मुआरिज़[2] हुआ के गंज को ख़राबा कहो, न ख़राब, मैं मुतहय्यिर[3] के या रब किससे कहूँ 'ख़राबा' मज़ीद अलै[4] 'ख़राब' है, मिस्ल वीरान व वीराना व मौज व मौजा इल्हाक़ हाए हव्वज़[5] से लुग़त दूसरा नहीं पैदा हुआ। वारे, सायब के दीवान में एक मत्ला नज़र आया—

बफ़िक्रे दिल न फ़ितादी व हीच बावे दरेग़
बगंजे राह न बुर्दी दरीं ख़राब दरेग़

ये मत्ला लिखकर मोतरिज़[6] साहबों को भेज दिया कि ग़ालिब को दर्दे सर न दीजिये, जो पूछना हो वो सायब से पूछ लीजिये। आरिफ़ अली शाह ख़ुरासानी ने इस मत्ले पर—

अज़ जिस्मे बजाँ नक़ाब ताकै
ई गंज दरीं ख़राब ताकै

तीन ऐतराज़ किये थे—पहला नक़ाब के साथ आरिज़[7] व रुख़ का जिक्र भी ज़रूर था, वो नहीं है। दूसरा गंज तो वीराने ही में होता है, फिर उस पर तास्सुफ़ क्या, जो कहते हैं 'ताकै' तीसरा 'वीराना' को 'ख़राबा' कहते हैं न 'ख़राब' और इन ऐतराज़ों के बाद उन्होंने दख़ल किया था—

१. विश्वस्त। २. विरोधी। ३. चकित। ४. जिस पर कुछ बढ़ाया हो। ५. हकार (४) के क्षेपक से। ६. आक्षेपकर्त्ता। ७. कपोल।

अज़ जिस्मे बजाँ हिजाब ताके
गिले बर रुख आफ़ताब ताके[1]

२२

(१८६६ ई०)

क़िब्ला,

देखिये, हम आरिफ़[2] हैं; वुरूदेनामे[3] से पहले जवाबेनामा लिखते हैं, दिन भूल गया हूँ। ग़ालिब है कि आज तीसरा दिन हो। सुबह को मैंने, 'आब दर बिना रमीदन' की बहस में खुलासा तहक़ीक़ लिखकर इर्साल किया। उसी दिन शाम को आपका खत आया, बक़िया जवाब अब लिखता हूँ।

'नक़ाब' उस शेर में बमाने हायल[4] है, हाल की वजह व रुख की खुसूसियत नहीं। दो चीज़ों के बीच में जो शै[5] आ जाये, बल्कि इससे बढ़कर ये बात है कि जो चीज़ एक चीज़ की मान ए नज़ारा है, वो नक़ाब है। उस दौ नामर्दै[6] का रुख बमुनासिब नक़ाबे मुक़द्दर है और ये तक़दीर जायज़ और बलीग़[7] है। हिजाब[8] का यहाँ ऊपरी यानी बेमहल और ना मुलायम होना बशर्ते अक़्ले सलीम[9] व तब ए लतीफ़[10] ज़ाहिर है। गिल खाक व आब आमेख्ता[11] को कहते हैं वो रुखे आफ़ताब तक कहाँ पहुँचे। हाँ, गर्द व ग़ुबार में आफ़ताब छुप जाता है, उसका इस्तेमाल अज़ रू ए मजाज़[12] जायज़ है।

'गंज दर वीराना ताके' ये बहुत लतीफ़ बात है, याने अफ़सोन किया

---

१. कब तक आत्मा पर परिधान रहेगा और सूर्य पर कब तक कीचड़ लगी रहेगी। २. सर्वज्ञ। ३. पत्रप्राप्ति। ४. बाधक। ५. पदार्थ। ६. अदृष्ट। ७. परिष्कृत। ८. पर्दा। ९. बुद्धि। १०. सुस्वभाव। ११. कीचड़। १२. प्रकृति के अनुसार।

जाता है उस गंज के बेकार होने का। गंज से ग़रज़ यही तो नहीं कि जंगल में मदफ़ून[1] रहे। वो तो ये चाहता है कि मदफ़न से निकले और सर्फ़[2] हो। लोग उसके वुजूद[3] से तमत्तो[4] पायें।

यहाँ एक और दक़ीक़ा[5] है कि इस शेर में गंज मुशब्बाबिही[6] और रूहे इन्सानी मुशब्बा[7] है और ये सब जानते हैं कि रूह का ताल्लुक़ जिस्म से जावदानी[8] नहीं, पस क्या क़बाहत[9] है अगर एक ग़मज़दा व सितमज़दा कतै ताल्लुक़ रूह का मुन्तज़िर और मुश्ताक़[10] हो। मसलन एक मयादी महबूब[11] हसरतमन्दाना कहे कि इलाही वो दिन कब आएगा कि मैं क़ैद से नजात पाऊँ, कब तक सड़क काटूँ, कब तक रंज उठाऊँ? फ़ाख़िर मकीन एक शायर था। शुजाउद्दौला व आसफ़ुद्दौला के अहद[12] में, उसने सादी व निज़ामी व हज़ीं के अशआर को इस्लाहें दी हैं। जब एक हिन्दुस्तानी बेइल्म, तुनकमाया[13] असातज़ ए नामी ए अजम[14] के कलाम को इस्लाह दे, अगर एक आलिमे ख़ुरासानी ने एक हिन्दी के मत्ले में तसर्रुफ़[15] किया तो क्या क़बाहत लाज़िम आई? ख़ुदा का शुक्र कि मुझको सत्तर बरस की उम्र में पचास बरस की मश्क़ के बाद उस्ताद मयस्सर आया।

२३

जनाबे आली,

कल मेरे शफ़ीक़े मुकर्रम[16] मुंशी नवाब जान क़ुल्ब ए एहज़ान[17] में तशरीफ़ लाए, आपका सलाम कहा। मालूम हुआ कि ख़ाजा सद्रुद्दीन साहब

१. गड़ा हुआ। २. व्यय। ३. अस्तित्व। ४. लाभ। ५. स्थिति। ६. उपमान। ७. उपमेय। ८. शाश्वत। ९. दोष। १०. इच्छुक। ११. काराबद्ध। १२. युग। १३. अप्रतिष्ठित। १४. ईरान के प्रसिद्ध आचार्य। १५. प्रयोग। १६. प्रतिष्ठित मित्र। १७. शोकपूर्ण घर।

लश्कर के साथ गये हैं और आप यहीं हैं। इस फ़स्ल में कि अभी से रात-दिन आग बरसती है, अच्छा हुआ कि ज़हमते सफ़र[1] न खींची। अजी हज़रत ये मुंशी मुम्ताज़ अलीखाँ क्या कर रहे हैं? रुक़्क़े जमा किये और न छपवाये। फ़िलहाल पंजाब अहाते में उनकी बड़ी ख़ाहिश है। जानता हूँ कि वो आप को कहाँ मिलेंगे जो आप उनसे कहें, मगर ये तो हज़रत के इख़्तियार में है कि जितने मेरे ख़ुतूत आपको पहुँचे हैं, वो सब या उन सबकी नक़ल बतरीक़े पार्सल आप मुझको भेज दें। जी यूँ चाहता है कि ख़त का जवाब वही पार्सल हो।

तुम सलामत रहो क़यामत तक।

२४

पीर व मुर्शिद

'सहल मुम्तने' में कसरए लाम तौसीफ़ी है। सहल मौसूफ़[2] और मुम्तना[3] सिफ़त। अगरचे बहस्बे ज़रूरत वज़्न कसर ए लाम मुशब्बे[4] हो सकता है, लेकिन मुख़िल्ले फ़साहत[5] है और लामे मौक़ूफ़[6] तो ख़ुद सरासर क़बाहत है। 'सहले मुम्तना' उस नज़्म व नस्र को कहते हैं कि देखने में आसान नज़र आए और उसका जवाब न हो सके। बिल जुम्ला सहले मुम्तना कमाल हुस्ने कलाम है और बलागत[7] की निहायत है। मुम्तना दरहक़ीक़त मुम्तना उल नज़ीर है। शेख़ सादी के बेशतर फ़िक्रे इस सिफ़्त पर मुश्तमिल हैं और रशीद व नवात वग़ैरा शोरा ए सल्फ़[8] नज़्म में इस शेवे की रिआयत मंज़ूर रखते हैं। ख़ुद सिताई[9] होती है। सुख़नफ़हम[10] अगर ग़ौर करेगा तो फ़क़ीर की नज़्म व नस्र में सहले मुम्तिना अक्सर पाएगा।

---

१. यात्रा का दुःख। २. विशेष्य। ३. विशेषण। ४. शीघ्र बोलने के लिए। ५. परिमार्जित भाषा के विरुद्ध। ६. निषेधार्थक 'मकार'। ७. साहित्य की आलंकारिक शैली। ८. प्राचीन कवि। ९. आत्मश्लाघा। १०. काव्य-मर्मज्ञ।

है सहल मुम्तिना ये कलामे अदक़[1] मेरा
बरसों पढ़े तो याद न होवे सबक़ मेरा

ये मिस्रा हैरत आवर है। कलामे अदक़ सहले मुम्तिना के मुनाफ़ी[2] है। फिर याद न होना और हाफ़िज़े पर न चढ़ जाना हरगिज़ सहले मुम्तिना की सिफ़त नहीं हो सकती। 'कलामे अदक़' जिसका हिफ़्ज दुश्वार हो, शायद कोई क़िस्म अक़्साये कलाम[3] में से हो। हाँ, कलामे अदक़ कलामें मुग़लक[4] को कहते हैं। सो कलामे मुग़लक और कलामे सहले मुम्तिना ज़िद यक व दीगर[5] है। मुग़लक़ और अदक़ सहले मुम्तिना और सहले मुम्तिना मुग़लक और अदक़ क्यों कर हो सकेगा। और हाफ़िज़े में महफ़ूज़ रहना कलामे मुग़लक़ व अदक़ की सिफ़त क्यों कर पड़ेगी? हाँ, मुग़लक़ असीरुल फ़हम[6] होगा, पढ़ा न जाएगा, माने समझ में न आएँगे। सहले मुम्तिना की सिफ़त वो थी जो फ़क़ीर ऊपर लिख आया। इस शेर से उसे कुछ इलाक़ा नहीं। खत्म।

'आब दर वीना रसीदन' बमाने 'खराब बुनियाद' क़यासी[7] है। असातिज़ा के कलाम में मैंने नहीं देखा। अगर आया हो तो दुरुस्त है। हाँ, 'आब रसानीदन बिना के बज़ाहिर आब दर बिना रसीदन' का मुताद्दी मिनहो है, बुलग़ा[8] के कलाम में आया है, लेकिन अस्दाद[9] में से है, बमाने वीरानी बिना मस्तामल[10] और हम बमाने इस्तेहकाम बिना। अगर इसका लाज़िम ढूँढ़िये तो रसीदन बिना व आब है न रसीदन आब दर बिना जैसाकि नेमतख़ाँ आली कहता है—

१. क्लिष्ट। २. विरुद्ध। ३. वाक्यभेद, काव्यभेद। ४. क्लिष्ट काव्य। ५. परस्पर। ६. क्लिष्ट। ७. काल्पनिक। ८. जिन लेखकों की रचना में प्रसाद गुण होता है। ९. रुकावटें। १०. प्रयुक्त।

नीस्त मुहकम गर रसद बुनियादे दुनिया ता ब आब
चूँ हबाब ईं खाना बे बुनियाद मी साज़ेम मा[1]

इससे मालूम होता है कि रसीदन बिना ता ब आब मूजिबे इस्तेहकाम है और शायदबावजूद दलीले इस्तेहकाम बिना को ना उस्तवार चाहता है। सायब कहता है—

चेगूना शमए तजल्ली ज़ रश्क न गुदाज़द
रुखे तो खान ए आईना रा ब आब रसान्द[2]

हाजी मुहम्मदजान क़ुदसी—

बगोशे अतायश रसान्द ईं खिताब
के बुनियाद काँरा रसानद ब आब[3]

ये दोनों शेर मुफ़ीदे मानी ए वीरानी हैं। क़िस्सा मुख़्तसर[4] 'आब रसीदन बिना खराबीए खाना व बाव रसान्दन' मुतादी आँ व रसीदन आब दर बिना नामसमू[5]। मैं अभी बीमार हूँ और बीमार के वास्ते अंजाम का गुस्ले सेहत[6] है या गुस्ले मैयत[7]। वस्सलाम।

---

१. यदि संसार की नींव पानी तक चली जाये तब भी स्थिर नहीं रहती। हम पानी के बुदबुदे की भाँति निराधार घर की रचना करते हैं। २. प्रकाशदाता, दीपक (मोमबत्ती) ईर्ष्या के कारण क्यों नहीं पिघलेगा? तुम्हारे चेहरे ने आगे दर्पण पानी हो गया। ३. उसकी दया के कान से यह सम्बोधन प्राप्त हुआ कि कई नींवों को पानी में पहुँचा दिया गया। ४. संक्षिप्त। ५. अप्रयुक्त। ६. स्वास्थ्य प्राप्ति के अवसर पर स्नान। ७. मृत्यु के बाद का स्नान।

२५

(२३ जुलाई—　　　)

क़िब्ला,

आप बेशक वली साहबे करामत[१] हैं। कम व बेश एक हफ़्ता गुज़रा होगा कि एक अम्रे ज़दीद[२] मुक़्तज़ी[३] इसका हुआ कि आपको इसकी इत्तिला दूँ। ख़ानए काहली[४] ख़राब, आज लिखूँ, कल लिखूँ, अब कौन लिखे। कल सुबह लिखूँगा, सुबह हुई—ग़ालिब इस वक़्त न लिख, सेपहर[५] को लिखियो। आज दोशम्बा २३ जुलाई के बारह पर दो बजे हरकारे ने आपका ख़त दिया। पलंग पर पड़े-पड़े ख़त पढ़ा और इसी तरह जवाब लिखा। अगरचे डाक का वक़्त न रहा था मगर भिजवा दिया। कल रवाना हो रहेगा। आपको मालूम रहे कि मुंशी हबीबुल्ला ज़का और नवाब मुस्तफ़ाख़ाँ हसरती को कभी उर्दू ख़त नहीं लिखा[६]। ज़का को ग़ज़ले इस्लाही[७] के हर शेर के तहत में मंशा ए इस्लाह से आगाही दी जाती है, नवाब साहब को यों लिखा जाता है—

कहार आया, ख़त लाया, आम पहुँचे। कुछ बाँटे, कुछ खाये। बच्चों को दुआ, बच्चों की बन्दगी। मौलवी अल्ताफ़हुसेन साहब को सलाम[८]।

ये तहरीर इस हफ़्ते में गई है, ग़र्ज के आमयाना[९] लिखना इख़्तियार किया है। अब ये इबारत जो तुमको लिख रहा हूँ, ये लायक़े शुमूले मजमूअए नस्र

१. चमत्कारी पुरुष। २. नया काम। ३. जिसका तकाजा किया गया। ४. आलस्य का घर ख़राब हो। ५. तीसरे पहर। ६. यह बात ठीक नहीं, उर्दू में पत्र लिखा है (सम्पादक)। ७. संशोध्य गजल। ८. उर्दू के प्रसिद्ध कवि अल्ताफ़हुसेन हाली। ९. जन-सामान्य की भाषा।

उर्दू[1] कहाँ है ? यक़ीन जानता हूँ कि ऐसी नस्रों को आप खुद न दर्ज करेंगे।

किताब के बाब में सरमद की रुबाई का शेरे अख़िर लिख देना काफ़ी है—

आलम हमा मिराते जमाले अज़लीस्त
मी बायद दीदो दम न मी बायद जद[2]

'बोस्ताने ख़याल' का तर्जुमा मौसूम ब 'हदायक़ुल अन्ज़ार' मारिज़े तबा[1] में है। अगर आप या आपका कोई दोस्त खरीदार हो तो जितनी मुजल्लद फ़रमाइए उस क़दर भेज दूँ। छै रुपये मय महसूले डाक क़ीमत है। उसी मतबे[3] में, जिसमें 'हदायक़ुल अन्ज़ार' इन्तिबा[4] हुआ है, अख़बार भी छापा जाता है। अब के हफ़्ते का दोवर्क़ा भिजवा दिया जाएगा। बशर्ते पसन्द आप तौक़ी ए खरीदारी[6] लिख भेजिएगा।

जनाब कीमस साहब बहादुर अफ़सरे मदारिस ग़र्ब व शिमाल[7] का, बावजूद अदम तारुफ़[8], ख़त मुझको आया। कुछ उर्दू ज़बान के ज़ुहूर का हाल पूछा था। उसका जवाब लिख भेजा। नज़्म व नस्र उर्दू तलब की थी। मजमूअ ए नज़्म भेज दिया। नस्र के बाब में तुम्हारा नाम नहीं लिखा, मगर ये लिखा कि मतबए इलाहाबाद में वो मजमूआ छापा जाता है। बाद इंतिबा[9] व हुसूले इत्तिला[10] वहाँ से मँगा कर भेज दूँगा। ज़्यादा हद्दे अदब, नामा जवाब तलब।

---

१. उर्दू गद्य के संकलन योग्य। २. सम्पूर्ण संसार उसके सौन्दर्य का दर्पण है। उसे देखें और मूक बने रहें। ३. मुद्रणालय। ४. मुद्रणालय। ५. मुद्रित। ६. खरीदारी का आदेश। ७. पश्चिमोत्तर प्रदेश। ८. परिचय न रहते हुए भी। ९. मुद्रण। १०. सूचना प्राप्ति।

हकीम ज़हीरुद्दीन अहमदख़ाँ के नाम

१

(१८६५ ई०)

इकबाल निशान हकीम ज़हीरुद्दीन अहमदख़ाँ को फ़क़ीर ग़ालिबअली शाह की दुआ पहुँचे। कहो मियाँ, तुम्हारा मिज़ाज कैसा है और तुम्हारे भाई मिर्ज़ा तफ़ज़्ज़ुलहुसेनख़ाँ कैसे हैं? अगर मिलो तो मेरी दुआ कहना और मिज़ाज की ख़बर पूछना, और अपने वालिद माजिद को मेरी दुआ कहना और कहना कि तुम्हारा ख़त मेरे ख़त के जवाब में था, इस सूरत में और कोई बात जवाब तलब न थी।

सुनो मियाँ ज़हीरुद्दीन, तुम अपनी दादी के पास अभी चले जाओ और उनसे मेरी और दोनों लड़कों की ख़ैर व आफ़ियत कहो और पूछो कि शहाबुद्दीनख़ाँ ने अक्तूबर के महीने की तनख़ाह के पचास रुपये पहुँचा दिये या नहीं? केदारनाथ डेवढ़ी पर आकर ज़ाफ़रबेग, वफ़ादार वग़ैरा की तनख़ाह बाँट गया या नहीं? अच्छा मेरा बेटा, ये दोनों बातें अपनी दादी से पूछ कर जल्द मुझको लिखो, देर न कीजियो।

पंजशम्बा २,......१८६५।

ख़त के जवाब का तालिब

—ग़ालिब

२

जनाब फ़ैजमाब[1] चाचा साहब, क़िब्ला व काबा दो जहाँ के हुज़ूर में मैं

१. कल्याणकारी।

आबाद हो जाएगा और जब वो इलाक़ा आबाद हो जाएगा तो दूसरा इलाक़ा शुरू होगा। घबराओ नहीं जल्दी क्या है ? आज सरदारसिंघ वालिद जगतसिंघ मेरे पास आये थे, तुम्हारे मकान का पता लिखवा ले गये हैं। शायद तुमको ख़त लिखें। मीर इनायत हुसेन गढपंख बनकर उड़ गये। कई आदमियों से कहा। उन्होंने कहा, अब वो वहाँ नज़र नहीं आते। मेरे पास हर हफ़्ते के आने वाले, अब महीने भर से नहीं आये। मीर मुर्तज़ाहुसेन का ख़त उनके नाम का मेरे पास धरा है। जब वो आएँगे उनको दे दूँगा। जगतसिंघ का लखनऊ से रवाना होने का क़स्द सरदारसिंघ ने कह दिया। अब के तुम्हारे ख़त में मुज़फ़्फ़र मिर्ज़ा की तरफ़ से कुछ नहीं, इससे मुस्तंबत[1] हुआ कि वो और जगतसिंघ, जैसा कि तुमने लिखा था, लखनऊ से कोल व मुरादाबाद को गये। मीर इमदाद का ज़िक्र मैंने मिर्ज़ा आग़ा जान साहब से कर दिया है कि अच्छा है अगर वो हुसेन मिर्ज़ा साहब और हुसेनी साहब की तरफ़ से मुख़्तारे कार हो जाएँ। कल जुमा था। यक़ीन है कि साहब कमिश्नर से मिले होंगे, अर्ज़ी दी होगी, उसका हाल मुझको लिखो।

ये हो लिया, अब मेरा दुःख सुनो। भागा नहीं, पकड़ा नहीं गया। दफ़्तरे क़िले से कोई मेरा काग़ज़ नहीं निकला। किसी तरह की बेख़याली व नमकहरामी का धब्बा मुझको नहीं लगा। यहाँ एक अख़बार जो गौरीशंकर या गौरीदयाल या कोई और ग़दर के दिनों में भेजता था उसमें एक ख़बर अख़बार नवीस ने ये भी लिखी कि फ़लानी तारीख़ असदुल्लाहख़ाँ ग़ालिब ने ये सिक्का कह कर गुज़राना—

व ज़र ज़द सिक्क ए किश्वर सितानी
सिराजुद्दीन बहादुरशाह सानी[2]

---

१. ज्ञात। २. उसके सिंहासनारूढ़ होने पर सोने का सिक्का बनाया गया, जिस पर सिराजुद्दीन बहादुर शाह (द्वितीय) लिखा हुआ था।

मुझसे इन्दल मुलाक़ात[1] साहब कमिश्नर ने पूछा कि ये क्या लिखता है। मैंने कहा कि ग़लत लिखता है। पादशाह शाइर, पादशाह के बेटे शाइर, पादशाह के नौकर शाइर, खुदा जाने किसने कहा। अखबार नवीस ने मेरा नाम लिख दिया। अगर मैंने, कि, गुज़राना तो दफ़्तर से वो काग़ज़ मेरे हाथ का लिखा हुआ गुज़रता, और आपको चाहिए, हकीम अहसनुल्लाखाँ से पूछिये। उस वक़्त तो चुपका हो रहा। अब जो उसकी बदली हुई तो जाने से दो हफ़्ते पहले एक फ़ारसी रूबकारी[2] लिखी कि ये जो असदुल्लखाँ फ़ारसी के इल्म में यकता मशहूर है, इससे काम नहीं निकलता। ये शख्स बादशाह का नौकर था और उसका सिक्का लिखा। हमारे नजदीक पिन्सन के पाने का मुस्तहक़ नहीं है। ग़रज इस मक़सूद से ये है कि मैं यहाँ मौजूद हूँ और अमले से राह व रस्म है। ये तो कोई बताता नहीं कि तारीखे रूबकारी क्या है और ये सदर को भेजी गई है या नहीं? अब हैरान हूँ कि क्या करूँ? कमिश्नर जदीद[3] से मिलूँगा। इसी से, अगर देगा तो, नक़ल लूँगा। जवाब अज़राहे एहतियात इस कमिश्नर के अहद में भी भेज चुका हूँ। मगर ग़ौर······और एक जानिब से मुक़द्दमा किया। भाई मैं तो अली-अली कर रहा हूँ जीऊँ तो और मरूँ तो। कहीं जवाब साफ़ मिल चुके तो इस शहर से चला जाऊँ। ये दो रुपये रोज़ भी उस ग़ासिब[4] मलऊन[5] की गोर[6] में जाएँ जिसने मुझे दस हज़ार रुपये साल में से ये कुछ दिया है। अलैइल लानत वल अजाब[7]।

यूसुफ़ मिर्ज़ा को दुआ पहुँचे। भाई यहाँ मीर अहमदहुसेन वालिदे मीर रोशनअलीखाँ ने मुझसे कहा कि हजरत, जब बहादुरशाह तख्त पर बैठे हैं तो

१. भेंट के समय। २. सरकारी पत्र, अदालती काग़ज़। ३. नवीन। ४. दूसरे का अधिकार छीनने वाला। ५. धिक्कृत। ६. कब्र। ७. उस पर ईश्वर का धिक्कार और क्रोध हो।

में मुर्शिदाबाद में था। वहाँ मैंने ये सिक्का सुना था, उनके कहने से मुझे याद आया कि मौलवी मुहम्मद बाक़र ने खबरे वफ़ात[1] अकबरशाह व जुलूस बहादुरशाह जहाँ छापी थी वहाँ इस सिक्के का गुज़रना 'ज़ौक़' की तरफ़ से छापा था। और जुलूसे बहादुरशाह अक्तूबर के महीने १८३७ ई० या १८३८ ई० में हुआ है। बाज़ साहब अखबार जमा रखते हैं। अगर वहाँ इसका पता पाओगे और वो परच ए अखबार अस्ल व जिन्सही मुझको भिजवाओगे तो बड़ा काम करोगे। मैंने अकबराबाद, फ़र्रुखाबाद, मारहरा, मेरठ अपने अहबाब को लिखा है। अब तुम को भी लिखा है। कालपी को लिखना बाक़ी है। वो भी कल-परसों लिखूँगा। अक्तूबर, नवम्बर, दिसम्बर १८३७, १८३८ ई० तीन महीनों के बारह पर्चे ए अखबार देखे जाएँ।

मुहर्रिरा[2] शम्बा १८ जून १८५९ ई०।

२

(२८ जुलाई, १८५६ ई०)

या हुसैन इब्ने हैदर[3] रूही फ़िदाक[4],

यहाँ तक लिख चुका हूँ कि मुहम्मदक़ुलीखाँ के नाम का खत कल्लू से बन्नू बेगम साहबा ने ले लिया। मुहम्मदक़ुलीखाँ अली जी गये हुए थे। कल रज़ाशाह की ज़बानी मालूम हुआ कि साहब ने वो खत मीर रुस्तुमअली को दिया और वो इस खत को लेकर दरगाह गये। आफ़रीं, सद आफ़रीं मीर रुस्तुम को दोस्त के काम के वास्ते इतनी दूर प्यादा जाना। आज दोपहर को मीर साहब मेरे पास आये और वही खत खुला हुआ लाये और कहा कि मौंदराय को हर्फ़ बहर्फ़ खत पढ़ा लाया हूँ। मैंने कहा कि काशीनाथ को क्यों न दिखाया?

१. मृत्यु का समाचार। २. लिखित। ३. हैदर (हज़रत अली) के पुत्र। ४. मेरी आत्मा आप पर न्योछावर।

उन्होंने कहा कि तुम देखकर-पढ़कर अपने आदमी के हाथ काशी के पास भेज देना। मैंने सोचा कि काशीनाथ देखेगा और उल्टा फेर देगा। न आदमी से कुछ कहेगा, न मेरे पास आएगा। मैंने मीर साहिब से कहा आप ही काशीनाथ को दिखाकर और उससे बातचीत करके मुझको ला दीजिएगा। वो इस ख़त को बमूजिब मेरे कहने के ले गये। कल-परसों वो आएँगे, तब फ़िक्र की जाएगी। मगर भाई, पेच ये पड़ा है कि मुहम्मद क़ुलीख़ाँ रज़ाशाह के साथ पाटौदी जाते हैं। मुहर्रम वहाँ करेंगे। लाडो बेगम वालिदए[1] अकबर अलीख़ाँ ने उनको बुलाया है तो अब ये मुक़दमा उनकी मुआवदत[2] के बाद होगा। काग़ज़ मेरे पास धरे रहेंगे। साहब, मुहम्मद क़ुलीख़ाँ ने ग़लत लिखा है; न हसन अलीख़ाँ मुक़य्यद[3] न हामिद अलीख़ाँ न हकीम अहसानुल्लाख़ाँ। हुक्म आख़िर उन तीनों साहिबों के वास्ते नहीं हुआ। हकीम अहसनुल्लाख़ाँ के मकानात पर उनको क़ब्ज़ा मिल गया। ज़नाने मकान में जो अक़बे हम्माम[4] है, एक अँग्रेज़ उतरा हुआ है। पैंतीस रुपये महीना उनको किराया देता है और वो दोनों आदमी अभी यों ही उलझे हुए हैं। अहसानुल्लाख़ाँ अपने मकान में जा रहे। दीवानख़ाने को महलसरा[5] बनाया। ख़ुद, जहाँ अस्तबल था वहाँ बैठते हैं। देवीराम सालगराम को उनके मकानात मिल गये। ऐसा भी सुना है उनके दफ़ीने[6] बच गये। अब वो हामिद अलीख़ाँ को क़ुत्बुद्दीन सौदागर की हवेली से उठा कर अपने मकान में ले गये हैं। सरदार मिर्ज़ा का हाल मुझे इससे ज़्यादा नहीं मालूम कि रज़ाशाह कर्ता-धर्ता उनकी बन्दगी मुझको कह देते हैं। आज या कल रज़ाशाह आ गये तो मैं बेगानावार निकाह व मुता[7] का हाल उनसे पूछ लूँगा।

पंजशम्बा २६ ज़िलहिज्जा (१२७६ हि०) २८ जुलाई (१८६० ई०)।

१. माँ। २. वापसी। ३. बन्दी। ४. स्नान-घर। ५. अन्तःपुर। ६. गड़ा हुआ ख़ज़ाना। ७. अस्थायी विवाह।

मिर्ज़ा आग़ा जानी साहब अच्छी तरह हैं। उनको तप आ गई थी, अब तप मुफ़ारक़त कर दी गई है[1] मगर ज़ोफ़[2] बाक़ी है। आज चौथा दिन है कि मेरे पास आये थे। काशीनाथ सरासर पहलूतिही[3] करता है। नौंदराय यक सर हज़ार सौदा, मुहम्मद क़ुलीख़ाँ अक्सर अलीजी रहते हैं। कभी यहाँ आ जाते हैं, तब नौंदराय को ताक़ीद करते हैं। आजकल यहाँ पंजाब इहाते के बहुत हाकिम फ़राहम हैं। पौनटोटी के बाब में कौन्सिल हुई, परसों ७ नवम्बर को जारी हो गई। सालगराम खज़ांची, छन्नामल, महेशदास इन तीन शख़्सों को ये काम बतौरे अमानी[4] सुपुर्द हुआ है। ग़ल्ले और उपले के सिवा कोई जिन्स ऐसी नहीं कि जिस पर महसूल न हो। आबादी का हुक्म आम है, ख़ल्क़ का इज़्दिहाम[5] है। आगे हुक्म था कि मालिकान रहें, किरायेदार न रहें, परसों से हुक्म हो गया कि किरायेदार भी रहें। कहीं ये न समझना कि तुम या मैं या कोई और अपने मकान में किरायेदार को आबाद करे। वो लोग जो घर का निशान नहीं रखते और हमेशा से किराये के मकान में रहते थे, वो भी आ रहे हैं, मगर किराया सरकार को दें। तुम इन्साफ़ करो कि हमशीर[6] की दरख़ास्त क्यों कर गुज़रे, जब वो खुद आयें और दरख़ास्त दें और मंज़ूर हो और मकान मिले तो उस तमाम शहरिस्ताने वीरान में एक हवेली मिलेगी और उनको यहाँ रहना होगा। क्यों कर इस वीराने में तन्हा रहेंगी? सहम कर दम निकल जाएगा। माना कि जब्र इख़्तियार कर कर रहीं, खाएँगी कहाँ से? बहरहाल ये सब ख़यालात ख़ाम[7] और जुम्ले नातमाम[8] हैं। हाँ, नक़्ल लेनी और मुराफ़ा[9] न करना और नक़्ले हुक्म लेनी और फिर मुराफ़ा करना और फिर उस हुक्म की नक़्ल लेनी, ये उमूर[10] ऐसे नहीं कि जल्द फ़ैसल हो जाएँ। हुक्काम बेपरवाह, मुख़्तार अदीमुल फ़ुर्सत[11] मैं गा

१. दूर चली गई है। २. निर्बलता। ३. उपेक्षा। ४. प्रयोग के रूप में। ५. भीड़। ६. बहन। ७. अपरिपक्व। ८. अपूर्ण। ९. अपील। १०. विषय (ब.व.)। ११. जिनके पास समय न हो।

शिकस्ता[1], मुहम्मद क़ुलीखाँ कभी यहाँ, कभी वहाँ। वक़्त पर मौक़ूफ़ है। घबराओ नहीं। हकीम अहसनुल्लाखाँ के मकानाते शहर इनको मिल गये और ये हुक्म है कि शहर से वाहर न जाओ। दरवाज़े से वाहर न निकलो, अपने घर में वैठे रहो। नवाव हामिद अलीखाँ के मकानात सव ज़ब्त हो गये। वो क़ाज़ी के हौज़ में किराये के मकानात में मय मस्तूरा[2] के रहते हैं। वाहर जाने का हुक्म उनको भी नहीं। मिर्ज़ा इलाहीवख़्श को हुक्म कराँची वन्दर जाने का है, उन्होंने ज़मीन पकड़ी है। सुलतानजी में रहते हैं। उज़्र कर रहे हैं। देखिये, ये जब्र उठ जाये या ये खुद उठ जाएँ।

५

(१८६६ ई०)

नवाव साहव,

आज तीसरा रोज़ है कि हाल तुमको लिख चुका हूँ, मुहम्मद क़ुलीखाँ आये। हममें उनमें वाहम गुफ़्तगू हुई। नवाव गवर्नर की आमद में कचहरियाँ वन्द, हुक्काम मेरठ को चले जाते हैं। १९ या २० दिसम्वर को मेरठ मुख़य्यमें ख़याम[3] होगा। दरवार वहीं होगा। रहा दिल्ली का आना, मुश्तवेह[4] है। कोई कहता है न आएँगे, कोई कहता है जरीदा[5] वसवीले डाक आएँगे, कोई कहता है मय लश्कर आएँगे, १३ दिन यहाँ रहेंगे। आज १५ दिसम्वर की है, जो कुछ वाक़ै होगा वो तुमको लिखूँगा। नक़्ल हुक्म की दरख़ास्त और उस मुक़दमे की फ़िक्र वाद इस हंगामें की अमल में आएगी। ख़ातिर-आतिर जमा रहे।

१. अपंग, जिसके पाँव वेकार हों। २. पत्नी के साथ। ३. तम्वू तनेगा। ४. सन्दिग्ध। ५. यात्रा में एकाकी।

और मुझको भी ये दिन नसीब करे। कमिश्नर साहब का नायब यहाँ कोई नहीं और न किसी अँग्रेज़ोखाँ से इसकी तस्दीक़ हो सकती है। इतना मस्मू[1] हुआ है कि एक महकमा लाहौर में मुआवज़ए नुक़्साने रिआया[2] के वास्ते तजवीज़ हुआ है और ये हुक्म है कि जो रैयत का माल कालों[3] ने लूटा है, अलबत्ता उसका मुआविज़ा बहिसाबे दह यक[4] सरकार से होगा, याने हज़ार रुपये के माँगनेवाले को सौ रुपये मिलेंगे और जो गोरों के वक़्त की ग़ारतगिरी है वो हदर[5] और बेहल[6] है। उसका मुआविज़ा न होगा। शायद ये वही कमिश्नर हों। मकानात को हामिद अलीखाँ का कह कर क्यों लिखते हो, वो तो मुद्दत से ज़ब्त होकर सरकार का माल हो गया, बाग़ की सूरत बदल गई। महलसरा[7] और कोठी में गोरे रहते थे। अब फाटक और सर ता सर दूकानें गिरा दी गई। संग व खिश्त[8] का नीलाम करके रुपया दाखिले खज़ाना हुआ। मगर ये न समझो कि हामिद अलीखाँ के मकान का मलबा बिका है, सरकार ने अपना मम्लूका व मक़बूज़ा[9] एक मकान ढा दिया। जब बादशाहे अवध की अमलाक[10] का वो हाल हो तो रैयत की अमलाक को कौन पूछता है? तुम अब तक समझे नहीं हो कि हुक्काम क्या समझते हैं और न कभी समझोगे। कैसा नींदराय, कैसी नक़्ले हुक्म? कैसा मूराफ़ा? जो अहकाम कि दिल्ली में सादर हुए हैं, वो अहकाम क़ज़ा[11] व क़दर[12] हैं, उनका मुराफ़ा कहीं नहीं। अब यों समझ लो कि न हम कभी कहीं के रईस थे, न जाह[13] व हशम[14] रखते थे। न अमलाक थे, न पिन्शन रखते थे। रामपूर जिन्दगी में मेरा मस्कन[15] और बादे

---

१. श्रुत। २. जनता की क्षतिपूर्ति। ३. भारतीय विद्रोही सैनिक। ४. दस पर एक। ५. किसी के वध को उचित सिद्ध करना। ६. क्षम्य। ७. अन्तःपुर। ८. पत्थर और ईंट। ९. अधिकृत। १०. सम्पत्ति। ११. ईश्वरीय आदेश। १२. ईश्वरादेश, भाग्य। १३. पद-प्रतिष्ठा। १४. सैनिक, नौकर-चाकर। १५. घर।

मर्गे[1] मेरा मदफ़न[2] हो जिसा। अब तुम लिखते हो कि इन्शाअल्लाह तुम यहाँ आओ तो मुझको देखो आते हो। मैं यक़ीन करता हूँ कि हिलाले माहे रजबुल मुरज्जब[3] लखनऊ में देखूँ। जो मसवीरा नवाबी के बाब में तुमने की है, वो बहुत मुनासिब है। तुम्हारे पेश होने के और ख़िलअत पहनने के नवाब मिर्ज़ा और यूसुफ़ मिर्ज़ा अपनी पीराना सरी[4] में इस पर क़ादिर हो जायँगे, इन्शा अल्लाहुल अज़ीज़ुल करीम[5]।

नूरे चश्म मिर्ज़ा को दुआ पहुँचे। हाल क़सीदा व मुख़म्मस[6] का मालूम हुआ। ख़िलअत व अता तो एक नहीं, तो बच्चा औलाद में और आक़ा[7] सुल्तान से मुन्तज़िर रहता है। इसको मंज़ूर है कि दुआ का सनाख़्वानी[9] अदा पाऊँ और दुआ का सिला[10] जुदा पाऊँ—

कारसाज़े मा बफ़िक्रे कारे मा[11]

लेकिन मेरी जान, इन्साफ़ तो कर इन सिलों[12] में ज़िन्दगी तो बसर नहीं होती। ये फ़िक्र भी बेहूदा है। ज़िन्दगी मेरी कब तक ? सात महीने ये और बारह महीने साल आइन्दा के। इसी महीने में अपने आक़ा के पास जा पहुँचता हूँ, वहाँ न रोटी की फ़िक्र, न पानी की प्यास, न जाड़े की शिद्दत, न गर्मी की हिद्दत, न हाकिम का ख़ौफ़, न मुख़बिर का ख़तरा, न मकान का किराया देना पड़े, न कपड़ा ख़रीदना पड़े। न गोश्त-घी मँगाऊँ, न रोटी पकाऊँ, आलमे नूर और सरासर सुरूर[13]।

१. मृत्यु के पश्चात्। २. दफ़न का स्थान। ३. रज्जब मास के शुक्ल पक्ष का नवचन्द्र। ४. बुढ़ापे में। ५. महत्तम ईश्वर चाहे तो। ६. पाँच-चरण की कविता। ७. स्वामी। ८. दान। ९. प्रशंसा। १०. प्रतिफल। ११. जिसने हमें बनाया, वही हमारी चिन्ता करता है। १२. प्रतिफल। १३. हर्ष, नशा।

सच तो यों है कि ये दहरे आशोबेग़म[1] है, मजमूए अहले हिन्द[2] मातमदार व सोगवार हों तो भी कम है। अगरचे मैं क्या और मेरी दुआ क्या मगर इसके सिवा कि मग़फ़िरत[3] की दुआ करूँ, क्या करूँ? क़तए साले रेहलते नवाव ग़ुफ़रांमआव[4]। जब दिल खार खार ग़म से पुरखूं हुआ, यों मौज़ूं हुआ—

गर शीद निहाँ मेहूे जहाँताव दरेग़
शुद तीरा जहाँ व चश्मे अहवाव दरेग़
ईं वाक़िया राज़े रूए ज़ारी 'ग़ालिव'
तारीख रक़म कर्द के **नवाब दरेग़**[5]

एज़ारी (याने) ज़ा, हव्वज़ के अदद वढ़ाये जायें तो १२८० हि० पैदा होते हैं। लिहाज़ा अल मतलूब शरीके वज़्मे मातम मुंशी मियाँ दादखां साहब को सलाम।

यकशम्बा वीस्तव यकुम रवीउल अव्वल १२८० हि० मुताविक़ शशुम सितम्बर १८६३ ई०।

२

(३ सितम्बर, १८६४ ई०)

व जनाव नवाव साहव जमीलुल मुनाक़िब[6], अमीमुल एहसान[7], सल्...

---

१. शोक का युग। २. भारत के सब निवासी। ३. मोक्ष। ४. मोक्षप्राप्त स्वर्गीय नवाब की मृत्यु के वर्ष का पद। ५. संसार को प्रकाशित करने वाला सूर्य छिप गया, दुःख है। मित्रों की आंखों की दुनिया में अंधेरा, हा हन्त! शोक स्वरूप 'ग़ालिब' ने इस घटना की तिथि लिखी कि 'नवाब दरेग़' (हाय नवाब)। ६. कीर्तिगान करने वालों के सुन्दर। ७. परोपकारी।

मुल्लाह ताला[1], बाद सलाम मसनूनुल इस्लाम[2] दुआए दौलत व इक़बाल के हमेशा विर्द[3] ज़बान है, घड़ी के अतीया का शुक्र हर घड़ी और हर साअत बजा लाता हूँ। पहले तो आप दोस्त और फिर अमीर और फिर सैयद। नज़र इन तीन उमूर पर इस अर्मुग़ाँ[4] को मैंने बहुत अज़ीज़ समझा और अपने सर और आँखों पर रखा। खुदा ए आलम आरा[5] आपको सलामत रखे और हर घड़ी आपका मुमिद[6] व मददगार रहे। जाहिरा, बवक़्ते [illegible] कुंजी का रखना सह्व[7] गया। खैर, यहाँ बन जाएगी। वस्सलाम बउज़ूक़िल एहतराम[8]।

खुशनूदी ए अहबाब का तालिब
—ग़ालिब

३

(३१ मई, १८७५ ई०)

जनाब नवाब साहब,

आपके अखलाक़ का शाकिर[9] और आपकी याद आवरी का ममनून[10] और आपके दवामे दौलत[11] का दुआगो हूँ। अगर बूढ़ा और अपाहिज न होता, तो रेल की सवारी में मुक़र्रिर आप तक पहुंचता और आपके दीदार से मसर्रत अन्दोज़ होता। आप मेरे शफ़ीक़[12] और मेरे मुहसिन[13] हैं। खुदा आपको हमेशा सलामत व करामत रखे। खत के देर-देर लिखने

---

१. ईश्वर रक्षा करे। २. अभिवादन-श्रुत होने के पश्चात्। ३. पाठ-जप। ४. भेंट। ५. संसार को सुसज्जित करने वाला ईश्वर। ६. रक्षक। ७. भूल-भ्रान्ति। ८. अत्यधिक आदर के साथ अभिवादन। ९. कृतज्ञ। १०. आभारी। ११. धन की स्थिरता। १२. प्रियकारी। १३. प्रियकारी।

का सवव जोफ़ व नकाहत[1] है। अगर मेरी औक़ाते शवानारोज़[2] और मेरे हालात आप देखें तो ताज्जुब करेंगे कि ये शख़्श जीता क्यों कर है। सुवह से शाम तक पलंग पर पड़े रहना और फिर दमवदम पेशाव को उठना। इन मजमू ए मसायव[3] में से एक अदना मुसीवत ये है कि १२८२ हिजरी शुरू हुई, १२१२ हि० की विलादत[4] है। अव के रज्जव के महीने से सत्तरहवाँ साल शुरू होगा। सत्तरा-वहत्तरा वहरा, वूढ़ा, अपाहिज आदमी हूँ। जो इनायत तुम मेरे हाल पर फ़रमाते हो, सिर्फ़ तुम्हारी खूवी है। मैं किसी लायक़ नहीं।

चहार शम्वा ३१ मई १८७५ ई०।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

४

(१७ सितम्वर, १८६५ ई०)

नवाव साहव जमीलुल मनाक़िव अमीमुल एहसान उम्मीदगाहे दर्वेशां[5] जादा अफ़ज़ालकुम[6]—

आपका वन्द ए मिन्नत पिज़ीर[7] ग़ालिब खूनीं सफ़ीर[8] यों नवासंज[9] होता है कि इनायतनामा इज्ज़े[10] वुरूद[11] लाया और मुज़्द ए क़ुबूल[12] से मेरा रुतवा वढ़ाया। जो कुछ मेरे हक़ में इर्शाद हुआ, अगर इर्शाद हुआ, अगर उसको क़द्रदानी कहूँ तो लाजिम आता है कि अपने को एक तरह के सलाम का मालिक

---

१. त्रुटि, दोष। २. रात-दिन का समय। ३. मुसीवतों का समूह। ४. जन्म। ५. संन्यासियों के आशास्थल। ६. आप की प्रतिष्ठा बढ़े। ७. कृतज्ञ। ८. घातक सन्देशवाहक, रक्तरंजित हृदय। ९. गायक। १० [illegible] ११. आगमन। १२. स्वीकृति का शुभ समाचार।

जानता हूँ। अलबत्ता आपने अज़राहे हक़पसन्दी सुखन की क़द्रदानी और मेरी क़द्र अफ़्ज़ाई की है। जो अग़लाते फ़ारसी[1] दानाने हिन्द[2] के ज़हन में रासिख़[3] हो गये थे, उनको दफ़ा किया है तो क्या बुराई की है। बात ये है कि ओछी पूँजीवाले गुमनाम अपनी शुहरत के लिए मुझसे लड़ते हैं। वाह-वाह अपने नामवर बनाने को नाहक़ अहमक़ बिगड़ते हैं।

अतीय ए हज़रत बतवस्सुत जनाब सैफ़ुलहक़ पहुँचा और मैंने उसको बेतकल्लुफ़ अतीय ए मुर्तज़वी[4] समझा। अली मुर्तज़ा अलहि तह्यतो वस्सना[5] आपका दादा और मेरा आक़ा[6]। ख़ुदा का एहसान है कि मैं एहसानमन्द भी हुआ तो अपने ख़ुदावन्द[7] के पोते का। आज से कापी लिखी जाने लगी और तस्हीह्[8] को मेरे पास आने लगी। छापे के वास्ते बरसात का मौसम अच्छा है, बस, अब उसके छप जाने में देर क्या है।

सुबह यकशम्बा १७ सितम्बर १८६५ ई०।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

५

(२२ मार्च, १८६६ ई०)

नवाब साहब जमीलुल मुनाक़िब अमीमुल एहसान सलामत। फ़क़ीर असदुल्लाह् अर्ज़ करता है कि आपके ख़त के आने ने मेरी आबरू बढ़ाई।

१. फ़ारसी की अशुद्धियाँ। २. भारत के चतुर लोग। ३. दृढ़। ४. हज़रतअली का दान। ५. उन पर ईश्वर का आशीर्वाद हो। ६. मालिक। ७. स्वामी। ८. संशोधन।

हक़ताला तुम्हें सलामत रखे। ३६ 'दुरफ़िशे कावयानी' की रसीद पहुँची। हस्बुल इर्शाद[1] अब और न भेजूँगा। क़िब्ला गर्ज़ शुहरत है। इस क़लमरो[2] में मैंने जिल्दें तक़्सीम की हैं। उस मुल्क में आप बाँट दें। इतनी मेरी अर्ज़ क़ुबूल हो कि बड़ौदा, गुजरात में सैयद अहमद हसन साहब मौदूदी और मीर इब्राहीमअलीख़ाँ साहब को एक-एक जिल्द भिजवा दीजिएगा, और छै जिल्दें मौलाना सैफ़ुलहक़ को अता कीजिएगा कि वो अपने दोस्तों को भिजवा दें।

ख़ाजा बदरुद्दीनख़ाँ मेरे भतीजे ने 'बोस्ताने ख़याल' को उर्दू में लिखा है। उसका एक इश्तिहार और यहाँ एक अख़बार नया जारी होने वाला है. उनके दो इश्तिहार इस ख़त के साथ भेजता हूँ। आप या आपके अहबाब में से कोई साहब किताब के या अख़बार के ख़रीदार हों तो इश्तिहार के मज़मून के मुताबिक़ अमल में लायें। वस्सलाम माउल इकराम[3], मियाँ सैफ़ुलहक़ को सलाम।

६

(९ अगस्त, १८६६ ई०)

नवाब साहिब जमीलुल मुनाक़िब अमीमुल एहसान नवाब मीर गुलाम बाबा साहब बहादुरज़ादा[4] मज्दहू—

अर्ज़ किया जाता है कि आपका इनायतनामा और मौलाना सैफ़ुलहक़ का मेहरबानीनामा, दोनों लिफ़ाफ़े एक दिन पहुँचे। सैफ़ुलहक़ के ख़त से मालूम

---

१. आदेश के अनुसार। २. देश। ३. ईश्वर रक्षा करे और दया करे। ४. वीरपुत्र। ५. शुभ समाचार।

हुआ कि रज्जब के महीने में शादियाँ क़रार पाई हैं। मुबारक हो और मुबारक हो। नज़्ज़ार ए बज़्मे जमशीदी[1] से महरूम[2] रहूँगा, मगर मेरा हिस्सा मुझको पहुँच रहेगा। ख़ातिर जमा है।

क्यों हज़रत साहिबज़ादे का इस्मे तारीख़ी[3] पसन्द आ गया या नहीं ? नाम तारीख़ी और फिर सैयद भी और खान भी। सैयद महाबतअलीख़ाँ अजब है, अगर पसन्द न आये और बहुत अजब है इस अम्र की न आपके ख़त में तौज़ीह[4] न मियाँ दादख़ाँ के ख़त में ख़बर। ये मैं नहीं कहता कि ख़ाही न ख़ाही यही नाम रखिये। पसन्द आने या न आने की तो फ़क़ीर को इत्तिला हो जाये।

जवाब का तालिब

—ग़ालिब

७

(१४ नवम्बर, १८६६ ई०)

सतूदा[5] बहरे ज़बान[6] व नामवर बहरे दयार[7]। नवाब साहिब शफ़ीक़[8] करम गुस्तर[9] मुर्तज़वी तबार[10] नवाब मीर गुलाम बाबाख़ाँ बहादुर को मसर्रत[11] बादे मसर्रत व जश्न बादे जश्न मुबारक व हुमायूँ[12] हुआ। रुक़्क़ ए गुलगूँ[13] ने बहार की सैर दिखलाई। व सवारी ए रेल रवाना होने की लहर दिल में

१. जमशीद की सभा के समान बैठक का दृश्य। २. वंचित। ३. जिस नाम से जन्म-संवत् का पता चले। ४. स्पष्टीकरण। ५. प्रशंस्य। ६. भाषा के लिए। ७. देश के लिए प्रसिद्ध। ८. कृपालु, मित्र। ९. दयालु। १०. हज़रत अली के वंशज। ११. हर्ष। १२. सौभाग्यशाली। १३. गुलाबी।

आई। पाँव से अपाहिज, कानों से बहरा, ज़ोफ़े बसारत[1], ज़ोफ़े दिमाग़, ज़ोफ़े मेदा, इन सब ज़ोफ़ों पर ज़ोफ़े ताले[2]। क्यों कर क़स्दे सफ़र करूँ? तीन-चार शबाना[3] रोज़े क़फ़स[4] में किस तरह बसर करूँ? घंटे भर में दो बार पेशाब की हाजत होती है। एक हफ़्ते-दो हफ़्ते के बाद नागाह क़ौलंज[5] के दौरे की शिद्दत होती है। ताक़त जिस्म में, हालत जान में नहीं, आना मेरा सूरत तक किसी सूरत हय्यज़े इम्कान[6] में नहीं। ख़त लिखते-लिखते ख़याल में आया कि सैयद साहिब की विलादत[7] की तारीख़ लिखी। सैदानी साहिबा की बिस्मिल्लाह[8] की तारीख़ भी लिखा चाहिए। माद्दा 'ख़ुजिस्ता बहार' ज़हन में आया। सात अदद कम पाये। ख़ुजिस्ता 'बहार' पर अदब के आदाद[9] बढ़ाये। शुमार में १२८३ नज़र आये। दूसरे वर्क़ पर वो क़ता मरक़ूम[10] है। बूढ़ों की फ़िक्र की ताक़त मालूम है, सिर्फ़ जोशे मुहब्बत से चार मिस्रे मौज़ूं हुए हैं।

गर क़ुबूल उफ़्तद ज़हे इज्ज़ो शरफ़[11]

१४ नवम्बर १८६६ ई०।

राक़िम[12]

—असदुल्लाह ख़ाँ 'ग़ालिब'

सैफ़ुलहक़ साहिब को सलाम। एक मेरे दोस्त मुसव्वर[13] ख़ाकसार[14] का ख़ाका उतार कर दरबार का नक़्शा उतारने को अकबराबाद गये हैं। वो आ जायें तो शुग़्ले तस्वीर[15] तमाम होकर आप के पास पहुँच जाये। ख़त अज़राहे एहतियात बैरंग भेजा जाता है।

---

१. दृष्टिमान्द्य। २. भाग्य की मन्दता या निर्बलता। ३. रात्रि। ४. जेल (लाश, रेल की यात्रा)। ५. पसली के नीचे उठने वाला दर्द। ६. सम्भावना का स्थल। ७. जन्म। ८. विद्यारम्भ। ९. संख्या। १०. लिखित। ११. यदि स्वीकार हो जाये तो बड़ी प्रतिष्ठा हो। १२. लेखक। १३. चित्रकार। १४. सेवक। १५. चित्रकारी।

खुजिस्ता जश्ने दविस्ताँ नशीनी ए बेगम
बफ़ैज़े हिम्मते तो आबो यु ने इक़बालश
चो अज़पए अदब आमोज़ीस्त खुश बाशद
अगर खुजिस्ता बहारे अदब बुबद सालश[1]

८

(मार्च, १८६७ ई०)

नवाब साहिब जमीलुल मनाक़िब अमीमुल एहसान, आलीशान, वाला दूदमान[2] ज़ादे मज्दकुम[3]—

सलाम मसनून अस्सलाम व दुआ ए दवामे दौलत व इक़बाल के बाद अर्ज़ किया जाता है कि इन अयामे मैमनत फ़र्जाम[4] में जो अज़रूए अखबार बम्बई आपकी अफ़्ज़ाइश[5] इज़्ज़ो जाह[6] के हालात मालूम हुए, मुतवातिर शुक्रे इलाही[7] बजा लाया और इस तरक़्क़ी को अपनी दुआ का नतीजा जानकर और ज़्यादा खुश हुआ। खुसूसन अदालतुल आलिया[8] में फ़तह पाना और हक़्क़े हक़ीक़ी का ज़ुहूर में आना, क्या कहूँ किस क़दर मसर्रत व शादमानी[9] का मूजिब[10] और किस तरह की निशात[11] व इंबिसात[12] का सबब हुआ है। हक़्क़ताला ये फ़तह मुबारक[13] व हुमायूँ[14] करें। क़ता—

१. बेगम को पाठशाला में सम्मिलित कराने का जो शुभ अवसर मनाया जा रहा है, तुम्हारे साहस के शुभत्व से उसके सौभाग्य और प्रभाव में वृद्धि हो। वह वर्ष जिसमें उसकी शिक्षा का प्रारम्भ हुआ है, उसका नाम 'खिजिस्ता बहारे-अदब' रखा जाये। २. श्रेष्ठ वंश। ३. सुपुत्र। ४. परिणाम का मांगलिक अवसर। ५. वृद्धि। ६. प्रतिष्ठा और मर्यादा। ७. ईश्वर का धन्यवाद। ८. मुख्य न्यायालय। ९. हर्ष। १०. कारण। ११. आनन्द। १२. सुख। १३. शुभ। १४. माँगलिक।

फ़तहे सैयद गुलाम बाबाख़ाँ
ख़ुद निशाने दवामे इक़बालस्त
हम अर्ज़ी रू बुवद के ग़ालिब गुफ़्त
के 'ज़फ़रनाम ए अवद' सालस्त[1]

बहारे बाग़े जाहो जलाल जवदाँ बाद[2]।

—असदुल्लाह् ग़ालिब

६

(३ अप्रैल, १८६७ ई०)

नवाब साहब जमीलुल मनाक़िब अमीमुल एहसान इनायत फ़र्मा[3] मुख़्लिसाँ ज़ादे मज्दहु। शुक्रे याद आवरी व रवाँ पर्वरी बजा लाता हूँ। पहले इससे आपका मवद्दतनामा[4] पहुँचा है, वो मेरे ख़त के जवाब में था। उसका जवाब नहीं लिखा गया। परसों मियाँ सैफ़ुल हक़ का ख़त पहुँचा। ख़त क्या था, ख़ाने दावत[5] था। मैंने ख़ाने भी खाये, मेवे भी खाये, नाच भी देखा, गाना भी सुना। ख़ुदा तुमको सलामत रखे कि इस नालायक़ दरवेशे गोशानशीं[6] पर इतनी इनायत करते हो। साहब, रियासत व अमारत[7] में झगड़े बहुत रहते हैं। बसबबे फ़र्ते मुहब्बत[8] अख़बार में तुम्हारी अफ़्ज़ाइशे उम्र

---

१. सैयद गुलाम बाबाख़ाँ की जीत उनके शाश्वत सौभाग्य का चिह्न है। इसी लिए ग़ालिब ने कहा कि यह वर्ष 'ज़फ़र नाम ए अवद' के नाम से स्मरण किया जाये। २. आपकी प्रतिष्ठा और महत्ता के बाग की बहार स्थायी रहे। ३. आत्मीय जनों पर कृपा करने वाले। ४. मित्रता का पत्र। ५. सहभोज का थाल। ६. एकान्तसेवी संन्यासी। ७. दबदबा। ८. प्रेम का आधिक्य।

व जाह[1] देखकर खुश हुआ और तुमको तहनियत[2] दी। 'ज़फ़र नाम ए अबद' बहुत मुबारक लफ़्ज़ है। इंशा अल्लाहुल अलीउल अज़ीम[3] हमेशा मुज़फ़्फ़र[4] व मन्सूर[5] रहोगे।

कारत बजहाँ जुम्ला चुनाँ बाद के खाही[6]

सेशम्बा, ३ अप्रैल १८६७ ई०।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

१०

(६ अप्रैल, १८६८ ई०)

जनाब सैयद साहब क़िब्ला,

बाद बन्दगी अर्ज़ करता हूँ कि इनायतनामा आपका पहुँचा। आप जो फ़रमाते हैं कि तू अपनी खैरियत कभी-कभी लिखाकर, आगे इतनी ताक़त बाक़ी थी कि लेटे-लेटे कुछ लिखता था, अब वो ताक़त भी ज़ायल[7] हो गई। हाथ में राशा[8] पैदा हो गया, बीनाई[9] जईफ़[10] हो गई। मुतसद्दी नौकर रखने का मक़दूर[11] नहीं। अज़ीज़ों और दोस्तों में से कोई साहिब वक़्त पर आ गये तो मैं मतलब कहता गया, वो लिखते गये। ये हुस्ने इत्तिफ़ाक़[12] है कि कल आपका खत आया, आज ही एक दोस्त मेरा आ गया कि ये सतरें लिखवा दीं और ये आप कभी न फ़रमायें कि मुंशी मियाँ दादखाँ से मुझे क़तै मुहब्बत[13] हो गया है। मुंशी साहब की मुहब्बत और उनके तवस्सुत से आपकी मुहब्बत दिल व

१. प्रतिष्ठा की वृद्धि। २. बधाई। ३. महान् ईश्वर ने चाहा तो। ४. विजयी। ५. विजेता। ६. संसार में तुम्हारे काम ईश्वर तुम्हारी इच्छानुसार पूरा करे। ७. नष्ट। ८. कम्पन। ९. दृष्टि। १०. निर्बल। ११. सामर्थ्य। १२. संयोग। १३. स्नेह-भंग।

जाँ में इस कदर समा गई है, जैसा अहले इस्लाम[1] में मलेका[2] ईमान का। पस ऐसी मुहब्बत का मौक़ूफ़ होना कभी मुमकिन नहीं। अमराज़े जिस्मानी[3] का बयान और इख़लासे हमदिगर[4] की शरह[5] के बाद हुजूमे ग़महाए निहानी[6] का ज़िक्र क्या करूँ? जैसा अब्रे स्याह छा जाता है, या टिड्डीदल आता है। पस अल्लाह ही अल्लाह है। सैफ़ुलहक़ मुंशी मियाँ दादख़ाँ को सलाम कहिएगा और ये ख़त पढ़ा दीजिएगा।

रोज़ चहारशम्बा, ६ अप्रैल १८६८ ई०।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

---

१. मुसलमानों में। २. स्थान। ३. शारीरिक रोग। ४. पारस्परिक प्रेम। ५. व्याख्या। ६. गुप्त दुःख-समुदाय।

नवाब इब्राहीमअलीख़ाँ के नाम

१

(२१ जुलाई, १८६६ ई०)

पीर व मुर्शिद जनाब सैयद इब्राहीमअलीख़ाँ को वन्दगी। ग़ज़ल पहुँचती है। ख़त अज़ रू ए एहतियात बैरंग भेजा है। क़िब्ला, आपके भाई मीर आलम अलीख़ाँ साहब मुझ पर क्यों ख़फ़ा हैं के अपनी ग़ज़ल नहीं भेजते? ये अम्र उनके ख़ातिरे निशान हो जाये कि ग़ालिब आपके दादा का ग़ुलाम और ख़िदमत बजा लाने को आमादा है।

नहुम रबीउस्मानी १२८३ हि०।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

२

(२० अक्तूबर, १८६६ ई०)

वली नेमम को ग़ालिब की वन्दगी,

बसबब ज़ोफ़े पीरी[1] के ख़िदमत गुज़ारी में दिरंग[2] वाक़ै हो जाये तो माफ़ रहूँ, क़ासिर[3] कभी न रहूँगा। इंशाअल्लाह उल अज़ीम। दो ग़ज़लों में से एक ग़ज़ल बादे इस्लाह पहुँचती है, दूसरी ग़ज़ल हफ़्त ए आइन्दा में पहुँच

---

१. बुढ़ापे की निर्बलता। २. विलम्ब। ३. त्रुटि करने वाला।

जाएगी। ज़ोफ़े आज़ा[1] और दवामे मर्ज़[2] से अलावा इख़्तिलाले हवास[3] का क्या हाल लिखूँ। दो तीन दिन हुए कि क़िब्ला व काबा मीरआलम अलीख़ाँ का ख़त आया। वो लिखते हैं कि 'आज़ुर्दा' तख़ल्लुस की दो ग़ज़लें इस्लाही पहुँचीं। देखिये इस सह्व[4] को कि किसकी ग़ज़लें किसको पहुँचीं। मज़ा इसमें है कि अब ये भी याद नहीं आता कि आज़ुर्दा का नाम क्या है और वो कौन है और कहाँ का है? शायद इस बन्द ए ख़ुदा ने हज़रत की ग़ज़लें भेजी होंगी। ख़ुदा करे वो बुज़ुर्गवार मीर साहब की ग़ज़लें मीर साहब की तरह मेरे पास भेज दे, तो मीर साहब की ख़िदमत में भेज दूँ। अगर ऐसा न हुआ तो उन ग़ज़लों को, जो अब आई हैं, देखूँगा। ये इनहतात[5] बरस की उम्र की ख़ूबी है। आप मीर साहब क़िब्ला को ख़त पढ़वा दीजिएगा।

लुत्फ़ व करम का तालिब

—ग़ालिब

३

(५ दिसम्बर, १८६६ ई०)

सैयद साहिब क़िब्ला नवाब मीर इब्राहीमअलीख़ाँ बहादुर को ग़ालिब अली शाह का सलाम। वो ग़ज़ल जिसका मत्ला ये है 'वस शौक़ ग़ज़ल में है' गुम हो गई फिर लिखकर भेजिये और क़ुसूर माफ़ कीजिये। ये ग़ज़ल जो उस ग़ज़ल के बाद भेजी है, फ़िलहाल बाद इस्लाह के पहुँचती है। मीर साहब क़िब्ला सैयद आलमअलीख़ाँ बहादुर की दो ग़ज़लें पहुँचीं। मगर वो ये लिखते हैं कि मैं रज्जब के महीने में वतन को जाऊँगा। और वहाँ से तेरे पास आऊँगा। आज बहिसाबे जन्तरी २७ और अज़रूए रूयत[5] २६ रज्जब

---

१. अंगों की निर्बलता। २. जीर्ण रोग। ३. बुद्धि-विभ्रम। ४. भूल।
५. चन्द्र-दर्शन की दृष्टि से।

की है। ग़ज़लें उनकी मौजूद मगर भेज नहीं सकता। आप मेरी बेगुनाही के गवाह रहें। क़िब्ला, ज़ोफ़ ने मुज़महिल[1] कर दिया है, हवास बजा नहीं। इस महीने याने रज्जब की आठवीं तारीख से तेहत्तरवाँ बरस शुरू हो गया है। गिज़ा व ऐतबार आरद[2] व बिरंज[3] मफ़क़ूद[4]। सुबह को पान-सात बदाम का शीरा, बारह बजे आबे गोश्त[5], शाम को चार कबाब तले हुए, बस आगे खुदा का नाम।

हाँ हज़रत, जनाब हकीम अहमद हसन साहब की तहरीर से कुछ हाल नासाज़ी का इख्वाँ व अहबाब[6] से हाल मालूम हुआ और वो इल्म बाअसे तवज्जोए ज़मीर[7] है। मुतवक़्क़े[8] हूँ कि इस फ़िसाद के रफ़ा होने से और अपनी तमानियते[9] ख़ातिर से फ़क़ीर को आगही बख्शिये और इस ख़त का जवाब मय रसीदे ग़ज़ल जल्द इर्साल फ़रमाइएगा।

पंजुम दिसम्बर १८६६ ई०, रज्जब की तारीख ऊपर लिख आया हूँ।

—असद बेदस्तगाह

४

(१७ अगस्त, १८६८ ई०)

बख़िदमत क़िब्ला सैयद अहमद हसन साहिब मौदूदी तस्लीम बजनाब मीर इब्राहीमअलीखाँ बहादुर कोर्निश मक़बूल बाद[10] तस्वीरे मिह्ले तन्वीर[11] मुझे पहुँची और मैंने रसीद लिख भेजी। अजब है कि आपको उसके पहुँचने में तरद्दुद है। इम्साल[12] फ़क़ीर ने जो अपनी खाकसारी का खाका याने तस्वीर

१. निर्बल। २. आटा। ३. चावल। ४. लुप्त। ५. शोरबा। ६. भाई-बन्धु। ७. अन्तःकरण की प्रेरणा का कारण। ८. आशान्वित। ९. सन्तोष। १०. स्वीकृति के पश्चात्। ११. सूर्य के समान प्रकाशमान्। १२. इस वर्ष।

मुंशी मियाँ दादखाँ की मारिफ़त नज़्र की है, यक़ीन है वो भी पहुँची होंगी। दोनों ग़ज़लें बाद इस्लाह के भेजता हूँ। अपनी ग़ज़ल आप रहने दें और मीर साहब की ग़ज़ल उनके हवाले कर दें।

जुमा, १७ अगस्त १८६८ ई०।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

५

जनाब तक़द्दुस इन्तिसाब[1] सैयद साहब क़िब्ला वाला मुनाक़िब[2] [illegible] सैयद इब्राहीमअलीखाँ बहादुर मद्दज़िल्लहुलआली[3]। बाद बन्दगी मारूज़[4] है, हज़रत सैयद अहमदहसनखाँ साहब मद्दज़िल्लहुलआली की तहरीर से मालूम हुआ कि आपके घर मौलूदे मसऊद[5] पैदा हुआ। एक [illegible] मुरत्तब करके 'अकमल अल अख़बार' में मैंने छपवा दी है और एक रुबाई और क़ता अपना और एक क़ता सैयद साहब ममदूह[6] का जो उन्होंने यहाँ भेजा था वो भी छपवा दिया और तीन क़ते तारीख़ी बिहारीलाल मुन्तज़िम[7] और मीर फ़ख़रुद्दीन मुहतमिम[8] मतबे[9] ने जो यहाँ तारीख़ें लिखी थीं छपवा दीं, चुनांचे अपनी लिखी हुई रुबाई और क़ता अर्ज़ करता हूँ—

रुबाई—

हक़ दाद ब सैयद ज़े पए इनआमश
फ़र्ज़न्द पिसरे के बाजियस्त इकरामश

१. पवित्र। २. प्रशंसित ३. ईश्वर तेरी छाया का विस्तार करे, तुम्हारी छाया बनी रहे। ४. प्रार्थना। ५. सौभाग्यशाली शिशु। ६. [illegible]। ७. प्रबन्धक। ८. व्यवस्थापक। ९. मुद्रणालय।

हकीम सैयद अहमदहसन मौदूदी के नाम

१

(१८ जून, १८६१ ई०)

हज़रत क़िब्ला,

पहले इल्तिमास[1] ये है कि आप सही उल नसब[2] सैयदे तमाम उम्मते[3] मरहूम[4] मुहम्मद अलहेस्सलाम के क़िब्ला व काबा[5], जब आप मुझको क़िब्ला व काबा लिखें तो फिर मैं आपको क्या लिखूं ? खुदा के वास्ते ग़ौर कीजिये कि 'क़िब्लए क़िब्ला' और 'काबए काबा' ये क्या तरकीब है ? चूंकि आपने मुझे उस्ताद गर्दाना है, इस इल्तिमास को भी अज़ क़िस्मे इस्लाह[6] तसव्वुर कीजिये। ज़िन्हार[7] क़िब्लए क़िब्ला कभी न लिखिये, ये सूए अदब[8] है, वनिस्बत क़िब्ला। अयाज़न बिल्लाह[9] ।

आपका उतूफ़तनामा पहुंचा। मेरे पहले ख़त का बदेर[10] पहुँचना और उसकी देर रसी[11] का सबब मुझको मालूम हुआ। अब इसका जवाब लखूंगा। ये अब आपको मालूम रहे कि आपके किसी ख़त का जवाब मेरे ज़िम्मे बाक़ी नहीं है। दो या तीन ख़त का जवाब नहीं पहुँचा। उसको मैं समझिये कि वो ख़त राह में तल्फ़[12] हुए और मेरे पास नहीं पहुँचे।

---

१. प्रार्थना। २. शुद्धवंश। ३. सम्प्रदाय। ४. स्वर्गीय। ५. पूज्य। ६. संशोधन का प्रकार। ७. कदापि। ८. साहित्यिक त्रुटि। ९. ईश्वर से शरण चाहता हूँ। १०. विलम्ब से। ११. देर से पहुँचना। १२. नष्ट।

बहारे गुलिस्तां अहमद हसन[1]

ये सजा[2] क्या बुरा है।

दिले हैदर व जान अहमद हसन[3]

ये इससे भी बेहतर है। इन दोनों में से एक 'सजा' मुहर पर खुदवा लीजिये। ग़ज़ल बाद इस्लाह के पहुँचती है।

१९ ज़िलहज्जा १२७७ हि०, १८ जून १८६१ ई०।

—ग़ालिब

२

(१६ जनवरी, १८६२ ई०)

हज़रत पीर व मुर्शिद,

ग़ज़ल बाद इस्लाह के पहुँचती है। ग़ज़ल सह्व[4] से लिख गया हूं। दोनों ग़ज़लें पहुँचती हैं। जनाब मौलवी अन्सारअली साहब से मुझको तारुफ़े इस्मी[5] है। उनको मेरा सलाम कहिये और कहिये कि हज़रत जनाब मौलवी सद्रुद्दीन साहब बहुत दिन हवालात में रहे, कोर्ट में मुक़दमा पेश हुआ, रूबकारियाँ[6] हुईं। आख़िर साहिबाने कोर्ट ने जान बख़्शी का हुक्म दिया। नौकरी मौक़ूफ़, जायदाद ज़ब्त। नाचार ख़स्ता व तबाह लाहौर गये। फ़ाइनान्शल कमिश्नर और लफ़्टंट गवर्नर ने अज़राहे तरह्हुम[7] निस्फ़[8] जायदाद वागुज़ाश्त[9] की। अब निस्फ़ जायदाद पर क़ाबिज़ हैं। अपनी हवेली में रहते हैं। किराये पर माश[10]

१. उद्यान की वसन्त—अहमद हसन। २. ऐसा गद्य जिसके वाक्यों में अन्त्यानुप्रास हो। ३. हज़रतअली के प्राण और हृदय—अहमद हसन। ४. भूल, त्रुटि। ५. नाममात्र का परिचय। ६. सरकारी कार्रवाई। ७. दया के लिये। ८. आधा। ९. छुटकारा। १०. वृत्ति।

का मदार है। अगरचे ये इमदाद उनके गुज़ारे को काफ़ी है, किस वास्ते कि एक आप और एक बीवी, तीस-चालीस रुपये महीने की आमद। लेकिन चूंकि इमामबख्श की औलाद उनकी इत्रत[1] है और वो दस-बारह आदमी हैं, लिहाज़ा फ़राग़बाल[2] से नहीं गुज़रती। ज़ोफ़े पीरी ने बहुत घेर लिया है। अश्रहे सामिना[3] के अवाखिर[4] में हैं। खुदा सलामत रखे ग़नीमत हैं।

यकशम्बा १९ जनवरी १८६२ ई०।

—ग़ालिब

३

(१ सितम्बर, १८६३ ई०)

सैयद साहब क़िब्ला,

इनायतनामा मय क़सीदा पहुँचा। पसोपेश एक राफ़तनामा[5] पीर व मुर्शिद सैयद इब्राहीमअलीखाँ साहब बहादुर और एक अतूफ़तनामा क़िब्ला व काबा सैयद आलमअलीखाँ बहादुर का पहुँचा। मैं अली का ग़ुलाम और औलादेअली का खानाज़ाद[6] लेकिन बूढ़ा और नातवाँ और मसलूबुल हवास[7] और बेसर व सामान[8] खिदमत बजा लाने में उज्र करूँ तो गुनहगार। दिरंग व तवक़्क़ुफ़[9] का मुज़ायक़ा नहीं। लायकुल्लफ़ुल्लाहो नफ़्सन इल्लाह व साहा।[10]

खुदावन्दे नेमत क्या तुम दिल्ली को आबाद और क़िले को मामूर[11] और सल्तनत को बदस्तूर समझे हुए हो, जो हज़रत शेख का कलाम और साहिबज़ादा

---

१. स्वजन, सन्तान। २. सन्तोष। ३. अश्रह—महीने का दसवाँ दिन, समिना—आठवाँ दिन, अश्रह—मुहर्रम की दसवीं तिथि। ४. अन्त। ५. कृपा-पत्र। ६. गृहोत्पन्न। ७. जिसकी ज्ञानेन्द्रिय काम न करती हों। ८. असहाय। ९. विलम्ब। १०. ईश्वर सामर्थ्य के अनुसार किसी काम के करने का आदेश देता है। कष्ट सामर्थ्य के अनुसार देता है। ११. अस्तित्ववान्।

शाह क़ुत्बुद्दीन इब्ने[1] मौलाना फ़ख़्रुद्दीन अलै उर्रहमा का हाल पूछते हो?
ईं दफ़्तर रा गाव ख़ुर्द व गाव रा क़साव बुर्द क़साव दर राहे मुर्द।[2]

बादशाह के दम तक ये बातें थीं। ख़ुद मियाँ काले साहब मग़फ़ूर[3] का घर इस तरह तबाह हुआ कि जैसे झाड़ू फेर दी। काग़ज़ का पुर्ज़ा, सोने का तार, पश्मीने का बाल बाक़ी न रहा। शेख कलीमुल्ला जहाँनाबादी रहमतुल्ला अलै का मक़बरा उजड़ गया। एक अच्छे गाँव की आबादी थी। उनकी औलाद के लोग तमाम इस मौज़े[4] में सुकूनत[5] पिज़ीर थे। अब एक जंगल है और मैदान में क़ब्र, इसके सिवा कुछ नहीं। वहाँ के रहने वाले अगर गोली से बचे होंगे तो ख़ुदा ही जानता होगा कि कहाँ हैं। उनके पास शेख का कलाम भी था, कुछ तबर्रुकात[6] भी थे। अब जब वो लोग ही नहीं तो किससे पूछूँ? क्या करूँ? कहीं से मुद्दआ हासिल न हो सकेगा।

सैयद साहब क़िब्ला क्यों तकलीफ़ करते हैं? अगर यही मर्ज़ी है तो इत्तिहाफ़ व एहदा[7] तकल्लुफ़े महज़[8] है। फ़क़ीरे बे सवाल हूँ, अगर कुछ भेज देंगे रद्द न करूँगा। कम व बेश[9] पर नज़र न करें, जितने का चाहें नोट ख़त में लपेटकर भेज दें। वस्सलाम।

रोज़े शम्बा यकुम सितम्बर १८६२ ई०।

—अज़ असदुल्लाह

४

(२४ जुलाई, १८६५ ई०)

पीर व मुर्शिद,

तीन बरस अवारिज़े एहतिराक़े ख़ून[10] में ऐसा मुब्तला रहा हूँ कि अपने

१. पुत्र। २. इस दफ़्तर (=खेत) को गाय खा गई। गाय को कसाई ले गया और कसाई रास्ते में मर गया। ३. स्वर्गीय। ४. गाँव। ५. निवास। ६. पूर्वजों से सम्बन्धित पवित्र शुभ वस्तुएँ। ७. भेंट। ८. मात्र शिष्टाचार। ९. अधिक। १०. रक्त की ऊष्णता से उत्पन्न होने वाली बीमारियाँ।

जिस्म व जान की भी खबर नहीं रही। आपके खुतूत आये होंगे। कोई उनवान् ना कुशूदा[1] पड़ा रहा होगा। अलबत्ता हाजी मुस्तफ़ाखाँ का आना मुझको याद है। यक़ीन करता हूँ कि उन्होंने अज रूए मुशाहिदा[2] मेरी खस्तगीतन[3] का हाल हज़रत को लिखा होगा। अब मैं अपनी ज़बान से ये क्योंकर कहूँ कि अच्छा हूँ, मगर बीमार और अवारिज़[4] में गिरफ़्तार नहीं हूँ। बूढ़ा, बहरा, अपाहिज बदहवास, नातवाँ, फ़लकज़दा[5] आदमी हूँ। अहद[6] करता हूँ कि जब आपका खत आएगा उसका जवाब लिखूँगा। जब ग़ज़ल आएगी उसको देखकर फिर भेजूँगा। मगर हज़रत के मस्कन[7] का पता भूल गया। ये खत तो मुस्तफ़ाखाँ सौदागर को भेजे देता हूँ, वो आप को भिजवा देंगे। आइन्दा जो इनायतनामा डाक में आये उसमें मस्कन व मुक़ाम व शहर का नाम लिखा जाये।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

(१७ जनवरी, १८६६ ई०)

हज़रत पीर व मुर्शिद,

इन दिनों में अगर फ़क़ीर के अरायज़[8] न पहुँचे हों या इर्शाद के अदा न हुए हों तो मूजिबे मलाले[9] खातिरे अक्दस[10] न हो—

---

१. अविकसित। २. निरीक्षण के अनुसार। ३. दरिद्रता। ४. रोग (ब.व.)। ५. अभागा। ६. प्रतिज्ञा। ७. घर। ८. आवेदन-पत्र। ९. दुःख का कारण। १०. पवित्र, बुजुर्ग।

हकीम सैयद अहमदहसन मौदूदी के नाम

इत्तिफ़ाक़े सफ़र उफ़्ताद ब पीरीं 'ग़ालिब'
उंचे अज़ पाए नयामद ज़ असामी आयद[1]

रामपूर की सरकार का फ़क़ीर तकिएदार रोजीनाख़ार[2] हूँ। रईसे हाल[3] ने मसनद नशीनीं का जश्न किया। दुआगो ए दौलत को दरे दौलत पर जाना वाजिब हुआ। हफ़्तुम् अक्तूबर को दिल्ली से रामपूर को रवाना हुआ। बाद क़तै मनाज़िले सित्ता[4] वहाँ पहुँचा। बाद इख़्तितामे बज़्म[5] आज़मे वतन[6] हुआ। हश्तुम्[7] जनवरी को दिल्ली पहुँचा। अर्ज़े राह[8] में बीमार हुआ। पाँच दिन मुरादाबाद में साहिबे फ़राश[9] रहा। अब, जैसा फ़र्सूदारवाँ[10] व नातवाँ था वैसा हूँ। जवाब ख़ुतूते मुज्तमा[11] लिख सकता हूँ ?

नवाब मीर ज़ाफ़रख़ाँ मब्रूर[12] मग़फ़ूर का ख़ानदान सुभानअल्लाह्—

ईं सिलसिला अज़ तिलाए नाबस्त
ईं ख़ाना तमाम आफ़ताबबस्त[13]

नवाब मीर ग़ुलाम बाबाख़ाँ मेरे दोस्त और मुहसिन[14] हैं। राह व रस्म, नामा व पयाम[15] मुद्दत से बाहमदिगर जारी है। आप का हुक्म बेतकल्लुफ़ मानूँगा। जनाब मीर इब्राहीमअलीख़ाँ साहिब और हज़रत मीर आलमअलीख़ाँ

१. हे ग़ालिब वृद्धावस्था में यात्रा का संयोग हुआ। जो पाँव से नहीं हो सका, वह लाठी से होता है। २. वृत्तिभोजी। ३. वर्त्तमान शासक। ४. पड़ाव पार करके। ५. समारोह समाप्त होने पर। ६. स्वदेश पहुँचना। ७. आठवीं। ८. रास्ते में। ९. शय्याशायी। १०. जीर्ण। ११. एकत्रित पत्रों का उत्तर। १२. पापमुक्त, जिस पर ईश्वर की दया हो। १३. यह (वंश) परम्परा शुद्ध सोने से निर्मित है। यह पूरा परिवार सूर्य है। १४. उपकारी। १५. पत्र-व्यवहार।

साहिब की खिदमतगुज़ारी को अपना फ़ख्र व शर्फ़[1] जानूँगा। इस वक़्त बक्स खोला है। खुतूते अतराफ़ व जवानिब[2] देख रहा हूँ। पहले हज़रत के खत का जवाब बतौरे इख्तिसार[3] लिखा है। अब जब इसका जवाब आएगा तब फ़क़ीर हुक्म बजा लाएगा।

चारशम्बा १७ जनवरी १८६६ ई०।

—असदुल्लाह्

६

(८ अप्रैल, १८६६ ई०)

पीर व मुर्शिद,

आपको मेरे हाल की भी खबर है? ज़ोफ़ निहायत[4] को पहुँच गया। राशा[5] पैदा हो गया। बीनाई[6] में बड़ा फ़ितूर पड़ा। हवास मुख्तल[7] हो गये। जहाँ तक हो सका अहबाब की खिदमत बजा लाया। औराक़े अशार[8] लेटे-लेटे देखता था और इस्लाह देता था। अब न आँख से अच्छी तरह सूझे न हात से अच्छी तरह लिखा जाये। कहते हैं कि शाह शर्फ़ बू अली क़लन्दर को बसबबे किबरे सिन[9] के खुदाताला ने फ़र्ज़ और पयम्बर[10] ने सुन्नत[11] माफ़ कर दी थी। मैं मुतवक़्क़े[12] हूँ कि मेरे दोस्त खिदमते इस्लाहे अशार[13] मुझ पर माफ़ करें। खुतूते शौक़िया का जवाब जिस सूरत से हो सकेगा लिख दिया करूँगा। ज्यादा हद्दे अदब।

राकिम

—असदुल्लाह् ख़ाँ 'ग़ालिब'

---

१. गौरव। २. आसपास। ३. संक्षेप में। ४. सीमा। ५. कम्पन। ६. दृष्टि। ७. नष्ट-भ्रष्ट। ८. कविता के पृष्ठ। ९. बुढ़ापे के कारण। १०. हजरत मुहम्मद। ११. धार्मिक कृत्य। १२. आशान्वित। १३. कविता के संशोधन की सेवा।

७

(२ जून, १८६६ ई०)

पीर व मुर्शिद,

यकुम मुहर्रम का खत कल १८ मुहर्रम को पहुँचा, आज १९ को जवाब लिखता हूं। आप पर और मीर इब्राहीमअलीखाँ पर मेरी जान निसार है। मजा मा मज़ा[1]। अब एक-एक ग़ज़ल आप तीनों साहिब भेज दिया कीजिये। इसी तरह मैं फ़र्दन-फ़र्दन[2] बादे इस्लाह भेज दिया करूँगा। मगर मेरे क़िब्ला व काबा वास्ते खुदा के शजरहे मंजूमा[3] इर्साल न फ़रमाइएगा। उसकी इस्लाह मेरी हदे वसा[4] ए बाहर है। मेरा शेवा नहीं है, खत बैरंग भेजना। ये खत अम्दन[5] बैरंग भेजता हूँ। कहते हैं कि पेड[6] के तलफ़ होने का एहतिमाल[7] है और बैरंग का नहीं।

शम्बा दोअम १८६६ ई०।

८

(२५ सितम्बर, १८६६)

क़िब्ला,

डाक के हरकारे ने कल दो खत एक बार पहुँचाये, एक आपका खत मय ग़ज़ल और एक नवाब मीर इब्राहीमअलीखाँ का खत मय ग़ज़ल, आज तीन बातें

१. बीत गया सो बीत गया, हुआ सो हुआ। २. पृथक्-पृथक् व्यक्तिगत। ३. कविताबद्ध वंश-वृक्ष। ४. सीमा से बाहर। ५. जान-बूझकर। ६. जिसका पैसा दे दिया गया (अंग्रे०)। ७. सन्देह।

ज़रूरी लिखनी थीं। इस वास्ते ये ख़त आज रवाना करता हूँ। एक बात ये कि ग़ज़ल का काग़ज़ वापिस भेजता हूँ, न इसको फाड़ सकूँ, न पानी में धो सकूँ, शहीदी की ग़ज़ल इन क़ाफ़ियों[1] में ब तग़य्युरे रदीफ़[2] ऐसी है के अब इन क़ाफ़ियों का बाँधना हरगिज़ न चाहिए। आप और ग़ज़ल लिखिये। इसको हरगिज़ दीवान[3] में न रखिये।

ये भी इस ज़िम्न में लिखना मुनासिब है कि मीर इब्राहीमअलीख़ाँ साहब ने अपनी इस्लाही ग़ज़ल की रसीद कल ख़त में लिख भेजी। आज अपने ख़त में किस राह से लिखते हैं कि वो ग़ज़ल इस्लाही माँगते हैं? इसी फ़स्ल में ये भी इत्तिला देता हूँ कि आपकी ये ग़ज़ल 'सुलाकर सोये' और 'न्हिला कर सोये' और तारीख़ हाए विना ए मस्जिद देख कर और इस्लाह देकर आज आप सैयद साहब का हाल मुफ़स्सल लिखिये। ऐसा के लाख का मुल्क बड़ौदा की सरकार से हमारे मुहसिन[4] को मिला है कि उनसे दो लाख रुपये नज़राना माँगा जाता है। आगे इस राज में हुस्सामुद्दीन हुसैनख़ाँ बड़े मौज़्ज़िज़[5] और मुकर्रम[6] मुतवस्सिल[7] थे और सेर हासिल[8] जागीरें रखते थे, सैयद इब्राहीमअलीख़ाँ साहिब इसी ख़ानदान में से हैं? और हाँ, ये भी लिखिये कि मीर आलमअलीख़ाँ को उनसे और आपको इन दोनों साहिबों से क्या क़राबत[9] है? तीसरी बात ये है कि जब नोट भेजिये तो अहले कलकत्ता की तरह आधा-आधा दो बार करके न भेजिएगा। मेरे नाम का लिफ़ाफ़ा जिस शहर से चले, उसी शहर के डाकघर में रह जाये तो रह जाये, वर्ना दिल्ली के डाकख़ाना में पहुँच कर क्या इमकान है के तलफ़ हो।

—असदुल्लाह

---

१. अन्त्यानुप्रास। २. रदीफ़ (अन्त्यानुप्रास के पश्चात् आने वाला शब्द ग़ज़ल में) के परिवर्तन के साथ। ३. ग़ज़ल-संग्रह। ४. उपकारी। ५. प्रतिष्ठित। ६. पूज्य। ७. आश्रित। ८. पर्याप्त आय वाली। ९. सम्बन्ध।

६

(१८ अक्तूबर, १८६६ ई०)

हज़रत,

ये आप के जद्दे अमजद[1] का ग़ुलाम तो मर लिया। कसरते अहकाम[2] तवातुरे[3] वुरूदे अशार[4], फिर ये हंजार[5] कि सौ रुपये के नोट की रसीद सौ बार माँगते हो। मीर इब्राहीमअलीखाँ साहिब की ग़ज़ल, जिसका एक शेर ये है—

> अली अली जो कहा ता सहर[6] तो यों समझे
> के ज़ुल्फ़क़ार[7] से कटती है अब हमारी रात

बादे इस्लाह भेज चुका हूँ और आप उसका तक़ाज़ा किये जाते हैं। ग़ज़लें आपकी बरसती हैं, कहाँ तक देखूं। आपकी ग़ज़लों के साथ और ग़जलें भी गुम हो जाती हैं। बहत्तर बरस का आदमी, फिर रंजूरे दायमी[8], ग़िज़ा यकक़लम मफ़क़ूद[9]। आठ पहर में एक बार आबे गोश्त पी लेता हूँ, न रोटी न बोटी, न पुलाव न ख़ुश्का। आँख की बीनाई में फ़र्क़, हाथ की गीराई[10] में फ़र्क़, राशा मस्तूली[11], हाफ़िज़ा मादूम[12]। जहाँ जो काग़ज़ रहा वहीं रहा।

मीर आलम अलीखाँ साहब की दो ग़ज़लें आई हुई कहीं रख के भूल गया हूँ, ख़ुलासा ये के नोट अतीयए[13] सैयद साहिब का आपके ख़त में पहुँचा। रुपया वसूल हुआ, मआन खर्च हुआ। उनकी एक ग़ज़ल 'सारी रात' 'हमारी रात' जिसका एक शेर ऊपर लिख आया हूँ बादे इस्लाह भेज चुका हूँ और कोई

१. दादा-परदादा। २. आदेशा का अधिकता। ३. निरन्तर। ४. कविता का आना। ५. ढंग। ६. प्रातःकाल तक। ७. हजरत अली की तलवार। ८. स्थायी रूप से दुःखी। ९. त्यक्त, लुप्त। १०. पकड़। ११. कम्पन प्रबल। १२. स्मरण शक्ति अशेष। १३. दातव्य रुपया।

ग़ज़ल उनकी अब मेरे पास नहीं और जनाब मीर आलम अलीखाँ की दो ग़ज़लें याद हैं कि आई हैं, अगर मिल जाएँगी तो बादे इस्लाह भेजूंगा। आपकी ग़ज़लें शुमार से बाहर हैं। बक्स में देखूंगा, किताबों में ढूंढूंगा। मुद्दआ ये के आप और दोनों सैयद साहिब इसका इल्तिज़ाम[1] करें कि एक ग़ज़ल अपने खत में भेजें। जब वो ग़ज़ल और उस खत का जवाब पहुँच जाये तब दूसरी ग़ज़ल खत में मलफ़ूफ़ होकर भेजी जाये, और खत हर साहिब का जुदा हो। आप ये मेरा खत ग़ौर से पढ़ लें और दोनों सैयद साहबों को पढ़वा दें। अज़रू ए एहतियात बैरंग भेजता हूँ।

—असद एकरंग

१०

(२ जुलाई, १८६७ ई०)

सैयद साहब व क़िब्ला हकीम सैयद अहमद हसन साहब को ग़ालिबे नीमजान[2] का सलाम पहुँचे। वो जो आपने सुना है कि अब ग़ालिब को मर्ज़ से इफ़ाक़त[3] है, सो महज़ ग़लत है। आगे नातवाँ था, अब नीमजाँ हूँ। खत नहीं लिख सकता। एक लड़के से ये चन्द सतरें लिखवा दी हैं। जो मैं कहता गया हूँ वो ग़रीब लिखता गया है। आप सैयद हैं और बुज़ुर्ग हैं, मेरे हक़ में दुआ करें कि अब तिहत्तर बरस से आगे न बढ़ूँ और अगर कुछ ज़िन्दगी और है तो हक़ ताला थोड़ी सी सेहत और ताक़त इनायत करे ताकि दोस्तों की खिदमत बजा लाता रहूँ।

—ग़ालिब

---

१. किसी कार्य को अपने ऊपर अनिवार्य कर लेना। २. अर्ध-मृत। ३. स्वास्थ्य।

११

(१७ जुलाई, १८६८ ई०)

जनाब सैयद साहिब व क़िब्ला सैयद अहमदहसन साहिब को ग़ालिब नीमजाँ की बन्दगी क़ुबूल हो और ये अर्ज़ भी क़ुबूल हो कि जनाब मुअल्ला अल्क़ाब[1] नवाब इब्राहीमअलीखाँ वहादुर की खिदमत में मेरी बन्दगी अर्ज़ करें। बारे, बसूरते तस्वीर दोनों साहबों की ख़िदमत में मेरा सलाम पहुँचना मालूम हुआ। अगरचे इस सूरत में चलना-फिरना खिदमत बजा लाना नहीं हो सकती, मगर खैर हज़रत के पेशे नज़र[2] हाज़िर रहूँगा, इनायत की नज़र रहे मेरे हाल पर। ये जो आपने लिखा है कि नवाब साहिब क़िब्ला के हाँ इस महीने में लड़का पैदा होने वाला है, मुझको तारीख़ तवल्लुद[3] का ख़याल रहेगा। जब आपकी तहरीर से नवीदे तवल्लुद[4] मालूम कर लूँगा, तब क़ता या रुबाई जो कुछ हो गई होगी, वो भेज दूँगा और ये जो आपने अपनी और नवाब साहिब की ग़ज़लों की इस्लाह के वास्ते लिखा है, मुझे इस हुक्म की तामील बदिल मंज़ूर है। जिस महीने तक मैं ज़िन्दा हूँ, उस महीने तक ख़िदमत बजा लाऊँगा।

१. श्रेष्ठ व्यक्ति। २. सामने। ३. जन्मतिथि। ४. जन्म का शुभ समाचार।

तफ़ज़्ज़ुल हुसेनख़ाँ के नाम

क्यों साहब,

ये चचा-भतीजा होना और शागिर्दी व उस्तादी सब पर पानी फिर गया ? अगर कोई हज़ार-पान सौ की चीज़ होती और मैं तुम से माँगता तो ख़ुदा जाने तुम क्या ग़ज़ब ढाते। मेरा कलाम, ख़रीद आठ-दस रुपये की सो वो भी मैं नहीं कहता के मुझको दे डालो। तुमको मुबारक रहे। मुझको मुस्तार[1] दो। मैं उसको देख लूँ, फिर तुमको वापिस भेज दूँ। इस तरह की तलब पर न देना, दलील इसकी है कि मुझको झूटा जानते हो। मेरा ऐतबार नहीं या ये कि मुझको आज़ार[2] देना और सताना बदिल मतलूब[3] है। वो किताब अभी मेरे आदमी को दे दो। बिल्लाह, वल्लाह, उसमें से जो मेरे पास नहीं है, नक़ल करके तुमको भेज दूँगा, अगर तुमको वापिस न दूँ तो मुझ पर लानत और तुम मेरी क़सम को न मानो और किताब हामिले रुक़्क़े[4] को न दो तो तुमको आफ़रीं।

—ग़ालिब

---

१. उधार। २. कष्ट। ३. अभीष्ट। ४. पत्र वाहक।

मियाँ दादख़ाँ 'सय्याह' के नाम

१

(११ जून, १८६० ई०)

बरखुर्दारे कामगार[1], सआदते निशान[2] मुंशी मियाँ दादख़ाँ 'सय्याह' ताल उम्रहू[3], दरवेशे गोशानशीं ग़ालिबे हज़ीं[4] दुआए दरवेशाना से कामयाब व बहरामन्द[5] हों। लखनऊ की वीरानी पर दिल जलता है, मग़र तुमको याद रहे कि वहाँ बाद इस फ़िसाद के एक कौन[6] होगा याने राहें बसी हो जाएँगी, बाज़ार अच्छे निकल आएँगे। जो देखेगा वो दाद देगा और दिल्ली के फ़साद के बाद 'कौन'[7] नहीं है। यहाँ फ़साद दर फ़साद चला जाएगा। शहर की सूरत सिवाय उस बाज़ार के जो क़िले के लाहौरी दरवाज़े से शहर के लाहौरी दरवाजे तक है, सरासर बिगड़ गई और बिगड़ती जाती है।

दीवान का छापा कैसा? वो शख़्स ना आशना[8] मौसूम[9] ब अज़ीमुद्दीन जिसने मुझसे दीवान मँगा भेजा, आदमी नहीं, भूत है। पलीद है, ग़ोल[10] है, क़िस्सा मुख़्तसर सख़्त नामाकूल है। मुझको उसके तौर पर इन्तिबा ए दीवान[11] ना मतबू[12] है। अब मैं उससे दीवान माँग रहा हूँ और वो नहीं देता। ख़ुदा करे हाथ आ जाये। तुम भी दुआ माँगो। ज़्यादा क्या लिखूँ?

दोशम्बा ११ जून १८६० ई०।

—ग़ालिब

१. सफल सुपुत्र। २. प्रतापी। ३. ईश्वर दीर्घ जीवी करे। ४. दुःखी। ५. समृद्ध। ६. सृष्टि-निर्माण। ७. चाँदनी चौक और बावड़ी। ८ अपरिचित। ९. नामक। १०. शैतान। ११. ग़ज़ल संग्रह का प्रकाशन। १२. अवांछित।

२

(३० जून, १८६० ई०)

बरखुर्दार,

तुम्हारा ख़त पहुँचा। लखनऊ का क्या कहना! वो हिन्दुस्तान का बग़दाद था। अल्लाह् अल्लाह्। वो सरकार अमीरगर थी। जो बेसरोपा[1] वहाँ पहुँचा, अमीर बन गया। उस बाग़ की ये फ़स्ले ख़िज़ाँ[2]!!!

मैं बहुत ख़ुशी से तुमको इत्तिला देता हूँ कि उर्दू का दीवान ग़ासिबे ना इन्साफ़[3] से हाथ आ गया और मैंने नूरे चश्म[4] मुंशी शिवनारायन को भेज दिया। यक़ीने कुल्ली[5] है के वो छापेंगे। जहाँ तुम होगे, एक नुस्ख़ा तुमको पहुँच जाएगा। तरीक़ ए सआदतमन्दी[6] ये है कि हमको अपनी ख़ैर व आफ़ियत[7] का तालिब[8] जानकर जहाँ जाओ, वहाँ से ख़त लिखते रहो और अपने मस्कन[9] का पता हम पर ज़ाहिर करते रहो। हम तुम से राज़ी हैं और चूँकि तुम्हारी ख़िदमत अच्छी तरह नहीं की शर्मिन्दा भी हैं। मरक़ूमा[10] शम्बा, रोज़े ईद मुताबिक़ ३० जून १८६० ई०।

राक़िम

—असदुल्लाह् ख़ाँ

३

(३१ जुलाई, १८६० ई०)

भाई,

तुम्हारी जान की और अपने ईमान की क़सम के फ़न्ने तारीख़ गोई[11] व

---

१. दरिद्र। २. पतझड़। ३. अन्याय पूर्वक अनधिकार चेष्टा करने वाला। ४. नेत्रज्योति-पुत्र। ५. पूर्ण विश्वास। ६. आज्ञाकारिता। ७. कुशल समाचार। ८. इच्छुक। ९. निवास-स्थान। १०. लिखित। ११. कविता में तिथि वर्णन की कला।

मुक़ाबला[1] से बेगाना ए महज़[2] हूँ। उर्दू ज़बान में कोई तारीख़ मेरी न सुनी होगी। फ़ारसी दीवान में दो-चार तारीख़ें हैं। उनका हाल ये है कि माद्दा[3] औरों का है और अशआर मेरे हैं। तुम समझे कि मैं क्या कहता हूँ? हिसाब से मेरा जी घबराता है और मुझको जोड़ लगाना नहीं आता है। जब कोई माद्दा बनाऊँगा, हिसाब दुरुस्त न पाऊँगा। दो-एक दोस्त ऐसे थे कि अगर हाजत[4] होती तो माद्द ए तारीख़ वो मुझे ढूंढ ला देते, मौजूं मैं करता। और अगर आपने माद्दे की फ़िक्र की है और यही हिसाबे जुमल[5] मंज़ूर रखा है तो ऐसे तामिया[6] और ताख़िरज[7] आ गये हैं के वो तारीख़ हँसी के क़ाबिल हो गई है। कलकत्ता में काज़ी उल क़ुज़्ज़ात[8] सिराजुद्दीन अलीख़ाँ मरहूम की क़ब्र पर मस्जिद बनी है। उनके भतीजे मौलवी विलायत हुसेनख़ाँ ने इस्तिदुआए तारीख़[9] की। मैंने लिखी। चुनांचे वो फ़ारसी दीवान में मौजूद है—

मुफ़्ती ए अद्‌ल अज़पए तारीख़ ई बिना
ईमा ब सू ए मन ज़ रहे एहतिराम कर्द
गुफ़्तम ब वै बदीह 'ख़ुशाख़ान ए ख़ुदा'
शुद ख़श्मगीं दमे के नज़र दर कलाम कर्द
ख़ामा क रफ़्ता पाए अदब दर शिकंजा रेख़्त
ईहाम रा बख़िरजा माने तमाम कर्द[10]

१. प्रतियोगिता। २. पूर्णतया अपरिचित। ३. ३. मूलतत्व, तिथि बताने वाली कविता का वह अंश जिससे संवत् का ज्ञान हो। ४. आवश्यकता। ५. अक्षरों के आधार पर संख्या के वर्णन करने की विधि। ६. तिथि के अंक की कमी को किसी अक्षर अथवा शब्द से बढ़ाना। ७. घटाना। ८. बड़ा काज़ी ९. तिथि युक्त कविता लिखने की प्रार्थना की। १०. इस भवन की नींव रखने की तिथि के लिए मेरी बुद्धि ने परामर्श दिया और बुज़ुर्गी के तौर पर

वास्ते खुदा के ग़ौर करो 'खुशाखानए खुदा' माद्दा, फ़िर इसमें से 'खाशाक' अदद दूर करो, नौ सौ इक्कीस का तख़रजा, फिर भी दो और ज़्यादा रहे। 'पा ए अदव' (याने 'ब') कटा, भला ये कोई तारीख है ? मगर हाँ हिसाब के क़ायदे से बाहर कुछ मानीए सिगाली[1] के तौर पर मेरा ईजाद है और वो लुत्फ़ रखता है । एक शख्स १२४८ हि० में मरा । इसकी तारीख़ मैंने लिखी–

जै साले वाक़ए मिर्जा मसीता बेग
मिल्लते रास्त शुमारे अइम्म ए अमजाद
सहीफ़ा हाए समावी मुवइय्यन अज़ अशरात
हदीक़ा हाए बहिश्ती मुशक़्खस अज़ आहाद[2]

ऐसा बारह याने 'बारह सौ' फिर कुतबे समावी 'चार' दहाके के चार याने चालीस, बहिश्त आठ, चालीस और आठ अड़तालीस । बारह सौ अड़तालीस ।

दूसरी तारीख बारह सौ सत्तर की––

अज़ बूरूजे सिपहर जूई मिश्रत
अशरात अज़ कवाकिबे सय्यार[3]
बुर्ज[4] बारह, सात दहा के सत्तर ।

संकेत किया । मैं स्पष्ट रूप से कहता हूँ––'खुशख़ान ए खुदा' । जब मैंने अपनी कविता पर दृष्टि डाली तो मुझे अप्रसन्नता हुई । मैंने कचरा साफ़ कर दिया और साहित्य के पाँव को सिकंजे में जकड़ दिया । 'ईहाम' के घटाने से अर्थ पूरा होता है । १. शाब्दिक अर्थ, वैचारिक अर्थ । २. मसीता बेग के मरने का वर्ष, मसीता बेग सच्चे रास्ते पर चले, उनकी गिनती बड़े इमामों में होती थी । आकाश से आये हुए पवित्र ग्रन्थ इससे प्रकट होती हैं । स्वर्ग की क्यारियाँ उनके लिए निश्चित हो चुकी है । ३. राशि । ४. ग्रह ।

ये जो लिखते हो के सैयद गुलाम बाबा किसी बहर में नहीं आता, क्यों नहीं आता ?

जब के सैयद गुलाम बाबा ने
मसनदे ऐश पर जगह पाई
ऐसी रौनक़ हुई बरात की रात
के कवाकिब हुए तमाशाई

दूसरी बहर सुनो—

हज़ार शुक्र के सैयद गुलाम बाबा ने
फ़राज़े मसनदे ऐशो[1] तरब[2] जगह पाई
ज़मीं पै ऐसा तमाशा हुआ बरात की रात
के आस्माँ पै कवाकिब[3] बने तमाशाई

इस बहर में समाता हुआ कोई माद्दा बहम पहुँचाओ, तारीख़ कह लो। वो दोस्त जो माद्दा ढूँढ देते थे, वो जन्नत को सिधारे। जैसा के ऊपर लिख आया हूँ, माज़ूर और मजबूर हूँ।

सेशम्बा ११ मुहर्रम, ३१ जुलाई साले हाल।

—ग़ालिब

४

(३१ दिसम्बर, १८६० ई०)

सआदत व इक़बाल निशान मुंशी मियाँ दादख़ाँ से मैं बहुत शर्मिन्दा हूँ कि उनके ख़ुतूत का जवाब नहीं लिखा। ग़ज़लों के मसविदे गुम हो गये। इस शर्मिन्दगी से पासुख़निगार[4] न हुआ। अब ये सतरें जो लिखता हूँ, उस ख़त के जवाब में हैं जो बनारस से आया है।

१. आनन्द का उच्च सिंहासन। २. आह्लाद। ३. तारे। ४. उत्तर लेखक।

भाई, बनारस खूब शहर है और मेरे पसन्द है। एक मस्नवी मैंने उसकी तारीफ़ में लिखी है और 'चिराग़े दैर' उसका नाम रखा है। वो फ़ारसी दीवान में मौजूद है। उसको देखना। अशरफ़–हुसेनखाँ साहब मेरे दोस्त हैं। फ़ितना व फ़िसाद के ज़माने से बहुत पहले उनका ख़त और कुछ उनका कलाम मेरे पास आया है। तुम उनको मेरा सलाम कहना और मैं तुमसे ये तवक़्क़ो रखता हूँ कि जिस तरह तुमने लखनऊ से बनारस तक के सफ़र की सरगुज़श्त[1] लिखी है, उसी तरह आइन्दा भी लिखते रहोगे। मैं सैर व सियाहत[2] को बहुत दोस्त रखता हूँ।

अगर बदिल नह ख़लद हरचे दर नज़र गुज़रद
ज़ हे रवानी ए उम्रे के दर सफ़र गुज़रद[3]

ख़ैर, अगर सैर व सियाहत मयस्सर नहीं, न सही। ज़िक्रुल ऐश निस्फ़ुल ऐश[4] पर क़िनायत[5] की। मियाँ दादख़ाँ 'सय्याह' की सरगुज़श्त सैर व सफ़र ही सही।

ग़ज़ल तुम्हारी रहने देता हूँ। उसके देखने की अभी फ़ुर्सत नहीं है। जैसा तुमने वादा किया है, जब और ग़ज़लें भेजोगे, उनके साथ उसको भी देखूँगा. बल्कि एहतियात मुक़्तज़ी[6] इसकी है कि इन ग़ज़लों के साथ उसको भी लिख भेजना।

नातवानी[7] ज़ोर पर है, बुढ़ापे ने निकम्मा कर दिया है। ज़ोफ़, सुस्ती,

---

१. वृत्तान्त। २. भ्रमण-यात्रा। ३. जो कुछ दिखाई देता है, वह हृदय में स्थान न बनाये। जीवन का जो भाग यात्रा में गुजरता है, वही सार्थक है। ४. आनन्द की चर्चा आधे आनन्द के बराबर है। ५. सन्तोष। ६. सावधानी का तकाजा ७. कमजोरी।

काहली, गिरांजानी[१], गिरानी[२]। रिकाब में पांव है, बाग पर हाथ है। बड़ा सफ़र दूर व दराज़ पेश है। ज़ादेराह[३] मौजूद नहीं। ख़ाली हाथ जाता हूँ। अगर नापुर्सीदा[४] बख़्श दिया तो ख़ैर, अगर बाज़पुर्स[५] हुई तो सक़र[६] मक़र[७] है और हाविय ए ज़ाविया[८] है। दोज़ख़ जावीद[९] है और हम हैं। हाय, किसी का क्या अच्छा शेर है—

अब तो घबरा के ये कहते हैं कि मर जाएँगे
मर के भी चैन न पाया तो किधर जाएँगे

अल्लाह् अल्लाह् अल्लाह् !!!

सुबह दोशम्बा, ३१ दिसम्बर १८६० ई०।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

५

(१२ फरवरी, १८६१ ई०)

मुंशी साहब,

तुम्हारे ख़त पहुँचने की तुमको इत्तिला देता हूँ और मतालिबे मुस्तफ़्सिरा[१०] का जवाब लिखता हूँ और अपने दोस्ते रूहानी[११] मिर्ज़ा रज्जबअली बेग 'सुरूर' को सलाम कहता हूँ, कह दीजिएगा। बल्के ये रुक़्क़ा दिखा दीजिएगा।

१. आलस्य। २. मँहगाई। ३. पाथेय। ४. अजिज्ञासित। ५. पूछताछ। ६. नरक (प्रथम खण्ड), अंधलोक का कोना। ७. पड़ाव। ८. नरक के सातवें तल का कोना। ९. शाश्वत नरक। १०. जो विषय पूछे गये हैं। ११. आत्मीय मित्र।

मुज़क्कर बोलता है। मेरे नज़दीक 'दही' और 'खिलत' मुज़क्कर हैं और 'क़लम' मुश्तरक[1] चाहो मुज़क्कर कहो, चाहो मुअन्नस। 'गुलशन' अलबत्ता मुज़क्कर मुनासिब मालूम होता है।

भाई, जहाँ अलिफ़ दबता है, मेरे कलेजे में एक तीर लगता है। 'रखता है गुलशन भी' ये अलिफ़ दबता हुआ देख कर मैंने रखती है, बना दिया। मगर 'गुलशन' मुज़क्कर मुनासिब है। 'फुल्की' या 'फुल्का' तन्हा बेमानी[2] ए महज़ है। 'हल्की फुल्की' या 'हल्का फुल्का' यों आये तो दुरुस्त, वर्ना लग़ो। और ये जो 'फुल्का' पतली चपाती को कहते हैं, ये दूसरा लुग़त[3] है। 'फुल्के' कभी कोई न बोलेगा। 'पानी-वानी', 'हुक़्क़ा-वुक़्क़ा' यों कहेंगे। निरा 'वानी' और निरा 'वुक़्क़ा' न कहेंगे। 'हल्का-फुल्का'—'हल्की-फुल्की' कहेंगे सुबक़[4] चीज़ को। निरा 'फुल्का' या निरी 'फुल्की' न कहेंगे। तज़्कीर[5] व तानीस[6] के बाब में मिर्ज़ा रज्जब अली बेग से मुशविरा लिया करो और दबते हुए हुरूफ़ भी उनसे पूछ लिया करो।

७

(२७ फ़रवरी, १८६१ ई०)

भाई,

हमने तुमको ये नहीं कहा कि तुम मिर्ज़ा रज्जबअली बेग के शागिर्द हो जाओ और अपना कलाम उनको दिखाओ। हमने ये कहा है कि तज़्कीर व तानीस को उनसे पूछ लिया करो। दक्खन—बंगाले के रहने वालों को इस अम्रेखास में दिल्ली-लखनऊ के रहने वालों का ततब्बो[7] ज़रूर है।

---

१. सम्मिलित, उभयलिंगी। २. निरर्थक। ३. शब्द। ४. हल्की। ५. पुल्लिंग। ६. स्त्रीलिंग। ७. अनुसरण।

एक फ़ायदा सुनो। मालूम रहे कि 'ज़ाल' का हर्फ़ फ़ारसी में नहीं आता। जिस लुग़त[1] में ज़ाल हो उसको समझना कि अरबी है। बाद मालूम होने इस फ़ायदे के ये समझो कि 'गुज़श्तन' और मुश्तक़ाते गुज़श्तन और [illegible] गुज़ाश्तन और [illegible] और [illegible] में ज़ाल फ़ारसी है। हिन्दी इबारत [illegible] और मुतरादिफ़[2] [illegible] [illegible] आखिरों में ज़ाल को इस्तेमाल और [illegible] करते हैं) और [illegible] ऐसी चीज़ नहीं है कि जिसको कोई न जाने। [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] में [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है। हाँ, अगर अरबी में ज़ाल को इस्तेमाल करते हों तो [illegible] [illegible] और [illegible] इस्तेमाल। मगर मैं ऐसा गुमान करता हूँ कि [illegible] का [illegible] में कुछ और रस्म[7] होगा, इस्तेमाल न करते होंगे।

अब तुम सुनो इल्मे लुग़त[8] एक अम्र है कि उसको तसहीफ़ कहते हैं याने लफ़्ज़ की [illegible] एक हो और नुक़्तों में फ़र्क़, जैसा के सादी बोस्ताँ में कहता है—

> [illegible] बोसा [illegible] बे तसहीफ़ देह
> के दरवेश रा तोशा अज़ बोसा बेह[9]

'तोशा' व 'बोसा' व 'नौशा' ये तीन लफ़्ज़ मुसहहफ़[10] हमदिगर[11] हैं।

1. शब्द। 2. पर्यायवाची। 3. नाफ़न में (सफ़ास अक्षरों का एक-क्रम गिनती के लिए)। आने वाला 'ग़ैन' (ग़)। 4. दो नोक वाला 'ये'। 5. सरल और परिमार्जित। 6. केवल अशुद्ध। 7. संज्ञा। 8. शब्द-विज्ञान। 9. मुझसे बोसा=चुम्बन ने कहा कि तसहीफ़ से दे। दरवेश के लिए तोशे (=भोजन) से भी बोसा अच्छा होता है। 10 लिखित, एकत्रित (=मिलते जुलते)। 11. परस्पर।

हालाँ कि माने में वो फ़र्क़ कि जैसा ज़मीन आस्मान में। तोशा तर्जुमा ज़ाद[1] का, बोसा तर्जुमा क़ुब्लह्[2] का, नौशा इस्म दूला का। साहबाने फ़रहंग[3] में 'बुरहाने क़ाता' वाला ए तसहीफ़ में बहुत मुब्तिला है। गज़र और कज़र, ख़रपुज़ह और ख़रबुज़ह कहता है कि 'सदा' व सीने साटफस लफ़्ज़े फ़ारसी है, बमाने आवाज़ और सदा व सादे तारीब[4] है। जो लुग़ात 'ते' में लिखते हैं, उन्हीं लुग़ात को तोय में लिखता है। हालाँकि जिस तरह 'ऐन' फ़ारसी में नहीं है, 'तोय' भी नहीं है। मसलन 'तश्त' लुग़ते फ़ारसी उल अस्ल[5] है। इम्ला इसकी 'तोय' से ग़लत है। 'बुरहाने क़ातै' वाला इसको 'ते' से भी लाया है और 'तोय' से भी। मुहक़्क़िक़ीन[6] जानते हैं कि 'सदा' बमाने आवाज़ लुग़ते अरबी उल अस्ल है, नमुअर्रब[7] और 'सदा' सीन से हरगिज़ फ़ारसी में आवाज़ को नहीं कहते। हाँ, उर्दू के मुहावरे में माने 'हमेशा' के मुस्तमिल है, क़िस्सा कोताह[8] ग़रबाल बमाने छलनी के, लफ़्ज़ फ़ारसी उल अस्ल सही और फ़सीह है और उरयाल अगर किसी और फ़रहंगे अरबी में मिस्ल 'क़ामूस' और 'सुराह' वग़ैरा के बमाने छलनी के निकले तो उसको मानो वर्ना ये 'बुरहाने क़ातै' वाले के ख़ुराफ़ात में से है।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

८

(४ अक्तूबर, १८६१ ई०)

साहब,

कल आपका ख़त आया, मेरा ध्यान लगा हुआ था कि आया मियाँ

---

१. खाद्य सामग्री। २. चुम्बन। ३. शब्दकोश बनाने वाला ४. अरबी। ५. शुद्ध फ़ारसी का शब्द ६. गवेषणा करने वाले। ७. जिस शब्द का अरबीकरण किया गया। ८. कथा-संक्षिप्त।

सय्याह कहाँ हैं और मुझको क्यों भूल गये। पहला ख़त तुम्हारा, जिसका हवाला इस ख़त में देते हो, मैंने नहीं पाया, वर्ना क्या इमकान[1] था के जवाब न लिखता। जनाब मुंशी मीर अमीरअली साहब से मुझसे मुलाक़ात नहीं, लेकिन उनके महामिद[2] व मकारिम[3] सुनता हूँ। जनाब मौलवी इजहार हुसैन साहब से अलबत्ता इसी शहर में दो मुलाक़ातें हुई हैं, लेकिन मैंने उनको फ़क़ीर दोस्त और दरवेश नवाज़ न पाया। अग़निया[4] के वास्ते अच्छे हैं। हाय, इस मौलवी मुहम्मद हसन और मौलवी अब्दुल करीम! इस अहद में अगर इन बुज़ुर्गों में से एक होता तो मैं क्यों अपनी क़िस्मत को रोता। वक़्त गुज़र जाता है, बात रह जाती है।

हाँ खाँ साहब, आप जो कलकत्ते पहुँचे हो और सब साहबों से मिले हो तो मौलवी फ़ज़ले हक़ का हाल अच्छी तरह दरियाफ़्त करके मुझको लिखो कि उसने रिहाई क्यों न पाई और वहाँ जज़ीरे[5] में उसका क्या हाल है? गुज़ारा किस तरह होता है?

जुमा, ४ माह अक्तूबर १८६१ ई०।

८

(२० नवम्बर, १८६१ ई०)

साहब,

आज तुम्हारे कई ख़तों का जवाब लिखता हूँ। मौलवी करामत अली साहब मेरे शफ़ीक़[6] हैं। जिस ज़माने में वो दिल्ली आये थे, मेरी उनसे

१. संभावना। २. गुण-समूह। ३. कृपाएँ। ४. समृद्ध लोग। ५. द्वीप (अंडोमान कालापानी)। ६. मित्र।

मुलाक़ातें हुई थीं। वो मेरे दोस्त हैं, शागिर्द नहीं और हरगिज़ क़सीदा उन्होंने मेरी मदह[1] में नहीं लिखा। आग़ा अब्दुलरज़्ज़ाक शीराज़ी ने गोया मेरी ख़स्तगी[2] और तुहमत ज़दगी[3] का इंतिक़ाम[4] लिया। बहरहाल मैं तुम्हारा एहसानमन्द हूँ। अगर तुम वहाँ न होते तो मेरी और मीर मुंशी की सफ़ाई न होती। इन दिनों ज़ोफ़े दिमाग़ व दौराने सर[5] में ऐसा मुब्तिला हूँ कि वालीए रामपूर का भी बहुत-सा कलाम यों ही धरा है। देखने की भी नौबत नहीं आई। तुम्हारी भेजी हुई ग़ज़लें सब महफ़ूज़ धरी हुई हैं। ख़ातिरे जमा रखो। जब नवाब की ग़ज़लें देखूँगा तो ये भी देखी जाएँगी।

जब हाल ये हो कि इस्लाह न दे सकूँ तो ज़िक्रे तारीख़ क्या करूँ? अगर मेरा हाल दुरुस्त होता तो नवाब मौलवी अब्दुलग़फ़ूरख़ाँ साहब नस्सोख़ के दीवान की तारीख़ ज़रूर लिखता और इस ख़िदमत गुज़ारी को अपनी सआदत समझता। आप जनाब मौलवी साहिब से मेरा सलाम कहें और ये मेरा रुक़्क़ा उनको दिखा दें।

चहारशम्बा २० नवम्बर १८६१ ई०।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

१०

(१० फ़रवरी, १८६२ ई०)

जनाब मुंशी साहब,

आपका ख़त, मुहरी लेफ़्टंट गवर्नर आगरा, कि वो मेरा भेजा हुआ था,

---

१. प्रशंसा। २. दरिद्रता ३. अपयश। ४. बदला। ६. मस्तक-पीड़ा।

पहुँचा। इसके भेजने की कुछ जरूरत न थी। जब गवर्नमेंट आला ने मुझको खत लिखना मौक़ूफ़ किया तो लेफ्टंट गवर्नरों के अगले जमाने के खुतूत से मेरा क्या दिल खुश होगा। ऐसे-ऐसे पचास-साठ खत मेरे पास मौजूद हैं। मुझको तो छै आने के पैसों का अफ़सोस है, जो तुमने बाबते महसूल दिये।

मरक़ूम[1] १० फ़रवरी १८६२ ई०।

राक़िम

—असदुल्लाह

११

(मई, १८६३ ई०)

आइये, बैठिये मौलाना सय्याह अस्सलामलेकम[2]। मिज़ाज मुबारक। सूरत का पहुँचना बहरसूरत मुबारक हो। भाई मेरा दिल बहुत खुश हुआ कि तुम अपने वतन पहुँचे, लेकिन तुमको चैन कहाँ? खुदा जाने कै हफ़्ते या कै महीने ठहरोगे और फिर सियाहत[3] को निकलोगे। जी में कहोगे—आओ अब दकन की सैर करें। हैदराबाद—औरंगाबाद दोनों शहर अच्छे हैं। उनको देखें।

मिर्ज़ा मुईनुद्दीन हुसैन खाँ और मिर्ज़ा मुहम्मद हुसैनखाँ ये दोनों बेटे हैं नवाब क़ुदरतुल्लाहबेगखाँ के और क़ुदरतुल्लाह बेगखाँ इब्ने अम[4] थे नवाब खुदा बख्शखाँ के और मुईनुद्दीनखाँ की बहन मनसूब[5] है भाई ज़ियाउद्दीनखाँ से।

यहाँ कोई अम्र नया नहीं वाक़ै हुआ। वही हालात व अतवार[6] हैं, जो देख गये हो। मस्जिदे जामै के बाब में कुछ पुर्सिशें[7] लाहौर से आई थीं।

१. लिखित। २. अभिवादन। ३. यात्रा। ४ चाचा या ताऊ का बेटा। ५. मँगेतर, जिसकी सगाई हुई है। ६. रंग ढंग। ७. पूछ ताछ।

यहाँ से उनके जवाब गये हैं। यक़ीन है कि वागुज़ार[1] का हुक्म आये और मुसलमानों को मिल जाये। हनोज़ वदस्तूर पहरा बैठा हुआ है। और कोई जाने नहीं पाता। वस्सलाम इक्राम।

सुबह शम्बा, २ ज़ीकादा व मई मान।

—ग़ालिब

१२

(अगस्त, १८६३ ई०)

मुंशी साहिब सआदत व इक़बाल निशान,

शिकवा[2] तुम्हारा तुम्हारा मेरे सर आँखों पर मगर कोई खत तुम्हारा जवाब तलब न था। अशार की इस्लाह से मैंने हाथ उठाया। क्या करूँ? एक बरस से अवारिज़े फ़िसादे खून[3] में मुब्तला हूँ। बदन फोड़ो की कसरत से सर्वे चराग़ाँ[4] हो गया है। ताक़त ने जवाब दिया। दिन-रात लेटा रहता हूँ। खाना खाते वक़्त पलंग पर से उतर बैठता हूँ। खाना खाकर हाथ धोकर फिर पड़ रहता हूँ। हाजती पलंग के पास लगी रहती है। उतर कर पेशाब किया जाता है बैतुलखला[5] जाना एक मुसीबत है। तख्ते चौकी[6] सही मगर कई क़दम जाना, फिर आना क्या ऐसा आसान है। एक कम सत्तर बरस की उम्र हुई, अब नजात चाहता हूँ। बहुत जिया कहाँ तक जीऊँगा। (अब तुम दूसरे सफ़े को पढ़ो) जनाब नवाब सैयद ग़ुलाम बाबाखाँ साहब की खिदमत में सलाम कहना और विलादते फ़र्ज़न्द[7] की मुबारकबाद देना और ये क़तरा तारीख नज्र करना—

मीर बाबा याफ़्त फ़र्ज़न्दे के माहे चार दह
बर फ़राज़े लोहे गर्दूं[8] गिर्द ए तिमवाले ऊस्त

---

१. छुटकारा (जायदाद आदि का)। २. उलहना। ३. रक्तविकार के रोग। ४. सरो के पेड़ में दीपक लगना ५. शौचालय। ६. कमोड़। ७. पुत्र जन्म।

फ़रुख़ी वीनी व याबी बहर अज नाज़ों तरब
अज़ सरे नाज़ों तरब **फ़र्ज़न्दे फ़रुख़** फ़ाल ऊस्त[1]

१२ हि० । नाज़ से नून के पचास और तरब की तोय के नौ 'फ़र्ज़न्दे फ़रुख़ फ़ाल पर बढ़ाने होंगे । पंजशम्बा १६, अगस्त १८६३ ई० ।

—ग़ालिब

१३

(१७ सितम्बर, १८६३ ई०)

साहब,

ये सर पीटने की जगह है कि तुम्हारा कोई ख़त डाक में ज़ाए नहीं होता और मेरा कोई तुमको नहीं पहुँचता । सुनो, छोटे साहब का ख़त आया । इसमें क़ता का शुक्रिया और अजज़ाए किताब[2] के भेजने की ताकीद थी । मैंने उसके जवाब में लिखा कि उस किताब का छापा यहाँ ही शुरू हो गया, इंशा अल्लाह ताला वादे इंतिबा[3] एक मुजल्लद[4] आपके वास्ते और एक मुंशी मिया दादख़ाँ के वास्ते बसबीले डाक पार्सल भेजूंगा । अब तुम नवाब साहब से मेरा सलाम कहो और ये अपने नाम का ख़त उनको पढ़ा दो और एक पता तुमको देता हूँ । नवाब साहब का ख़त तलबे किताब के बाब[5] में आया था, उसमें मुंदरिज[6] था कि अब मैं सूरत को जाता हूँ, तुम अजज़ाए किताब का पार्सल उस पते से

१. मीर बाबा को ऐसा पुत्र मिला जो पूर्णिमा के चाँद के समान है। ऊपर अकाश में (उस चाँद का) कुण्डल पड़ रहा है । उसके हर्ष और आह्लाद से तुम सफलता और प्रतिष्ठा पाते हो। बालक के हर्ष और आह्लाद से पूर्व 'फ़र्ज़न्दे फरुख़' तिथि मिलती है । २. पुस्तक के अंश । ३. मुद्रण के पश्चात् । ४. पुस्तक । ५. विषय । ६. उल्लिखित ।

सूरत भेजना। भाई मैंने इसी पते से खत गाह-गाह तलफ़ भी हो जाता है, नज़र इस बात पर, ये खत तुमको बैरंग भेजता हूँ, ताकि ज़ाया न होने का एहतिमाल क़वी[1] रहे। फ़क़्त।

सुबह दोशम्बा १४ रबीउस्सानी मुताबिक़ १७ सितम्बर साले हाल।

१४

(३ दिसम्बर, १८६४ ई०)

मुंशी साहब,

ये क्या इत्तिफ़ाक़ है कि मेरी बात कोई नहीं समझता—

कस ज़बाने मरा न मी फ़हमद
व अज़ीज़ाँ चे इल्तिमास कुनम[2]

याद करो अस्ल मुक़दमा ये था कि मैं 'क़ातै बुरहान' को दोबारा छपवाना चाहता हूँ, नवाब साहिब मदद दें। याने दो सौ जिल्दें ख़रीद लें। हज़रत साहब ने एक घड़ी इनायत फ़रमाई। भला ये मेरे किस काम की। चार दिन सोचा किया कि फेर दूँ। फिर सोचा कि बुरा मानेंगे। आखिर क घड़ी रखली और ये खयाल किया कि किताब के इंतिबा के बाद सौ-डेढ़ स जिल्दें भेज दूँगा। इसी खत के साथ नवाब साहब के नाम का खत घड़ी क रसीद का तुमको पहुँचता है और ये भी तुमको मालूम रहे कि घड़ी की कुंजी नहीं आई। ज़ाहिर सह्व[3] से वहीं रह गई होगी।

---

१. दृढ़ सन्देह। २. मेरी भाषा को कोई नहीं समझता। मित्रों से क्या प्रार्थना करता। ३. भूल।

हाँ साहब, ३० जिल्दें 'लतायफ़ें ग़ैबी' की दो पार्सलों में आगे भेजी हैं, जिसकी क़ीमत दस रुपये मुझको पहुँचे। फ़िलहाल एक जिल्द और अपनी तरफ़ से भेजी है। रसीद जल्द लिखो।

—ग़ालिब

१५

(३ जनवरी, १८६५)

सआदत व इक़बाल निशान सैफ़ुलहक़ मुंशी मियाँ दादख़ाँ 'सय्याह' को फ़क़ीर ग़ालिब की दुआ पहुँचे। ख़त में आपने बहुत से मतालिब लिखे, मगर तीस किताबों के दो पार्सलों की रसीद नहीं लिखी। ये एक पार्सल जो बाद दो पार्सलों के भेजा गया है, उसमें वही 'ताफ़ें ग़ैबी' है जिसको मैंने अपने मुतालए[1] में रख कर सही किया है। इसके भेजने से ये मुद्दआ कि तुम उनतीस रिसालों को उसके मुताबिक़ सही कर लो और अगर छोटे साहब ने रख लिया है तो उनसे मुस्तार[2] लेकर अपनी सब किताबें सही कर लो और वो नुस्ख़ा उनकी नज़र कर दो। साहब, मैंने अपने सर्फ़ेज़र[3] से 'लतायफ़ें ग़ैबी' की जिल्दें नहीं छपवाईं, मालिके मतबे[4] ने अपनी बिक्री को छापीं। बीस मैंने मोल लीं, तीस तुमको दिलवा दीं। बीस भाई ज़ियाउद्दीन ने लीं। दस मुस्तफ़ाख़ाँ साहब ने लीं। बाक़ी का हाल मुझे मालूम नहीं।

देखो, सैफ़ुल हक़ शेख़ सादी का क़ौल क्या सच्चा है—

> अगर दुनिया न बाशद दर्दमन्दम
> वगर बाशद ब महरश पाए बन्दम

१. स्वाध्याय। २. उधार। ३. द्रव्य-व्यय। ४. मुद्रणालय।

बलाए जाँ जहाँ आशोब तर नीस्त
के रंजे खातिरस्त अरहस्तो वर नीस्त[1]

जहाँ दौलत नहीं वहाँ मुसीबत है, जहाँ दौलत है वहाँ खुसूमत[2] है। मैं तो मीर ग़ुलाम बाबाख़ाँ का दोस्त हूँ, उनकी फ़तह की दुआ माँगता हूँ। आप इतनी मेहरबानी करें कि ये हालात जो वाक़े हुआ करें वो मुझको लिखा करें।

ग़रबीला की हिन्दी नखरा है, फ़ारसी में ग़रबीला बोलते हैं। पंजुम शाबान १२८१ हि० मुताबिक़ ३ जनवरी १८६५ ई०।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

१६

(१३ अप्रैल, १८६५ ई०)

मुंशी साहब सआदत व इक़बाल निशान सैफ़ुलहक़ मियाँ दादख़ाँ सल्लमाकुमुल्लाहो ताला[3]।

फ़क़ीर की तरफ़ से दुआ व सलाम क़ुबूल करें। छोटे साहब की तस्वीर की रसीद में भाई मुहम्मद हुसैनख़ाँ से कहा गया था कि तुम तस्वीर के

---

१. यदि संसार न होता तो मैं दर्दमन्द न रहता। और यदि संसार मेरी दर्दमन्दी करे तो मैं उसके प्रेम में आबद्ध रहूँगा। इस दुःखदायी संसार से बढ़कर दूसरा कोई कष्ट नहीं, यदि कुछ है तो दुःखदायी है और यदि कुछ नहीं है तो दुःखदायी है। २. द्वेष। ३. ईश्वर आप की रक्षा करे।

पहुंचने की इत्तिला दे देना, सो अब तुम्हारी तहरीर से मालूम हुआ कि उन्होंने इत्तिला दी है। हाल तस्वीर का ये है कि मैंने उसे सर पर रखा, आंखों से लगाया, गोया छोटे साहब को देखा। लेकिन इसका सबब न मालूम हुआ कि नवाब साहब ने हमसे बात न की। ख़ैर, दीदार तो मयस्सर हुआ, गुफ़्तार भी अगर ख़ुदा चाहेगा तो सुन लेंगे। देखो मुंशी साहब आईने की तस्वीर की सनत[1] को सब पसन्द करते हैं, मगर फ़क़ीर इसका मोतक़द[2] नहीं। अब देखो हज़रत की तस्वीर में कुहनियों तक हाथ की तस्वीर है। आगे पहुंचे और नीचे का पता नहीं। मुकालमा[3] एक तरफ़ मुसाफ़हे[4] की भी हसरत रह गई। इस वक़्त जुदागाना ख़त लिखने की फ़ुर्सत नहीं। नवाब साहब से मेरा बहुत-बहुत सलाम और इश्तियाक़[5] कहना, बल्कि ये ख़त उनको ज़रूर देना कि वो पढ़ लें। मैं सादात[6] का नियाज़मन्द और अली का ग़ुलाम हूं।

बन्दए शाहे शुमायमो सनाख़ाने शुमा[7]

१७ ज़ीक़ाद १२८१ हि० मुताबिक़ १३ अप्रैल १८६५ ई०।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

१७

(३० जुलाई, १८६५ ई०)

साहब,

मेहरबानीनामा के गोया अल्फ़ाज़ उसके सरासर नवाब मीर ग़ुलाम बाबा

१. फोटोग्राफ़ी। २. श्रद्धा रखने वाला। ३. वार्त्तालाप। ४. हस्तान्दोलन ५. उत्कण्ठा। ६. हज़रत अली और फ़ातिमा की सन्तान। सैयद वंश के लोग। ७. आप की स्तुति करता हूँ और तुम्हारे बादशाह का हो दास हूँ।

साहब की ज़बानी थे, पहुँचा। जवाब लिखता हूँ और पुर्सिश[1] का शुक्र बजा लाता हूँ। एक करन[2]— बारह बरस से फ़िरदौस मकान[3] नवाब यूसुफ़अलीख़ाँ वालीए रामपूर अपने अशार मेरे पास भेजते थे और सौ रुपये महीना माह बमाह बसबीले हुंडवी भिजवाते थे। उस मग़फ़ूर[4] की अन्दाज़ादानी[5] देखिये कि मुझसे कभी उस रुपये की रसीद नहीं ली। अपने ख़त में हुंडवी भेजा करते, मैं ख़त का जवाब लिख भेजता। इस महीना के अलावा कभी दो सौ कभी ढाई सौ भेजते रहते। फ़ितना व फ़साद के दिनों में क़िले की आमद मफ़क़ूद[6], अँग्रेजी पिन्शन मस्दूद[7]। ये बुज़ुर्गवार वजहे मुक़र्ररी माह व माह और फ़ुतूह[8] गाह गाह[9] भेजता रहा। तब मेरी और मेरे मुतवस्सिलों[10] की ज़ीस्त[11] हुई। रईसे हाल को ख़ुदा वदौलत व इक़बाल अबदन मोविदन[12] सलामत रखे। वजहे मुक़र्ररी की हुंडवी हर महीने बहस्बे दस्तूरे क़दीम भेजे जाता है। फ़ुतूह की रस्म देखिये जारी रहे या नहीं।

मेरे पास रुपये कहाँ जो क़ात ए बुरहान को दुबारा छपवाऊँ? पहले भी नवाब मग़फ़ूर ने दो सौ रुपये भेज दिये थे, तब पहला मसविदा साफ़ हो कर छपवाया गया था। अब भी वादा किया था कि अप्रैल की वजहे मुक़र्ररी के साथ दो सौ पहुँचेंगे। वो आख़िरे अप्रैल १८६५ ई० हाल में मर गये। अप्रैल का रुपया रईसे हाल से मैंने पाया। मुर्सरिफ़ किताब[13] का रुपया न आया। याद दिलाऊँगा मगर उस मरहूम का वादा सरिश्तए दफ़्तर से न था, जो अज़रू ए दफ़्तर उसकी तस्दीक़ हो। बहरहाल फ़िक्र में हूँ। अगर अस्बाब[14] ने

---

१. पूछताछ। २. युग। ३. स्वर्गस्थ ४. स्वर्गीय। ५. विचारशीलता। ६. समाप्त। ७. रुकी हुई। ८. अतिरिक्त आय। ९. यदा-कदा। १०. आश्रितों। ११. जीवन। १२. अनन्त काल तक। १३. पुस्तक का व्यय। १४. कारण।

मुसाअदत[1] की फ़हृवल मुराद[2]। वर्ना-उचे मा दरकार दारेम अक्सरे दरकार नीस्त[3]।

मुंशी साहब, इस ख़त को ज़रूरी जानकर बैरंग भेजता हूँ।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

१८

(११ सितम्बर, १८६५ ई०)

मुंशी साहब, सआदत व इक़बाल निशान मुंशी मियाँ दादख़ाँ 'सय्याह' सैफ़ुल हक़ सल्लमकुमुल्लाहो ताला[4]।

दुआ और सलाम, शुक्र और सिपास[5]। तुम्हारा ख़त नरक़ूमा ३० अगस्त परसों बरोज़े जुमा ८ सितम्बर १८६५ ई० को पहुँचा। कल दसवीं सितम्बर माहे हाल को सौ रुपये मुन्दरिजा इसके एक सराफ़ से वसूल हो गये। छोटे साहब ने बड़ी जवाँ मर्दी और बड़ी हिम्मत की। इस तर्फ़[6] में मेरा काम हुआ और उनका नाम हुआ। अल्लाह, अल्लाह, अब भी हिन्दुस्तान में ऐसे लोग हैं कि न मैंने उनको देखा, न उन्होंने मुझको देखा। न मेरा कोई हक़ उन पर साबित, न उनको कोई ख़िदमत मुझसे लेनी मंज़ूर। ख़ैर फ़क़ीर हूँ, जब तक जीऊँगा दुआ दूँगा। तमाम उम्र ममनून[7] और शर्मिन्दा रहूँगा। तुम्हारा भी एहसान मानूँगा। अब दो-एक दिन में काग़ज़ आ जायें तो उसका इतिबा

१. सहायता। २. मेरा उद्देश्य यही है। ३. जितनी चीजों की आवश्यकता है, उससे अधिक मेरे पास है। ४. ईश्वर सुरक्षित रखे। ५. कृतज्ञता और अभिनन्दन। ७. व्यय। कृतज्ञ।

शुरू हो जाये। तुम नवाब साहब को मेरा सलाम कहो और ये ख़त दिखा दो और अर्ज़ करो कि आज तक किसी भाई या किसी दोस्त का रुपये-पैसे का एहसानमन्द नहीं हुआ था, अब एहसान भी उठाया तो अपने आक़ा[1] अली उल मुर्तज़ा रज़ीउल्ला अनहो के फ़र्ज़न्द का।

वो जो एक और किताब का तुमने ज़िक्र लिखा है, वो एक लड़के पढ़ाने वाले मुल्ला ए मकतबदार[2] का ख़ब्त है। रहीम बेग उसका नाम, मेरठ का रहने वाला, कई बरस से अन्धा हो गया है। बावजूद ना बीनाई[3] के अहमक़[4] भी है। उसकी तहरीर मैंने देखी, तुमको भी भेजूंगा। मगर एक बड़े मज़े की बात है कि उसमें बेश्तर वो बातें हैं, जिनको 'लतायफ़े ग़ैबी' में रद कर चुके हो। बहरहाल उसके जवाब की फ़िक्र न करना। फ़क़्त, वस्सलाम वल इक्राम।

दोशम्बा ११ सितम्बर १८६५ ई०।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

१६

(१७ सितम्बर, १८५६ ई०)

मुंशी साहब सआदत व इक़बाल निशान सैफ़ुलहक़ मियाँ दादख़ाँ तुम सलामत रहो, तुम्हारे ख़त के सफ़ ए सादा[5] पर ये सतरें रक़म करता हूँ ताकि तुम अपने ख़त के पहुँचने से इत्तिला पाओ। 'नाम ए ग़ालिब' साहबे मतबे[6] ने अपनी बिक्री के वास्ते नहीं छापी, जो मैं मोल लेकर भेजूं और तुमसे उसकी

---

१. स्वामी। २. पाठशाला का अध्यापक। ३. दृष्टिहीनता। ४. मूर्ख। ५. कोरे पृष्ठ पर। ६. मुद्रणालय का स्वामी।

क़ीमत माँग लूँ। मैंने आप तीन सौ जिल्दें छपवाईं। दूर व नज़दीक बाँट दीं। आज यक़शम्बा है, पार्सल रवाना न होगा। जितने ये नुस्ख़े अब मेरे पास बाक़ी हैं, कल तुम्हें भेज दूँगा।

हाँ साहब, सौ रुपये का नोट पहुँचा और रुपया वसूल हुआ। कापी आज शुरू हो गई है, जिस दिन नोट पहुँचा उसके दूसरे दिन रुपया मिल गया। तीसरे दिन मैंने तुमको तुम्हारे रजिस्ट्रीदार ख़त का जवाब लिख भेजा। यक़ीन है कि मेरा ख़त पहुँच गया होगा और तुमने बमूजिब[1] मेरी ख़ाहिश के नवाब साहब को दिखा दिया होगा। कल हज़रत का भी एक ख़त आया है। उसका जवाब भी आज तुम्हारे ख़त के साथ इर्साल होता है। बन्दापर्वर सच कहते हो, रहीम बेग का वतने असली सरधना और फ़िलहाल मेरठ में मुक़ीम मुअल्लमी[2] उसका पेशा है और ८-१० बरस से अन्धा। नज़्म व नस्र[3] में मौलवी इमामबख़्श सहबाई का शागिर्द और फ़ारसी शेर कहता है।

यकशम्बा १७ सितम्बर १८६५ ई०।

राक़िम
—ग़ालिब अलीशाह

२०

(२३ जनवरी, १८६६ ई०)

साहब,

मैं ख़ुदा का शुक्र बजा लाता हूँ कि तुम अपने वतन गये और अज़ीज़ाने वतन[4] को देख कर ख़ुश हुए और माल ख़ैर व आफ़ियत[5] अपने मुहसिन व

१. तदनुसार। २. अध्यापन। ३. पद्य और गद्य। ४. स्वदेश के सम्बन्धी लोग। ५. कुशल-क्षेम युक्त।

मुरब्बी[1] की ख़िदमत में फिर आ पहुँचे। नवाब साहब से मेरा बहुत सलाम कहना और कहना कि उस ख़त में सलाम सिर्फ़ वुफ़ूरे इश्तियाक़[2] से लिखा है। मुहब्बतनामा[3] जुदागाना जल्द भेजूंगा।

अजों हाँ मियाँ सैफ़ुलहक़ रामपुर से आकर तीन सौ जिल्दें 'दुरफ़िशे कावयानी' की तैयार पाईं। नवाब मीर ग़ुलाम बाबाख़ाँ साहब से हिस्स ए बिरादेराना[4] को डेढ़ सौ जिल्द का पुश्तारा[5] बनवाया। उस पर टाट लिपटवाया, डाकघर भिजवाया। मुस्तरद आया[6]। सरकारी डाकवालों ने हर्गिज़ उसका भेजना क़ुबूल न किया। ठेके वाले, पम्फलेट पाकिट वाले, रेलवाले मुत्तफ़िक़ुल्लफ़्ज़[7] उसके इर्साल से इन्कार करते हैं। तुम ये रुक़्क़ा हज़रत को पढ़वाओ और इस बाबा में जो वो फ़रमायें, वो मुझको लिखो। मुद्दआ ये है कि किसी तरह ये पुश्तारा वहाँ पहुँच जाये। इस ख़त का जवाब जिस क़द्र जल्द लिखोगे मुझ पर ज़्यादा एहसान करोगे।

सेशम्बा २३ जनवरी १८६६ ई०

नजात का तालिब

—ग़ालिब

२१

(२१ फ़रवरी, १८६६ ई०)

मुंशी साहब, सआदत व इक़बाल निशान, सैफ़ुलहक़ मियाँ दादख़ाँ को फ़क़ीर असदुल्लाह का सलाम। कल सेशम्बा फ़रवरी सुबह के वक़्त छै पार्सल ३६

---

१. उपकारी। २. पूर्ण उत्कण्ठा, भरपूर लालसा। ३. प्रेम-पत्र। ४. बन्धुत्व का भाग। ५. गट्ठा। ६. लौटाया गया। ७. एक मत से।

'दुरफ़िशे कावयानी' के नवाब मीर गुलाम बाबा खाँ साहब की खिदमत में इर्साल किये। कल ही शाम के वक्त आपका इनायतनामा पहुँचा। हाल मालूम हुआ। खैर, अब और न भेजूँगा।

साहब, ये तुमने पाँच रुपये के टिकट क्यों भेजे ? मैं न किताब फ़रोश[1], न दलाल। ये हरकत मुझे पसन्द न आई और तुमने बुरा किया। हज़रत १६ जिल्दें 'लतायफ़े गैबी' की भेज कर उसके पाच-सात दिन के बाद बीस 'नाम ए ग़ालिब' का पार्सल इर्साल किया है। 'लतायफ़' की रसीद तुमने भेज दी, यक़ीन है कि 'नाम ए ग़ालिब' का पार्सल भी पहुँच जाएगा। घबराओ नहीं। नवाब साहब की खिदमत में मेरा सलाम और इश्तियाक़े मुलाक़ात[2] अर्ज़ करना।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

२२

(१ मार्च, १८६६ ई०)

खाँ साहब, सआदत व इक़बाल निशान मियाँ दादखाँ 'सय्याह' को फ़क़ीरे गोशानशीं[3] का सलाम पहुँचे। तुम्हारा कोई खत, सिवाय इस खत के, जिसका जवाब लिखता हूँ, हर्गिज़ नहीं पहुँचा। बहुत दिन से मुझको ख़याल था कि मौलाना सय्याह ने मुझको याद नहीं किया। कल नागाह[4] तुम्हारा खत पहुँचा। आज उसका जवाब लिखता हूँ।

१. विक्रेता। २. भेंट की उत्सुकता। ३. एकान्तवासी। ४. अकस्मात्। ५. कष्ट।

मुहर मैं तो खोदने का नहीं जो इस क़दर उज्र चाहते हो, खुदवा देने में क्या तकल्लुफ़ और क्या ज़हमत ? मैं अहबाब[1] का ख़ादिम[2] हूँ। मीर ग़ुलाम बाबाखाँ से मेरा सलाम कहिये और नगीं मय नक्शा बेतकल्लुफ़ भेज दीजिये। आपके हुक्म की तामील और उस नगीं की दुरुस्ती हो जाएगी। ख़ातिर जमा रहे। ज्यादा क्या लिखूं ?

अज़ी सय्याह साहब, हमारा ध्यान तुम में लगा रहता है। कभी-कभी ख़त लिखते रहा करो। मैं ऐसा गुमान करता हूँ कि अगर मीर ग़ुलाम बाबाख़ाँ साहब को मुहर खुदवानी न होती और वो तुमसे न कहते तो तुम हर्गिज़ मुझको ख़त न लिखते। ये तुम्हारा ख़त गोया मीर ग़ुलाम बाबाख़ाँ के हस्बुल हुक्म[3] था कि उन्हीं को उसका जवाब लिखूं और उसके नाम का ख़त भेजूं। मगर फिर सोचा कि तुम आज़ुर्दा[4] हो जाओगे। तुम्हीं को ख़त लिखा। भाई, ये तरीका फ़रामोशकारी[5] का अच्छा नहीं। गाह गाह ख़त लिखा करो। वस्सलाम।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

२३

(२२ मार्च, १८६६ ई०)

इक़बाल निशान सैफ़ुलहक़ को दुआ पहुँचे। पाँच इश्तिहार अख़बार की ख़रीदारी के और तीन इश्तिहार किताब की ख़रीदारी के आपके पास पहुँचते हैं। छोटे साहब को मुलाहिज़ा करवाइये और अतराफ़ व जवानिब[6] दूर व नज़दीक भेजिये। जो साहब किताब व अख़बार दोनों के ख़रीदार

---

१. आत्मीयजन। २. सेवक। ३. आदेशानुसार। ४. दुःखी। ५. विस्मरण का ढंग। ६. आस-पास।

हो, तो उसके मसौदे भी इरसाल का ख़त मीर फ़ख़रुद्दीन मुहतमिम[1] 'मतबउल मताबे' के नाम लिखो और वो ख़त मेरे पास भेज दो। जो साहब उस अख़बार के ख़रीदार हों वो उसकी इत्तिला का ख़त लिखें।

—ग़ालिब

२४

(२३ अप्रैल, १८६६ ई०)

मौलाना सैफ़ुलहक़,

अब तो कोई ख़त तुम्हारा नोट और हुंडी और टिकट से ख़ाली नहीं होता। भला ये तो फ़रमाइये कि ये हुंडी नोट किस बाबत के और किस जिन्स की क़ीमत के हैं? इससे पहले ख़त में भेजा हुआ था, वे हुंडी और टिकट हुए। बहरहाल इनका हाल लिखो कि कैसे हैं और काहे के हैं? इस रुक़्क़े का जवाब जल्द लिखो। दोनों ग़ज़लें बाद ईद भेजी जाएँगी।

इनायत का तालिब
—ग़ालिब

२५

(१७ जून, १८६६ ई०)

साहब, मेरा सलाम तुम्हारा ख़त पहुँचा, दोनों ग़ज़लें देखीं, ख़ुश हुआ। फ़क़ीर का शेवा[2] ख़ुशामद नहीं और फ़न्ने शेर[3] में अगर इस शेवे की रिआयत की जाये तो शागिर्द नाक़िस रह जाता है। याद करो कभी कोई ग़ज़ल तुम्हारी इस तरह की नहीं हुई कि जिसमें इस्लाह न हुई हो, ख़ुसूसन[4] रोज़मर्रः ए

१. प्रबन्धक। २. ढंग। ३. काव्य-शास्त्र। ४. विशेष रूप से।

उर्दू[1] में। दोनों ग़ज़लें लफ़्ज़न और मानीअन[2] बे ऐब हैं। कहीं इस्लाह की हाजत नहीं। आफ़रीं और सद आफ़रीं और सद हज़ार आफ़रीं।

मीर ग़ुलाम बाबाखाँ साहब अगर वाक़ई ऐसे ही हैं जैसे तुम लिखते हो तो बेशक वो शख्स हज़ारों में एक है। लारैब फ़ी[3] क्या फ़रमाइश करूँ और क्या तुमसे मँगाऊँ ? वहाँ कौन-सी चीज़ है कि यहाँ नहीं। आम मुझको बहुत मरग़ूब[4] हैं, अंगूर से कम अज़ीज़ नहीं, लेकिन बम्बई और सूरत से यहाँ पहुँचने की क्या सूरत ? मालदे का आम यहाँ पैवन्दी और विलायती करके मशहूर है। अच्छा होता है। कमाल ये कि वहाँ बहुत अच्छा होगा। सूरत से दिल्ली आम भेजने महज़ तकल्लुफ़ है। रुपये के आम और चार रुपये महसूले डाक और फिर सौ में शायद दस पहुँचे। मेरे सर की क़सम, कभी ऐसा इरादा न करना। यहाँ देसी आम अनवा व अक़साम[5] के बहुत पाकीज़ा, लज़ीज़ और खुशबू इफ़रात[6] से हैं। पैवन्दी आम भी बहुत हैं। रामपूर से नवाब साहब अपने बाग़ के आमों से अक्सर बसबीले अमुग़ाँ[7] भेजते रहते हैं। ए लो, आज बरेली से एक बहँगी एक दोस्त की भेजी हुई आई। दो टोकरे, हर टोकरे में सौ आम। कल्लू दरोग़ा ने मेरे सामने वो टोकरे खोले। दो सौ में से तिरासी आम अच्छे निकले और एक सौ सत्रह आम बिल्कुल सड़े हुए। अवायले जून[8] माहे हाल में एक हफ़्ता मेंह बरस कर फिर अब वही आग बरस रही है और लू चल रही है।

२६

(५ सितम्बर, १८६६ ई०)

भाई सैफ़ुलहक़, तुम्हारा खत पहुँचा। क़ाज़ी साहब बड़ौदा को माफ़ रखो।

---

१. मुहावरेदार उर्दू। २. शब्दतः और अर्थतः। ३. निस्सन्देह। ४. प्रिय। ५. विविध प्रकार के। ६. आधिक्य। ७. भेंट के रूप में। ८. जून के प्रारंभ में।

अगर कोई वजह अपने पर उनके इताब¹ की पाता तो उनसे उज्र करता और अपना गुनाह माफ़ करवाता। जब सबबे मलाल² ज़ाहिर नहीं तो मैं क्या करूँ? तुम बुरा न मानो, किस वास्ते कि अगर मैं बुरा हूँ तो उसने सच कहा और अगर मैं अच्छा हूँ और उसने बुरा कहा तो उसको ख़ुदा के हवाले करो--

'ग़ालिब' बुरा न मान जो दुश्मन बुरा कहे
ऐसा भी कोई है कि सब अच्छा कहे जिसे

साहब, इस बुढ़ापे में तस्वीर के पर्दे में कहाँ खिचा-खिचा फिरूँ? गोशानशीं³ आदमी, अक्स की तस्वीर उतारने वाले को कहाँ ढूँढूँ? देखो, एक जगह मेरी तस्वीर बादशाह के दरबार में खिंची हुई है, अगर हाथ आ जायेगी तो वो वर्क़⁴ भेज दूँगा।

अजी वो तो मैंने नवाब साहब को हँसी से एक बात लिखी थी। दोस्ताना इख़्तिलात⁵ था। भई, मैं बहरा हूँ, गाना क्या सुनूँगा? बूढ़ा हूँ, नाच क्या देखूँगा? गिज़ा छै माशे आटा, खाना क्या खाऊँगा? बम्बई-सूरत में अंग्रेज़ी शराबें होती हैं, अगर वहाँ आता और शरीके महफ़िल होता तो पी लेता।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

२७

(१८ नवम्बर, १८६६ ई०)

साहब,

मैं तुमसे शर्मिन्दा। पहला ख़त तुम्हारा मय क़सीदा पहुँचा। मैं क़सीदा किसी किताब में रख कर भूल गया। अब दूसरा ख़त देख कर क़सीदा याद

१. अप्रसन्नता। २. दुःख का कारण। ३. एकान्तसेवी। ४. पृष्ठ। ५. प्रेम

आया। हरचन्द ढूँढ़ा, न पाया। बड़ी बात ये है कि इस क़दर मुझको याद है कि उसी वक़्त मैंने उन अशार को सरासर देख लिया था। अशार सब हमवार[1] थे। तुम अँदेशा न करो और क़सीदा नज़्र गुज़रानो और माल ख़ैर[2] वतन को जाओ। लेकिन भाई, वतन पहुँच कर ज़रूर मुझको ख़त लिखना और अपने घर का पता लिखना। ताकि मैं इस निशान से तुमको ख़त भेजूँ। नवाब मीर ग़ुलाम बाबाख़ाँ साहब को फ़क़ीर की तरफ़ से सलाम कहना। फ़क़त।

सुबह सेशम्बा, १८ नवम्बर १८६६ ई०।

२८

(३ जनवरी, १८६७ ई०)

मुंशी साहब,

वही जहान[3], वही ज़मीन, वही आस्मान, वही सूरत, वही दिल्ली, वही नवाब मीर ग़ुलाम बाबाख़ाँ, वही सैफ़ुल हक़ 'सय्याह', वही ग़ालिब नीमजान[4]। अँग्रेजी डाक जारी, हरकारों को रेल की सवारी, रबीउल अव्वल[5] में तुम्हारा ख़त आया, रबी उस्सानी, जमादिल अव्वल, जमादिउस्सानी, रज्जब, आज शाबान की २६ है। सुबह के वक़्त ये ख़त लिख रहा हूँ। ८ बज गये हैं। इस वक़्त तक न तुम्हारा कोई ख़त आया, न कोई नवाब साहब का इनायत नामा[6]। वास्ते खुदा के मेरे इस ख़त का जवाब जल्द लिखो और उस ख़त में तर्क नामा व पयाम का सबब[7] लिखो। आज ही के दिन एक पार्सल छै टोपियों का इर्साल करता हूँ। खुदा करे पार्सल पहुँच जाये और टोपियाँ तुम्हारे पसन्द आयें। नवाब साहब

---

१. उचित। २. सकुशल। ३. संसार। ४. अर्धमृत। ५. एक महीने का नाम। ६. कृपा-पत्र। ७. पत्र-सन्देश के न भेजने का कारण।

की ख़िदमत में मेरा सलाम पहुँचाना और इताब[1] की वजह दरियाफ़्त करके लिखना। ख़त बैरंग है और पार्सल पेड।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

२६

(१२ फ़रवरी, १८६७ ई०)

मुंशी साहब शफ़ीक़[2], बदिल मेहरबान, अज़ीज़तर अज़ जान[3] सैफ़ुलहक़ मियाँ दादख़ाँ को फ़क़ीर ग़ालिब अलीशाह की दुआ पहुँचे। परसों नवाब साहब का ख़त आया। साहब टोपियों की हक़ीक़त ये है कि तुमने लतायफ़े ग़ैबी' की १५ जिल्दें सात रुपये आठ आने दाम भेजकर मँगवाईं, फिर दो रुपये के टिकट भेज कर टोपियाँ मँगवाईं। मैंने तुम्हारे भेजे हुए रुपयों की टोपियाँ ख़रीदकर तुमको भेज दीं। चाहे तुम पहनो, चाहे छोटे साहब को नज़्र करो।

तुम्हें जो मैंने 'सैफ़ुलहक़' ख़िताब दिया है, अपनी फ़ौज का सिपहसालार मुक़र्रर किया है। तुम मेरे हाथ हो, तुम मेरे बाज़ू हो, मेरे नुत्क़[4] की तलवार तुम्हारे हाथ से चलती रहेगी। 'लतायफ़े ग़ैबी' ने आदा[5] की धज्जियाँ उड़ा दीं।

एक नई बात सुनो। मुहम्मद मिर्ज़ाख़ाँ मेरे सबबी भाई[6] का नवासा है। उसने एक अख़बार निकाला है मुसम्मा[7] व 'अशरफ़ुल अख़बार'—उसका लिफ़ाफ़ा तुमको भेजता हूँ। उसको पढ़कर मालूम कर लोगे कि तुम्हारा एक ऐतराज़ क़तील के कलाम पर छापा गया है। इस इर्साल व एलाम[8] से सिर्फ़

१. अप्रसन्नता। २. दयालु। ३. प्राणों से भी प्रियतर। ४. वाणी। ५. शत्रु लोग। ६. रिश्ते का भाई, मुँह बोला भाई, सकारण बन्धु। ७. नामक। ८. विज्ञप्ति।

इत्तिला मंज़ूर है। हाँ, एक बात ये भी है कि छोटे साहब की नज़र से गुज़र जाये और उस सरकार में ये अख़बार ख़रीद किया जाये और तुम उनकी तरफ़ से हुक्म ख़रीदारी इब्तिदा ए जनवरी[1] १८६७ ई० से बनाम मुहम्मद मिर्ज़ाखाँ लिखो और वो ख़त इस पते से दिल्ली रवाना करो, जो उनके अख़बार के आख़िर में लिखा है।

हैरान हूँ कि छोटे साहब के ख़त का क्या जवाब लिखूँ? उन्होंने मुझे शर्मिन्दा किया। अपने को छोटा और मुझको बुज़ुर्ग लिखा। सैयद तो सब मुसलमानों के बुज़ुर्ग होते हैं, मैं तो मुसलमानों में भी एक ज़लील[2], अलील[3], फ़क़ीर, हक़ीर[4] आदमी हूँ। ये उनकी बुज़ुर्गी, उनकी ख़ूबी, उनकी मेहरबानी है। हक़ताला उनको सलामत रखे और इन मुक़द्दमात में मिन्कुल्लिल वुजूह[5] उनको फ़तह व ज़फ़र[6] नसीब हो। मेरा सलाम कहना और ये इबारत पढ़ा देना।

हाँ साहब, बिरादर व जाँ बराबर[7] मिर्ज़ा मुईनुद्दीन हुसैनखाँ बहादुर को मेरा सलाम कहना और कहना कि भाई मेरा जी देखने को बहुत चाहता है। पहले बरखुर्दार[8] शहाबुद्दीनखाँ साहब से पूछो, वो इजाज़त दे तो फ़ौरन रेल-पेल करते चले आओ। फ़क़त।

सेशम्बा ७ शव्वाल १२८३ हि०, मुताबिक़ १२ फ़रवरी १८६७ ई०।

दीदार का तालिब[9]

—ग़ालिब

३०

(३१ मार्च, १८६७ ई०)

भाई,

तुम जीते रहो और मरातिबे आलिया[10] को पहुँचो। लो, एक हँसी की बात

---

१. जनवरी का प्रारंभ। २. अपमानित। ३. रुग्ण। ४. तुच्छ। ५. सब भाँति से। ६. विजय। ७. प्राणों के समान। ८. सुपुत्र। ९. दर्शनाभिलाषी। १०. उच्च-पद।

सुनो। हमारा ख़त मुंशी कन्हैयालाल के नाम का मेरे पास आया। हरचन्द मैंने ख़याल किया। इस नाम का कोई आशना[1] मुझे याद न आया। ये नादानी उन्होंने मुझसे कह न दिया कि मेरे नाम का ख़त आये तो मेरे पास भेज देना। बेख़बरी में जो ख़त आया मैं न नाम से वाक़िफ़, न मुकाम से वाक़िफ़, ख़त फेर न दूँ तो क्या करूँ? ख़त के वापिस करने के बाद एक दिन आप भाई मिर्ज़ा मुहम्मद हुसैनख़ाँ के साथ मेरे पास आये और तार्रुफ़े क़दीम[2] याद दिलाया। देखना मियाँ क्या ख़ूब ब्यान है। फ़रमाते हैं कि मैं ग़दर से पहले दो-तीन बार तेरे पास हाज़िर हुआ हूँ। इन्साफ़ करो, दो-तीन मुलाक़ातें और दस-ग्यारह बरस की बात! मैं निसयान[3] का पुतला, मेरा क़ुसूर क्या? बहरहाल ये शरीफ़ हैं और उम्दा रोज़गार किये हुए हैं।

साहब, मैंने 'अवध अख़बार' में देखा कि छोटे साहब मुक़दमा जीते और बम्बई के साहबों में उनकी अफ़्ज़ाइशे जाह व जलाल[4] व ताज़ीम[5] व तौक़ीर[6] कमाल हुई। मैं तो तहनियत[7] में ख़त लिखूँगा मगर रश्क आता है कि ब हवालए 'अवध अख़बार' लिखूँ और ब हवालए सैफ़ुलहक़ न लिखूँ। ज़्यादा-ज़्यादा।

—असदुल्लाह् ग़ालिब

३१

(२३ अप्रैल, १८६७ ई०)

मुंशी साहब, सआदत व इक़बाल निशान, अज़ीज़तर अज़जान सैफ़ुलहक़ मियाँ दादख़ाँ 'सय्याह' को ग़ालिब की दुआ पहुँचे। परसों एक ख़त तुम्हारा

१. परिचित। २. पुराना परिचय। ३. विस्मृति। ४. प्रतिष्ठा और ऐश्वर्य में वृद्धि। ५. आदर। ६. मान्यता। ७. बधाई।

आग़ा ग़ुलाम हुसैनख़ाँ साहब का क़ता पहुँचा। उसमें कुछ तो शेर इस्लाह तलब भी थे, अब इस्लाह दे कौन ? मैं तो अपनी मुसीबत में गिरफ़्तार, बारे, एक मेरा शागिर्द रशीद[1] मुंशी हरगोपाल 'तफ़्ता' बसवारी रेल मेरे देखने को आया था। उसको मौक़ा व महल[2] बता दिया, जो मैं कहता गया, उसी तरह वो बनाता गया। वो क़ते का क़ाग़ज़ बाद इस्लाह के 'अकमल उल मताबे' में भेज दिया। हफ़्ते आइन्दा में तुम भी देख लोगे।

मर्गनागाह का तालिब

—ग़ालिब

३४

(२५ अगस्त, १८६७ ई०)

नूरे चश्म इक़बाल निशाँ सैफ़ुलहक़ मियाँ दादख़ाँ 'सय्याह' को ग़ालिब नीमजाँ की दुआ पहुँचे। वाक़ई तुम्हारे दो ख़त आये हैं। आगे मैं लेटे-लेटे कुछ लिखता था, अब वो भी नहीं हो सकता। हाथ में राशा, आँखों में ज़ोफ़े बसर[3]। कोई मुतसद्दी मेरा नौकर नहीं। दोस्ते आशना[4] कोई आ जाता है तो उससे जवाब लिखवा देता हूँ।

भाई, मैं तो कोई दिन का मेहमान हूँ। और अख़बार वाले मेरा हाल क्या जानें ? हाँ, 'अकमलुल-अख़बार' और 'अशरफ़ुल अख़बार' वाले कि, ये यहाँ के रहने वाले हैं और मुझसे मिलते रहते हैं, सो इनके अख़बार में मैंने अपना मुफ़स्सल[5] हाल छपवा दिया है और उसमें मैंने उज्र चाहा ख़तों के जवाब और अशार के इस्लाह से, उस पर किसी ने अमल न किया। हद

---

१. शिक्षित शिष्य। २. अवसर और स्थान। ३. दृष्टि-दौर्बल्य। ४. परिचित मित्र। ५. विस्तृत।

तक हर तरफ़ से ख़तों के जवाब का तक़ाज़ा और अशार वास्ते इस्लाहों के चले आते हैं, और मैं शर्मिन्दा होता हूँ। बूढ़ा, अपाहिज, पूरा बहरा, आधा अन्धा, दिन-रात पड़ा रहता हूँ। हाजती पलंग के तले धरी रहती है। तख़्त[1] चौकी पलंग के पास रहता है। सो तख़्त चौकी पर तीसरे-चौथे दिन इत्तिफ़ाक़ जाने का होता है। और हाजती[2] की हाजत[3] बसबबे सुरअ़ते बोल[4] के घंटे भर में पाँच-छै बार होती है।

तस्वीर खींचने वाला जो हिन्दुस्तानी एक दोस्त था, शहर से चला गया। एक अँग्रेज़ है, वो खींचता है। मुझमें इतना दम कहाँ कि कोठे पर से उतरूँ, पालकी में बैठूँ और उसके घर जाऊँ और घटे-दो घंटे कुर्सी पर बैठूँ और तस्वीर ख़िंचवा कर जीता-जागता अपने घर फ़िर आऊँ। अब तुम अज़राहे मेहरबानी मेरा—इब्राहीम अलीख़ाँ बहादुर और हकीम सैयद अहमद हसन साहब को और जब बम्बई से वापिस आ जायें, नवाब गुलाम बाबाख़ाँ को ये ख़त देना। तुम्हारे हाँ लड़के का पैदा होना और उसका मर जाना मालूम हो कर मुझको बड़ा ग़म हुआ। भाई, इस दाग़ की हक़ीक़त मुझसे पूछो कि ७१ बरस की उम्र तक सात बच्चे पैदा हुए, लड़के भी और लड़कियाँ भी और किसी की उम्र-पन्द्रह महीने से ज़्यादा न हुई। तुम अभी जवान हो। हक़ताला तुम्हें सब्र और नेमुल बदल[5] दे। वस्सलाम।

—ग़ालिब

३५

(२५ जनवरी, १८६८ ई०)

साहब,

तुम्हारे ख़त के पहुँचने से कमाल ख़ुशी हुई। टोपियाँ अगरचे तुम्हारे सर

१. बड़ा थाल। २. मूत्र-पात्र। ३. आवश्यकता। ४. जल्दी-जल्दी पेशाब आना ५. अतिपूर्त्ति।

पर ठीक न आईं, लेकिन जाया[1] न गईं। मेरे शफ़ीक[2] और तुम्हारे मुरव्वी[3] के सर्फ़[4] में आईं। तुमको और टोपियाँ भेजूँगा।

मुसव्वर से सख्त आजिज़[5] हूँ। वादा ही वादा है, वफ़ा का नाम नहीं।

कुल्लियाते मीर तक़ी[6] का इन्तिख़ाब तुम्हारे ख़त के पहुँचने से दो दिन पहले मीर फ़ख़्रुद्दीन ने इर्साल कर दिया। टिकट उनके हवाले कर दिये।

हज़रत बुहतान[7] लगाने की खू[8] किससे सीखे हो? मेरे पास कोई ग़ज़ल तुम्हारी नहीं है। नवाब साहब को सलाम कहना और मेरी ज़बानी कहना कि टोपियों को मेरा आमुग़ाँ[9] समझना। सैफ़ुल हक़ की नज़्र तसव्वुर न करना।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

---

१. व्यर्थ। २. मित्र। ३. अभिभावक। ४. व्यवहार, व्यय। ५. तंग, परेशान। ६. मीर तकी का काव्य-संग्रह। ७. कलंक। ८. स्वभाव। ९. उपहार।

मीर हबीबुल्लाह 'ज़का' के नाम

१

(३० जुलाई, १८६३ ई०)

सुबह सेशम्बा १३ सफ़र साले ग़फ़र (१२८० हि०)। साहब, मैं तुमको इख़वानुस्सफ़ा[1] में गिनता हूँ। अपना नूरे नज़र[2] व लख़्ते जिगर[3] जानता हूँ। देखो, तुम पर मुझको क्या ऐतमाद है कि ख़ुदा ज़ब्ते राज़[4] नहीं कर सकता और तुम से राज़दारी और अमानत में उस्तुआरी[5] चाहता हूँ। क़सीदे व ग़ज़ल में सादे तहसीन[6] व इक्तिज़ा ए वक़्त[7] व क़िस्मत है, न व अन्दाज़ ए अर्ज़िये कलाम[8], ममदूह[9] सुख़न फ़हम होता तो मुझको मुतवस्सित[10] के तसाहुल[11] का वहम होता है, अग़निया[12] को न मज़ाक़े शेर[13] से निस्बत न मुताले अशार[14] की फ़ुर्सत। मुतवस्सित ने वक़द्दरे (हिम्मत ?) सिलसिले जुंबानी[15] की, लेकिन मर्ज़ा[16] ने नाक़द्रदानी की।

मौलवी ग़ुलाम ग़ौसख़ाँ 'बेख़बर' मीर मुंशी लेफ़्टंट गवर्नर मुख़्लिसे ख़ालिसुल इख़लास[17] हैं, हर्गिज़ उनको मुद्दई से तलम्मुज़[18] नहीं। अलबत्ता उनको

१. आत्मीय-जन। २. आँख की पुतली। ३. जिगर का टुकड़ा। ४. रहस्य को रोके रखना। ५. दृढ़ता। ६. साधुवाद का चिह्न। ७. भाग्य की इच्छा पर आश्रित। ८. कविता सुनाने की प्रार्थना के आधार पर अनुमान लगाना। ९. जिसकी प्रशंसा की जाये। १०. माध्यम, बीच का आदमी। ११. आलस्य, उपेक्षा १२. सम्पन्न लोग। १३. काव्य-रुचि। १४. काव्य का अध्ययन। १५. गति। १६. शरण-स्थल, ठिकाना। १७. अत्यन्त मित्र। १८. शिष्यत्व।

ख़ुशगवार जानते हैं और ये कभी न होगा कि वो मेरा मुक़ाबिला करें और क़ात ए बुरहान का जवाब लिखें—

बातिलस्त उंचे मुद्दई गोयद[1]

मुद्दई अपने ज़ाम में मुझको अपना हमफ़न[2] जानकर हसद[3] करता है। मैं अमीर अली शेर (?) जैसा मुहतसिब[4] और मौलवी जामी जैसा मुफ़्ती[5] कहाँ से लाऊँ जो न्याव करे और काज़िब[6] को सज़ा दे? शुक्र है ख़ुदा का कि तुम सुख़नवर[7] और सुख़नदाँ[8] हो और यक़ीन है कि क़लम रवे हिन्द[9] में और भी ऐसे आदमी होंगे कि मेरे और मुद्दई के रुत्बे को मुमयिज़्ज़[10] हो सकेंगे।

ईदस्त बादा शुद फ़लको साग़िर आफ़ताब[11]

ख़ालसन् लिल्लाह[12], फ़लक[13] ज़र्फ़[14] और आफ़ताब मज़रूफ़[15] है। ये शख़्स ज़र्फ़ को मज़रूफ़ और मज़रूफ़ को ज़र्फ़ ठहराता है। इसको कौन मुसल्लम[16] रखेगा? इससे बढ़कर एक और ख़द्शा[17] है याने मुशब्बा[18] और मुशब्बाबिही[19] में बजहे शबा[20] शर्त है। आफ़ताब व सागर[21] में तद्बीर बजहे[22] शबा है, शराब और फ़लक में बजहे शबा कहाँ?

मैं अपने को ऐसा नहीं जानता कि तुम्हारे कलाम को इस्लाह दूँ। क़द्रदानी[23] क्यों कर कहूँ, क़द्र अफ़्ज़ाई[24] करते हो। दोस्ताना, न उस्तादाना

---

१. विरोधी जो कुछ कहता है, सब झूठ है। २. हम व्यवसायी। ३. ईर्ष्या, जलन। ४. हिसाब करने वाला, पूछताछ करने वाला। ५. मुस्लिम धर्मशास्त्र के अनुसार निर्णय देने वाला। ६. झूठा। ७. कवि। ८. काव्य के मर्मज्ञ। ९. हिन्दुस्तान। १०. विवेकी। ११. ईद का दिन है, आकाश शराब है और सूरज प्याला। १२. केवल ईश्वर के लिये। १३. आकाश। १४. पात्र। १५. जो वस्तु पात्र में रहती है, आधेय। १६. सर्वमान्य। १७. आशंका १८. उपमेय। १९. उपमान। २०. समान धर्म। २१. मधुप्याला। २२. आकाश। २३. गुण-ग्राहकता। २४. गुणों की वृद्धि।

ज़ो खयाल में आएगा, कहा जाएगा। अगर आपने इस रविश का याने इस्तिस्लाह[1] का इल्तिज़ाम[2] किया है तो जब तक काग़ज़े अशार मेरे पास से वापिस न जाया करे, माकुतिब फ़ीगो शुहरत[3] न पाया करे। मजमूअए कलामे साबिक[4] भेज दोगे, मैं बकमाल तीब्रे खातिर[5] उसको देखकर दूँगा। इस्तिजाज़त[6] क्या ज़रूर ?

१३ सफर १२८० हि०, मुताबिक ३० जुलाई १८६३ ई०।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

२

(२६ अगस्त, १८६३ ई०)

हज़रत मौलवी साहब,

मैं बरस दिन से बीमार और तीन महीने से साहबे फ़राशि[7] हूँ। उठने-बैठने की ताक़त मफ़क़ूद[8], फ़ोड़ों से बदन लालाज़ार[9] पोस्त[10] से हड्डियाँ नमूदार[11]। फोड़े ऐसे जैसे अंगारे सुलगते हैं। आज़ा[12] पर दस जगह फाये लगते हैं। ज़ोफ़ व नातवानी अलावा, सोज़े गमे हाए निहानी[13] अलावा। सनते सहले मुम्तने[14] में मैंने नवाब मुख़्तारुल मुल्क[15] को क़सीदा भेजा, कुछ क़द्रदानी न फ़रमाई।

१. परामर्श। २. किसी बात का उत्तरदायित्व लेना, स्वीकार करना। ३. जो इसमें लिखा गया है, प्रसिद्धि है।४. पहले की कविताओं का संग्रह। ५. प्रसन्नता से। ६. आज्ञा-याचना। ७. शय्याशायी। ८. लुप्त। ९. लाला नामक फूलों की वाटिका। १०. चर्म। ११. प्रकट। १२. शरीरांग। १३. मानसिक शोक की वेदना पृथक्। १४. छुपा हुआ। १५. नवाब मुख़्तारुल मुल्क मीर तुराब अलीखाँ सालार जंग प्रथम, हैदराबाद के प्रधान मंत्री थे।

रद्दे फ़िर्क़ए वहाबिया[1] में एक मस्नवी जो साबिक़ में लिखी थी वो मुहीउद्दौला को भेजी, रसीद भी न आई, अब सुनता (हूँ) कि मौलवी 'गुलाम इमाम' शहीद शागिर्दे 'क़तील' वहाँ कोस[2] 'अनादिला गौरी' बजा रहे हैं और सुखन नाशनासों[3] को अपना ज़ोरे तबा दिखा रहे हैं। एक कम सत्तर बरस की उम्र मेरी हुई, सिवाय शुहरते खुश्क[4] के फ़ने शेर का कुछ फल न पाया। फर्मान्दिहाने अस्त्र[5] मौतक़द[6] हो गये, मगर कुछ हात न आया। 'अहसनत[7]' व 'मरहबा'[8] का शोर सामे फ़रसा[9] हुआ। खैर, सताइश[10] का हक़ सताइश से अदा हुआ, मुख्तारुल मुल्क ने ये भी न किया। न मदह[11] की दाद दी, न मदह का सिला[12] दिया। हैरान हूँ कि नवाब साहब मुझे क्या समझे। मुहीउद्दौला से और कुछ नहीं कहता मगर ये कि ख़ुदा समझें।

कल से पलंग पर लेटा-लेटा ग़ज़ल को देख रहा हूँ और लेटे-लेटे ये सतरें लिखता हूँ—

दीदेम गुलो लाला चहा रंग बरावुर्द[13]

फ़क़ीर के नज़दीक दीदेम ज़ायद है अगर यों हो तो बेहतर है—

हरेक ज़ गुले लाला···(चहारंग बराउर्द)
बाशद शफ़क़्क़े काँ बलबे लाल तो माँद
गर चर्ख़ बकामे दिलेमारंग बरावुर्द[14]

---

१. वहाबी (मुसलमानों में सुधारवादी आन्दोलन) सम्प्रदाय के खण्डन में। २. दुन्दुभि। ३. काव्य से अपरिचित। ४. कोरी प्रशंसा। ५. समकालीन शासक। ६. भक्त। ७. साधुवाद। ८. साधुवाद। ९. स्रोता को बहरा बनाने वाला। १०. प्रशंसा। ११. प्रशंसा। १२. प्रतिफल। १३. गुले और लाला को देखा, उसमें विचित्र प्रकार के रंग है। १४. यद्यपि आकाश ने हमारी इच्छा के अनुसार रंग उत्पन्न किये किन्तु प्रातः और सायं की लालिमा तुम्हारे अधरों की समता कहाँ कर सकती है।

मीर हबीबुल्लाह 'ज़का' के नाम

'बाशद' मुख़िल्ले मानी[1] है, अगर इसकी जगह 'आरद' हो तो बेहतर मगर 'आरद' सीग़ा मुस्तक़बिल[2] का और आउर्द माज़ी[3] और फ़ाइल[4] दोनों फ़ेलों[5] का चर्ख़[6]। हरचन्द असातिज़ा[7] ने यों भी लिखा है, मगर फ़ारसी गोयाने हिन्द[8] न मानेंगे। पस इस शेर को यों लिखना चाहिए--

हाशा के शफ़क़ मिस्ले लबे लाले तो बाशद
के चर्ख़ व कामे दिल मा रंग बराबुर्द

मिस्रा--ख़ूं शुद दिल ग़म दीद ए...

ये शेर हमवार है, ना साद[9] के क़ाबिल, न इस्लाह का मुहताज। चौथा और पाँचवाँ ये दो शेर, वाह क्या कहना है--

ऐ अहले विरा चूं न तवाँ दाश्त अज़ीज़स्त

ये भी हमवार है, न साद चाहता है, न इस्लाह--

गोई के ज़बाँ दर दहनम बर्गे हिनाबूद
ता बोसा ज़दम आँ कफ़े पा रंग बराबुर्द[10]

मौलवी साहब, ये बात तो कुछ नहीं। ज़बान चाटने का आला है न चूमने का, ज़बान बर्गे हिना[11] बन गई तो बोसे से कफ़ेपा[12] क्यों हिनाई[13] हो जाये ?

१. अर्थ का विरोधी। २. भविष्य। ३. भूत। ४. कर्त्ताकारक। ५. क्रिया। ६. आकाश। ७. आचार्य (ब. व.)। ८. भारत के फ़ारसी कवि। ९. अस्वीकृति। १०. यद्यपि मेरे मुंह में जीभ पर मेंहदी का पत्ता था, किन्तु जब मैंने तुम्हारा चुम्बन लिया तो उसका रंग तुम्हारे तलवों पर आ गया। ११. मेंहदी का पत्ता। १२. पाँव का तलवा। १३. मेंहदी के रंग का।

गोई दहनम लवज़ रंगे बर्गे हिनादाश्त
ता बोसा ज़दम आँ कफ़े पा रंग बरावुर्द

मक़्ता[1] और इसके ऊपर का शेर दोनों अच्छे। अब आप इस खत की रसीद लिखिये और उसमें ग़ुलाम इमाम शहीद का हाल मुफ़स्सल लिखिये कि उनकी वहाँ क्या सूरत है। एक शख्स मुझसे यों कहता था कि मुख्तारुल मुल्क ने मुँह न लगाया मगर मुहीउद्दौला ने चार सौ रुपये महीना सरकार जनाब आली से मुक़र्रर करा दिया है।

रोज़ा चहारशम्बा, १० रबीउल अव्वल १२८० हि०, मुताबिक़ २६ अगस्त १८६३ ई०।

३

(२५ सितम्बर, १८६३ ई०)

मौलाना,

एक तफ़क़्क़ुदनामा[2] पहले भेजा था, उसके जवाब में यहाँ से खत जवाब-तलब गया था। फिर एक और मेहरबानीनामा आया। इसमें मैंने अपने खत का जवाब न पाया। नाचार इस खत के जवाब की निगारिश[3], अपने खत जवाब तलब के पासुख़[4] आने पर मौक़ूफ़ और हिम्मत आज़ादाना, न फ़ितरते कय्यादाना[5] इस तहरीर के पाने पर मसरूफ़ रखी गई। वारे, वो कुल नज़र अफ़रोज़[6] और तबीयत उसके मुशाहदा[7] से तरब अन्दोज़[8] हुई। अब दिरंगवर्ज़ी[9] की तक़्सीर[10] माफ़ कीजिये और अपनी दोनों निगारिशों का जवाब लीजिये।

---

१. गजल का अन्तिम पद। २. पूछ-ताछ का पत्र। ३. लेखन। ४. उत्तर। ५. मक्कारी। ६. नेत्रानन्दक। ७. निरीक्षण। ८. आनन्दमय। ९. विलम्ब। १०. अपराध।

मीर हबीबुल्लाह 'ज़का' के नाम

साहब, तारीखे इन्तिबा ए कुल्लियात[१] खूब लिखी है। मगर हज़ार हैफ़[२] के बादज़ इंतिबा पहुँची। किताब की रौनक़ अफ़ज़ा न हुई, बन्दा पर्वर तुम चिरागे दूदमान[३] मेहर व वफ़ा और मिनजुम्ला इखवानुस्सफ़ा[४] हो। मुझसे तुम्हें मुहब्बत रूहानी है, गोया ये जुम्ला तुम्हारी ज़बानी है। दोस्त की भलाई के तालिब[५] हो, इस शेवे में शरीके ग़ालिब[६] हो। एक ख़ाहिश मेरी क़ुबूल हो, ताकि मुझको राहत हुसूल[७] हो, मबादी[८] का ज़िक्र नहीं करता हूँ। वाक़ ए हाल दिलनशीन करता हूँ।

जनाब मौलवी मुईउद्दीनखाँ साहिब के बुज़ुर्गों में और फ़क़ीर के बुज़ुर्गों में बाहम वो खुल्लत[९] व सुफ़ूतें मरई[१०] थी कि वो मुक्तज़ी[११] इसकी हुई कि हममें और उनमें बिरादराना इर्तिबात[१२] व इख्तिलात बाहम[१३] रहे और हमेशा यों ही बल्कि रोज़ अफ़्ज़ूं[१४] रहेगा। ख़त में ख़त मलफ़ूफ़[१५] करना जानिबे हुक्काम[१६] ऐ ममनू है, अगर यों न होता तो मैं उनके नाम का ख़त तुम्हारे ख़त में मलफ़ूफ़ करके भेजता। नाचार अब आप से ये चाहता हूँ कि आप मौलवी साहब से मिलें और उनको ये ख़त अपने नाम का दिखायें और मेरी तरफ़ से बाद सलाम मेरे कुल्लियात के पार्सल का उनके पास और उनके ज़रिय ए इनायत[१७] से इस मुजल्लद का हज़रत फ़लक रफ़त[१८] नवाब मुख्तारुल मुल्क बहादुर की नज़र

१. काव्यसंग्रह की छपाई की तिथि। २. हाय-हाय, संकट। ३. कुल-दीपक। ४. बन्धु। ५. इच्छुक। ६. ग़ालिब के साथ। ७. शान्ति की प्राप्ति। ८. आरम्भ, किसी विद्या की प्रारम्भिक बातें, जिनके जाने बिना उस विद्या को प्राप्त नहीं किया जा सकता। ९. हार्दिक मित्रता। १०. विशुद्ध स्नेह। ११. जिसका तकाज़ा हो। १२. मेल-मिलाप। १३. प्रेम-व्यवहार, परस्पर। १४. नित्य वृद्धिशील। १५. लिफाफे में बन्द। १६. अधिकारियों की ओर से। १७. कृपा से। १८. श्रेष्ठ पद प्राप्त।

से गुज़रना और जो कुछ उसके गुज़रने के बाद वाक़ै हो, दरियाफ़्त करके मुझको मुत्तलै[1] फ़रमायें।

जुमा १० रबीउस्सानी १२८० हि० मुताबिक़ २५ सितम्बर १८६३ ई०।

—ग़ालिब

४

(१९ अक्तूबर, १८६३ ई०)

बन्दा पर्वर,

आज तुम्हारा इनायतनामा आया और आज ही मैंने उसका जवाब डाक में और उस ख़त के साथ पार्सल कुल्लियात का भी इर्साल किया। दसवें-बारहवें दिन ख़त और महीने-बीस दिन में पार्सल पहुँचेगा। ख़त का जवाब ज़रूरी उल इर्साल[2] नहीं, लेकिन पार्सल की रसीद ज़रूर लिखिएगा। आपके ख़त की इबारत तो मैं समझा लेकिन मुद्दआ मुझ पर न खुला। मैंने पार्सल कब आपके पास भेजा और कब आपको लिखा कि आप ये पार्सल मुईउद्दीन ख़ाँ को दे दीजिएगा? पार्सल का लिफ़ाफ़ा मौलवी साहब के नाम का और आपको उसके इर्साल की इत्तिला और आप से ये ख़ाहिश कि मौलवी मुईउद्दीनख़ाँ साहब से मिलिये और मेरा ख़त जो आपके नाम का है, उन्हें दिखाइये और उनसे पार्सल का हाल दरियाफ़्त फ़रमाइये। आप विलायाती भी नहीं जो मैं ये तसव्वुर करूँ कि उर्दू इबारत से इस्तिंबाते मतलब[3] अच्छी तरह न कर सके। बहरहाल अब मुद्दआ समझ लीजिये और मौलवी साहब से मिलने का इरादा फ़रमाइये और पार्सल का हाल मालूम करके लिखिये।

---

१. सूचित। २. आवश्यक रूप से भेजना। ३. अर्थ का निष्कर्ष।

मीर हबीबुल्लाह 'ज़का' के नाम

५ जमादिल अव्वल १२८० हि० व रोज़ दहुम अक्तूबर १८६३ ई०।

दाद का तालिब

—ग़ालिब

५

साहब,

पहले मत्ले[1] में लुत्फ़ नहीं। हाँ मज़मून लतीफ़ है, वो फ़र्द में खूब आ गया है। मत्ल ए सानी[2] बसब्बे ताक़ीदात[3] के मुहमिल[4] रह गया, 'वर्ना' का क़ाफ़िया[5] और शेर में और तरह से बँध गया। तीसरा शेर अल्फ़ाज़ बदलने से बहुत अच्छा हो गया। जो शेर बेतसर्रुफ़[6] बदस्तूर रहा, उसका ज़िक्र कुछ ज़रूर नहीं।

साक़ी अभी छनी...

छनी लफ़्ज़ ग़रीब है न अहले देहली[7] के ज़बान ज़द[8] न गोशज़द[9]। ग़रबाल को छलनी कहते हैं, जिसकी फ़ारसी 'परवेज़न' है और जिस कपड़े में सायलात[10] को छानें, फ़ारसी उसकी 'लाए पाला' और उर्दू 'साफ़ी' है, व या ए मारूफ़[11] 'बराबर न हुआ था'...तक़र्रुर वक़्ते मर्ग का इन्कार हश्व[12] बल्कि मुहमल है, मगर हाँ, तक़र्रुर का वक़्त अजल[13] को क़रार दिया जाये।

१. ग़ज़ल का पहला पद। २. कसीदे अथवा ग़ज़ल के आरम्भिक शेर को छोड़कर कोई अन्य ऐसा शेर जिसके दोनों चरणों में अन्त्यानुप्रास हो। ३. शब्दों को इधर-उधर करना जिससे अर्थ में कठिनाई हो। ४. अस्पष्ट। ५. अन्त्यानुप्रास, तुक। ६. अपरिवर्तित। ७. दिल्ली निवासी। ८. प्रचलित। ९ सुना हुआ, श्रुत। १०. द्रव पदार्थ। ११. वह उर्दू वर्ण-माला का एक अक्षर जो गोल लिखी जाती है, ई उच्चरित होती है। १२. निरर्थक शब्द, भरती के शब्द। १३ मृत्यु।

नहीं। आठ-दस रोज़ हुए होंगे कि वो मुजल्लद[1] उसी पार्सल में, कि, उसको रूगर्दा[2] कर लिया है, बाद अदा ए महसूल आपका नाम लिखकर रवाना कर दिया है। यक़ीन है कि बाद आपके ख़त की रवानगी के आपके पास पहुँच गया होगा।

हाँ साहब, ख़ते दीरोज़ा[3] के साथ एक ख़त मौलवी नजफ़अली साहब के नाम, मय इस हुक्म के कि मौलवी साहब के पास पहुँचाऊँ, मैंने पाया। हाल ये है कि मौलवी साहब से मेरी मुलाक़ात नहीं। सिर्फ़ इत्तिहादे मानवी[4] के इक़्तिज़ा[5] से उन्होंने 'दाफ़ै हिज़्यान' लिखकर फ़ने सुख़न[6] में मुझको मदद दी है। मुंशी गोविन्दसिंघ देहलवी एक उनके शागिर्द और मेरे आशना हैं। उनको वो ख़त बजिन्सही भेज दिया। यक़ीन है कि वो मौलवी नजफ़अली साहब को भेज देंगे। उन्हीं के इज़्हार से दरियाफ़्त हुआ कि मौलवी साहब मुर्शिदाबाद बंगाले में हैं। नवाब नाज़िम ने उनको नौकर रख लिया है। हर शख़्स ने बक़द्रे हाल एक एक क़द्रदाँ[7] पाया; ग़ालिब सोख़्त ए अख़्तर[8] को हुनर की दाद भी न मिली।

कसम बख़ुद न पिज़ीरस्त दहर बाज़म बुर्द
चू नाम ए के बुवद ना नविश्तए उन्वानश[9]

ये शेर मेरा है। वलीअहद ख़ुसखे देहली[10] मिर्ज़ा फ़तहउलमुल्क बहादुर मग़फ़ूर के क़सीदे का और देखो एक रुबाई मेरी—

---

१. ग्रन्थ। २. परांगमुख, उल्टा। ३. कल (गत)। ४. अर्थैकता। ५. इच्छा। ६. काव्य-शास्त्र। ७. गुणज्ञ। ८. अभागा। ९. मुझे किसी ने स्वीकार नहीं किया किन्तु कालचक्र मुझे उन्हीं के पास ले गया जैसे शीर्षकहीन (बिना नाम का) पत्र इधर-उधर भटकता है। १०. दिल्ली के सम्राट् के युवराज।

दस्तम ब किलीदे मख़ज़ने मी बायस्त
बरबुवद तिही ब दामने मी बायस्त
या हीच गहम बकस ने उफ़तादे कार
या खुद बे ज़माना चूँ मने मी बायस्त[1]
इन्नालिल्लाहे व इन्नाइलहे राजऊन[2]।
ऐ इताबत व इनायत हमशक्ल[3]

८

(१ मई, १८६६ ई०)

आपका ख़त हावी ए हल्ले शुबहात[4] जिस दिन पहुँचा, उसके दूसरे दिन जवाब लिखकर भेज दिया। दो मिस्रों में दोलफ़्ज़ बदले गये। दो शेरों के बाब में कुछ तक़रीर दर्ज हुई। दो तीन शेरों में तुम्हारी राय मुसल्लम[5] रही। बावजूद फ़िक़्दाने हाफ़िज़ा[6] व इस्तीला ए निस्दान[7] एक मिस्रे का बदला हुआ लफ़्ज़ याद है——

चे ग़र्रा गर्र ए ए पेशानिए समन्दे उम्र[8]

दूसरा तबद्दुल[9] इसी क़दर याद रह गया है कि 'शब गिरों गिराँ रिकाब'

१. मेरा हाथ खजाने की ताली पर रहता था। रिक्त हस्त लोग मेरी ओर देखते थे। या तो मेरा काम कभी किसी से न पड़ा या स्वयं भाग्य था। २. सब कुछ ईश्वर का है, सब का अवसान ईश्वर में है। ३. तुम्हारा क्रोध भी कृपा के समान है। ४. आपका पत्र समस्त सन्देहों को दूर करने वाला है। ५. स्वीकृत, प्रामाणिक। ६. स्मृति का अभाव। ७. विस्मृति की विजय। ८. तुम अपनी आयु पर इतना गर्व क्यों करते हो। ९. परिवर्तन।

कुछ इसी तरह के दो लफ़्ज़ थे। वे वाओ आतिफ़ा[1] कुछ तक़द्दुम[2] व ताख़ुर[3] हो गया है।

सुबह शम्बा ३ ज़िलहज्जा मुताबिक़ यकुम मई साले हाल।

—ग़ालिब

६

(१२ मई, १८६६ ई०)

मेरे मुशफ़िक़[4], मेरे शफ़ीक़[5], मुझसे हेच पोच[6] के मानने वाले, मुझसे बुरे को अच्छा जानने वाले, मेरे मुहिब्ब[7], मेरे महबूब[8], तुम को मेरी ख़बर भी है? आगे नातवाँ था, अब नीमजाँ हूँ। आगे बहरा था, अब अन्धा हुआ चाहता हूँ। रामपूर के सफ़र का वो आवुर्द[9] है राशा[10] व ज़ोफ़े बसर[11]। जहाँ चार सतरें लिखीं, अगुलियाँ टेढ़ी हो गईं, हर्फ़ सूझने से रह गये। इकहत्तर बरस जिया, बहुत जिया। अब ज़िन्दगी बरसों की नहीं, महीनों और दिनों की है—

पहला ख़त तुम्हारा पहुँचा, इससे तुम्हारा मरीज़ होना मालूम हुआ। मुतवातिर[12] दूसरा ख़त मय ग़ज़ल आया। ग़ज़ल को देखा। सब शेर अच्छे और लतीफ़। हाफ़िज़े[13] का ये हाल है कि ग़ज़ल की ज़मीन[14] याद नहीं। इतना याद है कि एक लफ़्ज़ में कोई शेर बदला गया था। ग़र्ज़ कि वो ग़ज़ल

---

१. बिना 'व' (संयोजक) के। २. प्राथमिकता। ३. विलम्ब। ४. मित्र। ५. दयालु। ६. अकिंचन। ७. प्रेमी। ८. प्रिय। ९. भेंट। १०. कम्पन। ११. अग्निमान्द्य। १२. निरन्तर, लगातार। १३. स्मरण शक्ति। १४. ग़ज़ल का छन्द, अन्त्यानुप्रास और अन्त्यानुप्रास से पहले का शब्द।

बारे मुलाहज़ा[1] तुमको भेजी गई। और लिखा गया कि नवीदे हुसूले सेहत[2] जल्द भेजो।

कल एक ख़त रजिस्टरीदार आया, गोया सितारा दुम्बालेदार[3] आया। हैरान कि माजरा क्या है। बारे, खोला और देखा। ख़ते नवीदे रफ़ए मर्ज़[4] व हुसूले सेहत से खाली और शिकवा हाए बेजा[5] से लबरेज़।

साहब, मेरे नाम का ख़त जहाँ से रवाना हो वहीं रह जाये तो रह जाये, वर्ना दिल्ली के डाकख़ाने में पहुँच कर क्या मजाल है जो मुझ तक न पहुँचे। यहाँ के डाक के कारपर्दाज़ों को इख़्तियार है, मकतूब अलैह[6] को दें या न दें। आप मिर्ज़ा साबिर का तज़किरा माँगते हैं, उसका ये हाल है कि ग़दर से पहले छपा और ग़दर में ताराज[7] हो गया। अब एक मुजल्लद उसका कहीं नज़र नहीं आता। बस, अब मुझे इतना लिखना बाक़ी है कि उस ख़त की रसीद और अपनी ख़ैर व आफ़ियत जल्द लिखो।

सुबह जुमा २५ ज़ीहज्जा १२८२ हि०, १२ मई १८६६ ई०।

जवाबे ख़त का तालिब
—ग़ालिब

१०

(४ दिसम्बर, १८६६ ई०)

दोस्ते रूहानी[8] व बिरादरे ईमानी मौलवी हबीबुल्लाख़ाँ मीर मुंशी को फ़क़ीर ग़ालिब का सलाम। तुमने यूनुफ़अलीख़ाँ को कहाँ से ढूँढ़ निकाला और

१. निरीक्षण के पश्चात्। २. स्वास्थ्य प्राप्ति की शुभ-सूचना। ३. पुच्छल। ४. रोग मुक्ति का शुभ समाचार। ५. अनुचित शिकायतें। ६. जिसके नाम पत्र लिखा गया। ७. नष्ट। ८. अभिन्न मित्र।

उनका तख़ल्लुस[1] और उनका ख़िताव किससे मालूम किया? वग़ैर निशाने महल्ले के उनको ख़त क्यों कर भेजा और वो ख़त उनको क्यों कर पहुँचा।

हैरत् अन्दर हैरतस्त ऐ यारे मन[2]।

पहले ये तो कहो कि 'दुर्रफ़िशे क़ावयानी' और वो क़ता जिसकी पहली वैत[3] ये है तुम को पहुँचा है या नहीं? अगर पहुँचा तो मुझको रसीद क्यों न लिखी?

मौलवी अहमद अली 'अहमद' तख़ल्लुस नुस्ख़ ए
दर ख़ुसूसे गुफ़्तगू ए पार्स इंशा कर्दा अस्त[4]

अगर ये पार्सल पहुँच गया है, तो रसीद लिखो और दीवाचए सानी[5] जदीद की दाद दो और अगर नहीं पहुँचा तो मुझको इत्तिला हो कि एक नुस्ख़ा और भेजूँ।

ज़ीस्त दुश्वार[6]। इस महीने याने रज्जब की आठवीं तारीख़ से तेहत्तरवाँ बरस शुरू हुआ। ग़िज़ा सुबह को सात बादाम का शीरा, क़न्द के शरवत के साथ दोपहर को सेर भर गोश्त गाढ़ा पानी, क़रीब शाम कभी-कभी तीन तले हुए कबाब। छै घड़ी रात गये पाँच रुपये भर शरावे ख़ानासाज़ और उसी क़दर अरक़ेशीर[7]। आसाव[8] के ज़ोफ़ का ये हाल कि उठ नहीं सकता और अगर दोनों हाथ टेक कर चार पाया बनकर उठता हूँ तो पिंडलियाँ लरज़ती हैं। माहाज़ा दिन भर में दस बारह बार उसी क़दर रात भर में पेशाव की हाजत होती है। हाजती पलंग के पास लगी रहती हैं, उठा और पेशाव

---

१. काव्य नाम। २. मित्र, आश्चर्य में आश्चर्य है। ३. दो चरण। ४. मौलवी अहमद अली का काव्य नाम 'अहमद' है, उन्होंने फ़ारसी भाषा में एक पुस्तक लिखी है। ५. दूसरी भूमिका। ६. जीवन कठिन। ७. दूध को फाड़ने के पश्चात् जो पानी रहता है। ८. रगें।

लिखा और रह गए। [illegible] में [illegible] है कि [illegible] का [illegible]
नहीं [illegible]। [illegible] आ जाती है। एक भी
[illegible], २०० का [illegible]। हर महीने में एक भी
[illegible]। [illegible] ज़रूरत है या नहीं? मुझे नागवार [illegible]
है, [illegible] होगा।

भाई, मैं [illegible] भेजता हूँ।

[illegible] का तालिब

—ग़ालिब

मंगल [illegible] २५, रजब १२८३ हि०
और ४ दिसम्बर १८६६ ई०।

११

(११ जनवरी, १८६७ ई०)

जाने[1] ग़ालिब जाने[2] मौल्वी मुंशी हबीबुल्लाखान को ग़ालिबे नातवाँ[3] का सलाम और मुश्ताक़ाने[4] नूरुल्ऐने[5] मौना[6] मुंशी मुहम्मद मीराँ[7] को दुआ और मसर्रते फ़र्ज़न्दे अर्जमन्द[8] की नवीद[9]। जो निगारिश[10] साहिबजादे के तरफ़ से थी, मन्तूरात[11] व फ़िलहक़ीक़त[12] तुम्हारी थी। अब तुम बताओ कि ख़ाक़ा उनकी तरफ़ से तुमने लिखा है या ख़ुद उसने तहरीर किया है? लड़का तुम्हारा तुम्हारे साथ हैदराबाद नहीं आया, ज़ाहिरा अब तुमने वतन से बुलाया है।

१. जीवन। २. दास। ३. अनिद्र। ४. मूत्रत्याग। ५. अयाचित मृत्यु आवश्यक है। ६. पंचांग के अनुसार। ७. चन्द्रदर्शन के अनुसार। ८. प्रिय-प्रेमपात्र। ९. प्राण। १०. नेत्र ज्योति ११. हृदय का हर्ष। १२. हबीबुल्लाखाँ का पुत्र। १३. सुपुत्र। १४. शुभ-समाचार। १५. लेखन। १६. लेख, लिखावट। १७. यथार्थ में।

उनका तख़ल्लुस[1] और उनका ख़िताब किससे मालूम किया ? बग़ैर निशाने महल्ले के उनको खत क्यों कर भेजा और वो ख़त उनको क्यों कर पहुँचा।

हैरत् अन्दर हैरतस्त ऐ यारे मन[2]।

पहले ये तो कहो कि 'दुरफ़िशे क़ावयानी' और वो क़ता जिसकी पहली बैत[3] ये है तुम को पहुँचा है या नहीं ? अगर पहुँचा तो मुझको रसीद क्यों न लिखी ?

मौलवी अहमद अली 'अहमद' तख़ल्लुस नुस्ख़ ए
दर ख़ुसूसे गुफ़्तगू ए पार्स इंशा कर्दा अस्त[4]

अगर ये पार्सल पहुँच गया है, तो रसीद लिखो और दीवाचए सानी[5] जदीद की दाद दो और अगर नहीं पहुँचा तो मुझको इत्तिला हो कि एक नुस्ख़ा और भेजूँ।

ज़ीस्त दुश्वार[6]। इस महीने याने रज्जब की आठवीं तारीख़ से तेहत्तरवाँ बरस शुरू हुआ। ग़िज़ा सुबह को सात बादाम का शीरा, क़न्द के शरबत के साथ दोपहर को सेर भर गोश्त गाढ़ा पानी, क़रीब शाम कभी-कभी तीन तले हुए कबाब। छै घड़ी रात गये पाँच रुपये भर शराबे ख़ानासाज़ और उसी क़दर अरक़ेशीर[7]। आसाब[8] के ज़ोफ़ का ये हाल कि उठ नहीं सकता और अगर दोनों हाथ टेक कर चार पाया बनकर उठता हूँ तो पिंडलियाँ लरज़ती हैं। माहाज़ा दिन भर में दस बारह बार उसी क़दर रात भर में पेशाब की हाजत होती है। हाजती पलंग के पास लगी रहती हैं, उठा और पेशाब

---

१. काव्य नाम। २. मित्र, आश्चर्य में आश्चर्य है। ३. दो चरण। ४. मौलवी अहमद अली का काव्य नाम 'अहमद' है, उन्होंने फ़ारसी भाषा में एक पुस्तक लिखी है। ५. दूसरी भूमिका। ६. जीवन कठिन। ७. दूध को फाड़ने के पश्चात् जो पानी रहता है। ८. रगें।

किया और पड़ रहा। असबाबे हयात[1] में से ये बात है कि शब[2] को बदख़ाब[3] नहीं होता। बाद इराक़ते बोल[4] बेतकल्लुफ़ नींद आ जाती है। एक सौ बासठ रुपये आठ आने की आमद, ३०० का खर्च। हर महीने में एक सौ चालीस का घाटा। कहो जिन्दगी दुश्वार है या नहीं? मुर्दन नागवार बदीही[5] है, मरना क्यों कर गवारा होगा।

भाई, ये ख़त अज़राहे एहतियात बैरंग भेजता हूँ।

जवाबे ख़त का तालिब
—ग़ालिब

अज़रूए जन्तरी[6] २६ और अज़ए रूयत[7] २५, रज्जब १२८३ हि० और ४ दिसम्बर १८६६ ई०।

११

(११ जनवरी, १८६७ ई०)

जानाँ[8] बल्कि जान[9] मौलवी मुंशी हबीबुल्लाखान को गालिबे ख़स्तादिल का सलाम और नूरे दीदा[10] व सुरूरे सीना[11] मुंशी मुहम्मद मीराँ[12] को दुआ और मुझको फ़र्जन्दे अर्जमन्द[13] की नवीद[14]। जो निगारिश[15] साहिबज़ादे के तरफ़ से थी, रस्मुलख़त[16] व ऐनही[17] तुम्हारी थी। अब तुम बताओ कि रुक्क़ा उसकी तरफ़ से तुमने लिखा है या ख़ुद उसने तहरीर किया है? लड़का तुम्हारा तुम्हारे साथ हैदराबाद नहीं आया, ज़ाहिरा अब तुमने वतन से बुलाया है।

१. जीवन। २. रात। ३. उन्निद्र। ४. मूत्रत्याग। ५. अवाञ्छित मृत्यु आवश्यक है। ६. पंचांग के अनुसार। ७. चन्द्रदर्शन के अनुसार। ८. प्रिय-प्रेमपात्र। ९. प्राण। १०. नेत्र ज्योति ११. हृदय का हर्ष। १२. हबीबुल्लाखाँ का पुत्र। १३. सुपुत्र। १४. शुभ-समाचार। १५. लेखन। १६. लेख, लिखावट। १७. यथार्थ में।

मुफ़स्सल[1] लिखो कि नख्ले मुराद[2] का समर[3] यही है या उसके कोई भाई-बहन और भी हैं ? ये अकेला आया है या क़बायल[4] को भी इसके साथ तुमने बुलाया है ? हाँ साहब, मुहम्मद मीराँ ये इस्म[5] मुक़्तज़ी[6] इसका है कि आप क़ौम के सैयद हों। मंशा ए इफ़राते पुरसिश[7] वफ़ूरे मुहब्बत[8] है, न फ़िज़ूली[9]।

यूसुफ़अलीखाँ शरीफ़ व आलीखानदान[10] हैं। बादशाहे देहली की सरकार से तीस रुपये महीना पाते थे। जहाँ सल्तनत गई वहाँ वो तनखा भी गई। शाइर हैं। रेख़्ता[11] कहते हैं। हवसपेशा[12] हैं। मुज़्तर हैं[13], हर मुद्दआ के हुसूल को आसान समझते हैं। इल्म इसी क़दर है कि लिख-पढ़ लेते हैं। इनका बाप मेरा दोस्त था। मैं इनको बजाए फ़र्ज़न्द[14] समझता हूँ। बक़द्र अपनी दस्तगाह[15] के कुछ महीना मुकर्रर कर दिया है। मगर बसबबे क़सरते इयाल[16] वो उनको मुक्तफ़ी[17] नहीं, तुम उनकी दरख़ास्त के जवाब से क़तै नज़र न करोगे तो क्या करोगे ?

साहब, मैं बऐने[18] इनायते इलाही[19] कसीरुल अहबाब[20] हूँ। एक दोस्त ने कलकत्ता से मुझे इत्तिला दी कि मौलवी अहमदअली मुदर्रिस मदर्स ए कलकत्ता ने एक रिसाला[21] लिखा है, नाम उसका 'मुईदे बुरहान' है। उस रिसाले में दफ़ै किये हैं, तेरे वो ऐतराज़ जो तूने दकनी पर किये हैं और तहरीर पर कुछ ऐतराज़ात[22] वारिद किये हैं और अहले मदर्सा और शोअरा ए कलकत्ता[23] ने तक़रीज़ें[24] और तारीखें[25] बड़ी धूम की लिखी हैं।

१. विस्तृत। २. लालसा रूपी वृक्ष। ३. फल। ४. परिवार। ५. नाम। ६. जिसका तक़ाज़ा किया जाये। ७. जानने की तीव्र लालसा। ८. प्रेमपूर्ण उत्सुकता। ९. व्यर्थ। १०. कुलीन। ११. हिन्दी-उर्दू कविता। १२. लालची। १३. व्यग्र, बेचैन। १४. पुत्र स्थानीय। १५. सामर्थ्य। १६. बाल-बच्चों की अधिकता। १७. पर्याप्त। १८. यथार्थ। १९. ईश्वर की दया से। २०. जिसके अधिक मित्र हों। २१. पुस्तिका। २२. आक्षेप। २३. कलकत्ते के कवि। २४. सम्मतियाँ (रचना के सम्बन्ध में)। २५. तिथि व्यक्त करने वाली कविता।

पस भाई, मैंने इतने इल्म पर एक क़ता लिखकर छपवाया और कई वर्क़ उस दोस्त को और चार ज़िल्दें 'दुरफ़िशे कावयानी' अलावा औराक़े मज़कूर[1] भेज दिये। इसी ज़माने में तीन-चार वर्क़, ख़ूब याद है कि 'दुरफ़िश' की जिल्द में रख-रख कर तुमको भेजे हैं। या तो मुझे ग़लत याद है या 'तुमने दुरफ़िश' को खोल कर देखा नहीं वो औराकमय दुरफ़िश ज़ीनते ताके निसियाँ[2] हैं। वो वर्क़ इस लिफाफ़े में अपने नज़दीक मुकर्रर[3] भेजता हूँ तुम भी देखो और साहिबज़ादी भी देखें और ये जानें कि फ़िलहाल नज़्मे फ़ारसी यही है और बस।

हाँ साहब, 'अवध अख़बार' में एक क़सीदा मौलवी ग़ुलाम इमाम का देखा। 'मकाँ तंग अस्त', 'जहाँ तंग अस्त' मदहे मुख्तारुल मुल्क[4] में, मुतज़िम्ने इस्तिदुआ ए मस्कने वसीह[5]। महीने भर बाद इसी 'अवध अख़बार' में ये ख़बर देखी कि नवाब ने मस्कान[6] तो न बदला मगर तीस रुपये महीना बढ़ा दिया। इसी अख़बार में फिर देखा गया कि एक साहब ने मौलवी ग़ुलाम इमाम के कलाम पर ऐतराज़ किया है और उनके शागिर्द, 'वज़ीह' तख़ल्लुस ने उसका जवाब लिखा है। आप से इस रू ए दाद[7] की तफ़सील और जवाब ऐतराज़ व मौतरिज़[8] के नाम का तालिब हूँ। बसबीले इस्तिजाब[9]।

दोशम्बा १६ शाबान १२८३ हि० (मुताबिक़ ११ जनवरी १८६७ ई०)।

१२

(१५ फरवरी, १८६७ ई०)

भाई, मैं नहीं जानता कि तुमको मुझसे इतनी इरादत[10] और मुझको तुमसे

१. उल्लिखित पृष्ठ। २. विस्मृति की ताक की शोभा। ३. दुबारा। ४. हैदराबाद के तत्कालीन प्रधान मंत्री सालार जंग (प्रथम)। ५. एक विस्तृत मकान की प्रार्थना के विषय का। ६. घर। ७. कार्रवाई, वृत्तान्त। ८. आपत्ति उठाने वाला। ९. प्रार्थना के रूप में। १०. श्रद्धा।

इतनी मुहब्बत क्यों है, ज़ाहिरा मामल ए आलमे अरवाह[1] है। असबावे ज़ाहिरी[2] को इसमें दख़ल नहीं। तुम्हारे ख़त का जवाब मय औराके मसविदा रवाना हो चुका है। वक़्त पर पहुँचेगा। 'सत्तर-बहत्तरा' उर्दू में तर्जुमा 'पीरे ख़रफ़[3]' है। मेरी तेहत्तर बरस की उम्र है, पस मैं अख़रफ़[4] हुआ। हाफ़िज़ा गोया कभी था ही नहीं। सामिआ[5] वातिल[6] बहुत दिन से था, रफ़्ता-रफ़्ता वो भी हाफ़िज़े की मानिन्द मादूम[7] हो गया। अब महीने भर से ये हाल है कि जो दोस्त आते हैं, रस्मी पुरसिशे मिज़ाज[8] से बढ़कर जो बात होती है वो काग़ज़ पर लिख देते हैं। गिज़ा मफ़क़ूद[9] है। सुबह को क़न्द और शीरए बादामे मुक़श्शर[10], दोपहर को गोस्त का पानी, सरे शाम गोश्त के तले हुए चार कबाब, सोते हुए पाँच रुपये भर शराब और इसी क़दर गुलाब, ख़रफ़ हूँ, पोच[11] हूँ, आसी[12] हूँ, फ़ासिक़[13] हूँ, रूसियाह[14] हूँ, ये शेर मीर तक़ी का मेरे हस्बे हाल है—

मशहूर हैं आलम में मगर हों भी कहीं हम
अल क़िस्सा[15] न दर पै हो हमारे कि नहीं हम

आज इस वक़्त कुछ इफ़ाक़त[16] थी, एक और ख़त ज़रूरी लिखना था, बकस खोला था तो पहले तुम्हारा ख़त नज़र पड़ा। मुकर्रर पढ़ने से मालूम हुआ कि बाज़ मतालिब के जवाब लिखे नहीं गये।

---

१. आध्यात्मिक-जगत् का सम्बन्ध। २. प्रत्यक्ष जगत्। ३. मूर्ख बूढ़ा। ४. सठियाया हुआ। ५. श्रवण-शक्ति। ६. निकम्मा। ७. नष्ट। ८. शिष्टाचार का कुशल-प्रश्न। ९. समाप्त। १०. छिलके उतरे हुए बादाम का हलुवा। ११. अयोग्य। १२. दोषी। १३. अपराधी। १४. कलंकित। १५. सारांश यह कि। १६. चैन।

मीर हबीबुल्लाह 'ज़का' के नाम

नाचार अब किताबत जुदागाना में लिखता हूँ, ताकि खिलत[1] का हाल और मेरे हालात तुमको मालूम हो जायें कि मैं क़ौम का तुर्क सलजूक़ी[2] हूँ। दादा मेरा 'माविराउन्नहर' मे शाहआलम के वक़्त में हिन्दुस्तान में आया। सल्तनत ज़ईफ़ हो गई थी, सिर्फ़ पचास घोड़े नक़्क़ारा व निशान से शाहआलम[3] का नौकर हुआ। एक परगना सरे हासिल ज़ात की तनखा और रिसाले की तनखा में पाया। बाद इन्तिक़ाल उसके जो, तवायफ़ुल मलूक का हंगामा गरम था। वो इलाका न रहा। बाप मेरा अब्दुल्लाबेगखाँ बहादुर लखनऊ जाकर नवाब आसफ़ुद्दौला का नौकर रहा। बाद चन्द रोज हैदराबाद जाकर नवाब निज़ामअलीखाँ[4] का नौकर हुआ। तीन सौ सवार की जमीयत[5] से मुलाजिम रहा। कई बरस वहाँ रहा। वो नौकरी एक खानाजंगी के बखेड़े में जाती रही। वालिद ने घबराकर अलवर का क़स्द[6] किया। रावराजा बख्तावर सिंघ[7] का नौकर हुआ। वहाँ किसी लड़ाई में मार गया। नसरुल्लाह बेगखाँ बहादुर मेरा हक़ीक़ी चचा मरहटों की तरफ़ से अकबराबाद का सूबेदार था। उसने मुझे पाला। १८०३ ई० में जब जरनैल लेक साहब का अमल हुआ, सूबेदारी कमिश्नरी हो गई और साहिबे कमिश्नर एक अँग्रेज़ मुक़र्रर हुआ। मेरे चचा को जरनैल लेक साहब ने सवारों की भरती का हुक्म दिया। चार सौ सवार का बिरगिडेर हुआ। एक हज़ार सात सौ रुपये ज़ात का और लाख डेढ़ लाख रुपये साल की जागीर हीनेहयात[8] अलावा साल भर मर्ज़बानी की[9] थी कि बमर्गे नागाह[10] मर गया। रिसाला बरतरफ़ हो गया। मुल्क के

१. राजकीय सम्मान के रूप में दी जाने वाली पोशाक। २. सलजूक—एक तुर्क सरदार, इसने सलजूक़िया वंश की नींव रखी थी। ३. शाह आलम (द्वितीय), १७५९ में गद्दी पर बैठा, मृत्यु १८०६ ई०। ४. हैदराबाद के शासक निजामुलमुल्क आसफ़जाह (प्रथम) का पुत्र। ५. सेना की टुकड़ी। ६. विचार। ७. अलवर के तत्कालीन राजा। ८. आजीवन। ९. सूबेदारी। १०. आकस्मिक मृत्यु।

एवज नक़दी मुक़र्रर हो गई। वो अब तक पाता हूँ। पाँच बरस का था, जो, बाप मर गया। आठ बरस का था, जो, चचा मर गया। १८३० ई० में कलकत्ता गया[1]। नवाब गवर्नर से मिलने की दरख़ास्त की। दफ़्तर देखा गया। मेरी रियासत का हाल मालूम किया गया। मुलाज़मत हुई, सात पार्चे[2] और जीगा[3] सरपेच मालाए मरवारीद[4] ये तीन रक़म खिलत मिला। जाँ बाद[5] जब देहली में दरबार हुआ मुझको भी खिलत मिलता रहा। बाद ग़दर बजुर्मे मुसाहिबते बहादुर-शाह[6] दरबार व खिलत दोनों बन्द हो गये। मेरी बरात[7] की दरख़ास्त गुज़री। तहक़ीक़ात होती रही। तीन बरस के बाद पिंड छूटा। अब खिलते मामूली[8] मिला। ग़र्ज़ कि ये खिलत रियासत का है, एवज़े खिदमत नहीं, इनामी नहीं। मऊजुल ज़हन नही हूँ, ग़लतफहम नहीं हूँ, बदगुमान नहीं हूँ। जो जिसको समझ लिया उसमें फ़र्क़ नहीं आता। दोस्त से राज़ नहीं छिपाता। किसी साहब ने हैदराबाद से गुमनाम ख़त डाक में भेजा। बन्द बुरी तरह किया था, खोलने में सतर कट गई। बारे, मतलब हाथ से नहीं जाता। भेजने वाले की ग़र्ज़ ये थी कि मुझको तुम से रंज व मलाल हो। क़ुदरत खुदा की मेरी मुहब्बत और बढ़ गई और मैंने जाना कि तुम मुझे दिल से चाहते हो। वो ख़त बजिन्स ही तुम्हारे पास इस ख़त में मलफ़ूफ़ करके भेजता हूँ। जिन्हार[9] दस्तखत पहचान कर कातिब[10] से झगड़ा न करना। मुद्दआ इस ख़त के भेजने से ये है कि तुम्हारी तरक़्क़ी ए मन्सब[11] और अफ़्ज़ूनी ए मुशाहरा[12] इस ख़त

---

१. वास्तव में ग़ालिब १८२७ में कलकत्ता गये थे और १८२९ में लौटे। २. राजकीय सम्मान में दी जाने वाली एक विशेष प्रकार की पोशाक। ३. पगड़ी में बाँधा जाने वाला एक रत्नजटित आभूषण। ४. मोतियों की माला। ५. इसके बाद। ६. बहादुरशाह के पार्षद होने के अपराध में। ७. बरी करना। ८. नियमानुसार। ९. कदापि। १०. लिखने वाला। ११. पदवृद्धि। १२. वेतन वृद्धि।

से मुझे मालूम हुई थी। सुबह जुमा दहुम शव्वाल १२८३ हि० १५ फरवरी १८६७ ई०।

१३

(१४ मार्च, १८६७ ई०)

जाने ग़ालिब,

तुमने बहुत दिन से मुझको याद नहीं किया। एक ख़त मेरा जरूरी जवाब तलब गया हुआ है और आमद व रफ़्त डाक की मुद्दत गुज़र गई। उसका जवाब तो सौ काम छोड़ कर लिखना था। 'मूइदे बुरहान' मेरे पास भी आ गई और मैं उसकी खुराफ़ात का हाल ब क़ैदे शुमारे सफ़ा व सतर[1] लिख रहा हूँ। वो तुम्हारे पास भेजूँगा। शर्ते मवद्दत[2] व शर्ते आ कि जाती न रही हो और बाक़ी हो, ये है कि मैं हूँ या न हूँ तुम इसका जवाब लिखो। मेरे भेजे हुए अक़्वाल[3] जहाँ जहाँ मुनासिब जानो दर्ज कर दो। मैं अब क़रीबे मर्ग हूँ। गिज़ा बिल्कुल मफ़क़ूद और अमराज़[4] मस्तूली[5] बहत्तर बरस की उम्र। इन्नालिल्लाह व इन्ना इलहे राजऊन। मियाँ मुहम्मद मीराँ को दुआ।

जवाब का तालिब

—ग़ालिब

१४

(१८ मार्च, १८६७ ई०)

बन्दा पर्वर,

आपका मेहरबानीनामा पहुँचा। तुम्हारी और साहजादे की ख़ैर व

१. पृष्ठ और पंक्ति की गिनती के अनुसार। २. मित्रता। ३. कविताएँ। ४. रोग (ब॰ व॰)। ५. बलशाली।

एवज नक़दी मुक़र्रर हो गई। वो अब तक पाता हूँ। पाँच बरस का था, जो, बाप मर गया। आठ बरस का था, जो, चचा मर गया। १८३० ई० में कलकत्ता गया[1]। नवाब गवर्नर से मिलने की दरख़ास्त की। दफ़्तर देखा गया। मेरी रियासत का हाल मालूम किया गया। मुलाज़मत हुई, सात पार्चे[2] और जीगा[3] सरपेच मालाए मरवारीद[4] ये तीन रक़म ख़िलत मिला। जाँ बाद[5] जब देहली में दरबार हुआ मुझको भी ख़िलत मिलता रहा। बाद ग़दर बजुर्मे मुसाहिबते बहादुर-शाह[6] दरबार व ख़िलत दोनों बन्द हो गये। मेरी बरात[7] की दरख़ास्त गुज़री। तहक़ीक़ात होती रही। तीन बरस के बाद पिंड छूटा। अब ख़िलते मामूली[8] मिला। ग़र्ज़ कि ये ख़िलत रियासत का है, एवज़े ख़िदमत नहीं, इनामी नहीं। मऊजुल ज़हन नहीं हूँ, ग़लतफ़हम नहीं हूँ, बदगुमान नहीं हूँ। जो जिसको समझ लिया उसमें फ़र्क़ नहीं आता। दोस्त से राज़ नहीं छिपाता। किसी साहब ने हैदराबाद से गुमनाम ख़त डाक में भेजा। बन्द बुरी तरह किया था, खोलने में सतर कट गई। बारे, मतलब हाथ से नहीं जाता। भेजने वाले की ग़र्ज़ ये थी कि मुझको तुम से रंज व मलाल हो। क़ुदरत ख़ुदा की मेरी मुहब्बत और बढ़ गई और मैंने जाना कि तुम मुझे दिल से चाहते हो। वो ख़त बजिन्सही तुम्हारे पास इस ख़त में मलफ़ूफ़ करके भेजता हूँ। ज़िन्हार[9] दस्तख़त पहचान कर कातिब[10] से झगड़ा न करना। मुद्दआ इस ख़त के भेजने से ये है कि तुम्हारी तरक़्क़ी ए मन्सब[11] और अफ़्ज़ूनी ए मुशाहरा[12] इस ख़त

---

१. वास्तव में ग़ालिब १८२७ में कलकत्ता गये थे और १८२९ में लौटे। २. राजकीय सम्मान में दी जाने वाली एक विशेष प्रकार की पोशाक। ३. पगड़ी में बाँधा जाने वाला एक रत्नजटित आभूषण। ४. मोतियों की माला। ५. इसके बाद। ६. बहादुरशाह के पार्षद होने के अपराध में। ७. बरी करना। ८. नियमानुसार। ९. कदापि। १०. लिखने वाला। ११. पदवृद्धि। १२. वेतन वृद्धि।

से मुझे मालूम हुई थी। सुबह जुमा दहुम शव्वाल १२८३ हि० १५ फरवरी १८६७ ई०।

१३

(१४ मार्च, १८६७ ई०)

जाने ग़ालिब,

तुमने बहुत दिन से मुझको याद नहीं किया। एक खत मेरा जरूरी जवाब तलब गया हुआ है और आमद व रफ़्त डाक की मुद्दत गुज़र गई। उसका जवाब तो सौ काम छोड़ कर लिखना था। 'मूइदे बुरहान' मेरे पास भी आ गई और मैं उसकी खुराफ़ात का हाल व क़ैदे शुमारे सफ़ा व सतर[1] लिख रहा हूँ। वो तुम्हारे पास भेजूँगा। शर्ते मवद्दत[2] व शर्ते आ कि जाती न रही हो और बाक़ी हो, ये है कि मैं हूँ या न हूँ तुम इसका जवाब लिखो। मेरे भेजे हुए अशआर[3] जहाँ जहाँ मुनासिब जानो दर्ज कर दो। मैं अब क़रीबे मर्ग हूँ। गिज़ा बिल्कुल मफ़क़ूद और अमराज़[4] मस्तूली[5] बहत्तर बरस की उम्र। इन्नालिल्लाह व इन्ना इलैहे राजऊन। मियाँ मुहम्मद मीरों को दुआ।

जवाब का तालिब

—ग़ालिब

१४

(१८ मार्च, १८६७ ई०)

बन्दा पर्वर,

आपका मेहरबानीनामा पहुँचा। तुम्हारी और साहजादे की खैर व

१. पृष्ठ और पंक्ति की गिनती के अनुसार। २. मित्रता। ३. कविताएँ। ४. रोग (ब० व०)। ५. बलशाली।

आफ़ियत[1] मालूम होने से दिल खुश हुआ। जो आपकी इबारत से समझ गया हूँ, उसका जवाब लीजिये और जो नहीं समझा वो मुताबिक़ मेरी इल्तिमास[2] के मुझे समझा दीजिये। इमाद अमायदे शोअराए कदीम[3] में से है। उसकी पान-सात बैत की एक ग़ज़ल है। जिसका मत्ला[4] ये है—

पाए सर ता न शवद राह तो रफ़्तन न तुवाँ
जुज़ बे जारूब मिज़ा कूए तो रफ़तन न तुवाँ[5]

पहले मिस्रे में 'रे' मफ़्तूह[6] और दूसरे मिस्रे में मज़्मूम[7], बाकी अशआर में 'गुफ़्तन व सुफ़्तन' वग़ैरा क़ाफ़िये हैं। उस्ताद दो मिस्रों में हरकत माक़ब्ल रूए मुख़्तलिफ़[8] लाया। अगर मैंने पचास शेर के क़सीदे में एक शेर ऐसा लिखा तो क्या ग़ज़ब हुआ। आया मोतरिज़[9] साहबे इस्तिनाद[10] बमिस्ले नज़ीर[11] को नहीं जानते और नहीं मानते? ये दस्तूर मेरा निकाला हुआ नहीं क़दीम से है।

बन्दानवाज़ मैंने लिखा कि 'मुईदे बुरहान' मेरे पास आ गई है और मैं उसके ऐतराज़ात के जवाब ब निशाने सफ़ा व सतर एक तख़्ते काग़ज पर लिख रहा हूँ। बाद इत्मामे निगारिश[12] तुम्हारे पास इस मुराद से भेजूँगा कि तुम अज़राहे इनायत 'मुईद' का जवाब लिखो। मेरी निगारिश जो पसन्द आये उसको भी जा बजा[13] दर्ज कर दो। तुमने उस दरख़ास्त का जवाब हाँ-नाँ कुछ न लिखा। अब इनायत फ़रमा कर उन तीनों बातों का जवाब लिखिये और ज़रूर लिखिये। मियाँ मुहम्मद मीराँ को दुआ।

---

१. कुशल-क्षेम। २. प्रार्थना के अनुसार। ३. प्राचीन कवियों के स्तम्भ। ४. ग़ज़ल का पहला शेर, दोनों चरणों में अन्त्यानुप्रास रहता है। ५. जब तक पूरी लगन न हो तुम्हारे मार्ग पर नहीं चला जा सकता। ६. अकारयुक्त। ७. उकारयुक्त। ८. विरुद्ध। ९. आक्षेप करने वाला। १०. प्रामाणिक व्यक्ति। ११. दृष्टान्त के अनुसार। १२. लिखने के पश्चात्। १३. यत्र-तत्र।

१५

(२७ जनवरी, १८६८ ई०)

मुंशी साहब अल्ताफ़ निशान[1] सआदत व इक़बाल तवामान[2] मुंशी हबीबुल्लाखाँ को गालिब सोख्त ए अख्तर[3] की दुआ पहुँचे। तुम्हारा खत पहुँचा। पढ़कर दिल खुश हुआ। तुम मेरी बात पूछते हो, लेकिन मैं क्या लिखूँ? उगलियाँ कहने में नहीं। एक आँख की बीनाई जायल[4]। जब कोई दोस्त आ जाता है तो उस खत का जवाब लिखवा देता हूँ। मशहूर है ये बात कि जो कोई किसी अपने अज़ीज़ की फ़ातिहा[5] दिलाता है, मौते[6] की रूह को उसकी बू पहुँचती है। ऐसे ही मैं सूँघ लेता हूँ ग़िज़ा[7] को। पहले मिक़दार ग़िज़ा की तोलों पर मुन्हसिर थी, अब माशों पर है। जिन्दगी की तवक़्क़ो आगे महीनों पर थी, अब दिनों पर है। भाई, इसमें कुछ मुबालिग़ा[8] नहीं है। बिल्कुल मेरा यही हाल है। इन्नालिल्लाह व इन्ना इलहे राजऊन। दो अम शव्वाल १२८४ हि० (मुताबिक २७ जनवरी १८६८ ई०)।

अपनी मर्ग[9] का तालिब
—ग़ालिब

१. दयालु। २. युगल (जुड़वाँ)। ३. अभागा। ४. नष्ट। ५. मृतक के सम्बन्ध में की जाने वाली बलि जैसी एक विशेष-क्रिया। ६. मृतक। ७. भोजन का परिमाण। ८. अत्युक्ति। ९. मृत्यु।

चौधरी अब्दुलग़फ़ूर 'सुरूर' के नाम

१

मेरे करम फरमा[1], मेरे शफ़ीक[2]—

शर्ते इस्लाम बुवद वर्जिशे ईमाँ बिल ग़ैब
ऐ तो ग़ायब ज़ नज़र मेह्ले. तो ईमाने मनस्त[3]

आपके इस ख़त का जवाब बाद लिखने इस शेर के मुन्हसिर इल्तिमास[4] पर है कि मेरी तरफ़ से तहरीरे जवाबे ख़त में कभी तक़सीर[5] न होगी। लेकिन अग़लब[6] व अक्सर इब्तिदा ब तहरीर न होगी। ये ख़त नाचार अज़रूए इज़्तिरार[7] वापिस भेजता हूँ। वास्ते ख़ुदा के मेरे पीर व मुर्शिद के इर्शादात[8] को एक और काग़ज़ पर अपने हाथ से नक़ल करके भेज दीजिये ताकि मुझ बदनसीब को मालूम हो कि हज़रत ने क्या लिखा है। जनाब चौधरी ग़ुलाम रसूल साहब की ख़िदमत में सलामे नियाज़। उस्ताद शेख़ अता हुसेन साहब की जनाब में सलाम।

२

(१८ नवम्बर, १८५८ ई०)

बन्दा पर्वर,

आपका तफ़क़्क़ुदनामा मुर्हरिरा[9] १५ नवम्बर आज पंजशम्बा के दिन १८

---

१. दयालु। २. मित्र। ३. ग़ैब (अदृश्य) पर विश्वास लाना इस्लाम की एक शर्त है। दृष्टि से ओझल रहने पर भी तुम्हारे प्रेम पर मेरा भरोसा है। ४. प्रार्थना। ५. अपराध। ६. लगभग। ७. आतुरता के कारण। ८. आज्ञा, उपदेश (ब. व.)। ९. लिखित।

नवम्बर को यहाँ पहुँचा। मारहरे का ख़त दिल्ली चौथे दिन आया है, दिल्ली का ख़त मारहरे देर में क्यों पहुँचता है? लो तुम्हारी ख़ुशी, अब के ये ख़त बैरंग भेजता हूँ, मगर मुझको इत्तिला दीजिएगा कि किस दिन पहुँचा।

११ मई १८५७ ई०, को यहाँ फ़िसाद शुरू हुआ। मैंने उसी दिन घर का दरवाज़ा बन्द और आना-जाना मौक़ूफ़[1] कर दिया। बेशग़ल ज़िन्दगी बसर नहीं होती। अपनी सरगुज़श्त[2] लिखना शुरू की। जो सुना गया वो भी ज़मीम ए सरगुज़श्त[3] करता गया। मगर बतरीक़े लुज़ूम मालायल्ज़म[4] उसका इल्तिज़ाम[5] किया है कि बज़बाने फ़ारसी ए क़दीम जो दसातीर[6] की ज़बान है, उसमें ये नुस्ख़ा लिखा जावे और सिवाय अस्मा[7] के, कि, वो नहीं बदले जाते, कोई लुग़ते अरबी[8] इसमें न आवे। चुनाँचे एक नुस्ख़ा आपकी ख़िदमत में भेजता हूँ। मगर ये नज़्र है जनाब क़िब्ला व काबा हज़रत साहबे आलम साहब की और चूँकि वो आपके बुज़ुर्ग हैं जुरत[9] न कर सका कि आपकी नज़्र करूँ और सैर[10] में उनको मुश्तरक[11] रखूँ। नज़्र उनकी है और फ़ैज़याबी[12] आपकी मुताले[13] से। हयहात[14] ये कातिब[15] असातिज़ा[16] के कलाम को क्या बिगाड़ देते हैं, गोया मस्ख़[17] कर देते हैं। उनसे बईद[18] नहीं, लेकिन तुमसे और हज़रत साहब से बईद है कि सह्व[19] कातिब का न समझ लिया।

१. स्थगित। २. संस्मरण। ३. संस्मरण का क्रोड-पत्र। ४. जो अनिवार्य नहीं है। ५. अनिवार्य। ६. फ़ारसी का एक शब्दकोश। ७. नाम। ८. अरबी का शब्द। ९. साहस। १०. मनोरंजन, भ्रमण। ११. सहभागी। १२. यश-प्राप्ति। १३. अध्ययन। १४. हाय। १५. लिखने वाले। १६. आचार्य (ब. व.)। १७. विकृत। १८. दूर। १९. गलती, भ्रम।

मन आँ दरिया ए आशोबम के अज़ तासीरे ख़ासियत।[1]

दो काफ़ों[2] का अलत्तवातुर[3] आना दूसरी बात है, 'दरिया ए आशोब' क्या टकसाल बाहर लफ़्ज़ है। इस्तिआरा[4] बिलकिनाया[5] सही, मगर ये महल[6] नहीं है। यहाँ तो दरिया चाहिए बेशाइबा[7] इस्तिआरा व किनाया। अयाज़न बिल्लाह् 'उर्फ़ी' अगर एक बड़ा क़दह[8] भंग का या एक बोतल शराब की पिये हुए होता तो भी यों न लिखता। उस ग़रीब का मिस्रा यों है—

मनआँ दरिया ए पुर आशोबम के अज़ तासीरे ख़ासियत।

दरिया मौसूफ़[9], पुर आशोब सिफ़त[10], दूसरे मिस्रे का काफ़ सिफ़त की तफ़्सीर। अब रू ए सुखन[11] हज़रत साहब आलम साहब की तरफ़ है। उम्मीदवार हूँ कि मेरे हमउम्र मुर्शिद, मेरे हमफ़न मख़दूम[12] मेरी तक्सीर माफ़ करें। अगर चे तिरेसठ बरस की उम्र में बहरा हो गया हूँ। पर बीनाई[13] में फ़ितूर नहीं। ऐनक से इआनत[14] चाहनी मंज़ूर नहीं। बावजूदे हिद्दते बसर[15] बसबबे नक़्से फ़हम[16] के दस्तख़ती इबारत मुझसे पढ़ी नहीं जाती। आगे जो दो बार मैंने जवाब लिखा है, सिर्फ़ क़राइन[17] मलहूज़[18] रखे हैं, वर्ना इबारत बइस्तीफ़ा[19] मुझसे नहीं पढ़ी गई। आख़िर चौधरी साहब तो आपके

---

१. मैं परेशानियों का समुद्र हूँ और उस समुद्र की विशेषता यही है। २. ककार। ३. निरन्तर। ४. रूपक। ५. संकेत में। ६. स्थान। ७. निस्सन्देह। ८. प्याला। ९. विशेष्य। १०. विशेषण। ११. सम्बोधन। १२. सेव्य। १३. दृष्टि। १४. सहायता। १५. दृष्टि के रहते हुए भी। १६. बुद्धिभ्रम। १७. लक्षण, शिष्टाचार (ब. व.)। १८. जिसका ध्यान रखा जाये। १९. पूरी।

मन आँ दरिया ए आशोबम के अज़ तासीरे खासियत।[1]

दो काफ़ों[2] का अलत्तवातुर[3] आना दूसरी बात है, 'दरिया ए आशोब' क्या टकसाल बाहर लफ़्ज़ है। इस्तिआरा[4] बिलकिनाया[5] सही, मगर ये महल[6] नहीं है। यहाँ तो दरिया चाहिए बेशाइबा[7] इस्तिआरा व किनाया। अयाज़न बिल्लाह्, 'उर्फ़ी' अगर एक बड़ा क़दह[8] भंग का या एक बोतल शराब की पिये हुए होता तो भी यों न लिखता। उस ग़रीब का मिस्रा यों है—

मन आँ दरिया ए पुर आशोबम के अज़ तासीरे खासियत।

दरिया मौसूफ़[9], पुर आशोब सिफ़त[10], दूसरे मिस्रे का काफ़ सिफ़त की तफ़्सीर। अब रू ए सुखन[11] हज़रत साहब आलम साहब की तरफ़ है। उम्मीदवार हूँ कि मेरे हमउम्र मुर्शिद, मेरे हमफ़न मखदूम[12] मेरी तक्सीर माफ़ करें। अगर चे तिरेसठ बरस की उम्र में बहरा हो गया हूँ। पर बीनाई[13] में फ़ितूर नहीं। ऐनक से इआनत[14] चाहनी मंज़ूर नहीं। बावजूदे हिद्दते बसर[15] बसबबे नक़्से फ़हम[16] के दस्तखती इबारत मुझसे पढ़ी नहीं जाती। आगे जो दो बार मैंने जवाब लिखा है, सिर्फ़ क़राइन[17] मलहूज़[18] रखे हैं, वर्ना इबारत बइस्तीफ़ा[19] मुझसे नहीं पढ़ी गई। आखिर चौधरी साहब तो आपके

१. मैं परेशानियों का समुद्र हूँ और उस समुद्र की विशेषता यही है।
२. ककार। ३. निरन्तर। ४. रूपक। ५. संकेत में। ६. स्थान। ७. निस्सन्देह। ८. प्याला। ९. विशेष्य। १०. विशेषण। ११. सम्बोधन। १२. सेव्य। १३. दृष्टि। १४. सहायता। १५. दृष्टि के रहते हुए भी। १६. बुद्धिभ्रम। १७. लक्षण, शिष्टाचार (व. व.)। १८. जिसका ध्यान रखा जाये। १९. पूरी।

याद समझ लीजिये तो वो मानी हर्गिज लायक़ इसके नहीं है कि फ़िक्रे सलीम[1] इसको क़ुबूल करे। फिर—

एहसान तो बशिगाफ़्ता

इस मिस्रे की तौजी कितनी बेमज़ा और बेनफ़ा है ?

उर्फ़ी को कहां से लाऊं जो उससे पूछूं कि भाई तूने इस शेर के क्या मानी रखे हैं ? क़िस्सा कोताह्[2]—

दीवांगिरीए मुहब्बते तो किम रोज़ मुसल्लमस्त मारा
बेगाना ज़ ताज कर्द तारक आवारह् ज़ कफ़्शकर्द पारा[3]

जैसा कि दूसरे शेर के मफ़हूम[4] को शारेह्[5] कहता है दीवानगी में ये हालत बईद[6] नहीं। ऐसा ही अगर कोई कहे मन्सबे दीवानी[7] से ये बात बईद है तो फिर शारेह् क्या जवाब देगा ? हां ये कहेगा कि ग़ल्ब ए मुहब्बत[8] में पासेवज़ा[9] न रहा और दीवानजी साहब कचहरी से नंगे सर और नंगे पांव निकल भागे। हमने माना, मगर हम ये पूछते हैं कि 'दीवानगी' क्यों न लिखें कि दूसरे शेर के मानी बेतकल्लुफ़ मुन्तबिक़[10] हो जायें और तौजीहात[11] दरम्यान न आयें ? फ़क़ीर के नज़दीक 'दीवानगी ए मुहब्बत' तो सही और बेतकल्लुफ़ है और 'दीवानगी व मुहब्बत' तो ग़लते महज़[12] और 'दीवानगरी ए मुहब्बत' तो

---

१. शुद्ध बुद्धि। २. बात संक्षेप में। ३. यह प्रमाणित है कि तुम्हारे प्रेम ने हमें पागल कर दिया है। इसीके कारण सिर से ताज गया और पैरों की जूतियाँ गईं। ४. भाव। ५. व्याख्याकार। ६. दूर। ७. दीवान का पद। ८. प्रेमाधिक्य। ९. वेशभूषा का लिहाज। १०. चरितार्थ। ११. कारण। १२. केवल अशुद्ध।

तकल्लुफ़े महज़। दीवानगी और मुहब्बत दो सिफ़्तें क्यों जमा करें? ग़ौर कीजिये अत्फ़ेवाव[1] ये चाहता है कि ये शख्स पहले से दीवाना था और फ़िर उसी हालत में उसको मुहब्बत पैदा हुई। दीवानगी में ताज व कफ़्श[2] बेजा थे, मुहब्बत पैदा होने के बाद ये हालत तारी हुई[3]? क्या बेमजा तौजी[4] है। हाँ, 'दीवानगी मुहब्बत' यानी वो जुनूँ[5] जो फ़र्ते मुहब्बत[6] में बहम पहुँचा, उसने इस अहवाल को पहुँचाया। फ़क़ीर 'दीवानगी ए मुहब्बत' कहेगा और 'दीवानगी व मुहब्बत' कहने को मना करेगा और 'दीवानगरी ए मुहब्बत' कहने को न माने[7] आएगा, न तस्लीम करेगा। ज़्यादा इससे क्या अर्ज़ करूँ? याद आवरी[8] और मेहर गुस्तरी[9] का शुक्र बजा लाता हूँ और बस।

अब यहाँ से रू ए सुखन[10] हज़रत पीर व मुर्शिद साहब आलम साहब की तरफ़ है। अपने मख़दूम व मुता[11] हज़रत साहब की खिदमत में बन्दगी अर्ज़ करता हूँ और हैरान हूँ कि और क्या कहूँ। ये मुद्दआ चौधरी साहब की तहरीर से मालूम हो गया था। इसका जवाब लिखा गया। हज़रत के दस्तख़ते खास की लिखी हुई इबारत से जो समझता हूँ उसका जवाब लिखता हूँ और जो मुझसे नहीं पढ़ा गया वो तावीज़े बाज़ू कर रखता हूँ। अगर बफ़र्ज़े मुहाल[12] कभी मुलाक़ात होगी तो आप से दरयाफ़्त करके पासुख गुज़ार[13] हूँगा। हाँ हज़रत, सच है मीर अमीन हसनखाँ मेरे दोस्त हैं और मिर्ज़ा अब्बास मेरा भानजा। फ़ितना व फ़साद के ज़माने में बिलगिराम में रहा, अब वो फ़र्रुखाबाद में डिप्टी कलक्टर है। आपकी और भाई मुंशी नबी बख्श साहब

१. संयोजक 'व'। २. जूता। ३. छा गई। ४. तर्क। ५. उन्माद। ६. प्रेमाधिक्य। ७. बाधक। ८. स्मरण ९. दयालुता। १०. सम्बोधन। ११. आदेश करने वाला, जिसकी आज्ञा शिरोधार्य हो। १२. कठिनाई से। १३. उत्तर देने वाला।

की मुलाक़ात से मेरा दिल बहुत खुश हुआ। याद रहे सुखन फ़हमी[1] इस बुज़ुर्गवार[2] का हक़ है। अब आगरे में बेकार और पिन्शन के उम्मीदवार हैं—

ताहर चे गुफ़्ती अज़ तो मुकर्रर शुनो दमे[3]

बुदे को रिआयत से कि वो ब याये मजहूल[4] है बमानी 'मीशुद' अक्सर साहब गुफ़्ते को भी ब याए मजहूल पढ़ते हैं, ताकि 'मीगुफ़्त के मानी पैदा हों। इस सूरत में खिताब से बतर्फ़ ग़ैब[5] के रुजू करते हैं, और 'गुफ़्ती' ब याए मारूफ़[6] से सीग़ ए वाहिद हाज़िर[7] है, अज़मना[8] में से अशारे ज़मान ए माज़ी[9] रखता है। और 'शुदन', 'बवद', ये सब इस्तिक़बाल मुक़्तज़ी[10] हैं और मारूफ़ गुफ़्ती माज़ी है। पस अगर गुफ़्ती बया ए मारूफ़ कहिये तो ऊपर के मिस्रे में बुदे कहना होगा, 'बूदे' का मुख़फ़्फ़फ़[11]। खुलासा ये कि अगर वहाँ बुदे कहिये तो यहाँ गुफ़्ती बया ए मारूफ़ बे तकल्लुफ़ दुरुस्त और बयाए मजहूल ग़लत है और अगर वहाँ 'बूदे' कहिये तो यहाँ 'गुफ़्ते' बयाए मजहूल कहिये। 'ग़ीबत' और खिताब का तफ़र्क़ा[12] मिटा दीजिये। गुफ़्ते बयाए मजहूल में खिताबे हाज़िर मुक़र्रर रहता है और 'तो' का लफ़्ज़ जो क़रीब है वो इस मानी को हाथ से जाने नहीं देता। नज़ायर[13] इसके फ़ारसी में बहुत हैं। रुबाई के बाब की पुर्सिश[14] हर्गिज़ न रहे, नहीं कही। ज़्यादा हद्दे अदब।

---

१. काव्यमर्मज्ञता। २. वयोवृद्ध। ३. तुमने जो कुछ कहा, मैं उसे दुबारा सुनता। ४. वह 'ए' जो लम्बी लिखी जाती है, उस 'ए' के साथ। ५. परोक्ष, अन्य पुरुष के प्रति। ६. गोल लिखी जानेवाली 'ए' 'इसका उच्चारण 'ई' होता है। ७. द्वितीय पुरुष का एकवचन। ८. युग (ब.व.) ९. भूतकाल। १०. जिसका तकाजा है। ११. संक्षिप्त। १२. अन्तर। १३. उदाहरण। १४. पूछ-ताछ।

५

बन्दा पर्वर,

मेहरबानीनामा आया, सर पर रखा, आँखों से लगाया। फ़ारसी की तकमील के वास्ते अस्लुलउसूल[1] मुनासिबत तबीयत की है, फिर ततब्बो[2] कलामे अहले ज़बान, लेकिन न अशारे क़तील व वाक़िफ़ व शोअरा ए हिन्दुस्तान[3] के ये अशार सिवाय इसके कि उनकी मौज़ूनी ए तबा का नतीजा कहिये और किसी तारीफ़ के शायाँ[4] नहीं हैं। न तरकीबे फ़ारसी, न मानी नाज़ुक[5]। हाँ, अल्फ़ाज़ फ़र्सूदा[6] व आमियाना[7] जो अतफ़ाले दबिस्ताँ[8] जानते हैं और जो मुतसद्दी नस्र में दर्ज करते हैं, वो अल्फ़ाज़े फ़ारसी ये लोग नज़्म में ख़र्च करते हैं। जब रूदकी व अन्सरी व ख़ाक़ानी व रशीद व तव्वात और उनके अमसाल व नज़ायर[9] का कलाम बिल इस्तेआब[10] देखा जाये और उनकी तरकीबों से आशनाई बहम पहुँचे और ज़हन औजाज की तरफ़ न ले जाये तब आदमी जानता है कि हाँ फ़ारसी ये है।

"मन्के बाशम" इसकी जो शरह छापे में लिखी है, उसको मुलाहिज़ा कीजिये और मानी मेरी ख़ातिर निशान कीजिये तो मैं सलाम करूँ।

पहले नज़र यहाँ लड़नी चाहिए कि 'अज़ औजे[11] बयाँ अन्दाख़्ता' का फ़ाइल[12] कौन है और मफ़ऊल कौन है? अगर 'अक़्ले कुल' को 'अन्दाख़्ता' का मफ़ऊल और 'मन्के'[13] के काफ़ को कुदामिया[14] ठहराओगे तो बेशुबा 'अन्दाख़्ता' के फ़ाइल

१. विशुद्ध। २. अनुसरण। ३. हिन्दुस्तान के कवि। ४. योग्य। ५. सूक्ष्मार्थ। ६. घिसे-पिटे, पुराने। ७. सामान्य। ८. पाठशाला के बालक। ९. उदाहरण। १०. पूर्णतया। ११. आश्चर्य। १२. कर्त्ताकारक। १३. कर्म। १४. प्रश्नवाचक।

दो ठहरेंगे—एक 'नावके अन्दाजे अदब' और एक 'मुर्ग़े औसाफ़े' तो। एक फ़ेल[1] और दो फ़ाइल ये क्या तरीक़ और तहक़ीक़ है।

अब फ़क़ीर से इसके मानी सुनिये—"मन" अन्दाख्ता का मफ़ऊल 'रा' मुक़द्दर[2], 'मन्के' का काफ़ तौसीफ़ी[3] 'नाविके अन्दाजे अदब' 'अदब आमोज़' यानी उस्ताद 'मुर्ग़े औसाफ़ तो' फ़ाइल यानी मुझको, कि, अक़्ले कुल का उस्ताद हूं। तेरे मुर्ग़े औसाफ़ ने ओजे बयान से गिरा दिया। अक़्ले कुल तक, कि, वो उलवीयों[4] में आला है, उसका नावक[5] पहुंच सकता था, मगर मुर्ग़े औसाफ़ उस मुक़ाम पर है कि जहां उस नावक अंदाज[6] को पहुंचाने की गुंजाइश नहीं। ओजे बयान[7] से गिरना आजिज़[8] आना है। क़ुदरत वो कि अक़्ले कुल से भी ज्यादा और इज्ज़[9] ये कि ओजे बयान से गिर गया। अच्छा मुबालग़ा[10] है मुर्ग़े औसाफ़ की बलन्दी का और क्या खूब मज़मून है इज़हारे इज्ज़ का बावजूद दाव ए क़ुदरत—

ईसारे तो बरदूख्ता चश्मो दहने आज[11]

इसके तो मानी वही हैं जो छापे में लिखे हैं। मिस्र ए सानी[12] की शरह में गुमराह हो गया।

एहसाने तो बिशगाफ़्ता हर क़तर ए यमरा[13]

यानी एहसान तो हर क़तर ए दरिया बशिगाफ़्त ताहम बक़ैदे हिसाब नियामद। ये हेचमदां[14] इस मानी के मानी नहीं समझा। सीधी बात है,

---

१. क्रिया। २. लुप्त। ३. विशेषणवाची। ४. सैयदों, श्रेष्ठजनों। ५. तीर। ६. धनुर्धर। ७. वर्णन की उच्चता। ८. विवश, असहाय। ९. असमर्थता। १०. अतिरंजना। ११. आपकी उदारता ने लालसा का मुंह सी दिया। १२. द्वितीय चरण। १३. आपका उपकार समुद्र की बूंदों से भी अधिक है। १४. अनभिज्ञ।

मगर खयाल में जब आएगी कि असातिज़ा के मुसल्लमात[1] मालूम हों। कमाले ईसार[2] व अता[3] में मरवारीद[4] व याक़ूत[5] व मादन[6] की कम्बख़्ती आती है। लाल व दुर[7] का मादूम[8] हो जाना और बहर[9] व कान का खाली रह जाना, नई-नई तरह से बाँधा है। चुनाँचे मैंने किसी ज़माने में इसी ज़मीन में एक क़सीदा लिखकर वज़ीरुद्दौला वाली ए टोंक[10] को भेजा था उसमें के दो शेर आपको लिखता हूँ—

नामूस निगह दाश्ती अज़ जूद बगेती
जुज़ पर्दगियाने हरम मादनो यम रा
वक़्तस्त के ईं क़ौम व हर कूचा व बाज़ार
पुर्सन्द ज़हम मन्शए रुस्वाई ए हम रा

पर्दगियाने हरम व मादन व यम यानी लाल व गौहर जो कसरते ईसार से कूचे व बाज़ार में खाक आलूदा[11] पड़े हुए हैं, वो बहमदिगर[12] दर्दमन्दाना ये गुफ़्तगू करते हैं कि इस शख़्स ने सबकी हुरमतें[13] रखलीं और सबकी आबरूएँ बचाई। हमको इस क़दर बेहुरमत और जलील क्यों रखा है?

क़तर ए दरिया[14] का हिसाब के वास्ते चीरना बेहिसाब है। मक़ूला[15] उर्फ़ी का ये है कि जितने मोती दरिया में हाथ आये वो बख़्श दिये और बख़्शिश का ज़ौक़ बाक़ी रहा। चूंकि क़तरे में बिल क़ुव इस्तेदाद[16] मोती हो जाने की है, तो इस एहतिमाल[17] से हर क़तरए दरिया को चीर डाला कि अगर मोती हाथ आवें तो वो सायलों[18] को दिये जावें। पहले मिस्रे में हिर्स[19] का सेर[20] कर देना मुआफ़िके मुसल्लमाते शेरे मुम्तने[21] और उसका मरफ़ूअ[22] में

१. सर्वमान्य। २. पूर्ण त्याग। ३. दान। ४. मोती। ५. लाल। ६. खान। ७. मोती। ८. अभाव। ९. समुद्र। १०. टोंक के राजा। ११. मिट्टी में ढँके हुए। १२. परस्पर। १३. प्रतिष्ठा। १४. समुद्र की बूँद। १५. उक्ति। १६. योग्यता की शक्ति। १७. आशंका। १८. प्रार्थियों। १९. लालच। २०. तृप्त। २१. निषिद्ध। २२. उकार युक्त, ऊँचा उठाना।

आना इग़राक़[1] दूसरे मिस्रे में ये एहतिमाल इस्तेदाद[2] बिलक़ुवा[3] क़तरे को चीर डालना और फिर इस तरह कि हर क़तरे को। ये इग़राक़ाह से गुज़र कर तबलीग़[4] व गुलू[5] है।

यहां से खिताब[6] हज़रत साहबे आलम की तरफ़ है। मखदूम[7] मुकर्रम[8] व मुता ए मुअज्ज़म[9] क़िब्ल ए दीदा व दिल[10], कि, जो मेरे और अपने मिलने को अज़ क़िस्म फ़र्जे मुहाल[11] नहीं मानते हैं, खुदा करे ऐसा ही हो, जैसा वो जानते हैं। तक़्सीर[12] माफ़ हो अगर दुनिया में ज़ुहूरे अम्र[13] बहस्बे मुसाअदते असबाब[14] है, तो इस तमन्ना का हुसूल[15] मानिन्द इआदए शबाब[16] है। कोई वजह नहीं पाता आपके यहाँ तशरीफ़ लाने की और कोई सूरत नज़र नहीं आती मेरे वहाँ आने की। अगर चे हैज़[17] इमकान से बाहर नहीं मगर वक़ूअ[18] में ताम्मुल[19] है। अब जो भाई मुंशी नबी बख्श साहब को खत लिखूंगा तो आपका सलाम ज़रूर लिख दूंगा। आपने अहबाबुल बाब[20] की खैर व आफ़ियत उमूमन[21] लिखी, बित्तख्सीस[22] हज़रत शाह आलम साहब का सलाम न लिखा। क्या वो वहाँ नहीं हैं और अगर और कहीं हैं तो उनका हाल मुझको लिखिये और अगर वहाँ हैं तो मेरा सलाम उनको कहिये।

रुबाई के बाब में बयान मुख्तसर ये है कि उसका एक वज़न[23] मुअय्यन[24] है।

---

१. अतिशयोक्ति। २. योग्यता, पात्रता। ३. सामर्थ्य से। ४. प्रचार। ५. अत्युक्तिपूर्ण। ६. सम्बोधन। ७. सेव्य। ८. उपकारी। ९. महान् आदेशक। १०. नेत्र और हृदय के आराध्य। ११. कठिन। १२. अपराध। १३. विषय का प्रकटन। १४. मित्रता के कारणों के अनुसार। १५. प्राप्ति। १६. जवानी के लौटने के समान। १७. नपुंसक। १८. अस्तित्व। १९. सन्देह, दुविधा। २०. प्रमुख आत्मीयजन। २१. सामान्यतया। २२. विशेष रूप से। २३. छन्द की गति। २४. निश्चित।

अरब में दस्तूर न था सिवाय अजम[1] के। ये बहर हज़्ज[2] में से निकाला है। मफ़ऊल-मफ़ालन-फ़ऊलन फ़ऊलन, हज़्ज मुसद्दस[3] अख़वे मक़बूज़[4] मक़सूर[5] इस वज़न पर फ़ालन बढ़ा दिया है, 'मफ़ऊल-मफ़ाअलन फ़ऊलन फ़ालन' जिहाफ़त[6] इसमें बाज़ के नज़दीक अठारह और बाज़ के नज़दीक चौबीस हैं और वो सब जायज़ और रवा हैं और इस बहर का नाम 'बहरे रुबाई' है। रुबाई सच है कि सिवाय इस बहर के और बहर में नहीं कही जाती और ये जो मत्ला[7] और हुस्ने मत्ला[8] को रुबाई कहते हैं, इस राह से है कि मिस्रे चार हैं, वर्ना रुबाई नहीं है, नज़्म है। क़ुदमा[9] को बेश्तर इसका इल्तिज़ाम[10] था, कि हर मिस्रे में क़ाफ़िया[11] रखते थे। ख़ाक़ानी वरिआयते[12] सनते ज़ू काफ़एतैन कहता है—

मन बूदम व आँ निगारे रूहानी रोए
अफ़गन्दह् दराँ दो ज़ुल्फ़े चौगानी गोए
ख़ल्क़े बदर ईस्तादा ख़ाक़ानी जोए
मन दर हरम विसाल सुभानी गोए[13]

मैं पाँच-सात बरस से बहरा हो गया हूँ। एक रुबाई चार क़ाफ़िए की इस मज़मूने ख़ास की मैंने लिखी है, वे रिआयते सनते ज़ू क़ाफ़एतैन[14]—

१. ईरान। २. एक छन्द। ३. छह चरण की कविता। ४. अधिकृत मफ़ाईलुन में से 'म' और 'न' गिराकर 'फ़ाईल' करके मफ़ऊल बनाया। ५. संक्षिप्त। ६. छन्द में गण की न्यूनता या अधिकता। ७. गज़ल का पहला शेर, जिसके दोनों चरणों में अन्त्यानुप्रास रहता है। ८. गज़ल का दूसरा शेर। ९. प्राचीन (कवि)। १०. अनिवार्यता। ११. अन्त्यानुप्रास। १२. सुविधा के साथ, अन्त्यानुप्रासों से युक्त। १३. मैं हूँ और मेरी वह प्रेमिका है जिसकी आकृति आध्यात्मिक है। उसकी दो ज़ुल्फ़ें गेंद के समान पड़ी हैं जिसके द्वार पर अगणित सम्राट् पड़े हुए हैं और मैं उसके दर्शन के लिए ईश्वर का नाम जप रहा हूँ। १४. दो काफ़ियों वाले।

चौधरी अब्दुलग़फ़ूर 'सुरूर' के नाम

दारम दिले शादो दीद ए बीनाए
व ज़ कर्री गोशम न बुवद परवाए
खूवस्त के नशनोमे ज़हर खुदराए
गुलबांगे अनारव्वकुमुल आलाए[1]

फ़क़ीर इस वाव में मुतास्सिब[2] है। और वज़न की दो बैत[3] में क़ाफ़िएवाली को रुवाई न कहेगा।

नस्र आरी[4] न क़ाफ़िया न वज़न; नस्र मुसज्जा[5] क़ाफ़िया मौजूद, वज़न मफ़क़ूद[6]। मगर इसमें तरजीह की रिआयत ज़रूर है यानी फ़िक्रे में के अल्फ़ाज़ मुमासिल[7] और मुलायम हमदिगर[8] हों और अगर ये बात न होगी और सिर्फ़ क़ाफ़िया होगा तो उसको मुक़फ़्फ़ा[9] कहेंगे न मुसज्जा[10]। नस्र मुरज्जज़[11] वो है कि वज़न हो और क़ाफ़िया न हो। जब आप लाला क़तील के घड़े हुए फ़िक्रे देख चुके हैं तो मुझको फ़िक्रातराशी की तकलीफ़ क्यों देते हैं। ज़माने गुज़िश्ता में भाई ज़ियाउद्दीनख़ाँ साहब 'नय्यर' तखल्लुस एक मुख्तसर सा दीवान हज़रत निज़ामी का मुझको दिखलाने लाये थे, उसमें नस्र मुरज्जज़ थी। मैं उस दिन नवाब मुस्तफ़ाख़ाँ 'हसरती' व शेफ़्ता को ख़त लिखा चाहता था। उसी वजह पर ख़त लिखा और वो ख़त 'पंजआहंग' में है। मगर मैंने उस तर्ज़ में बमुक़्तज़ाए शूख़ी ए तबह[12] ये बात की है कि एक जगह जो फ़िक्रे

---

१. मेरा हृदय स्वस्थ्य है और नेत्र ठीक हैं। यदि मेरे कान नहीं हैं तो कोई परवाह नहीं। बहुत अच्छा हुआ जो मैं अभिमानियों की यह बात नहीं सुनना चाहता कि वे मेरे प्रभु हैं। २. संकीर्ण। ३. एक शेर (कविता)। ४. अनलंकृत सरल गद्य। ५. अलंकृत गद्य। ६. छन्द की गति लुप्त। ७. समान। ८. परस्पर। ९. अनुप्रासात्मक गद्य। १०. अन्त्यानुप्रास युक्त। ११. ऐसा गद्य जिसके वाक्य सन्तुलित और सानुप्रास हों। १२. स्वभाव की अत्यधिक चंचलता से।

मुक़फ़्फ़ा[1] हो गये हैं और वो लफ़्ज़ मुझको पसन्द आये हैं, मैंने उनको यों ही रहने दिया है। इसको दस्तूर मे तसव्वुर न कीजिएगा। वो रुक़्का ये है—

[उद्धृत-पत्र फ़ारसी में है। पत्र बहुत बड़ा है, अतः यहाँ नहीं दिया जा रहा है।]

६

(१८५६ ई०)

जनाब चौधरी साहब की ख़िदमत में सलाम अर्ज़ करता हूँ और शुक्रे एहसान[2] बजा लाता हूँ। 'हाशा' और 'हाशल्लाह' के जवाब को हवाला इन सुतूर[3] पर रखता हूँ कि जवाब जनाब हज़रत साहब के इर्शाद के जवाब में लिखूँगा। आपको इतना लिखना और काफ़ी है कि अपने अम्मेवाला क़द्र[4] जनाब चौधरी ग़ुलाम रसूल साहब को फ़क़ीर का सलामे नियाज़ पहुँचाइये और जनाब शेख़ अताहुसेनसाहब 'अता' को भी सलाम कहिये।

अब ख़िताब जनाब हज़रत आलम साहब की तरफ़ है। पीर व मुर्शिद क़लम का काम ज़बान से लेना यानी तहरीर के मतालिब[5] को पढ़ना और पढ़ा देना आसान है और ज़बान का काम क़लम से लेना दुश्वार है। यानी जो कुछ कहा चाहिये उसको क्यों कर लिखा चाहिये। वो बात कहाँ कि कुछ मैंने अर्ज़ किया कुछ आपने फ़रमाया, दो-चार बातों में झगड़े ने अंजाम पाया। ख़ैर, दौलते हम ज़बानी[6] मयस्सर?

१. अन्त्यानुप्रासित। २. कृतज्ञता। ३. पंक्तियाँ। ४. प्रतिष्ठित चाचा। ५. तात्पर्य (ब० व०)। ६. वार्त्तालाप की सम्पत्ति।

चौधरी अब्दुलग़फ़ूर 'सुरूर' के नाम

आपका हुक्म बजा लाने को अपना शर्फ़ जानता हूँ और अर्ज़ करता हूँ कि निज़ामी अब ऐसा हुआ कि जब तक फ़रीदाबाद का खत्री दिलवाली सिंघ सुम्मा मुतख़ल्लुस[1] व 'क़तील' जिसको हज़रत ने मरहूम लिखा है, उसकी तसदीक़ न करे, तब तक उसका कलाम क़ाबिले इस्तिनाद[2] न हो। 'क़तील' असातज़ ए सल्फ़[3] के कलाम से क़तअन्[4] आशना ही नहीं। उसके इल्मे फ़ारसी का माख़ज़[5] उन लोगों की तक़रीर है कि नवाब सआदतअलीख़ाँ के वक़्त में मुमालिक मग़रबी[6] की तरफ़ से लखनऊ में आये और हंगामा आरा[7] हुए—बेश्तर साद (?) व कश्मीरी या काबली व क़न्धारी व मकरानी। अहयानन्[8] कोई आम्मा[9] अहले ईरान[10] में से होगा, माना कि उज़्मा ए ईरान[11] में से भी कोई होगा।

तक़रीर[12] और है, तहरीर[13] और है। अगर तक़रीर बएेनहीं[14] तहरीर में आया करे, तो ख़ाजा बुक़रात से और शफ़ुद्दीनअली यज़्दी और मुल्ला हुसेन वायज़ काशफ़ी और ताहिर वहीद से, ये सब नस्र में क्यों ख़ूने जिगर खाया करते ? वो सब तरह की नस्रें जो लाला दिलवाली सिंघ क़तील मुतवफ़्फ़ी[15] ने बतक़लीदे अहले ईरान[16] लिखी हैं, न रक़म[17] फ़रमाया करते ?

ये शख़्स मुद्दई है कि कदा (कदह्) का लफ़्ज़ सिवाय पाँच-चार इस्म[18] के और इस्म के साथ तरकीब नहीं पाता। पस आरज़ूकदा और देवकदा और नश्तरकदा और अमसाल[19] इसके जो हज़ार जगह अहले ज़बान के कलाम में

१. काव्य नामवाला। २. प्रमाण योग्य। ३. पूर्ववर्त्ती आचार्य। ४. पूर्णतया। ५. उद्धृत करने का आधार। ६. पश्चिमी प्रदेश। ७. उत्पात करने वाला। ८. संयोगवश। ९. सामान्य। १०. ईरानवासी। ११. ईरान के महान् व्यक्ति। १२. भाषण। १३. लेखन। १४. पूर्णतया। १५. स्वर्गीय। १६. ईरानवासियों के अनुकरण पर। १७. लेखन। १८. संज्ञा। १९. उदाहरण।

आया है वो नादुरुस्त है। मैं और आप बैठें और उसके खुराफ़ात पढ़े जायें और जो मैं अर्ज़ करूँ उस पर हज़रत ग़ौर फ़रमायें। तब मालूम हो कि ये कितना लग़ो[1] और फ़ारसीदानी से कितना बेगाना है।

आमदम बरसरे मुद्दआ[2]। नस्र मुरज्जज़ उसको कहते हैं कि वज़न हो और क़ाफ़िया न हो, मुक़ाबिल मुक़फ़्फ़ा[3] के क़ाफ़िया हो और वज़न न हो। और यहाँ ये भी समझना चाहिए कि वज़न में क़ैद मंज़ूर नहीं। मसलन् हज़रत निज़ामी अलैइर्रहमा[4] की नस्र का वज़न ये है—मफ़ऊल मुफ़ाएलन मफ़ाएलन मफ़ऊल मुफ़ाएलन। हज़रत ज़हूरी अलैइर्रहमा फ़रमाते हैं—

रायतश सरो बुने गुलशने फ़तह
खंजरश माही ए दरिया ए ज़फ़र[5]

ये नस्र मुरज्जज़ है, वज़न इसका फ़अलातन फ़अलातन फ़ाअलन[6]। कातिबों ने मुक़फ़्फ़ा करने के वास्ते सूरत बदल दी है और वो तसर्रुफ़[6] किया है कि नस्र न मुरज्जज़ रही न मुक़फ़्फ़ा। चुनाँचे असातिज़ए फ़न[7] लन्तनालुल बिर्रहत्ता तनफ़िक़ू[8] इस आयते सरासर हिदायत असर को नस्र मुरज्जज़ कहते हैं और इसका वज़न ये है—"फ़ाअलातन फ़ाअलातन फ़ाअलन" वो यज़्ज़ुको मिन है सो लायहतसबो[9] इसका वज़न 'फ़ऊलन फ़ऊलन फ़ऊलन फ़ऊल' बन्दे की तहक़ीक़ात यही है कि नस्र तीन क़िस्म पर है, मुक़फ़्फ़ा—क़ाफ़िया है और वज़न नहीं। मुरज्जज़—वज़न है और क़ाफ़िया नहीं। आरी—न वज़न है न क़ाफ़िया। मुसज्जा ही, मुक़फ़्फ़ा है कि दोनों फ़िक़्रों में अल्फ़ाज़ मुलायम और

१. निरर्थक। २. विषय पर आता हूँ। ३. अन्त्यानुप्रासयुक्त। ४. स्वर्गीय। ५. तुम्हारी ध्वजा विजय की प्रतीक है और तुम्हारी तलवार जीत के समुद्र की मछली है। ६. प्रयोग। ७. इस विषय के आचार्य। ८. जब तक तुम खर्च नहीं करोगे, तुम कदापि भलाई नहीं प्राप्त कर सकते। ९. ईश्वर अनन्त दान देता है।

मुनासिबे हमदिगर[1] हों। नज़्म में ये सनत[2] आ पड़े तो उसको मुरस्सा कहते हैं। और नस्र इस सनत पर मुश्तमिल[3] हो तो उसको मुसज्जा कहते हैं। इस क़ायदे को अब्दुलरज़्ज़ाक बदल सकता है न साहिबे 'कुलज़मे हफ़्त गाना[4]' न ये क़तर ए बे सरोपा[5]।

'हाशा व हशालिल्लाह[6]' कलाम अहले अरब में इसी तरह है; जिस तरह आप फरमाते हैं; मगर पारसियों ने अज़्राहे तसर्रुफ़ बमानी ए ज़िन्हार क़रार दिया है, यानी ताकीद। अगर मन्फी[7] पर आये तो नफ़ी[8] की ताकीद और मुस्बत[9] पर आये तो इस्बात[10] की ताकीद। मैं किसी कलेमे का इस्तेमाल नहीं करता। जब तक अहले ज़बान के कलाम में नहीं देखता। 'ऐशी' बेचारा उसके लायक नहीं कि मुस्तनद अलै[11] बने। मगर ये लफ़्ज ग़लत नहीं लिखा है उस ग़रीब ने।

हज़रत क़िब्ला फारसियों के तसर्रुफ़ात अगर देखिये तो हैरान रह जाइये। मुझको इस वक़्त कहाँ याद है और किताब का क्या नाम, कोई वर्क़ भी लिखा हुआ मेरे पास नहीं। हाशा का कोई शेर मौक़दे नफ़ी[12] अगर याद आएगा तो आपको लिखा जाएगा—

> हरज़ा मस्ताव व पै जादा शनासाँ बर्दार
> ऐ के दर राहे सुख़न चूँ तो हजार आमदो रफ़्त[13]

---

१. परस्पर सन्तुलित। २. अलंकार (यहाँ शब्दलंकार)। ३. सम्मिलित ४. सात समुद्र का मालिक 'कुलज़म' नामक पुस्तक का रचयिता। ५. मैं अकिंचन। ६. मैं कदापि ऐसा नहीं कर सकता। ७. निषिद्ध। ८. निषेध। ९. प्रमाणित। १०. प्रमाण। ११. प्रामाणिक। १२. निर्दिष्ट निषिद्ध। १३. बेहूदा लोगों की तरह मत दौड़। बुद्धिमान लोगों की पगडण्डी पर चल। कविता के इस मार्ग पर हजारों आये और चले गये।

ये मसनवी जिसमें ये मिस्रा है—

हाशलिल्लाह के बद न मी गोयम्[1]

कलकत्ता में मैंने लिखी थी। पाँच हज़ार आदमी फ़राहम थे और जो ऐतराज मुझ पर किये थे उसमें से एक ऐतराज़ ये था कि 'हमाआलम' ग़लत है, यानी 'हमा' का लफ़्ज़ 'आलम' के लफ्ज के साथ रब्त नहीं पा सकता। क़तील का हुक्म यों है। अर्ज किया गया कि हाफ़िज कहता है—

हमा आलम गवाहे इस्मते ऊस्त[2]

सादी कहता है—

आशकम बरहमा आलम के हमा आलम अज़ूस्त[3]

ग़र्ज इस तहरीर से ये है कि मसनवी वहाँ लिखी गई और एक-एक नक़्ल मौलवी करम हुसेन बिलगिरामी और मौलवी अब्दुल क़ादर रामपूरी और मौलवी नेमत अली अज़ीमाबादी और उनके अमसाल और नज़ायर के पास भेजी गई। अगर ये लोग जगह पाते तो मेरी खाल उधेड़ डालते। अब एक नुस्खा है 'अब्ताले जरूरत' अगरचे साहब उसका हिन्दी है, बल्कि हिन्दू है, मगर क़ाबिल अच्छा है। देखिये, असातिज़ा क्या क्या तसर्रुफ़ात[4] नुमायाँ कर गये हैं।

मैंने आज तक उर्दू में 'इंतिज़ारी' बमाने 'इन्तिज़ार' न आप लिखा, न अपने शागिर्दों को लिखने दिया। असातिज़ए मुसल्लमुल सुबूत[5] के हाँ फ़ारसी में मौजूद है। हाशा ऐसा नहीं कि उनमें फारसीवालों को ताम्मुल[6] हो। ज्यादा हद्दे अदब।

१. मैं कदापि बुरा नहीं कहता हूँ। २. समस्त संसार उसकी पवित्रता की साक्षी है। ३. मैं समस्त विश्व का प्रेमी हूँ क्योंकि यह ब्रह्माण्ड उससे बना है। ४. प्रयोग। ५. प्रामाणिक और सर्वमान्य आचार्य। ६. शंका।

७

(फरवरी, १८५९ ई०)

जनाव चौधरी साहव,

आप को वाद इब्लाग़े सलाम[1] आपके खत के पहुँचने से आगही देता हूँ और ये भी आपको मालूम रहे कि आपके चचा साहब के खत का जवाब इससे आगे भेज चुका हूँ। मैं नहीं आ सका।

यहाँ पिन्शन का मुक़दमा पेश है। कभी साहव बहादुर कमिश्नर बहादुर के पास, कभी साहव डिप्टी कमिश्नर बहादुर के पास जाना होता है। खुद न जाऊँ तो खयाल रहता है कि खुदा जाने किस वक़्त बुला भेजे या किस वक़्त कोई पुर्सिश[2] आ जाये। बाईस महीने से वो रिज़्क़ कि जो मुक़व्विमे जिस्म[3] और मुफ़र्रहे रूह[4] था, मसदूद[5] है। क्या खाऊँ और क्योंकर जीऊँ? लिल्लाहुल हम्द[6] कि गुनहगार नहीं ठहरा। पिन्शन पाऊँगा, मगर वो पिन्शन गवर्नमेण्ट के पोलिटिकल सरिश्ते से मुक़र्रर की हुई है। सो देहली का एजेंटी दफ़्तर फ़र्द फ़र्द लुट गया। कोई काग़ज वाक़ी नहीं रहा। अव ये शहर पंजाब अहाते में मिल गया। पंजाव का नवाव लफ्टंट गवर्नर बहादुर यहाँ का सदर ठहरा। उस दफ़्तर में मेरी रियासत का, मेरी माश[7] का, मेरी इज्ज़त का नाम व निशान नहीं है। ऐसे ऐसे पेच पड़ गये हैं। कुछ निकल गये हैं, कुछ बाक़ी रहे हैं। ये भी निकल जाएँगे—

कार हा आसाँ शवद अम्मा व सब्र[8]

१. अभिवादन भेजने के पश्चात्। २. पूछ-ताछ। ३. जो शरीर को ठीक रख सके। ४. आत्मा को हर्ष प्रदान करने वाला। ५. स्थगित। ६. ईश्वर की स्तुति। ७. वृत्ति। ८. धैर्य के कारण सभी काम सरल हो जाते हैं।

यहाँ से रू ए सुखन साहबे आलम साहब की तरफ़ है। जनाब रफ़अतमाब[1] मौलाई व मुर्शिदी तस्लीम[2] क़ुबूल करें और उस तहरीर से, जो अब मेरे पास भेजी है, मुझको शादाँ[3] और अपने बख़्त[4] और क़िस्मत पर नाज़ाँ[5] तसव्वुर फ़रमावें। सब समझा और सब मतालिब का जवाब लिखता हूँ। पहले अपना एक शेर कमाले गुस्ताख़ी को कारफ़र्मा[6] कर लिखता हूँ और ये नहीं लिखता कि ये शेर मैंने क्यों लिखा है। शेर ये हैं—

मरा बग़ैर ज़े यक जिन्स दर शुमारा वुर्द
फ़ुग़ाँ के नीस्त ज़ परवाना फ़र्क़ ता मगसश[7]

बहरहाल हज़रत को ये मालूम है कि मैं अहले ज़बान[8] का पैरो[9] और हिन्दियों में सिवाय अमीर ख़ुसरो देहलवी के सबका मुनकिर[10] हूँ। जब तक क़ुदमा[11] या मुताख़रीन[12] में—मिस्ल[13] सायब व कलीम व असीर व हज़ीं के कलाम में कोई लफ़्ज़ या तरकीब नहीं देख लेता उसको नज़्म और नस्र में नहीं लिखता। जिन लोगों के मुहक़्क़िक़[14] होने पर इत्तिफ़ाक़ है जम्हूर[15] को, उनका हाल क्या गुज़ारिश करूँ ?

एक उनमें साहबे 'बुरहान क़ातै' हैं। अब इन दिनों मैं 'बुरहान क़ातै' देख रहा हूँ और उसके फ़हम की ग़लतियाँ निकाल रहा हूँ। अगर ज़ीस्त[16] बाक़ी है तो उन नुकात[17] को जमा करके उस नुस्ख़े[18] का नाम 'क़ातै बुरहान' रखूँगा।

१. उच्च पद प्राप्त। २. अभिवादन। ३. प्रसन्न। ४. भाग्य। ५. गर्वित। ६. प्रभावशाली। ७. मुझे सामान्य लोगों में सम्मिलित कर दिया गया। मैं इस बात पर रोता हूँ कि मक्खी और परवाने में अन्तर नहीं किया गया। ८. भाषाविद्। ९. अनुयायी। १०. अस्वीकार करने वाला। ११. प्राचीन (लेखक, कवि)। १२. पूर्ववर्ती लोग। १३. जैसे। १४. शोध करने वाला। १५. सर्वसाधारण। १६. जीवन। १७. तथ्य। १८. प्रति।

चौधरी अब्दुलग़फ़ूर 'सुरूर' के नाम

कुजा बूद मंज़िल कुजा ता ख़त्म[1]

शेरे फ़िरदौसी में 'अंगबीन व शहद' और शेरे उस्ताद में 'हिर्सव आज़' वाक़ई बादी उन्नज़र[2] में ज़ायद मालूम होता है। 'शीरे नाब' बेहतर है, लेकिन 'हिर्सव आज़' को क्या कीजिएगा? मैं अर्ज़ करता हूँ कि वहाँ भी 'ख़श्म व आज़' है। हर्गिज़ 'हिर्स व आज़' नहीं है। हुकुमा[3] और सूफ़िया[4] क़ुव्वते ग़ज़बी और क़ुव्वते शहवी की ताहील[5] में मेहनतें करते हैं। क़ुव्वते ग़ज़बी की इस्लाह[6] से फ़ज़ीलत[7], शुजाअत[8], और क़ुव्वते शहवी की इस्लाह से फ़ज़ीलते इफ़्फ़त[9] हासिल है और ये मसला इल्मे अख़लाक़[10] में मुबर्हन[11] है। दवीदए मन हिर्सव आज़ बे माने महज़ उस्ताद को बदनाम किया। एक इस्म से दो मुसम्मा[12] तराशे। वाहदे हक़ीक़ी[13] का तस्निया[14] इससे अलावा। मर्द आरिफ़ हकीम ने क़ुवते शहवी की इस्लाह का ज़िक्र किया और क़ुव्वते ग़ज़बी का मज़कूर[15] भी न किया। मैंने ख़ुद 'ख़श्म व आज़' देखा है और यही बजा है। शहद की जगह 'शीर' और 'हिर्स' की जगह ख़श्म दुरुस्त—मेरी राय आपकी राय के मुताबिक, मगर गोगर्द[16] सुर्ख़ और पील[17] सफ़ेद में साकित[18] हूँ। ये तक़रीर, कि गोगर्द सुर्ख़ कामयाब और पील सफ़ेद नायब है; मेरे दिलनशीं न हुई। किब्रीते अहमर[19] और कीमिया[20] और अन्क़ा[21] इन सबका एक हुक्म है। नज़र इस क़ायदे पर लाल-सफेद बेहतर है और किब्रीते अहमर और पील सफ़ेद बेजोड़ है, जैसे अमीर ख़ुसरो की अनमेलियाँ[22]।

---

१. मंजिल कहाँ थी और मैं कहाँ जा रहा हूँ। २. दृष्टिदोष। ३. चिन्तक। ४. सूफी साधक। ५. औचित्य। ६. सुधार। ७. बड़प्पन। ८. वीरता। ९. पवित्र बड़प्पन। १०. सदाचार शास्त्र। ११. प्रमाणित, असंदिग्ध। १२. नाम रखने वाला। १३. वास्तविक एक वचन। १४. द्विवचन (अरबी में द्विवचन भी होता है)। १५. उल्लेख। १६. गंधक। १७. हाथी। १८ मौन। १९. लाल गन्धक। २०. रसायन। २१. एक काल्पनिक पक्षी, अलभ्य वस्तु। २२. पहेलियाँ।

एक क़ायदा और अर्ज़ करता हूँ, 'कम' का लफ़्ज़ अहले फ़ारसी[1] के मन्तिक़[2] में कहीं इफ़ाद ए मानी[3] सल्बे कुल्ली[4] भी करता है। जैसे—'कम आज़ार' यानी 'नियाज़ अरिन्दा' न ये कि 'कम आज़ारिन्दा' 'कम हिम्मता' यानी 'बेहिम्मता' बल्कि अन्दक का लफ़्ज़ भी इस तरह आता है जैसा कि मेसख़ुकावन्दे नेमत[5] निज़ामी रहमतुल्लाह अलै[6] फ़रमाता है—

पसोपेश चूं आफ़तावम यकेस्त
क़ुरोग़म फ़रा वाँ फ़रेब अन्दकेस्त[7]

यानी फ़रेब बिल्कुल नहीं, न ये कि कुछ है। कमयाब[8] और नायाब[9] एक चीज़ हैं। निज़ामी ने 'लाल सपेद' कहा है, किसी साहबे तबह[10] ने उसको ग़लत समझ कर पील सपेद बना दिया है, 'अंगबीन' व 'शहदनाब' शायद मिस्लें ग़म व अन्दोह[11] व मसर्रत[12] व फ़रहत[13] हो, या न हो, शीरेनावा ही हो, बल्कि शीरनाब बेहतर है, लेकिन हिर्स व आज़ तो किसी तरह दुरुस्त नहीं। आरिफ़[14] का दावा नाक़िस[15] और लग़ो रहा जाता है। अगर ये क़बाहत[16] लाज़िम न आती तो भी हम हिर्स व आज़ को मुसल्लिम[17] न रखते, किस वास्ते कि ग़ुलाम का शुबा बकमाले वुज़ूहे ग़म व अन्दोह[18] व अद्ल[19] व दाद[20] का नज़ीर नहीं हो सकता। हाँ अंगबीन व शहद के जवाज़[21] में हम मुज़ायका[22] न करेंगे मगर शीरेनाब को उससे अच्छा समझेंगे शहर मेवे की हलावत[23] के वास्ते

१. फ़ारसी भाषी। २. बातचीत। ३. अर्थ (भाषा ये) की प्राप्ति। ४. सब कुछ अस्वीकार। ५. स्वामी। ६. ईश्वर उन पर दया करे। ७. मैं सूर्य के समान हूँ मेरा आगा-पीछा एक ही है। मुझ में प्रकाश है, बनावट या अन्धकार नहीं है। ८. दुर्लभ। ९. अलभ्य। १०. मनस्वी। ११. शोक। १२. प्रसन्नता। १३. हर्ष। १४. ज्ञानी। १५. त्रुटिपूर्ण। १६. त्रुटि। १७. प्रामाणिक। १८. दुःख और शोक के कारण। १९. न्याय। २०. न्याय, प्रशंसा। २१. औचित्य। २२. आपत्ति। २३. मिठास।

और शौर अफ़्ज़ाइशे लताफ़त[1] के वास्ते। 'हाशा' व 'हाशल्लाह' का जवाब आग़ाज़े तहरीर[2] में लिख चुका। आपके इस नज़ीर लिखने से उसके जवाज़ पर मेरा यक़ीन न बढ़ा। लो कश्फ़ल ग़िताऊलमा अज़्ददत यक़ीनन इज़्द तो यक़ीनन[3]।

नस्रे मुरज्जज़ के बाब में पीर व मुर्शिद को इतना ताम्मुल[4] क्यों है? ये जो नस्रें आपने लिखी हैं, सिवाय उस नस्र के, जिसको आगे लिखूंगा, ये तो सब मुसज्जा हैं। यानी पहले फ़िक़्रे का हर लफ़्ज़ वज़न में मुआफ़िक़ है दूसरे फ़िक़्रे के लफ़्ज़ से। नज़्म में ये सनत आ पड़े तो नज़्म को मुरस्सा कहेंगे और नस्र में वाक़े हो तो नस्र को मुसज्जह कहते हैं वो नस्रे मुसज्जा की मिसाल हमको दें। ज़िन्हार ज़िन्हार[5] ये नस्र मुरज्जज़ नहीं, मुसज्जा है। हाँ ये नस्र मुरज्जज़ है—

साहबां मुशफ़्फ़ा शफ़ीक़े दिली जंदुअल्ताफ़कमअली इलल अब्द, बादे तब्लीग़ बन्दगी व नियाज़। बर ज़मीर मुनीरे रोशन बाद[6]।

अगर वो नस्र, कि, जिसको मैंने मुसज्जा कहा है, मुरज्जज़ है तो उस कम्बख़्त नस्र का क्या नाम है? नहीं वो मुसज्जा है और ये मुरज्जज़ है। मैं तो बहुत मुख़्तसर व मुफ़ीद[7] लिख चुका हूँ। आप न मानें तो क्या करूँ? वज़न न हो क़ाफ़िया हो वो मुक़फ़्फ़ा, वज़न न हो क़फ़िया हो वो मुक़फ़्फ़ा, वज़न न हो वो मुक़फ़्फ़ा वजन हो क़ाफ़िया न हो वो मुरज्जज़। अल्फ़ाज़-व-फ़िक़्रतैन[8] वज़न—

---

१. आनन्द का आधिक्य। २. लेखन का प्रारम्भ। ३. जब विश्वास अधिक हुआ तो मेरी भ्रान्ति दूर हो गई। ४. आशंका। ५. कदापि कदापि। ६. आप मुझ पर हृदय से प्रेम करते हैं। ईश्वर करे यह प्रेम प्रलय पर्यन्त बना रहे। अभिवादन पहुँचने के बाद निवेदन है, आपका अन्तःकरण अधिक प्रकाशमान हो। ७. संक्षिप्त और लाभकर। ८. दो वाक्य।

में बराबर हो वो मुसज्जा। इस सनत[1] को बेश्तर नस्रे मुक़फ़्फ़ा में सर्फ़[2] करते हैं और चाहो क़ाफ़िये का इल्तिज़ाम[3] न करो। ब हररंग सुल्सा[4] यही है। हज़रत ने नस्रे मुसज्जा को मुरज्जज़ कहा है। जवाब वही है कि अगर मुरज्जज़ ये है तो मुसज्जा किस नस्र को कहते हैं? इससे ज्यादा न मुझको इल्म, न यारा ए कलाम।

क़तील लखनवी और ग़यासुद्दीन मुल्ला ए मकतबी[5] रामपूरी की क़िस्मत कहाँ से लाऊँ कि तुम जैसा शख्स मेरा मौतक़द[6] हो और मेरे क़ौल[7] को मोतमद[8] समझे। बादे इतमाम[9] खत की तहरीर के ख्याल आया कि शायद किसी बात का जवाब रह न गया हो।

मैंने आपके खत को देखा और एक बात 'दस्तूरे शिगरफ़[10]' की इबारत में नज़र आई।

मुरज्जज़ कलामीस्त मंशूर के वज़न दारद सज्जह नदारद[11]।

इस तारीफ़ को देखिये और नमून ए नस्र को देखिये, वो मौज़ूं कहाँ है। 'जो वज़न दारद' उस पर सादिक़ आये? वज़न बमानी[12] तक़्ती ए शेर मफ़क़ूद[13]। 'सजा नदारद' खुदा जाने ये बुज़ुर्ग सजा किसको कहता है। सजा हमवज़न[14] होना दो लफ़्ज़ों का फ़िक़्तैन[15] में या मिस्रैन[16] में, सो इस नस्र में मौजूद है। मौजूद को मफ़क़ूद[17] और मफ़क़ूद को मौजूद लिखा है और फिर कलाम उसका मक़बूल[18] है।

१. अलंकार। २. प्रयोग। ३. अनिवार्यता। ४. तीसरा हिस्सा। ५. पाठशाला का अध्यापक। ६. भक्त। ७. कथन। ८. विश्वस्त। ९. समाप्ति के पश्चात्। १०. अच्छा नियम। ११. जिसमें लय हो, किन्तु अन्त्यानुप्रास न हो, उसे मुरज्जज कहते हैं। १२. छन्द के गण, मात्रा की व्यवस्था। १३. लुप्त। १४. समान मात्रा (छन्द)। १५. दो वाक्य। १६. दो चरण। १७. लुप्त। १८. लोकप्रिय।

तुमसे कुछ माँगता हूँ। तफ़सील ये कि बाक़रअली देहलवी के मतबे[1] में से एक अख़बार हर महीने में चार बार निकला करता था, मुसम्मा[2] बं 'देहली उर्दू अख़बार'। बाज़ अशख़ास[3] सनीने माज़िया[4] के अख़बार जमा कर रखा करते हैं। अगर अहयानन[5] आपके या किसी आपके दोस्त के 'हाँ जमा होते चले आये हों, तो अक्तूबर १८३७ ई० से दो-चार महीने के आगे के औराक़[6] देखे जायें। जिसमें बहादुरशाह की तख़्तनशीनी का ज़िक्र और मियाँ ज़ौक़ के दो सिक्के उनके नाम के कहकर नज़्र करने का ज़िक्र मुंदरिज[7] हो। बेतकल्लुफ़ वो अख़बार छापे का अस्ल बजिन्सही मेरे पास भेज दीजिये। आपको मालूम रहे कि अक्तूबर की सातवीं-आठवीं तारीख़ १८३७ ई० में ये तख़्त पर बैठे हैं और ज़ौक़ ने उस महीने के बाद सिक्के कहकर गुज़राने हैं। एहतियातन पाँच महीने तक के अख़बार देख लिये जायें। यहाँ तक मेरी तरफ़ से इबराम[8] है कि अगर बमिस्ल किसी और शहर में कोई आपका दोस्त जामै[9] हो और आपको उस पर इल्म हो तो वहाँ से मँगवा भेजिये। वस्सलाम माल इक्राम।

९

(१८५९ ई०)

शफ़ीक़ मेरे, इनायत फ़र्मा मेरे,

तुम्हारी मेहरबानी का शुक्र बजा लाता हूँ। निहायत सई[10] ये थी कि आपकी तरफ़ से ज़ुहूर में आई। मैंने मुहतमिमे मतबा[11] 'जामे जहाँनुमा' को

१. छापाखाना। २. नामधेय। ३. व्यक्ति (ब० व०)। ४. गत वर्ष के। ५. संयोगवश। ६. पृष्ठ (ब० व०)। ७. लिखित। ८. कष्ट। ९. संचय करने वाला। १०. प्रयत्न। ११. छापाखाने का प्रबन्धक।

लिख भेजा है और तर्के सई[1] किया है। आप भी फ़िक्र न कीजिये। अगर कहीं से आपके पास आ जाये तो मुझको भेज दीजिये, मेरे पास आएगा तो मैं तुमको इत्तिला दे दूँगा। इनायते इलाही[2] का कौन शख्स मुश्ताक़[3] न होगा? इसकी पुर्सिश जायद। मैं खिदमतगुजारी को हाजिर हूँ। वो जब चाहें अपना कलाम भेज दें। मेरा सलाम और ये पयाम कह दीजिएगा।

साहब तुमने हमारे पीर व मुर्शिद को हम पर खफ़ा कर दिया है। भला वो खत न लिखें, न लिखें, कभी तुमको फ़रमावें कि ग़ालिब को मेरी दुआ लिख भेजना। बहरहाल मेरा सलामे नियाज़ अर्ज कीजिये और उनके मिज़ाजे मुबारक[4] की खैर व आफ़ियत[5] लिखिये और ये लिखिये कि अगर खुदा न खास्ता[6] वो मुझसे नाखुश हैं तो नाखुशी की वजह क्या है? अपने चचा साहब की खिदमत में सलाम पहुँचाइएगा और मौलाना अला को सलामे शौक़ कहिएगा।

१०

(१८५८ ई०)

मेरे शफीक़ को मेरा सलाम पहुँचे। दोनों मुखम्मस[7] बाद इस्लाह पहुँचते हैं। मंशा ए इस्लाह[8] समझ लीजिये। सैयद आली नसब[9] सरवरे वाला[10] हसबी ये इफ़्तिताहे कलाम[11] और इब्तिदाए खिताब[12] के दरखोर[13] न था। मिस्र ए सालिस[14] उसकी जगह रख दिया गया। दूसरे बन्द की तखमीस[15] दो तरह पर

---

१. प्रयत्न छोड़ देना। २. ईश्वर की दया। ३. इच्छुक। ४. स्वास्थ्य। ५. कुशलता। ६. ईश्वर न चाहे। ७. पांच चरण की कविता। ८. संशोधन का तात्पर्य। ९. कुलीन। १०. श्रेष्ठ सरदार। ११. कथन का प्रारम्भ। १२. सम्बोधन का प्रारम्भ। १३. योग्य। १४. तीसरा चरण। १५. पांच भागों में विभाजन।

है, दोनों बे ऐब हैं और मज़ीद[1] लुत्फ़ किसी में नहीं। जिन मिस्रों को चाहो रहने दो।

'गुज़श्त अज़ अफ़लाक' व 'आज़ अफ़लाक गुज़िश्त' एक फ़ारसी रहा और दूसरा हिन्दी, हज़रत ने दोनों फारसी में लिखे थे। नदायम[2] फेल पर मुरत्तव हुआ करती है, तर्जुमा उसका पशेमानी[3]। हज़रत यूसुफ को नदामत क्यों हो? मगर खिजालत[4] इसका तर्जुमा है शर्मिन्दगी। आप ग़ौर कीजिये कि नदामत और खिजालत में कितना फ़र्क़ है। जहाँ आपने अक़्रेज[5] नदामत लिखा, वो महल खिजालत का था, आपने नदामत क्यों लिखा? बहरहाल वो मिस्रा तो बदल गया लेकिन इत्तिला ज़रूर थी।

'तरह' बफ़तह[6] अव्वल व सुकून सानी[7] बमानी फरेब और तस्वीर के ख़ाके को भी कहते हैं और बमानी आसाइशे दुनिया[8] भी मजाज़[9] है। मुरादिफ़े तर्ज़[10] व रविश भी 'तरह' है, बफ़तहतैन[11]। इसका तफ़र्क़ा[12] मंजूर रहा करे। 'नसीम' तखल्लुस अच्छा है। अगर कोई ये कहे कि 'नसीम' मुअन्नस[13] है, जवाब इसका ये है कि 'जुरत' और 'वहशत' और ऐसे बहुत से तखल्लुस हैं कि वो मुअन्नस हैं, बाईं हमा[14] अगर बदला चाहिए तो इसका हमवज़न 'सलाम' व 'सलीम' और 'ख़याल' भी है, इसमें से जो पसन्द आये।

आपके अम्मेआली मिक़दार[15] और आपके बुज़ुर्ग आमोज़गार[16] को मेरा सलाम पहुँचे।

१. अतिरिक्त। २. ग्लानि। ३. ग्लानि। ४. लज्जा। ५. लज्जित करने वाला, दास। ६. अकार युक्त। ७. दूसरे का हलन्त होना। ८. संसार की समृद्धि। ९. लाक्षणिक। १०. पर्यायवाची। ११. दो अकार युक्त। १२. अन्तर। १३. स्त्रीलिंगवाची। १४. तथापि। १५. श्रेष्ठ चाचा। १६. गुरु।

यहाँ से रू ए सुख़न हज़रत पीर व मुर्शिद साहब आलम की तरफ़ है। पीर व मुर्शिद की खिदमत में सलाम और मुर्शिदज़ादों[1] की जनाब में दुआ ए तूले उम्र व दवामे दौलत[2] पहुँचा कर ये अर्ज़ करता हूँ कि वाक़ई हज़रत शाह आलम का इनायतनामा आया था और मैं इसका जवाब भेज चुका हूँ। अजब है कि हज़रत की तहरीर में जहाँ उनके खत का ज़िक्र था, वहाँ मेरे खत का मज़कूर[3] न था और इन सुतूर[4] की तहरीर के बाद अपने खत का पहुँचना गुमान नहीं कर सकता। मैं इसमें उनको यहाँ का हाल लिख चुका हूँ।

'पंज आहंग' आपने ली, दीवाने फ़ारसी आप के पास है, मगर यो समझिये कि ये दोनों नातमाम[5] हैं और अब कहीं से उसका इतमाम[6] मुमकिन नहीं। खैर, जो कुछ है ग़नीमत है। 'दस्तम्बू' मैंने नज्र की है, 'मेहरेनीम रोज़' मालूम नहीं कि आपके पास है या नहीं। खुलासा ये कि शेर को मुझसे और मुझको शेर से हर्गिज़ निस्बत[7] बाक़ी नहीं रही। इस फ़ितना व फ़साद के बाद एक क़सीदा जो दस्तम्बू में है और एक क़सीदा नवाब लफ़्टंट गवर्नर बहादुर ग़र्ब व शुमाल[8] की मदह[9] में और दो बैत का एक क़ता और एक रुबाई। इस नज्म के सिवाय अगर कुछ लिखा हो तो मुझसे क़सम लीजिये।

क़ता—ब आदम ज़न ब शैताँ तौक़े लानत
सुपुर्दन्द अज़ रहे तकरीमो तज़लील

---

१. गुरुपुत्र। २. दीर्घायु और स्थायी सम्पत्ति का आशीर्वाद। ३. उल्लेख। ४. पंक्तियाँ। ५. अपूर्ण। ६. समाप्ति। ७. सम्बन्ध। ८. पश्चिमोत्तर। ९. प्रशंसा।

व लेकिन दरअसीरी तौक़े आदम
गिराँ तर आमदज़ तौक़े अज़ाज़ील[1]
रूबाई—दुनिया हीचस्तो शादी व ग़म हीचस्त
हंगामे सूरो बज़्मे मातम हीचस्त
रूए दिल बे यके देह के दो आलम हीचस्त
इं नीज़ फ़रोगुज़ार के ईं हम हीचस्त[2]

इस बामाँदगी[3] के दिनों में छापे की 'बुरहान क़ातै' मेरे पास थी, उसको मैं देखा करता था। हज़ारहा लुग़त[4] ग़लत, हजारहा बयान लग़ो[5], इबारत पोच[6], इशारात[7] पा दर हवा[8]। मैंने सौ दो सौ लुग़त के अग़लात[9] लिखकर एक मजमूआ बनाया है और 'क़ातै बुरहान' उसका नाम रखा है। छपवाने का मक़दूर[10] न था मसविदा कातिब से साफ़ करवा लिया है, अगर कहो तो बसबीले मुस्तआर[11] भेज दूं। तुम और चौधरी साहब और जो और

१. ईश्वर ने आदम और शैतान दोनों के गले में तौक़ डाला। शैतान का तौक़ अपमान का था और आदम के गले की तौक़ थी 'हव्वा' उसकी पत्नी दोनों को उनके अनुसार आज्ञापालन और अपमान का काम सौंपा गया किन्तु आदम का तौक़ शैतान के तौक़ से भारी सिद्ध हुआ। २. संसार व्यर्थ, प्रसन्नाता व्यर्थ, दुःख व्यर्थ, हर्ष के समारोह, खुशी की गोष्ठियाँ और शोक व्यर्थ है। उस एक की ओर आकर्षित हो, लोक-परलोक दोनों नाशमान् हैं। संसार के समस्त कार्यों को छोड़, ये सब कुछ व्यर्थ हैं। ३. दुर्बलता, विवशता। ४. शब्द। ५. असत्य। ६. व्यर्थ। ७. संकेत। ८. निराधार। ९. अशुद्धियाँ। १०. सामर्थ्य। ११. थोड़े दिनों के लिए माँगी हुई चीज़ के रूप में।

सुख़नशनास[1] और मुन्सिफ़[2] हों वो उसको देखें और फिर मेरी किताब मेरे पास पहुँच जाये।

११

जनाबे आली, 'छा छा' तर्जुमए हिन्दी है, एक बार 'छा' किफ़ायत करता है। 'अनवा अनवा' हमारी आपकी बोलचाल में है, लेकिन तहरीर में दुरुस्त नहीं। 'चमन पुर फ़ज़ा' (फ़ज़ा में ज़्वाद) को 'चमन पुर फ़िज़ा' (फ़िज़ा ज़े से) ज़ा ए हव्वज़[3] से क्यों लिखा ? खिताब वाहद ग़ायब[4] फ़क़त 'शीन' (श) है न 'अश', हाँ अगर आख़िर लफ़्ज मबनी[5] हा ए इन्हाई[6] हरकत पर हो, मिस्ल ग़म्जह् व 'चश्मह् व ख़ानह् व दानह् तो उसको यों लिखते हैं—चश्म इश, ग़म्जाइश ख़ानाइश दानाइश और बाक़ी और सब अल्फ़ाज़ का हर्फ़ । आख़िर शीन' से मिल जाता है । ख़िताबे वाहिद हाज़िर[7], ख़िताबे वाहिद ग़ायब[8], ख़िताबे मुतकल्लम[9] त, श, म है। 'अ' को यहाँ क्या दख़ल ? और वो जो दखनी बोहरा यनी जामे[10] 'बुरहान क़ातें' अत, अश अम लिखता है, ग़लत करता है। जहाँ तुमने बाद अपने नाम के ये अशार लिखे है—

परीशाँतर ज़ख़ीशम दास्तानेस्त[11]

वहाँ रब्ते कलाम[12] जाता रहा था। एक जुम्ला फ़ाज़िल[13] कर दिया है।

---

१. कविता के गुणज्ञ। २. न्यायी। ३. ज़े। ४. अन्य पुरुष एकवचन का सम्बोधन। ५. निर्भर। ६. सूचक 'हा'। ७. द्वितीय पुरुष का एकवचन। ८. अन्य पुरुष का एकवचन। ९. प्रथम पुरुष। १०. संकलनकर्त्ता। ११. मैं स्वजनों से बहुत परेशान हूँ। इसकी कहानी बड़ी है। १२. वाक्य-प्रवाह। १३. अतिरिक्त।

यानी वर्दी अशार जमाजमा सरास्त। ये खबर उस काफ़ तौसीफ़ी[1] की है। और आगे जो नस्र है, उसका फ़ाइल[2] वही मुसन्नफ़[3] है।

पीर व मुर्शिद साहब आलम साहब की ख़िदमते आली में मेरा सलामे मसनून अर्ज कीजिएगा और ये अर्ज़ कीजिएगा कि आपके मंशूरे अतूफ़त[4] का जवाब बइन्फ़िराद[5] आपकी खिदमत में पहुँचेगा।

१२

मेरे शफ़ीक़े दिली[6] को मेरा सलाम पहुँचे। कल इंशा[7] का पार्सल पहुँचा और आज खत। इंशा का नाम बहारिस्तान और आपका तखल्लुस 'सुरूर' अच्छा नाम है। क़ते का वादा नहीं करता। किस वास्ते कि अगर बेवादा पहुँच जायेगा तो लुत्फ़ ज्यादा देगा और न पहुँचेगा तो पहले शिकायत[8] न होगा।

रफ़ए फ़ितना व फ़साद और बिलाद[9] में मुसल्लम[10]। यहाँ कोई तरह आसाइश[11] की नहीं है। अहले देहली उमूमन बुरे ठहर गये। ये दाग़ उनकी जबीने हाल[12] से मिट नहीं सकता। मैं अमवात[13] में हूँ, मुर्दा शेर क्या कहेगा? ग़ज़ल का ढंग भूल गया। माशूक़ किसको क़रार दूँ जो ग़ज़ल की रविश[14] ज़मीर[15] में आवे? रहा क़सीदा ममदूह[16] कौन है? हाय अनवरी गोया मेरी ज़बान से कहता है—

ऐ दरेग़ा नीस्त ममदूहे सज़ावारे मदीह
ऐ दरेग़ा नीस्त माशूक़े सज़ावारे ग़ज़ल[17]

१. विशेषणवाची 'क'। २. कर्ताकारक। ३. लेखक। ४. कृपापूर्ण आदेश। ५. एक एकशः। ६. हार्दिक मित्र। ७. लेख। ८. शिकायत की जगह। ९. नगर। १०. सम्पूर्ण। ११. सुख। १२. माथा। १३. मृत्यु (ब०व०)। १४. ढंग। १५. अन्तःकरण। १६. प्रशंस्य। १७. इस बात का दुःख है कि मेरे लिए कोई प्रशंस्य व्यक्ति नहीं है। कोई ऐसी प्रेमिका नहीं है जो ग़ज़ल के उपयुक्त हो।

गवर्नमेंट के दरबार में हमेशा से मेरी तरफ़ से क़सीदा नज़्र गुज़रता है, अशर्फ़ियाँ नहीं। और ख़िलत रियासते दूदमानी[1] का सातपार्चा और तीन रक़म जीग़ा[2] व सरपेच व मालाए मरवारीद[3] मुझको मिला करता है। अब नवाब गवर्नर जनरल बहादुर यहाँ आते हैं। दरबार में बुलाये जाने की तवक़्क़ो नहीं। फिर किस दिल से क़सीदा लिखूं?

सनाअते शेर[4] आज़ा व जवारेह[5] का काम नहीं, दिल चाहिए, दिमाग़ चाहिये, ज़ौक़ चाहिए, उमंग चाहिए। ये सामान कहाँ से लाऊँ जो शेर कहूँ? चौसठ बरस की उम्र व वलवलए शबाब[6] कहां? रिआयते फ़न[7] इसके असबाब कहाँ? इन्नालिल्लाह व इन्नाइलहे राजऊन।

१३

मेरे शफ़ीके दिली चौधरी अब्दुलग़फ़ूर साहब को ख़ुदा सलामत रखे। देखो, मेरे हवास का अब ये आलम है कि तुम्हारे नाम की जगह तुम्हारे चचा साहब का नाम लिखा था। इसी तरह साबिक़ के ख़त में सरनामे पर ये लिखा होगा—

> बहार पेशे जवाने के ग़ालिबश नामन्द
> कुनूं बे बीं के च ख़ूंमी चकदज़ हर नफ़सश[8]

जो ख़त के आपके ख़ुतूत के जवाब में आये, उनके भेजने की क्या हाजत थी। आपकी सई[9] और अपनी नाकामी पहले से मेरे दिलनशीं और ख़ातिर-निशान है, जैसा कि कोई उस्ताद कहता है—

---

१. वंशपरम्परागत २. पगड़ी में बाँधने का रत्नजटित आभूषण। ३. मुक्तामाला। ४. काव्य-कला। ५. शरीर के अंग-प्रत्यंग। ६. यौवन की उमंग। ७. कला का ध्यान। ८. वह नवयुवक, जिसका नाम ग़ालिब है। देखिये, अब उसकी प्रत्येक साँस से किस प्रकार रक्त बह रहा है। ९. प्रयत्न।

तिही दस्ताने क़िस्मत रा चे सूद अज़ रहवरे कामिल
के ख़िज़्र अज़ आबे हैवाँ तिश्ना मी आरद सिकन्दर रा[1]

वो अख़बार न कहीं से हाथ आया और न आयेगा। मैं अपने ख़ुदा से उम्मीदवार हूँ कि मेरा काम बग़ैर इसके निकल जाएगा।

बन्दा पर्वर[2], मेरा कलाम—क्या नज़्म क्या नस्र, क्या उर्दू, क्या फ़ारसी—कभी किसी अहद में मेरे पास फ़राहम नहीं हुआ। दो-चार दोस्तों को इसका इल्तिज़ाम[3] था कि वो मसविदात मुझसे लेकर जमा कर लिया करते थे, सो उनके लाखों रुपये के घर लुट गये। जिसमें हज़ारों रुपये के किताबख़ाने भी गये। इसमें वो मजमूआ हाए परेशान भी ग़ारत हुए। मैं ख़ुद इस मसनवी के वास्ते ख़ूँ दर जिगर हूँ। हाए क्या चीज़ थी, पार्सल में ख़ुतूत भेजने महले अँदेशा है, ख़ुदा ने बचाया। चूँकि अब वो ख़त आपके कुछ काम के न समझा, अज़ राहे एहतियात[4] पार्सल में से निकाल लिये।

१४

जनाब चौधरी साहब की याद आवरी[5] और मेहरग़ुस्तरी[6] का शुक्र बजा लाता हूँ। आपका ख़त मय क़सीदा व मसनवी पहुँचा। मसनवी को जुदागाना बतरीक़े पम्फ़लेट पाकिट भेजता हूँ और ये ख़त जुदागाना इर्साल करता हूँ, लिफ़ाफ़ा इसका भी आपके नाम का है। आपके जवाब का माजिरा और सुबह को इधर का क़स्द[7] और फिर अपने चचा साहब के कहने से नज़र ताबिस्ताँ[8] पर इस अज़्म[9] का मुल्तवी रखना मालूम हुआ। आपके चचा साहब ने

१. अभागों के लिए अच्छा से अच्छा पथप्रदर्शक निरर्थक है। ख़िज़्र सिकन्दर को अमृत पिलाने के लिये ले गया किन्तु वह वहाँ से प्यासा ही आया। २. सेवकों के पालनकर्त्ता। ३. अनिवार्यता। ४. सावधानी के लिए। ५. स्मरण। ६. दयाशीलता। ७. विचार। ८. ग्रीष्म ऋतु। ९. विचार।

करामात की कि जो आपको मना किया। डाक की सवारी पर अगर आप इस शहर में मेरे मकान पर आ जाते तो मुमकिन था मगर रहना शहर में बे हुसूले इजाज़ते हाकिम एहतिमाले[1] जरर रखता है। अगर ख़बर न हो तो न हो, अगर ख़बर हो जाये तो अलबत्ता क़बाहत है। ज़िन्हार[2] कभी ये ग़ुमान न कीजिएगा कि दिल्ली की अमलदारी मेरठ और आगरा और बिलादे शर्किया[3] की मिस्ल है, ये पंजाब इहाते में शामिल है। न क़ानून, न आईन। जिस हाकिम की जो राय में आवे, वो वैसा ही करे। बहरहाल—

ऐ वाए ज़े महरूमीए दीदार दिगर हीच[4]

इंशा अल्लाह् अल अज़ीम[5], दो-तीन महीने में यहाँ भी सूरत अमन व आमान की हो जाएगी, मगर मेरी आरज़ू व इस्तैफ़ा इस सूरत में भी बर न आएगी। मैं ये ताके हुए हूँ कि मेरी और तुम्हारी मुलाक़ात इस तरह से हो कि हम तुम हों, और हज़रत साहबे हों और बाहम हर्फ़ व हिकायत[6] करें। अगर ज़माना मेरी ख़ाहिश के मुआफ़िक़ नक़्श[7] क़ुबूल करता है तो मैं मारहरा को आता हूँ। हज़रत पीर व मुर्शिद का इश्तियाक़ और इसी जलसे में तुम्हारे दीदार का शौक़ ऐसा नहीं है कि मुझको आराम से बैठा रहने देगा।

साहब, ये मसनवी तो मेरे वास्ते एक मर्सिया हो गई है। इस बुज़ुर्गवार के जिगर में क्या-क्या घाव पड़े होंगे तब ये तराविशे ख़ूँनाबा[8] ज़ुहूर में आई होगी। मज़ा ये है कि उनवाने[9] बयान से हक़्क़ब जानिब उन्हीं के मालूम होता है। चूँकि अस्ल काग़ज़ मेरी नज़र में नहीं और हक़ीक़ते हाल मुझ पर मजहूल[10] है। इस वास्ते अंजाम व आग़ाज़[11], अन्दाज़ा व अन्दाज़ कुछ नहीं समझा।

---

१. आवश्यक। २. कदापि। ३. पूरब के नगर। ४. तुम्हारे दर्शन न होने के कारण मुझे दुःख है और सब व्यर्थ है। ५. ईश्वर महान् है। ६. बातचीत। ७. प्रभाव। ८. खून के आसुओं की वर्षा। ९. शीर्षक। १०. अज्ञात। ११. इति और प्रारम्भ।

हक़ व इस्लाह[1] को आप बनज़रे इमान[2] मुलाहिज़ा फ़रमायें। मैंने बहस्बे दस्तूर हर जगह मन्शाए इस्लाह[3] लिख दिया है। शेख़ साहब से मेरा सलाम कहिएगा और कहिएगा कि क्या करूँ दूर हूँ, माज़ूर हूँ। मदद नहीं कर सकता, इआनत[4] के मरासिमे[5] तक़दीम[6] को नहीं पहुँचा सकता। ख़ुदा तुम्हारा निगहबान[7] रहे। वस्सलाम।

१५

(अप्रैल, १८६० ई०)

जनाबे आली,

आपका तफ़क्क़ुदनामा[8] मरक़ूमए याज़दहुम शाबान[9] (१२७६ हि०) मुताबिक़ पंजुम मार्च (१८६१ ई०) बक़ैदे रोज़े दो शम्बा पहुँचा। पहले तो इन तारीख़ों के हिसाब से तताबुक़[10] में मैं उलझा, फिर ख़त के पहुंचने से बहुत ख़ुश हुआ। डाक क्या है, ख़ाक है। ख़ैर, उधर पढ़ा, इधर जवाब लिखा। ख़ुदा करे ये मेरा ख़त जल्द पहुँचे वर्ना ये आपको ख़याल होगा कि ग़ालिब ने हमारे ख़त का जवाब न लिखा।

हक़ीक़त मेरी मुजमिलन[11] ये है कि राह व रस्म मुरासिलत[12] हुक्कामे आली मुक़ाम[13] बदस्तूर जारी हो गई है। नवाब लेफ़्टंट गवर्नर बहादुर ग़र्ब व शुमाल[14] को नुस्खए 'दस्तम्बू' बसबीले डाक भेजा था। उसका ख़ते फ़ारसी

१. संशोधन। २. गहरी दृष्टि से। ३. संशोधन का तात्पर्य। ४. सहायता। ५. रीति-रिवाज। ६. प्रामुख्य। ७. रक्षक। ८. आदेश-पत्र। ९. ग्यारहवीं शाबान का लिखा हुआ। १०. साम्य। ११. सम्पूर्णतया। १२. पत्राचार। १३. स्थानीय बड़े अधिकारियों से। १४. पश्चिमोत्तर।

मुशइरे तहसीने इबारत[1] व क़ुबूले सिद्क़े इरादत व मवद्दत[2] वसबीले डाक आ गया। फिर क़सीदा बहारिया तहनियत[3] व मदहत[4] में भेजा। उसकी रसीद आ गई। वही 'खान साहब बिसियारे मेहरबाने दोस्ताँ' अलक़ाब[5] और काग़ज़ अफ़शानी[6]। अज़ाँ बाद[7] एक क़सीदा जनाब राबर्ट मिंटगुमरी साहब लफ़्टंट गवर्नर बहादुर क़लम रूवे पंजाब[8] की मदह में बतवस्सुत[9] साहबे कमिश्नर बहादुर देहली गया, उसके जवाब में भी खुशनूदीनामा[10] बतवस्सुत कमिश्नर बहादुर मुझको आ गया। पिन्शन अभी तक मुझको नहीं मिली। जब मिलेगी हज़रत को इत्तिला दी जाएगी।

पीर व मुर्शिद आलिम[11] हैं और मैं जाहिल[12] हूँ। उनके तस्लीम[13] न करने को मैंने तस्लीम किया और फिर तस्लीम[14] बजा लाया। ऐ हज़रत, जनाब मखदूम मुकर्रम चौधरी गुलामरसूल साहब की खिदमत में उन्हीं अल्फ़ाज़ में रस्मे मुबारकबाद अदा की गई थी। न इबारत आराई[15], न तबा आज़माई। कुछ अजब नहीं कि वो खत भी मई-जून में आपको पहुँच जाये। आपका भी तो मार्च का खत मुझको अब आखिर अप्रैल में पहुँचा है।

जनाब शेख साहब क्यों मुझको महजूब[16] करते हैं? उस बाब में इससे ज्यादा अर्ज़ नहीं कर सकता कि इफ़ादा[17] मुश्तरिक[18] है। क़सीदा व मसनवी भेज दीजिये। लुत्फ़[19] उठाऊँगा और जो कुछ मेरे खयाल में आएगा बेतकल्लुफ़ अर्ज़ करूँगा। मेरा सलाम कहिये और मसनवी और क़सीदा उनसे लेकर जल्द भेज दीजिये। अपने अम्मे आली मिक़दार[20] की खिदमत में मेरा सलाम -

---

१. लेखन की प्रशंसासूचक। २. मित्रता और शुभ भावनाओं की स्वीकृति का सूचक। ३. बधाई। ४. प्रशंसा। ५. विरद। ६. शुभ कागज। ७. इसके पश्चात्। ८. पंजाब-प्रदेश। ९. द्वारा। १०. प्रसन्नता का पत्र। ११. ज्ञानी। १२. निरक्षर। १३. स्वीकार। १४. अभिवादन। १५. भाषा का अलंकरण। १६. लज्जित। १७. लाभ। १८. साझे का। १९. आनन्द। २०. प्रतिष्ठित चाचा।

पहुंचाइये और कहिये कि हज़रत खुलासए मक्तूबे साबिक़[1] यही अल्फ़ाज़ हिन्दी थे। शायद कुछ तग़य्युर[2] बिल मुशदिफ़[3] हो तो हो। ये शादी बसद हज़ार[4] मसर्रत आपको मुबारक हो और इनकी औलाद देखनी और इसी तरह उनकी शादी करनी नसीब हो। फ़ैज़अलीख़ाँ साहब को मेरा सलाम पहुँचे। मैं भी आपकी मुलाक़ात का मुश्ताक़ और आपका मद्दाह[5] रहूँगा। खत का लिफ़ाफ़ा इस खत में मलफ़ूफ़ करके भेजता हूँ। ये आज पहुँचा और आज ही मैंने उसका जवाब लिखा। कातिब वही है जो लिफ़ाफ़ए मलफ़ूफ़ा का मकतूब अलै[6] है।

१६

(१८६० ई०)

मेरे शफ़ीक़ चौधरी अब्दुलग़फ़ूर साहब अपने खत और क़सीदा भेजने का मुझको शुक्र गुज़ार[7] और क़सीद ए साबिक़[8] की अब तक इस्लाह न पाने से शर्मसार[9] तसव्वुर फ़रमायें और इन दोनों क़सीदों के बाहम[10] पहुँचने का इन्तिज़ार करें।

नवीदे वस्ल बयम मी देहद सितारा शनास
न कर्दा ज़र्फ़ निगाहे मगर दर अख़्तरे मन[11]

१. पिछले पत्र के विवरण के अनुसार। २. भ्रम। ३. एकार्थी। ४. सैकड़ों हजार। ५. प्रशंसक। ६. लिखने वाला। ७. आभारी। ८. पहले का क़सीदा। ९. लज्जित। १०. एक साथ। ११. ज्योतिषियों ने यह बताया कि मुझे प्रेमिका मिलेगी, किन्तु उन्होंने भाग्य के नक्षत्रों का गम्भीरता से अवलोकन नहीं किया (मैं इतना अभागा हूँ कि मुझे प्रेमिका के दर्शन नहीं होंगे।)

चौधरी अब्दुलग़फ़ूर 'सुरूर' के नाम

तहक़ीक़, कि, अब रू ए सुखन जनाब फ़ैज़ निसाब[1] जामे मदारिज[2] जमाउल जमा[3], बज़्मे वहदत[4] के फ़रोग़[5] व ज़िन्दा शमा[6], मुस्तग़र्क़[7] मुशाहिदए शाहिदे ज़ात[8], हज़रत साहबे आलम साहब कुदसी सिफ़ात की तरफ़ है और ये शेरे इफ़्तिताहे कलाम[9] हैं।

पहले कुछ बातें, कि, बादी उन्नज़र[10] में खारिज अज़ मबहस[11] मालूम होंगी, लिखी जाती हैं। मैं पांच बरस का था कि मेरा बाप मरा, नौ बरस का था कि चचा मरा। उसकी जागीर के एवज़ मेरी और मेरे शुरका ए हक़ीक़ी[12] के वास्ते, शामिल जागीर नवाब अहमदबख़्शख़ाँ दस हज़ार रुपये साल मुक़र्रर हुए। उन्होंने न दिये, मगर तीन हज़ार रुपये साल। उसमें से खास मेरी ज़ात का हिस्सा साढ़े सात सौ रुपये साल। मैंने सरकार अंग्रेज़ी में ये ग़बन ज़ाहिर किया। कोल ब्रुक साहब बहादुर रेज़ीडेण्ट देहली और अस्तरलंग साहब बहादुर सेक्रेतर गवर्नमेंट कलकत्ता मुत्तफ़िक़[13] हुए मेरा हक़ दिलाने पर। रेज़ीडंट माज़ूल[14] हो गये, सेक्रेतर गवर्नमेंट बमर्गे नागाह[15] मर गये। बाद एक ज़माने के बादशाह देहली ने पचास रुपये महीना मुक़र्रर किया। उनके वलीअहद[16] ने चार सौ रुपये साल। वलीअहद इस तक़र्रुर के दो बरस बाद मर गये। वाजिदअलीशाह बादशाह अवध की सरकार से बसिला मदह गुस्तरी[17] पान सौ रुपये साल

---

१. कल्याण के आधार। २. उच्च-पदों के अधिकारी। ३. बहुवचन का बहुवचन। ४. ईश्वर की एकता की सभा। ५. ज्योति। ६. दीपक। ७. मग्न। ८. उत्तम कुल के साक्षी। ९. रचना का पहला शेर। १०. सरसरी तौर पर। ११. विवाद के बाहर, विवाद के अयोग्य। १२. असली साझेदार। १३. सहमत। १४. विपरीत। १५. आकस्मिक मृत्यु से। १६. युवराज-राजकुमार फ़तहउल मुल्क, मृत्यु १० जुलाई १८५६ ई०। बहादुरशाह के पुत्रों। १७. प्रशंसा के फलस्वरूप।

मुक़र्रर हुए। वो भी दो बरस से ज़्यादा न जिये, यानी अगरचे अब तक जीते हैं, मगर सल्तनत जाती रही, और तबाही ए सल्तनत दो ही बरस में हुई। दिल्ली की सल्तनत कुछ सख्त जान थी, सात बरस मुझको रोटी देकर बिगड़ी। ऐसे ताल ए मुरब्बी कुश[1] और मुहसिन सोज़[2] कहाँ पैदा होते हैं ? अब मैं जो वाली ए दकन[3] की तरफ़ रुजू करूँ, याद रहे कि मुतवस्सित[4] या मर जाएगा या माज़ूल[5] हो जाएगा और अगर ये दोनों अम्र[6] वाक़ै न हुए तो कोशिश उसकी ज़ाया[7] हो जाएगी और वाली ए शहर[8] मुझको कुछ न देगा और अहयानन[9] उसने सुलूक किया तो रियासत खाक में मिल जाएगी और मुल्क में गधे के हल फिर जाएँगे। ऐ खुदावन्द वन्दा पर्वर ये सब बातें वक़ूई[10] और वाक़ई हैं, अगर इनमे क़तै नज़र करके[11] क़सीदे का क़स्द करूँ, क़स्द तो कर सकता हूँ, तमाम[12] कौन करेगा ? सिवाय एक मलेका[13] के, कि, वो पचास-पचपन बरस की मश्क़ का नतीजा है, कोई क़ुव्वत बाक़ी नहीं रही। कभी जो साबिक़ की अपनी नज़्म व नस्र देखता हूँ तो ये जानता हूँ कि ये तहरीर मेरी है मगर हैरान रहता हूँ कि ये नस्र मैंने क्यों कर लिखी थी और ये शेर क्यों कर कहे थे। अब्दुल क़ादर 'बेदिल' का ये मिस्रा गोया मेरी ज़बान से है—

आलम हमा अफ़सान ए मा दारदो मा हीन्च[14]

१. अपने उपकारियों को नाश करने वाला। २. उपकार करने वाले को कष्ट पहुँचाने वाला। ३. हैदराबाद का निज़ाम। ४. माध्यम, जिस व्यक्ति के द्वारा सम्पर्क स्थापित होने वाला था। ५. अपदस्थ। ६. काम। ७. नष्ट। ८. नगर का शासक। ९. यदि। १०. घटित। ११. दृष्टि हटा कर। १२. पूर्ण। १३. योग्यता, अभ्यास जन्य योग्यता। १४. संसार मेरे किस्से-कहानियाँ लेकर घूम रहा है, लेकिन मैं तो कुछ भी नहीं हूँ।

पैमाने उम्र¹ है। दिल व दिमाग़ जवाब दे बैठे हैं। सौ रुपये रामपुर के, साठ रुपये पिन्सन के रोटी खाने को बहुत हैं। गिरानी और अर्ज़ानी उमूरे आम्मा² में से है। दुनिया के काम खुश-नाखुश चले जाते हैं। क़ाफ़िले के क़ाफ़िले आमादा ए रहील³ हैं। देखो मुंशी नबीबख्श मुझ से उम्र में छोटे थे, माहे नवम्बर में गुज़र गये। मुझ में क़सीदे के लिखने की क़ुव्वत कहाँ? अगर इरादा करूँ तो फ़ुर्सत कहाँ? क़सीदा लिखूँ, आप के पास भेजूँ, आप हुज़ूर को भेजें, मुतवस्सिल कब पेश करने का मौक़ा पाये? पेश किये पर क्या पेश आये? इन मराहिल⁵ के तै होने तक मैं क्यों कर जीऊँगा? इन्ना लिल्लाह व इन्ना इलैहि राजिऊन। ला मोअस्सिर इल्लल्लाह व ला माबूद इल्लल्लाह व ला मौजूद इल्लल्लाह कानल्लाहो वलम यकुन शैउन वल्लाहु अलआन कमाकान।⁶

१७

जनाब चौधरी साहब को सलाम पहुँचे। आपने अपने मिज़ाज का नासाज़ी का हाल कुछ न लिखा। अगर पीर व मुर्शिद भी न लिखते तो मैं क्यों कर इत्तिला पाता और अगर इत्तिला न पाता तो हुसूले सेहत⁷ की दुआ क्यों कर माँगता? कल से नक़्श खास में दुआ माँग रहा हूँ, यक़ीन है कि पहले तुम तन्दुरुस्त हो जाओगे अज़ां बाद⁸ ये ख़त पाओगे। अक्सर साहब अतराफ़ व जवानिब⁹ से माहे 'नीममाह' भेजने का हुक्म भेजते हैं और मैं जी

१. आयु का अन्तिम भाग। २. सस्तापन। ३. जन सामान्य का विषय। ४. मृत्यु के लिए तत्पर। ५. मंजिलें। ६. सब कुछ ईश्वर का है, हम सब ईश्वर के यहाँ लौटेंगे। ईश्वर के अतिरिक्त कुछ नहीं, ईश्वर के अतिरिक्त कोई स्तुत्य नहीं, ईश्वर के अतिरिक्त किसी का अस्तित्व नहीं। जब कुछ नहीं था तब भी ईश्वर था। ईश्वर अब भी वैसा ही है जैसा पहले था। ७. स्वास्थ्य प्राप्ति। ८. इसके पश्चात्। ९. आसपास के लोग।

में कहता हूँ कि जब 'मह्रे नीमरोज़' की इबारत को नहीं समझे तो 'माहे नीमनाह' को लेकर क्या करेंगे ? साहब, 'मह्रे नीमरोज़' के दीवाचे में मैंने लिख दिया है कि इस किताब का नाम 'परतविस्ताँ' है और इसके दो मुजल्लद हैं। पहली जिल्द में इब्तदाए खल्कते आलम[1] से हुमायूँ की सल्तनत तक का ज़िक्र, दूसरे हिस्से में अकबर से बहादुरशाह तक की सल्तनत का बयान। पहले हिस्से का नाम 'मह्रे नीमरोज़', दूसरे हिस्से का इस्म[2] 'माहे नीममाह'। बारे, पहला हिस्सा तमाम हुआ, छापा गया, क़स्द था जलालुद्दीन अकबर के हालात के लिखने का, कि, अमीर तैमूर तक का नाम व निशान मिट गया। आँ दफ़्तर रा गाव खुर्द व गाव रा क़स्साब बुर्द, क़स्साब दर राह मुर्द[3]। जो किताब मैंने लिखी ही न हो वो भेजूँ कहाँ से ?

पीर व मुर्शिद को मेरी बन्दगी और साहबज़ादे को दुआ। खुदावन्द मुझे मारहरा बुलाते हैं और मेरा क़स्द मुझे याद दिलाते हैं, उन दिनों में कि दिल भी था और ताक़त भी थी। शेख मुहसिनुद्दीन मरहूम से बतरीक़े तमन्ना कहा गया था कि जी यों चाहता है कि बरसात में मारहरा जाऊं और दिल खोल कर और पेट भर कर आम खाऊँ। अब वो दिल कहाँ से लाऊँ ? ताक़त कहाँ से पाऊँ ? न आमों की तरफ़ वो रग़बत[4], न मेरे में उतनी आमों की गुंजाइश। निहार मुँह[5] मैं आम न खाता था, खाने के बाद मैं आम न खाता था। रात को कुछ खाता ही नहीं, जो कहूँ बैनुल तामेन[6]। हाँ, आखिरे रोज़[7] बादे हज़्म मेदी आम खाने बैठ जाता था। बेतकल्लुफ़ अर्ज़ करता हूँ, इतने आम खाता था कि पेट भर जाता था और दम पेट में न समाता था। अब भी उसी वक़्त खाता हूँ, मगर दस-बारह, अगर पैवन्दी आम बड़े हुए तो पाँच-सात।

१. सृष्टि के उत्पादन से लेकर। २. नाम। ३. इस दफ़्तर को गाय खा गई, गाय को कसाई ले गया, कसाई मार्ग में मर गया। ४. रुचि। ५. निराहार। ६. दो भोजनों के मध्य। ७. सन्ध्या समय।

चौधरी अब्दुलग़फ़ूर 'सुरूर' के नाम

दरेग़ा के अह्दे जवानी गुज़िश्त
जवानी मगो ज़िन्दगानी गुज़िश्त[1]

अब इसके वास्ते क्या सफ़र करूँ? मगर हज़रत का देखना इसके वास्ते
मुतहम्मिले रंजे सफ़र[2] हूँ तो जाड़े में, न वरसात में।

ऐ वाए ज़े महरूमी ए दीदारो दिगर हीच[3]

१८

(सितम्बर, १८६० ई०)

मेरे मुशफ़िक़,

आपका ख़त आया और उसके आने में तुम्हारी रंजिश का वसवसा[4] मेरे दिल
से मिटाया। एक क़ायदा आपको वताता हूँ, अगर उसको मंज़ूर कीजिये तो ख़ुतूत
के न पहुँचने का एहतिमाल[5] उठ जाएगा और रजिस्ट्री का दर्द सर जाता
रहेगा। आध आना न सही एक आना सही, आप भी ख़त वैरंग भेजा कीजिए
और मैं भी वैरंग भेजा करूँ। पेड़ ख़ुतूत तलफ़[6] भी होते हैं। इस क़ायदे का
जैसा कि मैं वाज़े[7] हुआ हूँ, वादी भी हुआ और ये ख़त वैरंग भेजा।

पिन्सन जारी हो गया। तीन वरस का चढ़ा हुआ रुपया मिल गया।
वाद अदाए क़र्ज़ सतासी रुपये ग्यारह आने वचे। अब माह ब माह रुपया
मिलता है मगर यही तीन महीने सितम्बर, अक्तूबर और नवम्बर में गये।

---

१. हाय! यौवन का समय वीत गया। यह मत कहो कि यौवन ही
गया, यह कहो कि जीवन ही चला गया। २. यात्रा के कष्ट को सहन
करने के लिए। ३. जब तुम्हारे दर्शन से ही मैं वंचित हूँ तो सब व्यर्थ है।
४. आशंका। ५. सन्देह। ६. नष्ट। ७. आरम्भकर्त्ता।

दिसम्बर १८६० ई० से तनख़ाह शशमाही[1] हो जाएगी। इससे बढ़कर ये बात है कि चार रुपये सैकड़ा सालाना उमूमन वज़ा हुआ करेगा। इस हिसाब से मेरे हिस्से में ढाई रुपया महीना आया। बासठ आठ आने के साठ रहेंगे। कुछ रामपूर से माह ब माह आता है। ये दोनों आमदनें मिलकर ख़ुश व नाख़ुश गुज़ारा हो जाता है।

यहाँ शहर ढै रहा है, बड़े-बड़े नामी बाज़ार, ख़ास बाज़ार और उर्दू बाज़ार और ख़ानम का बाज़ार, कि, हर एक बजा ए ख़ुद एक क़स्बा था, अब पता भी नहीं कि कहाँ थे। साहबाने अमकना व दुकानें[2] नहीं बता सकते थे कि हमारा मकान कहाँ था और दुकान कहाँ थी। बरसात भर मेंह नहीं बरसा। अब तेशा व कलन्द[3] की तुग़यानी[4] से मकान गिर गये। ग़ल्ला गिराँ[5] है, मौत अर्ज़ाँ[6] है। मेवा के मोल अनाज बिकता है। माश की दाल ८ सेर, बाजरा १६ सेर, गेहूँ १२ सेर, चने १६ सेर, घी १ सेर, तरकारी मँहगी। इन सब बातों से बढ़कर ये बात है कि कँवार का महीना जिसे जाड़े का दवार[7] कहते हैं—पानी गरम, धूप तेज, लू चलती है, जेठ-असाढ़ की-सी गरमी पड़ती है।

हज़रत रफ़अत दरजत[8] जनाब साहबे आलम की ख़िदमत में दोस्ताना सलाम और मुरीदाना[9] बन्दगी व इन्किसारे तमाम[10] अर्ज़ करता हूँ। हज़रत को किस राह से मेरे आने का इन्तिज़ार है? मैंने मुर्शिदज़ादे[11] के ख़त में कब अपना अज़्म[12] लिखा। किसने आपसे मेरी ज़बानी कहा कि आप रोज़े ख़ानगी के तक़र्रुर से इत्तिला चाहते हैं। हाँ, आपकी क़दमबोसी[13] की तमन्ना और अनवरुद्दौला के दीदार की आरज़ू हद से ज़्यादा है और ऐसा जानता हूँ कि ये

१. छमाही। २. घर और दुकान के मालिक। ३. कुदाल और खुरपा। ४. बाढ़। ५. मँहगा। ६. सस्ती। ७. द्वार। ८. उच्च पद पर आसीन। ९. शिष्यत्व का। १०. अशेष सेवकाई के साथ। ११. गुरुपुत्र। १२. निश्चय १३. चरण-चुम्बन।

आरज़ू गोर[1] में ले जाऊँगा। तनखाह् के इजरा[2] का हाल और मुस्तक़बिल[3] में उसके वसूल की सूरत इन सतरों से, जो आग़ाज़े मकतूब[4] में चौधरी अब्दुल ग़फ़ूर साहब की खिदमत में लिखी गई हैं, मय रूदादे शहर[5] मालूम कर लीजिएगा।

लाला गोबिन्द परसाद साहब हनोज़[6] मेरे पास नहीं आये हैं। दुनियादार नहीं, फ़क़ीरे खाकसार[7] हूँ। तवाज़ो[8] मेरी खू[9] है। इंजाहे मक़ासिदे खल्क[10] में हत्तलवुसअ[11] कभी करूँ तो ईमान नसीब न हो। इन्शा अल्लाहुल अज़ीज़[12] वो फ़क़ीर से राज़ी और खुशनूद रहेंगे।

जनाब मुस्तताब[13] हज़रत मुहम्मद अमीर साहब की खिदमत में बाद सलामे नियाज़[14] ये गुज़ारिश है कि मेरे पास हज़रत का सलाम व पयाम अब की बार भी नहीं पहुँचा। अब इन सुतूर[15] को अपना ज़रियए इफ़्तिखार[16] समझा, और नवेदे मक़दम मुबारक[17] से बहुत खुश हुआ। ये खानाकूची[18] और गुरेज़पाई[19] और बेइत्मिनानी का आपको मुझ पर गुमान है और इसका रंज है, ये खिलाफ़े वाक़ै किसने आपसे कहा है? मय ज़न व फ़र्ज़न्द[20] हर वक़्त इसी शहर में क़ुलज़ुमे खूँ[21] का शनावर[22] रहा हूँ। दरवाज़े से बाहर क़दम नहीं रखा। न पकड़ा गया, न निकाला गया, न क़ैद हुआ, न मारा गया। क्या अर्ज़ करूँ कि मेरे खुदा ने मुझ पर कैसी इनायत की और क्या नफ़्से

---

१. क़ब्र। २. चालू। ३. भविष्य। ४. पत्र का आरम्भ। ५. नगर के वृत्तान्त के साथ। ६. अभी। ७. अकिंचन। ८. आव-भगत। ९. स्वभाव। १०. सामान्य जनता की इच्छापूर्ति। ११. यथाशक्ति। १२. ईश्वर जो चाहे। १३. शुभान्वित। १४. प्रार्थनापूर्वक अभिवादन। १५. पंक्तियाँ। १६. गौरव का कारण। १७. शुभ-सूचना। १८. समस्त परिवार के साथ प्रस्थान। १९. भगोड़ापन। २०. पत्नी और बेटे के साथ। २१. रक्त का समुद्र। २२. तैराक।

मुतमइन्ना[1] बख़्शा। जान व माल व आबरू में किसी तरह का फ़र्क़ नहीं आया। तनख़ाह, जिसको हज़रत ने योमिया[2] लक़ब[3] दिया है, उसका हाल ऊपर की तहरीर से दरयाफ़्त होगा। फ़क़ीर को अपना दोस्त और मौतक़द[4] और मुश्ताक़[5] तसव्वुर फ़रमाते रहिएगा। मुर्शिदज़ादए मुर्तज़वी दूदमान[6] सयद शाहआलम को सलाम व दुआ। डिप्टी साहब से मुझसे मुलाक़ात कसरत से नहीं है, उनको कसरते अशग़ाल[7] से फ़ुर्सत नहीं, मुझको इफ़राते ज़ोफ़[8] से ताक़त नहीं। अगर बहस्वे इत्तिफ़ाक़[9] कहीं मुलाक़ात हो गई तो आपका सलाम कह दूँगा। आप अपने इख़्वाने आली शान[10] को मेरा सलाम पहुँचा दीजिएगा।

बन्दए शाहे शुमायेमो सनाख़ाने शुमा[11]

१६

(जून, १८६२ ई०)

हज़रत चौधरी साहब इनायत नाम ए साबिक़[12]—

था तो ख़त पर न था जवाब तलब
कोई इसका जवाब क्या लिखता?

आज दोपहर को ये ख़त पहुँचा, आज ही आख़िरे रोज़ जवाब लिख कर रख छोड़ता हूँ, कल सुबह को बशर्ते हयात[13] डाक में भेजवा दूंगा। 'क़ाते बुरहान' के मुजल्लदात[14] जो बमूजिबे तौक़ी ए ख़रीदारी[15] मेरी मिल्क[16] हैं, वो

१. धैर्य। २. दैनिक। ३. विरद। ४. भक्त, विश्वासी। ५. प्रेमी। ६. हजरतअली के वंश के गुरु-पुत्र। ७. कार्याधिक्य। ८. निर्बलता की अधिकता। ९. संयोगवश। १०. प्रतिष्ठित बन्धु-बान्धव। ११. आपके शासक का दास हूँ और आपका प्रशंसक। १२. पहले का पत्र। १३. जीवित रहा तो। १४. प्रतियाँ। १५. खरीदने के आदेशानुसार। १६. सम्पत्ति।

अव्वले जुलाई में मेरे पास और उनमें से दो मुजल्लद आख़िर जुलाई में आपके पास पहुँचेंगे। एक आप रहने देंगे और एक पीर व मुर्शिद की नज्र करेंगे इन्शा अल्लाहुल अलीउल अर्ज़ाम[1]।

हब्बज़ा फ़ैज़ ताल्लुक़ मोजिज़ये किल्कत निगर
गर रवद सद साला रहे पेशे नज़र बाशद हमीं[2]

ये शेर मौलाना नूरुद्दीन 'जुहूरी' रहमतुल्लाह् अलें[3] का ममदूह की खुशनवीसी की तारीफ़ में है। मुबालग़ा[4] सरहदे तबलीग़[5] व ग़ुलू[6] को पहुंच गया है। खुलासा ये कि उसका लिखा हुआ क़ता या कोई इबारत सौ बरस की राह पर से आदमी को नज़र आती है। वजह इसकी ये कि हर्फ़ बहुत रौशन, साफ़ और जली[7] है और चूंकि ये अम्र बहरवे आदत व अक्ले मुम्तने[8] है, इस रू से उसको मोजिज़ ए क़लम[9] कहा और चूंकि मोजिज़ा[10] खिर्क़े आदत है और खिर्क़े आदत एक अम्र है मुसल्लमाते जम्हूर[11] में से, पस मुन्किर[12] को गुंजाइशे इन्कार न रही। यहां से ये खयाल आएगा कि 'फ़ैज़े ताल्लुक' बेकार रहता है। मैं कहता हूँ कि वो हुस्ने इल्हाम[13] है यानी निगाह को अज़ांजा कि बाखिरा मुश्ताक़े हुस्न[14] है, उस खत से वो ताल्लुक़ बहम पहुँचा है कि अगर वो खत सौ बरस की राह पर हो, तो भी निगाह उससे मुताल्लिक़[15] रहती है, जैसे तायर[16] को अपना आशियाना[17] और मुसाफ़िर को अपना वतन और आशिक़

---

१. ईश्वर महान् है। २. साधु-साधु, आपकी लेखनी (लिखावट) का यह चमत्कार है कि मीलों दूर से यह ज्यों का त्यों पढ़ा जाता है। ३. स्वर्गीय। ४. अत्युक्ति। ५. प्रचार की सीमा। ६. अतिशयोक्ति। ७. स्पष्ट। ८. बुद्धि का निषेधक। ९. लेखनी का चमत्कार। १०. वीर का चमत्कार, विनोदी का चमत्कार। ११. सर्वसम्मत। १२. अस्वीकार करने वाला। १३. दैवी सन्देश। १४. मेरी आँखें ही क्या मेरी दृष्टि भी आपके सौन्दर्य को देखने के लिए लालायित है। १५. सम्बन्धित। १६. पक्षी। १७. घोंसला।

को माशूक़ का ख़द्[1] व ख़ाल[2] मुसाफ़ते बईदा[3] से पेशे नज़र रहता है। चाहो एक मालूल[4] की दो इल्लत[5] समझो—फ़ैज़े ताल्लुक़ मज़कूर[6] और हुस्ने ख़त मुक़द्दर[7], चाहो फ़ैज़े ताल्लुक़ को इद्दिग्रा[8] कहो और हुस्ने ख़त जो तक़दीर में है, उसको सबब समझो ताल्लुक़ का और मुवक्किद[9] जानो इद्दिग्रा का। सुनो दावे के वास्ते दलील मौजू है। इद्दिग्रा को दलील ज़रूर नहीं हैं। हाँ, इद्दिग्रा पर ताकीद तरीक़ ए बलाग़त[10] है। ये लताफ़ते मानवी[11] खास उस बुज़ुर्ग के हिस्से में आई है। मैं जानता हूँ मुश्तरी[12] और अतारिद[13] ने मिल कर एक सूरत पकड़ी थी। उसका इस्म नूरुद्दीन और तख़ल्लुस ज़ुहूरी था।

अल्लाह् अल्लाह् फ़रमाता है—

मुरव्वत कर्द शबहा बर तो सैरे बामो दर लाज़िम
न मी बाशद चिराग़े खाना हाए बेनवायाँ रा[14]

ज़ुहूरी का ममदूह और माशूक़ एक है यानी सुलतान जलीलुल क़द्र इब्राहीम आदिलशाह। पादशाहों के मंज़र[15] बलन्द होते हैं और क्या बईद[16] है कि रिग्राया व मुलाज़मीन में से कुछ लोग ज़ेरे क़स्र[17] रहते हों, इस वास्ते बादशाह दिन को उस मंज़रे बलन्द[18] पर नहीं चढ़ता कि मबादा[19] रैयत या मुलाज़िमों को

१. कपोल। २. आकृति पर सुन्दरता के लिए लगाया गया काजल का चिह्न। ३. बहुत दूर। ४. वह चीज जिसका कोई कारण हो। ५. कारण। ६. उल्लिखित। ७. वह शब्द जो वाक्य में न हो, किन्तु अर्थ के समय ग्रहण किया जाये। ८. बिना तर्क की बात। ९. प्रेरक। १०. आलंकारिक शैली। ११. अर्थ-सौन्दर्य। १२. बृहस्पति। १३. बुध। १४. उनका रात के समय छत पर आना आवश्यक है, क्योंकि दरिद्र लोगों (जिन लोगों के घर में दीपक लगाने के लिये पैसे नहीं हैं) का काम चले। १५. दृश्य। १६. दूर। १७. राजप्रासाद के आश्रय में। १७. ऊँचा दृश्य। १९. ईश्वर न करे।

कीड़े-चींटियाँ नज़र आवें। रात को उनके घर तारीक[1] होते हैं। अगर कोई बुलन्द मकान पर चढ़ा तो कुछ नज़र न आएगा। ये मदह हुई सफ़ाई[2] की और सफ़ाई एक फ़ज़ीलत[3] है फ़ज़ायले अरबा[4] में से। अब इबहाम[5] को सोचिये। ममदूह ने रातों को कोठे पर चढ़ना अपने ऊपर लाज़िम किया है, इस वास्ते कि रिआया के घरों में चिराग़ नहीं। अगर किसी को किसी कपड़े में पैवन्द लगाना या कोई चमड़े की चीज़ गांठनी या किसी मरीज़ का तफ़हहुसे हाल[6] मंज़ूर हो तो वो घर उस ममदूह के परतवे जमाल[7] से रोशन हो जाये, चिराग़ की हाजत[8] बाक़ी न रहे। जो काम जो जिसका चाहे वो कर ले। मुरव्वत के लफ़्ज़ का मज़ा वज्दानी[9] है। सिवाय इस लफ़्ज़ के कोई लफ़्ज़ यहाँ काम नहीं आता। अगर हिफ़्ज़े नामूस[10] रिआया है तो मुरव्वत है और अगर मुफ़लिसों[11] की कारबरारी[12] है तो मुरव्वत है। क़ालिबे मानी[13] की जान है जुहूरी, नातिक़े[14] की सरअफ़राज़ी[15] का निशान है जुहूरी। ज़्यादा क्या लिखूँ?

२०

(१८६२ ई०)

जनाब चौधरी साहब,

आप के तलत्तुफ़नामा[16] के वुरूद[17] की मसर्रत और पार्सल के न पहुँचने की हैरत, बाइस[18] इसकी हुई कि आपको फिर तकलीफ़ दूँ और बाआँ कि[19]

---

१. अन्धकार। २. पवित्रता। ३. बड़प्पन, श्रेष्ठत्व। ४. चार श्रेष्ठतत्व। ५. क्लिष्टता। ६. निदान, वास्तविकता की खोज। ७. छवि। ८. आवश्यकता। ९. आनन्दपूर्ण। १०. सतीत्व की रक्षा, लज्जा की रक्षा। ११. दरिद्र। १२. इच्छापूर्ण होना। १३. अर्थ (भाषा) की आत्मा। १४. वाक्शक्ति। १५. सिर ऊँचा उठाने का भाव, गर्व। १६. कृपा-पत्र। १७. प्राप्ति। १८. कारण। १९. यद्यपि।

ख़त जवाब तलब न था, जवाब लिखूँ। बन्दा पर्वर मैंने पार्सल की रसीद ले ली थी। अब आप के ख़त को पढ़ कर कारपरदाज़ाने डाक के पास वो रसीद भिजवाई, उन्होंने किताब देखकर मेरे आदमी से कह दिया कि सिकन्दराराव की रसीद ये मौजूद है। अब पार्सल की जवाबदेही वहाँ वालों के ज़िम्मे है। ये सुनकर मैंने ये मुनासिब जाना कि वो रसीद आपके पास भेज दूँ। आप सिकन्दराराव के डाकख़ाने में भिजवा कर उनसे पार्सल मँगवा लें और अब उस रसीद का मेरी तरफ़ राज्ञे होना[1] किसी सूरत में ज़रूर नहीं। वस्सलाम।

२१

जनाब चौधरी साहब,

स्याही फीकी, काग़ज़ पतला। पीर व मुर्शिद की इबारत एक तरफ़, आपकी तहरीर भी मग़शूश[2] हो गई। बहरा हो गया हूँ, मगर हिद्दते बसर हनोज़ बाक़ी है। तुम्हारी इबारत का जो लफ़्ज़ पढ़ लिया क़रीने से उसका मुहावरा भी मालूम हो गया। हज़रत की तहरीर का एक लफ़्ज़ सिवा ए 'सआदते तवाम शाहआलम' के अगर पढ़ा गया हो तो दीदे[3] फूटें, ईमान नसीब न हो। वो ख़त बदस्तूर आपके पास वापिस भेजता। अर्दली[4] सफ़ेद काग़ज़ पर हर्फ़ बहर्फ़[5] उसकी नक़ल करके फिर मुझे भेज दीजिये ताकि उसके जवाब लिखने में सआदत[6] हासिल करूँ। लेकिन बहुत जल्द, बहुत जल्द। आपकी निगारिश[7] से इतना दरियाफ़्त हो गया कि अब आप अच्छे हैं। अलहम्दुलिल्लाह्[8]। जनाब मुम्ताज़अलीख़ाँ साहब कहाँ और मारहरा कहाँ! बहरहाल मेरा सलाम।

१. वापिस लौटना। २. त्रुटिपूर्ण। ३. दृष्टि। ४. एक प्रकार का काग़ज़। ५. अक्षरशः। ६. शुभकारिता। ७. लेखन। ८. ईश्वर की प्रशंसा।

२२

वन्दा पर्वर,

बहुत दिन के बाद परसों आपका ख़त आया। सरनामे पर दस्तख़त और के, और नाम आपका पाया। दस्तख़त देखकर मफ़हूम[1] हुआ, ख़त के पढ़ने से मालूम हुआ कि तुम्हारे दुश्मन ब आरिज़ए तप व लर्ज़ा[2] रंजूर[3] हैं। अल्लाह्-अल्लाह्, ज़ोफ़ की ये शिद्दत[4] कि ख़त के लिखने से माज़ूर हैं। ख़ुदा वो दिन दिखाये कि तुम्हारा ख़त तुम्हारा दस्तख़ती आये। सरनामा देख कर दिल को फ़रहत[5] हो, ख़त पढ़कर दूनी मसर्रत हो। जब तक ऐसा ख़त न आएगा, दिले सौदाज़द[6] आराम न पाएगा। क़ासिदे डाक[7] की राह देखता रहूँगा। जनाबे ईज़दी[8] में सरगर्मे दुआ रहूँगा। आपके अम्मेआली मिक़दार[9] और बुज़ुर्ग[10] आमेज़गार को मेरा सलाम मय सिनूफ़े इश्तियाक़[11] व उलूफ़े एहतिराम[12]।

जनाब चौधरी साहब, आओ, हम-तुम हज़रते आलम[13] के पास चलें और अपनी आँखें उनके कफ़ेयाए[14] मुबारक से मलें। मैं सलाम अर्ज़ करूँगा, तुम मौरिफ़[15] होना कि ग़ालिब यही है, अहले देहली में आपके दीदार का तालिब[16] यही है। मैंने अज़मे क़दमबोसी[17] किया, पीर व मुर्शिद ने मुझे गले लगाया। फ़रमाते हैं कि 'ग़ालिब तू अच्छा है? अर्ज़ करता हूँ कि 'अलहम्दुलिल्लाह्, हज़रत का मिज़ाजे मुक़द्दस[18] कैसा है?' इर्शाद हुआ कि 'मौलवी सैयद

---

१. ज्ञात। २. ज्वर और कम्पन से। ३. दुःखी। ४. आधिक्य। ५. हर्ष। ६. दुःखी हृदय। ७. डाक का हरकारा। ८. ईश्वर के सम्मुख। ९. प्रतिष्ठित चाचा। १०. शीलवान वृद्धपुरुष। ११. प्रेम की प्रणाली के साथ। १२. असीम सम्मान। १३. संसार के स्वामी। १४. चरण। १५. परिचय करने वाला। १६. इच्छुक। १७. चरण चुम्बन का निश्चय। १८. शुभ स्वास्थ्य।

बरकात हसन तेरी बहुत तारीफ़ करते रहते हैं।' जनाब ये उनकी ख़ूबियाँ हैं, मैं ऐसा नहीं हूँ, जैसा वो कहते हैं। काश वो मेरी रंजूरी का हाल कहते। जोफ़े क़ुवा[1] व इज़्मिहलाल[2] कहते ताकि मैं उनके कलाम की तस्दीक़ करता, उनकी ग़मखारी और दर्दमन्दनवाज़ी का दम भरता।

दरकशाकशे ज़ोफ़म न गुस्लद ख़ाँ अज़तन
ईं के मन न मी मीरम् हम ज़ेनातवानीहास्त[3]

हज़रत ने मेरी गिरफ़्तारी का नया रंग निकाला। 'बोस्ताने ख़याल' के देखने का दाना डाला। मुझमें इतनी ताक़ते परवाज़[4] कहाँ कि बला से अगर फँस जाऊँ, दाम[5] पर गिरके दाना ज़मीन पर से उठा लूँ? हज़रत सच तो यों है कि ग़महाए रोज़गार[6] ने मुझको घेर लिया है, साँस नहीं ले सकता, इतना तंग कर दिया है। हर बात सौ तरह से ख़याल में आई, पर दिल ने किसी तरह तसल्ली न पाई। अब दो बातें सोचता हूँ—एक तो ये कि जब तक जीता हूँ, यों ही रोया करूँगा। दूसरी ये कि आखिर एक न एक दिन मरूँगा। ये सुग़रा व कुबरा[7] दिलनशीं है, नतीजा इसका तस्कीन[8] है। हैहात[9]—

मुन्हसिर मरने पै हो जिसकी उमीद
नाउमीदी उसकी देखा चाहिए

ऐ हज़रत शाहआलम साहब, मेरा सलाम लीजिये। काग़ज़ बाक़ी नहीं रहा, अपने सब भाइयों को, मय मीर वज़ीरअली साहब मेरा सलाम कह दीजिएगा।

१. दुर्बल शरीर। २. कमज़ोरी। ३. दुर्बलता की अधिकता के कारण शरीर से प्राण नहीं निकल रहे हैं, मैं जो अभी नहीं मर रहा हूँ उसका कारण यही है कि मैं दुर्बल हूँ। ४. उड़ने की शक्ति। ५. जाल। ६. शोक। ७. छोटा-बड़ा तथ्य। ८. आश्वासन। ९. हा हन्त।

२३

चौधरी साहब मुशफ़िक़े मुकर्रम[1] को मेरा सलाम !

आपका ख़त, कि, सिवाए चन्द सतर के, जो तुमने लिखी थी, सरासर हज़रत साहब का दस्तख़ती था, पहुँचा। सुभान अल्लाह, हज़रत को किस क़दर मुहब्बत है तुम्हारे साथ। तुम्हारी नासाज़ीए मिज़ाज[2] का कैसा मलाल और तुम्हारे न देखने का कैसा रंज है ? सच यों है कि तुम ख़ूबाने रोज़गार[3] में से हो। तौक़ी[4] क़ुबूल अहले नज़र का हासिल होना आसान नहीं है। सलामत रहो, खुश रहो। मुख़्तसर—

कारत बजहाँ जुम्ला चुनाँ बाद के ख़ाही[5]

अब रूए सुख़न हज़रत साहब की तरफ़ है। खिदमते ख़ुद्दामे वाख़दूम ख़ादिम नवाज़[6] में बाद तस्लीम[7] मारूज़[8] है, तफ़क़्क़ुद नाम ए नामी[9] में सूरत इज्ज़ व शर्फ़[10] नज़र आई। अल्लाह अल्लाह। तुमने मेरी नज़र में मेरी आबरू बढ़ाई। हज़रत की क़द्रदानी की क्या बात है। आपका इल्तिफ़ात[11] मूजिबे मुबाहत[12] है। ये बात बतरीक़े तैलिसान[13] ज़बान पर आई है वर्ना क़द्रदानी कैसी, क़द्र अफ़ज़ाई है। नज़ीरी अलैहिर्रहमा का शेर एक काग़ज़ पर लिख कर मेरे गले में डाल दीजिये और ज़ुम्र ए शोअरा[14] में से मुझको निकाल दीजिये। शेर ये है—

---

१. आदरणीय मित्र। २. अस्वस्थता। ३. सौभाग्यशाली। ४. आदेश-पत्र। ५. ईश्वर तुम्हारा अभीष्ट कार्य सफल करे। ६. सेवकों पर दया करने वाले सेवकों के सुसेव्य की सेवा में। ७. अभिवादन। ८. कथित। ९. श्रेष्ठ कृपा-पत्र। १०. प्रतिष्ठा और आदर की आकृति। ११. स्नेह। १२. गर्व के योग्य। १३. रूमाल, वह रूमाल जिसे नमाज पढ़ते समय उपदेशक कंधे पर रखता है। १४. कवि समुदाय।

जौहरे बानिशे मन दर तहे ज़ंगार बेमुन्द
आँ के आईन ए मन साख्त न परदाख्त दरेग़[1]

दावा और चीज़ है और कमाल और है। इल्मे अरबी और शै[2] है और फ़ारसी की हक़ीक़ते हाल[3] और है। जिलालाए[4] तबातबाई रहमतुल्लाह् अलै ने सैदा ए हिन्दी को एक रुक़्क़ा लिखा। इबारत इस वक़्त याद नहीं आती मगर ये मज़मून उसका कि एक दिन मौलाना उर्फ़ी अलैइर्रहमा और अबुलफ़ज़ल में मुबाहसा[5] हुआ। शेख़ ने उर्फ़ी से कहा कि हमने तहक़ीक़ को ब सरे हद्दे इफ़रात[6] पहुँचा दिया और फ़ारसी में खूब कमाल पैदा किया। उर्फ़ी ने कहा—इसको क्या करोगे कि हमने जब से होश संभाला है, घर के बूढ़ों और बूढ़ियों से जो बात सुनी, फ़ारसी में सुनी। शेख़ गुफ़्त-मा फ़ारसी अज़ अनवरी व ख़ाक़ानी फ़रा गिरिफ़्ताएम व शुमा अज़ पीर ज़नाँ आमोख्ता एद। उर्फ़ी फ़रमूद-"अनवरी व ख़ाक़ानी नीज़ अज़ पीर ज़नाँ आमोख्ता बाशद।" ख़त्म।[7]

ग़ालिब कहता है कि हिन्दुस्तान के सुख़नवरों[8] में हज़रत अमीर खुसरो देहलवी अलैइर्रहम के सिवा कोई उस्ताद मुसल्लमुल सुबूत[9] नहीं हुआ। खुसरो कैखुसरो[10] कलम रवे सुखनतराज़ी[11] है या हम चश्मे निज़ामी गंजवी[12] व हम तरहे[13] सादी शीराज़ी[14] है। ख़ैर, फ़ैज़ी भी नग़्ज़गोई[15] में मशहूर है, कलाम उसका पसन्दीदए जम्हूर[16] है। देखो, अब्दुलक़ादर बदायूनी क्या लिखता

१. मेरे गुण छिपे रहे जैसे मैल चढ़ने पर दर्पण छिप जाता है। २. पदार्थ। ३. यथार्थता। ४. प्रकाशमान। ५. वाद-विवाद। ६. अत्यधिक। ७. शेख़ ने कहा है कि मैंने अनवरी और ख़ाक़ानी से सीखी है और तुमने बूढ़ी स्त्रियों से फ़ारसी पढ़ी है। उर्फ़ी ने कहा—अनवरी और ख़ाक़ानी ने भी बूढ़ी औरतों से सीखी। ८. कवि। ९. प्रामाणिक। १०. ईरान का एक सम्राट्। ११. काव्य-प्रदेश। १२. निज़ामी के समकक्ष। १३. समान। १४. शीराज के सादी के सदृश। १५. श्रेष्ठ रचना। १६. लोक-प्रिय।

है—रहे.........(?) आरज़ू, फ़क़ीर और शैदा और बहार वग़ैरहुम[1] इन्हीं में आ गये। नासिरअली और वेदिल और ग़नीमत उनकी फ़ारसी क्या? हरेक का कलाम बनज़रे इन्साफ़[2] देखिये, हाथ कंगन को आरसी क्या?

'मिन्नत' और 'मकी' और 'वाक़िफ़' और 'क़तील' वे तो इस क़ाबिल भी नहीं कि इनका नाम लीजिए। इन हज़रात में आलिमे उलूमे अरबिया[3] के शख्स हैं, ख़ैर हों, फ़ाज़िल[4] कहलायें, कलाम में उनके मज़ा कहाँ? ईरानियों की-सी अदा कहाँ? फ़ारसी की क़ायदादानी[5] में अगर कलाम है, इसमें पैरवीए क़यास[6] एक बलाए आम है। वारुस्तए स्यालकोटी ने खान आरज़ू की तहक़ीक़ पर सौ जगह ऐतराज़ किया है और हर ऐतराज़ बजा है। बाईं हमा[7] वो भी जहाँ अपने क़यास पर जाता है, मुँह की खाता है। मौलवी अहसानुल्लाह् 'मुमताज' को सन्न ए लफ़्ज़ी[8] में दस्तगाह[9] अच्छी थी। इस शेवा[10] व रविश को खूब बरत गये, फ़ारसी वो क्या जानें? क़ाज़ी मुहम्मद सादिक़ 'अख्तर' आलिम[11] होंगे, शायरी से उनको क्या इलाक़ा? एक बात हज़रत को और मालूम रहे कि हिन्दी[12] फ़ारसी वालों ने कमाल को वहम में मुनहसिर रखा है।

कालपी के नवावज़ादों में से एक साहब 'क़तील' के शागिर्द थे। मैंने एक रुक्क़ा क़तील का उनके नाम देखा है कि—क़तील उनको लिखता है कि जामा गुज़ाश्तन व माने मुर्दन मुसल्लम[13]। लेकिन बहुत एहतियात किया करो, मौक़ा देख लिया करो, जब लिखा करो। मैं कहता हूँ कि एहतियात क्या और मौक़ा क्या? 'फ़लाँ मुर्द' 'बहमा जामे गुज़ाश्त' फिर वो कहता है कि

---

१. आदि। २. न्याय की दृष्टि से। ३. अरबी के विद्वान्। ४. विद्वान्। ५. व्याकरण का ज्ञान। ६. कल्पना करना। ७. इन सब बातों के रहते हुए भी। ८. शब्द-प्रयोग। ९. सामर्थ्य। १०. ढंग। ११. विद्वान्। १२. हिन्दुस्तान के। १३. वेश छोड़ने का अर्थ है मरना—यह सत्य है।

'कदा' के साथ सिवाय पाँच-सात लफ़्ज़ के और लफ़्ज़ को तरकीब न दो। फिर फ़रमाता है कि 'हमा' के लफ़्ज़ को जमा[1] के साथ लाओ, मुफ़रद[2] ए न मिलाओ।

नक़्ल—मैंने दस्तम्बू में लिखा है कि 'हमा कस दानद', एक शख़्स ने, कि, वो भी मौलवी कहलाता है, मेरी ग़ीबत[3] में कहा कि 'हमाकस दानद' क्या तरकीब है? एक लड़का मेरा शागिर्द वहाँ मौजूद था, उसने कहा कि ये तरकीब बऐनही[4] 'सायब' की है, जैसा कि वो कहता है—

हमाकस तालिबे आँ सर्वे ख़ाँस्त ईंजा
आबे हैवाँ ज़े नफ़से सोख़्तेगानस्त ईंजा[5]

उसने कहा कि तुम्हारा उस्ताद 'हाशल्लाह्'[6] को माक़ब्ले कलमा[7] मनफ़ी लाया है और ये जायज़ नहीं।

हाशल्लाह् के बद न मी गोयम[8]

मेरे शागिर्द ने कहा ये तरकीब अनवरी की है—

हाशालिल्लाह न मरा बल्ले मलिक रा न बूद
बा सगे कूए तो ईं जुहरा वो यारा व मजाल[9]

मौलवी हिदायतअली 'तमकीन' का आज तक मैंने नाम नहीं सुना था, छिपे हुए रुस्तुम हैं। 'सायब' अगरचे इस्फ़हानी नज़ाद[10] था, मगर आदि

---

१. बहुवचन। २. एकवचन। ३. निन्दा। ४. ज्यों की त्यों। ५. उस प्रेमिका को संसार चाहता है। इन प्रेमियों की जो साँस चलती है, वह अमृत का काम करती है। ६. ईश्वर ऐसा न करे। ७. वाक्य के आरम्भ में। ८. ईश्वर जानता है मैं बुरा नहीं कहता हूँ। ९. तुम्हारी गली के कुत्ते को जो गौरव प्राप्त है वह बड़े-बड़े सम्राटों को भी प्राप्त नहीं, मेरी तो बात ही क्या? १० वंश।

शाहजहाँबाद था। 'इन्तिक़ाम कशीदन' व 'इन्तिक़ाम गिरफ़्तन' दोनों बोल गया। मौलवी साहब लुच फ़ारसी[1] बोलते हैं। ला हौला वला क़ुव्वता इल्लाह् बिल्लाह्[2]।

'कलीम' बवज़्ने फ़ईल सीग़ए इस्मे फ़ाइल[3] है मिस्ले करीम व रहीम व बशीर व समीअ व बसीर व कलीम अस्माए इलाही[4] हैं। कलीम अगर बमाने हमकलाम[5] लीजिए तो इस्मे इलाही उसको क्यों कर क़रार दीजिए? हज़रत का मिस्रा—

हस्त कलामे ज़कलामे कलीम[6]

मखदूश[7] अजवत्ता है यानी या कलेमा अज़ कलामे कलीम, या क़लामे अज़ कलमाते कलीम चाहिए। 'कलामे अज कलाम' मुफ़र्रद[8] में से मुफ़र्रद को निकाला चाहिए, गो जायज़ न हो।

'गोवाश' व 'गोवाशद' हर्गिज़ महले तरद्दुद[9] नहीं, औहाम व वसवास[10] क़वायद में पेश नहीं जाते—

ऐ करीमे के अज़ खज़ान ए ग़ैब[11]

हर्गिज़ याए मारूफ़[12] नहीं है, या ए मजहूल[13] है। या ए मारूफ़ यहाँ नामक़बूल[14] है—

---

१. ग्राम्य फ़ारसी। २. ईश्वर के अतिरिक्त किसी में सामर्थ्य नहीं। ३. कर्त्ताकारक। ४. ईश्वर के नाम। ५. किसी से बात करने वाला। ६. यह ईश्वर के वाक्यों में से एक वाक्य है। ७. सन्दिग्ध। ८. एकवचन। ९. सन्देह-स्थल। १०. सन्देह और आशंका। ११. हे दाता, तुम्हारे अदृश्य कोश से। १२. ऐसा 'यकार' जिसका उच्चारण 'ई' होता है। १३. जिस 'यकार' का उच्चारण 'ए' होता है। १४. अस्वीकृत।

ख़ुदा ए के बाला व पस्त आफ़रीद[1]

ऐसा ख़ुदा, ऐसा करीम, इस तहतानी[2] को या ए वहदत कहो, या ए तौसीफ़ कहो, या ए ताज़ीम कहो, जिस तरह कहो, मजहूल आएगी।

२४

(१८६३ ई०)

वन्दा पर्वर,

परसों तुम्हारा ख़त आया, आज जवाब लिख रखता हूँ, कल डाक में भिजवा दूँगा। मेरा हाल क्यों पूछो? अपने को देखो, जो तुम्हारा ढंग है, वहीं मेरा रंग है। बुसर व औराम[3] मर्ज़े ख़ास और रंज़े आम, ये एक इजमाल[4]। दूसरा इजमाल सुनो कि महीने भर साहबे फ़रॉश हूँ। सुबह से शाम तक पलंग पर पड़ा रहता हूँ। महल सराय[5] अगरचे दीवानख़ाने[6] के बहुत क़रीब है, पर क्या इमकान[7] जो जा सकूँ। सुबह को ९ वजे खाना यहीं आ जाता है। पलंग पर से खिसल पड़ा, हाथ-मुँह धोकर खाना खाया, फिर हाथ धोये, कुल्ली की, पलंग पर जा पड़ा। पलंग के पास हाजती लगी रहती है। उठा और हाजती में पेशाब किया और पड़ रहा। मुद्दतों से ये मरज़ है कि पेशाब जल्द-जल्द आता है। इस साहबे फ़रॉश[8] होने को देखो और दम बदम[9] तक़ाज़ ए बौल[10] को देखो। पाखाना अगरचे दिन-रात में एक दफ़ा जाता हूँ,

---

१. ईश्वर ने आकाश और पृथ्वी को उत्पन्न किया (उसने धनी और दरिद्र, ऊँच और नीच को पैदा किया।) २. अधिकृत। ३. फुन्सी और शोथ। ४. स्पष्टीकरण। ५. अन्तःपुर। ६. बैठक। ७. सम्भावना। ८. खटिया पकड़ने वाला। ९. क्षण-क्षण। १०. मूत्र का तकाजा।

मगर सुऊबत[1] को तसव्वुर करो। एक फोड़ा दायें पहुँचे में, जिसको शाग्रद कहते हैं, दो फ़ोड़े बायें पहुँचे में। ये सहल हैं। बायें पाँव में कफ़ेपा[2] व पुश्तेपा[3] से लेकर आधी पिंडली तक वरम[4] और वरम भी सख्त। रवादात[5] व मुहल्लिलात[6] से कुछ न हुआ। अब तजवीज़ है कि नीम का भुर्ता बाँधिये, जब पके-फूटे तब मरहम लगाइये। कहो, कफ़ेपा में जराहत[7] का अमल हुआ तो क़याम का कहाँ ठिकाना?

ये हाल, जैसा कि मैं ऊपर लिख आया हूँ मुजमल[8] व जुज़्वी[9] है। मेरा क़यास इसका मुक़्तज़ी[10] है कि पीर व मुर्शिद हज़रत साहबे आलम मुझसे आज़ुर्दा हैं और वजह इसकी ये है कि मैंने मुमताज़ व अख्तर की शायरी को नाक़िस कहा था। इस रुक़्क़े में एक मीज़ान अर्ज़ करता हूँ। हज़रत साहब इन साहबों के कलाम को यानी हिन्दियों के अशार को 'क़तील' और 'वाक़िफ़' से लेकर 'बेदिल' और नासिरअली तक इस मीज़ान में तौलें। रूद की-फ़िरदौसी से लेकर ख़ाक़ानी व सनाई व अनवरी वग़ैरहुम तक एक गिरोह। इन हज़रात का कलाम थोड़े-थोड़े तफ़ावुत[11] से एक वज़ा पर है। फिर हज़रत सादी तर्जे ख़ास के मौजिद[12] हुए। फ़ुग़ानी और एक शेवए ख़ास[13] का मुब्दा[14] हुआ, ख़याले हाए नाज़ुक व मानी बलन्द लाया। इस शेवे की तकमील की ज़ुहूरी व नज़ीरी व उर्फ़ी व नवई ने। सुभान अल्लाह, क़ालिबे सुखन[15] में जान पड़ गई। इस रविश को बाद इसके साहबाने तबा ने सलासत[16] का चरबा दिया। सायब, व कलीम, व सलीम व क़ुदसी व हकीम सफ़ाई इस ज़ुम्रे[17] में

---

१. पीड़ा। २. पाँव का तलवा। ३. पाँव के पंजे का ऊपरी भाग। ४. शोथ। ५. फोड़े को नरम करने वाली औषधियाँ। ६. ऐसी औषधियाँ जो फोड़े को पिघलाती हैं। ७. शल्य, आपरेशन। ८. संक्षिप्त। ९. आंशिक। १०. तक़ाज़ा करने वाला। ११. पृथकता। १२. आविष्कर्त्ता। १३. विशेष शैली। १४. उद्भव-स्थल। १५. काव्य का शरीर। १६. कोमलता। १७. समूह।

हैं। रूदकी व असदी व फ़िरदौसी, ये शेवा सादी के वक़्त में तर्क हुआ और सादी की तर्ज़ ने बसबबे सहल मुम्मतने[1] होने के रिवाज़ न पाया। फ़ुग़ानी का अन्दाज़ फैला और उसमें नये-नये रंग पैदा होते गये। तो अब तर्ज़ तीन ठहरी हैं—खाक़ानी और उसके अक़रान,[2] ज़ुहूरी और उसके अमसाला,[3] सायब और उसके नज़ायर खालिसनल्लाह्[4] मुमताज़ व अख़्तर वग़ैरहुम का कलाम इन तीन तर्ज़ों में से किस तर्ज़ पर है ? वेशुवा फ़रमाओगे कि ये तर्ज़ और ही है, पस तो हमने जाना कि उनकी तर्ज़ चौथी है। क्या कहना है ! अच्छी तर्ज़ है, मगर फ़ारसी नहीं है, हिन्दी है। दारुलज़रबे शाही[5] का सिक्का नहीं है, टकसाल वाहर है। दाद दाद, इन्साफ़ इन्साफ़—

अगरचे शायराने नग़्ज़ गुफ़्तार
ज़ यक जामबंद दर बज़्मे सुख़न मस्त
वले वे वादए बाज़े हरीफ़ाँ
ख़ुमारे चश्म साक़ी नीज़ पैवस्त
मशो मुन्किर के दर अशआर ईं क़ौम
व राए शायरी चीज़े दिगर हस्त[6]

वो 'चीज़े दिगर' पारसियों के हिस्से में आई है, हाँ उर्दू ज़बान में अहले हिन्द ने वो चीज़ पाई है। मीर तक़ी अलैहर्रहमात[7]।

वदनाम होगे जाने भी दो इम्तिहाँ को
रखेगा कौन तुमसे अज़ीज़ अपनी जाँ को

---

१. निषेधक। २. समकालीन। ३. समान। ४. ईश्वर पवित्र है। ५. शाही टकसाल। ६. अच्छे कवि गोष्ठी में एक प्याले में मस्त हो जाते हैं। कुछ पतिप्रेमियों के प्याले में मधुबाला की आँख की ख़ुमारी भी सम्मिलित हो जाती है। फ़ारसी कविता में केवल कविता नहीं और भी बहुत-सी चीज़ें हैं। ७. स्वर्गीय।

सौदा—

दिखलाए ले जाके तुझे मिस्र का बाज़ार
ख़ाहाँ[1] नहीं लेकिन कोई वाँ जिन्से गिराँ[2] का

क़ायम—

'क़ायम' और तुझसे तलब बोसे की क्यों कर मानूँ?
है तो नादाँ मगर इतना भी बद आमोज़[3] नहीं।

मोमिनख़ाँ—

तुम मेरे पास होते हो गोया
जब कोई दूसरा नहीं होता

नासिख़ के हाँ कमतर और आतिश के हाँ बेशतर ये तेज़ नश्तर हैं। मगर उनका कोई शेर इस वक़्त याद नहीं आता। याद क्या आवे, लेटा हुआ हूँ, दमबदम पाँव के वरम की टीस होश उड़ाए देती है। इन्नालिल्लाह् व इन्नाइलहे राजऊन।

२५

(१८६३ ई०)

आ हा हा जनाब मुंशी मुमताज़ अलीख़ाँ साहब मारहरा पहुँचे। साहब ये तो सय्याह गीती न बर्द सानी मख़दूमे जहानियाँ गर्द[4] हैं। बहरहाल आपने दीबाचा[5] बहुत अच्छा लिखा है। किताब को इससे रौनक़ हो जाएगी। नज़्म में वो पाया बलन्द, कि, शायरी उनके शेर पर लाली ए अंजुम[6] निसार करे[7]।

---

१. इच्छुक। २. मँहगी वस्तु। ३. बुरा शिक्षक। ४. यह संसार भ्रमण नहीं है, तुम दूसरे मख़दूमे जहानियाँ हो। (मख़दूम ने विश्व भ्रमण किया था)। ५. भूमिका। ६. तारों की लालिमा। ७. न्यौछावर करे।

ख़ुद बलागर्दा[1] हो लोलीए समा[2] हर मिस्रे पर दिल व जान वारे, सदक़े क़ुर्बान हो।

वार करे (बमाने हमला करने के है) और वो जो आपका मक़सूद[3] है उन मानों में वारना और वारे आया है, न वार करना और वार करे। आपको याद होगा कि चन्द सतरें मैंने बहज़ार दुश्वारी लिख कर तुम्हें भेजी थीं, ख़्वाहिश ये थी कि यही सतरें मेरे मख़दूम और मख़दूमज़ादे[4] की नज़र से गुज़र जायें। आज एक ख़त मैंने पीर व मुर्शिद का और पाया, वो अभी नहीं पढ़ा। मगर शाहआलम साहब इस ख़त की पुश्त पर लिखते हैं कि तूने मेरे ख़त का जवाब नहीं लिखा, हालाँ कि मैं इन सतरों में ये लिख चुका हूँ कि न मुझे तहरीर की ताक़त, न इस्लाह[5] के होश। एक बात को दस-दस बार क्या लिखूँ? अब मेरा अन्जामेकार[6] दो तरह पर मुतसव्विर[7] है, या सेहत या मर्ग[8]। पहली सूरत में ख़ुद इत्तिला दूँगा, दूसरी सूरत में सब अहबाबे ख़ारिज[9] से सुन लेंगे। ये सतरें लेटे-लेटे लिखी हैं।

२६

(१८६३ ई०)

एक इबारत लिखता हूँ चूँकि लिफ़ाफ़ा चौधरी अब्दुलग़फ़ूर साहब के नाम का होगा। पहले वो पढ़ें फिर मेरे पीर व मुर्शिद की नज़र से गुज़रानें फिर मुर्शिदज़ादा शाहआलम साहब को दिखावें।

बरस दिन से फ़िसादे ख़ून[10] के अवारिज़[11] में मुब्तला हूँ बुसूर व औराम[12]

---

१. जिसकी बलि दी गई हो। २. आकाश की नर्तकी—शुक्र। ३. अभीष्ट। ४. स्वामी के पुत्र। ५ संशोधन। ६. परिणाम। ७. कल्पित। ८. मृत्यु। ९. परित्यक्त सम्बन्धी। १०. रक्तविकार। ११. रोग (ब० व०)। १२. फुन्सी और शोथ (ब० व०)।

में लद रहा हूँ। चस्त दिन में औजाअ[1] सहते-सहते रूह तहलील[2] हो गई, निशिस्त व बरख़ास्त[3] की ताक़त न रही और फोड़े तो ख़ैर, मगर दोनों पिंडलियों में हड्डियों के क़रीब दो फोड़े हैं। बड़ा हुआ और हड्डियां चरनि लगीं और रगें फटने लगीं। बायें पांव पर कफ़ेपा[4] से जहां वो फ़ोड़ा है, पिंडली तक वरम है, रात-दिन पड़ा रहता हूँ। पलंग के पास हाजती लगी रहती है। खिसल पड़ा, बाद रफ़ए़ हाजत फिर लेट रहा। इसी सूरत से रोटी खाता हूँ। अशार की इस्लाह यककलम[5] मौक़ूफ़, ख़ुतूत ज़रूरी लेटे-लेटे लिखता हूँ। दो ख़त हज़रत साहब के आये। जवाब न लिखा सका, आज अपने को ताने देकर मर्द बनाया, जब ये इबारत लिखी, चौधरी साहब को सलाम, हज़रत साहब को बन्दगी।

---

१. पीड़ाएँ। २. छिन्न-भिन्न। ३. बैठना-उठना। ४. पैर का तलवा। ५. पूर्णतया।

साहब आलम मारहरवी

१

(१८५९ ई०)

पीर व मुर्शिद,

सलामे नियाज़[1] पहुँचे। कफ़उल ख़ाजीव सूरे जनूबी में से एक सूरत है। 'तुलू' का हाल मुझको कुछ मालूम नहीं। अख़्तर शनासाने हिन्द[2] को इसका कुछ हाल मालूम नहीं और उनकी ज़बान में इसका नाम भी, यक़ीन है, कि न होगा। क़ुबूले दुआ वक़्ते तुलू मिनजुम्ला[3] मज़ामीने शेरी[4] हैं[5] जैसे कतां[6] का परतवे माह[7] में फट जाना और ज़मर्रुद[8] से अफ़ई[9] का अन्धा हो जाना। आसफ़ुद्दौला ने अफ़ई तलाश करके मँगवाया और क़ताते ज़मर्रुद[10] उससे माहाज़ी ए चश्म[11] रखे। उसका कुछ असर न हुआ। ईरान व रूम व फ़रंग से अनवा अनवा[12] कपड़े मँगवाये, चाँदनी में फैलाते, मसका भी नहीं।

तहवीले आफ़ताब बहयल[13] के बाब में मोटी बात ये है कि २२ मार्च को वाक़े होती है। कभी २१, कभी २३ भी आ पड़ती है, इससे तजावुज[14] नहीं।

---

१. प्रार्थनापूर्वक अभिवादन। २. भारत के नक्षत्रज्ञ। ३. सब मिलाकर। ४. काव्य सम्बन्धी। ५. कवि समय है। ६. कवि मान्यता के अनुसार एक सूक्ष्म वस्त्र जो चाँदनी के कारण फट जाता है। ७. चाँदनी। ८. पन्ना। ९. साँप। १०. पन्ने के टुकड़े। ११. आँख के सामने। १२. भाँति-भाँति के १३. सूर्य का मेष राशि में प्रवेश करना। १४. अवज्ञा।

रहा 'ताले वक़्ते तह्वील' दुरुस्त करता, वे कुतुवे फ़न[2] और मुत्लक़े इल्म[3] मुमकिन नहीं। मेरे पास ये दोनों बातें नहीं।

वे दानम के गेती चसाँ मी रवद
चे नेको चे वद दर जहाँ मी रवद[4]

मैं तो अब रोज व शव[5] इसी फ़िक्र में हूँ कि ज़िन्दगी वे तो यों गुज़री, अब देखिये मौत कैसी हो—

उम्र भर देखा किया मरने की राह
मर गये पर देखिये दिखलायें क्या ?

मेरा ही शेर है और मेरे ही हस्वे हाल[6] है।

सिक्के का वार तो मुझ पर ऐसा चला जैसे कोई छुरा या कोई गर्राव[7]। किससे कहूँ ? किसको गवाह लाऊँ ? ये दोनों सिक्के एक वक़्त में कहे गये हैं, यानी जव वहादुरशाह तख्त पर वैठे तो ज़ौक़ ने ये दो सिक्के कह कर गुज़राने। वादशाह ने पसन्द किये। मौलवी मुहम्मद वाक़र जो ज़ौक़ के मोतक़िदीन[8] में थे, उन्होंने 'दिल्ली उर्दू अखवार' में ये दोनों सिक्के छापे। इससे अलावा अव (तक) वो लोग मौजूद हैं कि जिन्होंने उस ज़माने में मुर्शिदावाद और कलकत्ते में ये सिक्के सुने हैं और उनको याद हैं। अब ये दोनों सिक्के सरकार के नज़दीक मेरे कहे हुए और गुज़राने हुए साबित हुए हैं। मैंने हरचन्द कलम रवे हिन्द[9] में 'दिल्ली उर्दू अखवार' का पर्चा ढूँढा, कहीं हाथ न आया।

---

१. संक्रान्ति का समय। २. विषय से सम्वन्धित पुस्तकें। ३. शुद्ध ज्ञान। ४. मैं जानना चाहता हूँ कि संसार किस तरह चल रहा है—संसार में अच्छे वुरे कैसे है (मैं जानना चाहता हूँ)। ५. दिन-रात। ६. स्थिति के अनुरूप। ७. तोप का गोला। ८. श्रद्धालु। ९. भारत देश।

ये धब्बा मुझ पर रहा। पिन्सन भी गई और वो रियासत का नाम व निशान, खिलत व दरबार भी मिटा। खैर, जो कुछ हुआ, चूंकि मुआफ़िक़े रज़ा ए इलाही[1] के है, उसका गिला क्या—

चूँ जुम्बिशे सिपहर व फ़र्मान दावरस्त
बेदाद न बुवद ऊँचे बमा आस्माँ देहद[2]

ये तहरीर बतरीक़े हिकायत है न बसवीले शिकायत।

गोयन्द अज़ अबुल हसन खिरकानी रहमतुल्लाह्, अलै पुर्सिश रफ़्त के चे हालदारी ? फ़रमूद-कुदाम हाल खाहद बूद, कसेरा के खुदा अज़ वै फ़र्ज़ तलबत पयम्बर सुन्नत व ज़न माल खाहद व मलकुल मौत जान ?[3]

क़िस्सा मुख्तसर अब ज़ीस्त[4] बउम्मीदे मर्ग है। 'क़ातै बुरहान' चौधरी साहब की नस्ल के अजज़ा[5] के साथ भेजा जाएगा व मुक़ाबला 'बुरहान क़ातै' मुन्तबा[6] देखा जाये, और बेहैफ़[7] व बेमेल अज़राहे इन्साफ़ देखा जाये। मुर्शिदज़ादों को सलामे मसनून[8] और दुआए अफ़ज़ूनी ए उम्र व दौलत पहुँचे।

२

पीर व मुर्शिद,

आज ही एक खत चौधरी अब्दुल ग़फ़ूर साहब के नाम का रवाना किया

---

१. ईश्वर की इच्छा के अनुसार। २. जब आकाश ईश्वर के आदेशानुसार गतिशील है, तो फिर यह क्यों कहते हो कि हमारे ऊपर आसमान ने यह आफ़त डाली। ३. किसी ने अबुल हसन खिरकानी से पूछा कि आपका क्या हाल है ? उन्होंने कहा—उस आदमी का क्या हाल होगा जिससे ईश्वर कर्तव्य-परायण होने के लिए कहता है और पैगम्बर सुन्नत (मुहम्मद ने जैसा किया, वैसा करो), पत्नी धन चाहती है और यमराज प्राण। ४. जीवन। ५. गद्य के अंश। ६. छपा हुआ। ७. बिना पश्चात्ताप। ८. अभिवादन-युत।

है और इस ख्याल से कि वो गर्मी ए हंगाम ए शादी[1] में इस खत का आपकी नजर से गुजरानना भूल न जावें, ये खत जुदामाना आपको आज ही भेजता हूँ। अलहावे गुल्ता की इबारत नस्ले मुरज्जअ[2] के वाब में इतनी ही है, 'वजन दारद, सजा नदारद[3], खुदा के वास्ते, वजन तप्तीहे शेर[4] को कहते हैं, वो मिसाल की नस्र में कहाँ है? सजा उसको कहते हैं कि कलमाते फ़िक्रेतैन[5] वजन में बराबर हों, ये सनत मिसाल की नस्र में मौजूद है। जो है उसका सल्व[6] जो नहीं उसका सुबूत क्यों कर मानूं? क्या आपकी ये मर्जी है कि अल्फ़ाज़ के हम वज़न होने को वज़न तप्तीहे शेर को सजा मान ले। मैं तो न मानूंगा। आपको इख्तियार है। ये कलाम मासूम का नहीं कि उसके मुसल्लम[7] न रखने से आदमी काफ़िर हो जाये। ज़बाने फ़ारसी मुर्दे का माल है। अरब के हाथ बतरीक़े यग़्मा[8] आया है, जिस तरह चाहें सर्फ़[9] करें।

ख्वाजा नसीरुद्दीन 'तूसी' आठ हर्फ़ का ज़बाने फ़ारसी में न आना लिखते हैं और 'ज़ाल' (ज़) नुक़्तेदार का ज़िक्र नहीं करते। इल्लाह[10], कोई लुग़ते फ़ारसी[11] का ऐसा बताइये कि जिसमें 'ज़ाल' (ज़) आई हो? गुज़ाश्तन व गुज़िश्तन व पिज़ीरफ़्तन सब जे (ज़) हैं। काग़ज़ 'दाल' (द) मोहमिला[12] से है, उसका ज़ाल से लिखना और कवाग़ज़ को उसकी जमाक़रार देना तारीव[13] है बतहक़ीक[14] आवर इस्मे आतिश बदाले अबजद है न बदाले शखज़[15] कोई लफ़्ज़ मुत्तहदुल मखरज[16] फ़ारसी में नहीं बल्कि क़रीबुल

---

१. विवाह की व्यस्तता। २. जिस गद्य के दो वाक्य अन्त्यानुप्रास और समान गतिवाले हों। ३. एक प्रकार की गति हो, अन्त्यानुप्रास न हो। ४. लय, गति। ५. दो चरण। ६. ढंग। ७. प्रामाणिक। ८. लूट का माल। ९. व्यय। १०. इसके अतिरिक्त। ११. फ़ारसी का शब्द। १२. निरर्थक 'द'। १३. किसी अन्य भाषा का अरबीकरण। १४. जाँच से। १५. अ ब ज द को 'द' से, श ख ज़ को 'द' से नहीं। १६. निश्चित उद्गम। १७. तद्भव।

मख़रज[17] भी नहीं। 'ते' है 'तो' नहीं, 'सीन' है 'से' नहीं, 'स्वाद' नहीं, 'हाए हम्मज़' है 'हाए हुत्ती' नहीं। यहाँ तक कि क़ाफ़ नहीं। इस राह से कि ग़ैन मुत्तहदुल मखरज बल्कि क़रीबुल मखरज़ है। 'ज़े' के होते 'ज़ाल' क्यों कर ?

वो मियाँ साहबे हाँसी के रहने वाले बहुत चौड़े-चकले जनाब अब्दुल वासह फ़रमाते हैं कि 'बेमुराद' सही और 'नामुराद' ग़लत। अरे सत्यानास जाये, 'बेमुराद' और 'नामुराद' में वो फ़र्क़ है जो ज़मीन व आसमान में है। 'नामुराद' वो है कि जिसकी कोई मुराद, कोई ख़ाहिश, क़ोई आरज़ू बर न आवे। 'बेमुराद' वो कि जिसका सफ़ए ज़मीर[1] नुक़ूशे मुद्दआ[2] से सादा हो, अज़ क़िस्म बे मुद्दआ बे ग़र्ज़ व बेमतलब, हस्बतिल्लाह। इन दोनों अर्थों में कितना फ़र्क़ है ? 'ना परवाह' और 'नाकाम' और 'ना दुरुस्त' और 'नाचार' के यें मुखफ़्फ़फ़[3] 'ना आहार' है और 'नामुराद' और 'ना इन्साफ़' ये सब दुरुस्त हैं। हाँ, कहाँ गये हाँसी वाले मुअल्लिम[4]।

क़ाफ़िया शायगाँ[5] कि जिसको अरब ईता कहता है, वो दो तरह पर है, ख़फ़ी[6] व जली[7]। अहले खिरद[8] ने खाक उड़ाई है। और बात बनाई है। खफ़ी और जली की तफ़सीर[9] में वो कुछ लिखा है कि साहब तबए सलीम[10] कभी उसको न समझे, चे जाए आँके माने[11]। असल ये है कि ईता को क़ाफ़िया है कि जो दो हर्फ़ एक सूरत के हों जैसे अलिफ़े फ़ाइल गोया व बीना व शनवा। शेरे असीर—

---

१. अन्तःकरण। २. इच्छा के चिह्न। ३. संक्षिप्त। ४. अध्यापक। ५. शब्द के बहुवचन द्वारा निर्मित अन्त्यानुप्रास। ६. गुप्त। ७. स्पष्ट। ८. बुद्धिमान लोग। ९. व्याख्या। १०. बुद्धिमान्। ११. मैं क्या समझूँ।

ऐ दानए तसबीहे ख़यालत दिले दाना
सद हल्क़ए मस्ताने नज़ारत दीदए बीना[1]

और 'नून' 'दाल' मुज़ारे[2] का जैसा उस्ताद के इस मतले में है—

दिल शीशओ चश्माने तो हर गोशा बरन्दश
मस्तान्द मबादा कि बनागाह शिकनन्दश[3]

और ऐसा ही है 'अलिफ़' 'नून' जमा का, मिस्ले[4] चिरागां व जवानां और ऐसा ही है अलिफ़-नून हालिया[5] मानिन्द गिरियां व ख़न्दां। पस अगर ये मतले में आ पड़े तो ईता ए जली[6] है, अगर ग़ज़ल या क़सीदे में बतरीक़े तकरार[7] क़ाफ़िये में आ पड़े तो ईता ए ख़फ़ी[8] है। अइम्मा ए फ़न[9] ने जो कुछ लिखा है कि समझ में नहीं आता। अगर क़ायले तहक़ीक़ हो तो मेरे बयान पर ग़ौर करो और जो अब्दुल वासेह और ग़यासुद्दीन और अब्दुल रज़्ज़ाक़ इन नामों की शौकत नज़र में है, तो तुम जानो। एक शख़्स भीक मांगता है, बाप ने उसका नाम मीर बादशाह रख दिया है।

अस्ल फ़ारसी को इस खत्री बच्चे 'क़तील' अलै माअ़्ले[10] ने तबाह किया। रहा-सहा ग़यासुद्दीन रामपुरी ने खो दिया। उनकी-सी क़िस्मत कहाँ से लाऊँ जो साहब आलम की नज़र में ऐतबार पाऊँ? ख़ालसन् लिल्लाह, ग़ौर करो

---

१. बुद्धिमान् लोगों के लिए तुम्हारा ध्यान ही माला जपने का काम करता है। दृष्टि रखने वाला जब तुम्हारा दर्शन करता है तो मस्त हो जाता है। २. विधि-व्याकरण। ३. नेत्र और हृदय चारों ओर से उसकी ओर आकर्षित हैं। वे सब मस्त हैं, ऐसा न हो कि वे उसे नष्ट कर दें। ४. समान। ५. वर्तमानकालिका। ६. प्रकट। ७. पुनरावृत्ति। ८. ग्रह। ९. कला का नेतृत्व करने वाले। १. वे और जो उनके साथी हैं।

कि वो खराने ना मुशख्खस[1] क्या कहते हैं और मैं खस्ता व दर्दमन्द क्या बकता हूँ। वल्लाह, न कतील फ़ारसी शेर कहता है और न ग़यासुद्दीन फ़ारसी जानता है। मेरा ये खत पढ़ो। ये नहीं कहता कि खाही न खाही पढ़ो। क़ुव्वते मुमय्यज़ा[2] से काम लो, इन ग़ोलों[3] पर लानत करो, सीधी राह पर आ जाओ अगर नहीं आते तो तुम जानो। तुम्हारी बुज़ुर्गी और मिर्ज़ा तफ़्ता की निस्वत पर नज़र करके लिखा है, नहीं कहता कि खाही न खाही मेरी तहरीर को मानो। मगर उस खत्री बच्चे और उस मुअल्लिम[4] से मुझको कमतर न जानो। अरबी का हर्फ़ और है और फ़ारसी का क़ायदा और है। समझो या न समझो तुमको इख्तियार है। अक्ल को काम फ़रमाओ, ग़ौर करो समझो, अब्दुलवासह पैग़म्बर न था, क़तील ब्रह्मा न था, 'वाक़िफ़' ग़ौगुल आज़म[5] न था। मैं यज़ीद[6] नहीं हूँ, शिमर[7] नहीं हूँ। मानते हो मानो, न मानो तुम जानो।

३

बाद हम्दे खुदावन्द[8] व नाते रसूल सल्लल्ला अलेह व सल्लम[9] पहले क़िब्ल ए रूह व खाँ[10] जनाव साहव आलम साहव को बन्दगी और हज़रत मक़बूल आलम की शादी की मुबारकबाद, क्या अर्ज़ करूँ कि मेरा हाल क्या है? इज़्मेहलाल क़ुवा[11] का हाल मुख्तसर ये है कि अगर कोई दोस्त ऐसा कि जिससे तकल्लुफ़

---

१. अविदित मूर्ख। २. विवेक शक्ति। ३. शैतान। ४. अध्यापक। ५. शेख अब्दुलकादर जीलानी का विरद। ६. अमीर मुआविया का पुत्र, दुश्चरित्र, इसी ने इमाम हुसैन को शहीद कराया था। ७. यज़ीद की सेना का एक अधिकारी, इसी ने हजरत हुसैन को मारा था। ८. ईश-स्तुति के पश्चात्। ९. ईश्वर उनकी रक्षा करे, उन हजरत मुहम्मद की स्तुति। १०. पवित्र आत्मा। ११. शरीर की शिथिलता।

की मुलाक़ात है, आ जाये तो उठ बैठता हूँ, वर्ना पड़ा रहता हूँ। जो कुछ लिखना होता है वो भी अक्सर लेटे-लेटे लिखता हूँ। आज दोपहर को मीर अब्दुल अज़ीज़ साहब आये। मैं बे कुलाह[1] व पैरहन[2] पलंग पर लेटा हुआ था। उनको देखकर उठा, मुसाफ़िहा[3] किया। उन्होंने जनाब शाह आलम साहब का खत मय मसविदाते अशार दिया और फरमाया कि परसों जाऊँगा। अर्ज किया कि आखिरे रोज़[4] आप तशरीफ़ लायें, खत का जवाब और इस्लाही मसविदा ले जायें। वो तशरीफ़ ले गये, मैं लेट रहा। दिन को सोने की आदत नहीं है। जी में कहा आओ, बेकार क्यों रहो, खत का जवाब आज लिख रखो। उठे कौन? बक्स खोले कौन? लड़कों को दवात क़लम मूँढे पर पलंग के पास रख लो। अब मुक़तज़ी[5] इसका हुआ कि आग़ाज़नामा बनाम बनाम अक़दस[6] हो।

हज़रत नुस्खा 'क़ाते बुरहान' तीसरी-चौथी नज़र में मुकम्मिल होकर मसविदात एक कातिब के हवाले हुए। आठ जुज़्व[7] लिखे गये। काम व बेश दो जुज़्व बाकी हैं। परसों तक आ जाएँगे। बाद इसके इन्तिबा की फ़िक्र होगी। जब वो अज़ीमत[8] अम्ज़ापिज़ीर[9] हो जाएगी हज़रत की नज़र से भी शर्फ़ पाएगी। हज़रत सैयद आलम को नियाज़ खुरशीदे आलम को सलाम, चौधरी साहब को न सलाम, न नियाज़, सिर्फ़ ये पयाम[10] कि हम तुम्हारे खत को मुफ़र्रहे रूह[11] समझते थे। बातों का मज़ा मिलता था, खैर व आफ़ियत मालूम हो जाती थी, वो वज़ीफ़ ए रूहानी[12] मुन्क़ता[13] क्यों हुआ? साहब ये रविश अच्छी नहीं। गाह गाह रसल व रसायल[14] का तौर बना रहे।

---

१. बिना टोपी। २. बिना वस्त्र पहने। ३. हस्तान्दोलन। ४. सायंकाल। ५. आग्रही। ६. पवित्र। ७. सोलह पेज का फर्मा। ८. निश्चय, तंत्र-मंत्र। ९. भेजने योग्य। १०. सन्देश। ११. आत्मा को हर्षित करने वाला। १२. आत्मिक भोजन। १३. समाप्त, रोका हुआ। १४. पत्र-व्यवहार।

४

(१८६१ ई०)

पीर व मुर्शिद,

इस मतले व हुस्ने मतले[1] को क्या समझूँ और उसका शुक्र क्यों कर बजा लाऊँ? खुदा की बन्दानवाज़ियाँ[2] हैं कि मुझ नंगे आफ़रीनश[3] को अपने खासाने दरगाह[4] से भला कहवाता है। ज़ाहिरा मेरे मुक़द्दर में ये सआदते उज़्मा थी कि मैं उस वबा ए आम[5] में जीता बच रहा। अल्लाह् अल्लाह। ऐसी कुश्तनी व सोख्तनी[6] को यों बचाया और फिर इस रुतबे को पहुँचाया। कभी अर्श[7] को अपने नशेमन[8] क़रार देता हूँ और कभी बहिश्त को अपना पईंबाग[9] तसव्वुर करता हूँ। वास्ते खुदा के और अशार न फ़रमाइएगा वर्ना बन्दा दावए खुदाई[10] करने में मुहावा[11] न करेगा।

"किताबे इफ़ादत माब पंज्रे आहंग नुस्ख ए शरीफ़ तालीफ़"

इसके आगे ग़ुलाम से कुछ न पढ़ा गया, मगर चौधरी साहब और हज़रत शाह अमीर साहब और मौलवी फ़ज्लेअहमद साहब ये तीन इस्म[12] मालूम हुए। फिर भी दूसरे इस्म में मुतरद्दिद[13] हूँ कि आया मेरा क़यास मुताबिक़े वाक़े[14] है या नहीं। हाँ, चौधरी साहब और मौलवी फ़ज्ले अहमद साहब, इन दो नामों में तरद्दुद बाक़ी नहीं। माहाज़ा ये न समझा कि मक़सूद[15] क्या है? अगर

---

१. गजल में पहले शेर का दूसरा शेर। २. भक्तवत्सलता। ३. निर्लज्ज। ४. निजी निवासस्थान। ५. सामान्य विपत्ति। ६. जलाने योग्य। ७. नवें आकाश में ईश्वर का आसन। ८. आश्रय। ९. गृहोद्यान। १०. ईश्वरत्व का दावा करना। ११. आगा-पीछा। १२. नाम। १३. चिन्तित। १४. वास्तविक। १५. अभीष्ट।

पंजआहंग मतलूब[1] है तो उसका जवाब ये है कि मेरा एक सबबी[2] भाई है नवाब ज़ियाउद्दीनखाँ सल्लमुल्लाह ताला वो मेरी नज्म व नस्र को फ़राहम करता रहता था। चुनांचे "मजमूअ ए नस्र"[3] और "कुल्लियाते नज्मे उर्दू"[4] सब नुस्ख़े इसके कुतुबख़ाने में थे। वो क़ुतुबख़ाना, डर कर अर्ज़ करता हूँ, बीस हज़ार रुपये की मालियत का होगा, लुट गया। एक वर्क़ न रहा। हाँ, छापे की पंज आहंगें अब भी बिकती हैं और मायूब बद[5] व ऐब है, एक तो ये कि जो बादे इन्तबा अज क़िस्म नस्र तहरीर हुआ है, वो इसमें नहीं, दूसरे कापीनवीस ने वो इस्लाह मेरी नस्र को दी है कि मेरा जी जानता है। अगर कहूँ कोई सतर ग़लती से ख़ाली नहीं तो इग़राक़[6] है। बेमुबालिग़ा ये है कि कोई सफ़ा अग़लात से ख़ाली नहीं बहरहाल अगर फ़रमाइये तो लेकर भेज दूं। मख़दूमज़ादा हाए वाला तबार[7] पहला नाम समझ में नहीं आया, मगर पहले उनकी ख़िदमत में और फिर सैयद मक़बूले आलम की खिदमत में सलामे मसनून और इश्तियाक़े रोज़ अफ़ज़ूं अर्ज़ करता हूँ।

५

(२६ अगस्त, १८६६ ई०)

हज़रत साहब क़िब्ला काबा जनाब साहिबे आलम को फ़क़ीर असदुल्लाह की बन्दगी।

दीबाचे[8] का अज़ीमाबाद को रवाना होना मालूम हुआ, मगर ये न मालूम हुआ कि लख़्ते जिगर[9] व नूरे बसर[10] मौलवी सय्यद फ़र्ज़न्द अहमद को वो दीबाचा पसन्द आया या नहीं। हाथ राशादार[11], आँखें ज़ईफ़ुल बसर[12] हवास मख़्तल[13] हैं।

---

१. अभीप्सित। २. कारण बन्धु। ३. गद्य-संकलन। ४. समग्र उर्दू-काव्यसंग्रह। ५. दोषपूर्ण, निकृष्ट। ६. अतिशयोक्ति। ७. श्रेष्ठ, कुलीन। ८. प्रतिदिन वृद्धिशीलता की लालसा। ९. भूमिका। १०. हृदय का टुकड़ा (पुत्र)। ११. आँख की ज्योति। १२. कम्पन-युक्त। १३. आँख की दृष्टि, जीर्णशीर्ण।

क़िस्सा मुख़्तसर मिनकुल्लुलवजूह[1] ग़ालिब मग़लूब[2] है। दो महीने हुए मुंशी हरगोपाल तफ़्ता बसवारी रेल यहाँ आये। एक शब रहे। सुबह को तशरीफ़ ले गये।

मखदूम ज़ादए शाह आलम को सलाम और ये पयाम कि बुत्लाने हिफ़्ज़ हाफ़िज़े[3] के सबब आपके इख़्वान[4] के नाम भूल चुका हूँ। उन सब साहबों की खिदमत में और मियाँ बरकात हसन साहब और चौधरी अब्दुलग़फ़ूर साहब की खिदमत में सलाम पहुँचायें और ये भी कह दें कि मौलवी ग़ुलाम ग़ौसख़ाँ मीर मुंशी ने आपका दीबाचा और मेरा मजमूअ ए नस्र मुरत्तब[1] करके मुंशी मुम्ताज़ अलीख़ाँ को भेज दिया है। अब छपवाने में उनको इख़्तियार है।

—असद

---

१. पराजित। २. स्मरणशक्ति का लोप। ३. पारिवारिक जन। ४. क्रमबद्ध।

शाह आलम के नाम

१

(१८६० ई०)

मखदूमज़ादा वाला तबार[1] हज़रत शाह आलम सलाम व दुआए दरवेशाना[2] क़ुबूल फ़रमायें। आपका माल ख़ैर[3] वतन पहुँचना और बुज़ुर्गों के क़दमबोस[4] और भाइयों के हमागोश[5] होना आपको मुबारक हो—

यूसुफ़ अज़ मिस्र बकनां आमद[6]

तफ़र्क़ए औक़ात[7] व सफ़रे रामपूर व शिद्दते तमव्वुज[8] मुक़्तज़ी[9] इसकी हुई कि हनोज़ तुम्हारे मसविदात देखे नहीं गये ता नुज़ूले बाराने रहमते इलाही[10] और भी चुपके बैठे रहो। अपने मामू साहब को नियाज़े मौतक़दाना[11] और अपने भाइयों को सलामे मुखलिसाना[12] कहिएगा और अपने वालिद माजिद[13] यानी मेरे मुर्शिद हमउम्र[14] व हमफ़न[15] को वो सलाम जिससे मुहब्बत टपके और इश्तियाक बरसे, पहुँचाइएगा और अर्ज़ कीजिएगा कि आरज़ू ए दीदार[16] हद से गुज़र गई। या रब जब तक हज़रत साहबे आलम को मारहरा में और

---

१. श्रेष्ठकुल। २. साधुओं का आशीर्वाद। ३. सकुशल। ४. चरण-चुम्बन। ५. आलिंगित। ६. यूसुफ़ मिश्र से कनाँ में आये। ७. समय का अन्तर। ८. हिलोरों की अधिकता। ९. प्रेरक, कारण। १०. जब तक ईश्वर की दया-वर्षा न हो। ११. श्रद्धायुक्त अभिवादन। १२. शिष्ट नमस्कार। १३. आदरणीय पिता। १४. समवयस्क। १५ सम-व्यवसायी। १६. दर्शनाभिलाषी।

अनवरद्दौला को कालपी में न देख लूँ और उनसे हमकलाम[1] न हो लूँ, मेरी रूह क़ब्ज़ का[2] हुक्म न हो। लेकिन १२७७ हि० में दो महीने बाक़ी हैं। अब के मुहर्रम से इस ज़िलहज्जा तक मेरा मुद्दआ हासिल हो जाये।

मुशफ़क़ी मुकर्रमी[3] चौधरी अब्दुल ग़फ़ूर साहब को मेरा सलाम कहिएगा और ये पयाम पहुँचाइएगा कि हज़रत साहबे आलम की तमन्नाए दीदार[4] बक़ैदे[5] मारहरा किनाया[6] इससे है कि और किसी का दीदार भी मतलूब है—

खाहिशे वस्ल[7] मुक़द्दर है को मज़कूर[8] नहीं

उनके उस खत का जवाब जो परसों मुझको पहुँचा है, सोमजामे में लपेट कर भेजूँगा। इन्शा अल्लाह् उल अज़ीज़।

हाँ, जनाब शाहआलम साहब फिर रू ए सुखन आपकी तरफ़ है। जनाब मीरवज़ीर अलीसाहब बिलगिरामी यहाँ तशरीफ़ लाये मेरे मस्कन[9] से एक हीर परताब[10] के फ़ासले पर चाँदनी चौक में क़ुतुबुद्दीन सौदागर की हवेली में उतरे हैं। मुरफ़ी साहब का काम उनके सुपुर्द हुआ है, यानी डिप्टी कलक्टर और डिप्टी मजिस्ट्रेट हैं और हज़ार रुपये तक का मुक़द्दमा अदालते दीवानी का भी करते हैं। लेकिन हनोज़ क़ायम मुक़ाम[11] है। वो साहब जिसका नाम लिख आया हूँ, बतरीक़े रुखसत सपाटू गया है। एक दिन फ़क़ीर भी उनके मकान पर चला गया था। हुस्ने सूरत[12] और हुस्ने सीरत[13] दोनों उनमें जमा हैं। आँखें उनके हुस्ने सूरत से रोशन हो गईं और दिल उनके हुस्ने सीरत से खुश हो गया। वाह, खाके पाक बिलगिराम[14] मैंने वहाँ के निरे बुज़ुर्गवार को देखा, बहुत अच्छा पाया।

---

१. वार्त्तालाप। २. शरीरत्याग का। ३. दयालु मित्र। ४. दर्शन की लालसा। ५. शर्त के साथ। ६. संकेत। ७. मिलन की इच्छा। ८. उल्लेखनीय। ९. घर। १०. वह अन्तर जो तीर फेंकने और जाकर गिरने के स्थानों के बीच में हो। ११. स्थानापन्न। १२. मुख का सौन्दर्य। १३. स्वभाव का सौन्दर्य। १४. बिलगराम की पवित्र मिट्टी।

२

(२५ अगस्त, १८६० ई०)

मख़दूम ज़ादए आलीशान, मुक़द्दसे दूदमान[1] हज़रत शाह आलम अम्न व आमान[2] व इज़्ज़ व शान[3] व इल्म व उम्र से बरख़ुर्दार[4] रहें। हमारे हज़रत हमको भूल गये। हाँ, सच है उनका लुत्फ़ चौधरी अब्दुल ग़फ़ूर साहब के जौहरे मेहर व मुहब्बत[5] का अर्ज़ था। जब जौहर न रहा तो अर्ज़ कहाँ? बहरहाल जनाब हज़रत साहबे आलम साहब को मेरी बन्दगी पहुँच जाये और ये सतरें उनकी नज़र से गुज़र जायें। चौधरी अब्दुलग़फ़ूरखाँ साहब को सलाम कहिएगा और ये पूछिएगा की क़सीदे का बाद इस्लाह के न पहुँचना मेरा गुनाह है या उसके सिवा कोई और क़ुसूर है? अगर वही जुर्म है तो माफ़ कीजिए, अगर कोई और जुर्म भी है तो मुझे इत्तिला दीजिये।

इन दो पयाम की तबलीग़[6] के बाद फिर रूए सुख़न आपकी तरफ़ है। आपका ख़त मेरे नाम का और उसके साथ एक ख़त डिप्टी मीर वज़ीरअली साहब के नाम का पहुँचा, वो पढ़ा और भिजवा दिया। जो आदमी ख़त लेकर गया था वो दुबारा जवाब माँगने को गया। पहली बार हुक्म हुआ कि कल आइयो। दूसरी बार हज़रत न मिले। मैंने उसके जवाब से क़तै नज़र करके अपनी ख़िदमत गुज़ारी की आपको इत्तिला दी।

याए तहतानी[7] लिख चुका था कि एक चपरासी आया और उसने ख़त तुम्हारे नाम का टिकट लगा हुआ दिया, और कहा कि डिप्टी साहब ने सलाम कहा है और ये ख़त दिया है। अब मैं ये ख़त अपना मय उनके ख़त के डाक घर में भेजता हूँ। सुबह का वक़्त, यकशम्बा का दिन, ८ सफ़र और २५ अगस्त

---

१. पवित्र वंश। २. शान्ति। ३. प्रतिष्ठा ४। सुपुत्र। ५. ममता और प्रेम का प्रताप। ६. प्रचार। ७. वह 'य' जो नुक़्ते के साथ लिखा जाता है।

को है। डिप्टी साहब चाँदनी चौक-हाफ़िज़ क़ुत्बुद्दीन सौदागर की हवेली में रहते हैं। बाक़ी उनके हालत उनके ख़त से मालूम हो जायेंगे। अपने मामूँ साहब की ख़िदमत में नियाज़ और अपने भाई साहबों की ख़िदमत में फ़क़ीर की दुआ पहुँचाइएगा।

वस्सलाम। ८ सफ़र, २५ अगस्त।

अब्दुल रज़्ज़ाक़ 'शाकिर' के नाम

१

मखदूम व मुकर्रम, मजहरे लुत्फ़ व करम[1] जनाब मौलवी साहब अशरफ़ुल वकला[2], दरवेश गोशानशीं[3] ग़ालिब हज़ीं[4] का सलाम। आपके इनायतनामे के वुरूद से मैं आपका एहसानमन्द हुआ और दिल से आपको दुआएँ दीं। क्यों हज़रत, आप हैरान हुए होंगे कि ये शख्स इतना फ़िज़ूल और लग़ो[5] क्यों है? खत के पहुँचने से इज़हारे मिन्नतपज़ीरी[6] अगर गिज़ाफ़[7] नहीं तो क्या है? अब इस ख़ुशी और दुआएँ देने की वजह सुनिये, यानी आपके सबब मैंने अपने वाला बिरादर अज़जाँ अज़ीज़तर[8] व दिल नज़दीक व अज़ दीदादूर[9], ना मेहरबान बखुद मग़रूर मीर क़ासिमअली खाँ का रुक़्क़ा अपने नाम का पाया। अल्लाह् अल्लाह् अगर आप बाअस[10] न होते तो भाई साहब काहे को मुझको खत लिखते। उन्हीं से पूछिए कि कभी तुमने असद को खत लिखा है? पस, बाद इस तौज़ीह[11] के, आपकी तहरीर का जवाब लिखता हूँ।

आपका, वास्ते इस्लाह कलाम के, रुजू करना मेरी तरफ़ मूजिब नाज़िश[12] का है। मेरी तरफ़ इस फ़न्ने खास में ये है कि जो शेर बे ऐब होता है, उसको बदस्तूर रहने देता हूँ और जहाँ लफ़्ज़ के बदले लफ़्ज़ लिखता हूँ, उसकी वजह खातिर निशान कर देता हूँ, ताकि आइन्दा साहब कलाम[13]

---

१. आनन्द और दया के उद्भव-स्थल। २. वकीलों में श्रेष्ठ। ३. एकान्तसेवी साधु। ४. दुःखी। ५. निरर्थक। ६. कृतज्ञता प्रकाशन। ७. असत्य। ८. प्राण से भी प्रिय। ९. हृदय के निकट आँखों से दूर। १०. कारण। ११. स्पष्टीकरण। १२. गर्व का कारण। १३. कवि।

इस क़िस्म के कलाम में खुद अपने कलाम का मसलह[1] रहे। मत्ले का ये मिस्रा—

सरखुश सरशार मस्शम यल्ले[2]

लिसाने फ़ारसी[3] में 'सरशार' सिफ़त[4] है प्याले की, माने लफ़्ज़ी इसके लबरेज़। पस शारिब[5] को लबरेज़ क्योंकर कहेंगे। और ये जो उर्दू 'मस्त व सरशार' मुतरादिफ़ुल मानी[6] इस्तिमाल में आते हैं, अम्र जुदागाना है। फ़ारसी में ततब्बो[7] उर्दू का नाजायज़। 'रिन्दे आलम सोज़' शोअरा ए अजम[8] में बमानी रिन्दे बेनाम व नंग आया है, जैसा कि उस्ताद कहता है—

रिन्दे आलम सोज़ रा बा मस्लहत बीनी चेकार[9]

हुस्ने मत्ला सुस्त था। 'मी रसद बर बादा……' 'बरशीशा' यहाँ अन्सब[10] है। 'ज़लहद चूँ खाक जस्तम……' खाक को जस्तन से क्या इलाक़ा? "नक़्द जाँ रा मेहर बस्तम यल्ले" ताक़ीद मानदी है। "तालिबे अहदे अलस्तुम…" "तालिबे अहदेअलस्त" यानी अहदेअलस्त" किससे माँगता है? हाँ" सरखुश अहदेअलस्त व महल व ब मौक़ा।

मुतवक़्क़े[11] हूँ कि मेरा ये रुक़्क़ा जो आपके नाम का है, जनाब मीर क़ासिमअलीखाँ साहब को पढ़ा दीजियेगा और अब जो आप मुझे ख़त लिखें, तो ये भी लिखिएगा कि हनोज़ वो सद्र अमीन हैं या तरक़्क़ी की और सद्रुस्सुदूर[12] हो गये और अगर तरक़्क़ी नहीं की तो क्या वजह?

---

१. पथ-प्रदर्शन। २. बहुत मस्त, (यहाँ सब शब्द पर्यायवाची हैं)। ३. फ़ारसी भाषा। ४. विशेषण। ५. पीने वाला। ६. समानार्थक। ७. अनुकरण। ८. ईरानी कवि। ९. पीने वाले को इससे मतलब क्या कि संसार में क्या अच्छा है और क्या बुरा है। १०. बहुत उचित। ११. आकांक्षित। १२. प्रधान न्यायाधीश।

२

जनाब मौलवी साहब मखदूम मौलवी मुहम्मद अब्दुलरज़्ज़ाक़ साहब 'शाकिर' की खिदमत में बाद सलाम ये इल्तिमास[1] है कि मौलवी साहब आलीशान मौलवी मुफ़्ती असदुल्लाहखाँ बहादुर की खिदमत में फ़क़ीर का सलाम पहुँचाइये। मैं तो आप से अर्ज़ करता हूँ मगर आप मुफ़्ती साहब से कहिये कि मुझको बावजूद शिद्दते निसयान[2] आपका तशरीफ़ लाना याद है। छापे के अजज़ा[3] उठा कर मैंने आपके सामने एक ग़ज़ल अपनी पढ़ी थी, जिसके दो शेर क़ताबन्द हैं—

अजिन्दा गौहरे चू मनन्दर ज़माना नीस्त
खुद रा व खाके रह गुज़र हैदर अफ़गनम
मन्सूर फ़िर्क़ ए अली उलहियाँ मनम
आवाज़ ए 'अना असदुल्लाह' दर अफ़गनम[4]

खुदा करे हज़रत को भी ये वाक़ा याद हो इत्तिहादे इस्मी[5] दलीले मवद्दते रूहानी[6] है।

अखी ए मुकर्रम मीर क़ासिमअलीखाँ को सलाम पहुँचे। साले गुज़िश्ता की तातील की तरह दिल्ली आकर मुझसे बे मिले न चले जाइएगा।

---

१. अनुरोध। २. विस्मरण की अधिकता। ३. अंश। ४. इस युग में मुझसे योग्य कोई नहीं है और मैं अपने को हजरत के मार्ग का रजकण मानता हूँ। मैं अली के मन्सूरिया सम्प्रदाय का हूँ और सारे संसार में "मैं असदुल्लाह" की ध्वनि गुँजा दूँ। ५. एक नाम का होना। ६. आत्मिक मित्रता।

फिर हज़रत मकतूब अलै[1] से कलाम है। अशार बाद हक व इस्लाह[2] के पहुँचते हैं। ये रुतबा मेरा अज़्रिश के फ़ोक़[3] है कि मैं आपके कलाम में दख़ल व तसर्रुफ़[4] करूँ। बन्दानवाज, फ़ारसी में ख़तों का लिखना पहले से मतरूक[5] है। पीराना सरी[6] व ज़ोफ़ के सदमों से मेहनत पज़ोही[7] व जिगर कावी[8] की क़ुव्वत मुझमें नहीं रही। हरारते ग़रीज़ी[9] को जवाल[10] है और ये हाल है--

मुज़महिल[11] हो गये क़ुवा[12] ग़ालिब
वो अनासिर[13] में ऐतेदाल[14] कहाँ

कुछ आप ही की तख़सीस[15] नहीं, सब दोस्तों को जिनसे किताबत रहती है, उर्दू ही में नियाज़नामे लिखा करता हूँ। जिन-जिन साहबों की ख़िदमत में आगे मैंने फ़ारसी ज़बान में ख़ुतूत व मकातीब[16] लिखे और भेजे थे, उनमें जो साहब इलल आन[17] ज़ीहयात[18] व मौजूद हैं, उनसे भी इन्दल ज़रूरत[19] इसी ज़बाने मुख्वज[20] में मकातिब व मुरासलत[21] का इत्तिफ़ाक़ हुआ करता है। पारसी मकतूबों, रिसालों, नुस्खों और किताबों के मजमूए शीराज़ा बस्ता[22] छापा होकर अतराफ़ व अक्सा ए अजम[23] में फैल गये। हाल की नस्रों को कौन फ़राहम करने जाये? जाँकनी[24] के ख़यालात ने मुझको उनकी तहरीर व ताल्लुक़ व बार[25] से दस्तबरदार व आज़ाद व सुबुकदोश[26] कर दिया। जो नस्रें कि मजमूअ व यकजा होकर जहाँ-जहाँ

---

१. जिसे पत्र लिखा गया। २. संशोधन। ३. ऊपर, श्रेष्ठ। ४. परिवर्तन। ५. त्यक्त। ६. बुढ़ापे का समय। ७. श्रम करना। ८. कड़ी मेहनत। ९. स्वाभाविक ऊष्णता। १०. पतन। ११. लुप्त। १२. शरीर के अंग। १३. महाभूत। १४. सन्तुलन। १५. विशेषता। १६. पत्र (ब. व.)। १७. अब तक। १८. जीवधारी। १९. आवश्यकतानुसार। २०. प्रचलित भाषा। २१. पत्र-व्यवहार। २२. सजिल्द। २३. आसपास और ईरान के दूरवर्ती प्रदेश। २४. यमयातना। २५. बोझ। २६. छुटकारा।

मुन्तशिर हो गई है और आइन्दा हो, उन्हीं को जनाबे अहदियत जिल्लते इस्मतहू मरगूबे कुलूबे अहले सुखन[1] व मतबूए तबा ए अरबाबे फ़न[2] फ़रमाइये और मैं अब इन्तिहाए उम्रे ना पायेदार[3] को पहुँच कर आफ़ताबे लबेबाम[4] और हुजूमे अमराज़े जिस्मानी[5] व आलामे रूहानी[6] से ज़िन्दा दर गोर[7] हूँ। कुछ यादे खुदा भी चाहिए। नज़्म व नस्र के कलमरौ[8] का इन्तिज़ाम खुदाए[9] दाना व तवाना[10] की इनायत व इआनत[11] से पूरा हो चुका। अगर उसने चाहा तो क़यामत तक मेरा नाम व निशान बाक़ी व क़ायम रहेगा। पस, उम्मीदवार हूँ कि आप उन्हें नज़्रे मुख्तसरा[12] यानी तहरीराते रोज़मर्रा उर्दू ए आशा व सरकारे फ़ीला इनायात गर्मागरम आन कर क़ुबूल फ़रमाते रहें और दरवेश दिलरेश[13] व फ़िरोमांद ए कशाकशे मआसी[14] के खातमा बखैर[15] होने की दुआ माँगें। अल्लाह, बस मा सिवा हवस।[16]

ताक़ीदे मानवी[17] को हुजूर खुद जानते होंगे। इसकी तौज़ीह व तफ़सील में तहसील[18] हासिल व ततवील ला तायल[19] की सूरत नज़र आती है, लिहाज़ा खामे फ़रसाई[20] बकार ए कार[21] नहीं आती।

---

१. काव्य-मर्मज्ञों के लिए मनोरंजक। २. कला के जानकारों के स्वभाव के लिए ग्राह्य। ३. नश्वर आयु की अन्तिम अवस्था। ४. अस्तगत सूर्य। ५. शारीरिक रोगों की बहुलता। ६. आत्मिक क्लेश। ७. जीवित ही कब्र में। ८. राज्य, प्रदेश। ९. ईश्वर। १०. बुद्धिमान् और बलशाली। ११. कृपा और सहायता। १२. तुच्छ भेंट। १३. भग्नहृदय संन्यासी। १४. पाप समूह से संघर्ष करने की विवशता। १५. कुशलता से अन्त। १६. ईश्वर ही पर्याप्त है, शेष व्यर्थ है। १७. अर्थसम्बन्धी निर्देश। १८. प्राप्ति। १९. निरर्थक विस्तार। २०. कलम घिसाई। २१. सार्थकता।

३

(१८६४ ई०)

हज़रत तीन दोस्तों ने "मौलिफ़े मुहर्रिक़"[1] पर, जिसका नाम "साहबे क़ातै मुहर्रिक़" रखा गया है, जूती-पैज़ार की है। एक रिसाला जो मौजूद था भेजा जाता है। वो दो नुस्खे भी अगर वहम पहुँच गये तो भिजवा दूँगा। ग़ज़ल बाद इस्लाह के जाती है। तर्ज़े फ़क़ीर मुबारक हो।

४

हज़रत मतालबे इल्मी और शेअरी का लिखना मौक़ूफ़ सवाल[2] पर है। जब हुज़ूर की तरफ़ से कोई सवाल आएगा, बक़दरे अपने मालूम जवाब लिखा जाएगा—

हैं अपने गुनहे मुज़ीले उमीद[3]
ईमाँ कहाँ है, एक डर है

इस शेर में क़स्द अच्छा है, मगर बयान नाक़िस है। मतलब तो यह है कि सिर्फ़ खौफ़ अस्ल ईमान नहीं, रजा[4] का भी शुमूल[5] चाहिए और बात इस तक़रीर में से निकलती नहीं।

५

पीर व मुर्शिद,

एक शमा है दलीले सहर[6] सो खमूश है

---

१. ग़ालिब की 'क़ातै बुरहान' नामक पुस्तक के उत्तर में सैयद सआदत अली ने यह पुस्तक लिखी थी। २. सवाल पर निर्भर। ३. पश्चात्ताप की आशा। ४. अनुमति। ५. सम्मिलन। ६. प्रभात का प्रमाण।

ये खबर है। पहला मिस्रा—

जुल्मत कदे[1] में मेरे शबे ग़म का जोश है

ये मुब्तदा[2] है। शबे ग़म का जोश, यानी अँधेरा ही अँधेरा, जुल्मत ग़लीज़[3] सहर[4] नापैदा, गोया खल्क़[5] ही नहीं हुई। हाँ, दलील सुबह की वूद[6] पर है बुझी हुई शमा, इस राह से कि शमा व चिराग़ सुबह को बुझ जाया करते हैं। लुत्फ़ इस मजमून का ये है कि जिस शै को दलीले सुबह ठहराया, वो खुद एक सबब है मिनजुम्लए असबाबे तारीकी[7] के। पस देखा चाहिए जिस घर में अलामते सुबह[8] मूइते जुल्मत[9] होगी, वो घर कितना तारीक[10] होगा।

मुत्तक़ाबिल[11] है मुक़ाबिल मेरा
रुक गया देख रवानी मेरी

तक़ाबुल[12] व तज़ाद[13] को कौन न जानेगा ? नूर[14] व जुल्मत[15], शादी[16] व ग़म, राहत व रंज, वुजूद[17] व अदम[18] मुक़ाबिल इस मिस्रे में बमानी मुरज्जै[19] है, जैसे हरीफ़ कि बमानी दोस्त के भी मुस्तामल[20] है। मफ़हूमे[21] शेर ये कि हम और दोस्त अज़ रू ए खूब आदते[22] ज़िद हमदिगर[23] हैं। वो मेरी तबा[24] की रवानी देख कर रुक गया।

---

१. संसार, अन्धकारपूर्ण स्थल। २. प्रारम्भित। ३. गन्दा। ४. प्रभात। ५. सृष्टि। ६. अस्तित्व। ७. अन्धकार के कारणों में से एक। ८. प्रातःकाल के लक्षण। ९. अन्धकार की सहायता करने वाले। १०. अन्धकारपूर्ण। ११. सामना। १२. आमना-सामना होना। १३. एक दूसरे के विरुद्ध होना। १४. प्रकाश। १५. अन्धकार १६. खुशी। १७. अस्तित्व। १८. अभाव। १९. ठिकाना। २०. प्रयुक्त। २१. तात्पर्य। २२. स्वभाव की दृष्टि से। २३. परस्पर विरुद्ध। २४. स्वभाव।

ग़ज़ल बाद इस्लाह के पहुँचती है। आप अपनी तरफ़ से इसको इस्तिस्लाह[1] समझते हैं और मैं इसको अपनी जानिब से इस्तिफ़ादा[2] जानता हूँ। वस्सलाम।

६

(१ अगस्त, १८६१ ई०)

फ़क़ीर असदुल्लाह ने इस काग़ज़ के लिफ़ाफ़े पर मुरसिल ए[3] मुहम्मद अब्दुलरज़्ज़ाक़ जाफ़री उल हैदरी और टिकट पर 'शाकिर' देख कर देर तक ग़ौर की कि ये दो साहिब हैं। बाद ताम्मुल[4] याद आया कि मौलवी अब्दुल रज़्ज़ाक़ साहब इस्मे शरीफ़[5] और शाकिर तखल्लुस है। ग़ौर कीजिए कि निसयाँ[6] का क्या आलम है! वल्लाह, अगर मुझको याद हो कि साबिक़ में कोई ग़ज़ल आपकी आई है, ये लिफ़ाफ़ा लिखा हुआ यकुम अगस्त सावे हाल का, कल मैंने डाक से पाया। आज ग़ज़ल को देखा। कल ये लिफ़ाफ़ा रवाना करूँगा।

कोई आता नहीं तेरे हमता[7] होकर
आईना जब नज़र आया है तो अन्धा होकर

ये मतला दिलनशीं है मगर इतना ताम्मुल है कि आइने को अन्धा कहना चाहिए या नहीं?

मर्दुमे चश्म सियह[8] जब नज़र आता है तेरा
बैठ जाता है मेरे दिल में सुवैदा[9] होकर

---

१. परामर्श। २. लाभान्वित होना। ३. प्रेषित। ४. विलम्ब। ५. शुभ नाम। ६. विस्मरण। ७. समान। ८. काला। ९. काला तिल, विश्वास किया जाता है कि यह तिल हृदय पर होता है।

हुरमते मय[1] के लिए पीरे मुग़ाँ[2] का है ये हुक्म
रीश[3] क़ाज़ी की रहे पम्ब ए मीना[4] होकर

ये शेर बेलुत्फ़ हो गया, किस वास्ते, कि, जब क़ाज़ी की रीश कही तो वो इबहामे रीश[5] कहा रहा। कारगाहे हस्ती में····।

"दाग़े सामाँ मिस्ले अन्जुम[6] अन्जुमन" वो शख्स कि दाग़ जिसका सरमाया व सामान हो। मौजूदियत लाले की मुन्हसिर नुमाइशे दाग पर है वर्ना रंग तो और फूलों का भी लाल होता है। बाद इसके ये समझ लीजिये कि फूल के दरख्त या ग़ल्ला जो कुछ बोया जाता है, दहक़ाँ[7] को जोतने, बोने, पानी देने में मशक़्क़त करनी पड़ती है और रियाजत[8] में लहू गर्म हो जाता है। मक़सूद शाइर का ये है कि वुजूद[9] महज रंज व अना[10] है। मुज़ारे[11] का वो लहू जो किश्त व कार[12] में गरम हुआ है, वही लाला[13] की राहत के खिरमन[14] का वर्क़[15] है। हासिले मौजूदियत दाग़ और दाग़े मुख़ालिफ़े राहत और सूरते रंज।

गुंचाता शिगुफ़्ता····कली जब नई निकले बसूरते क़ल्बे[16] सनोबरी नज़र आये और जब तक फूल बने "बर्गे आफ़ियत" मालूम। यहाँ मालूम बमाने माद्म[17] है और बर्गे आफ़ियत बमानी मायए आराम[18]।

---

१. सुरा की प्रतिष्ठा। २. मधुवाला। ३. डाढ़ी। ४. शराब के शीशे पर (कार्क के प्रचलन से पहले) लगने वाली रुई की डाट। ५. दाढ़ी की श्लिष्टता। ६. तारे के समान। ७. किसान। ८. साधना। ९. अस्तित्व। १०. शोक और कष्ट। ११. किसान। १२. खेती और काम। १३. एक लाल रंग का फूल। १४. खलिहान, फसल। १५. बिजली। १६. हृदय। १७. लुप्त, नष्ट। १८. विश्राम का धन।

वर्गे ईसा वगोरे खोश फ़िरिस्त[1]

वर्ग और सर्व वर्ग बमानी साज व सामान है। खावे गुल[2] बा ऐतबार खामोशी व बरजा[3] माँदगी परेशानी जाहिर है, यानी शिगुफ्तगी, वही फूल की पंखड़ियों का बिखरा हुआ होना। गुंचा[4] बसूरते दिल जमा है, बाबस्फ़ जमीयते दिल गुल की खावे परीशाँ नसीब है।

"हम से रंज ... 'पुश्ते दस्त" सूरते इज्ज और "खस बदन्दां व काह बदन्दाँ गिरिफ्तन" भी इजहारे इज्ज है, पस जिस आलम में कि बाग़ ने पुश्त दस्त[5] जमीन पर रख दी हो और शोले ने तिनका दाँतों में लिया हो, हमसे रंज व इज्तिराब[6] का तहम्मुल[7] किस तरह हो ?

क़िब्ला, इब्तिदाए फ़िक्रे सुखन[8] में 'बेदिल' व 'असीर' व 'शौकत' के तर्ज़ पर रेख़्ता लिखता था। चुनांचे एक ग़जल का मक़ता[9] ये था—

तर्जे 'बेदिल' में रेख़्ता लिखना
असदुल्लाहख़ाँ क़यामत है

१५ बरस की उम्र से २५ बरस की उम्र तक मजामीने ख़याली[10] लिखा किया। दस बरस में बड़ा दीवान जमा हो गया। आखिर जब तमीज़ आई,

---

१. जो तुम ईसामसीह को देना चाहते हो, वह अपनी कब्रों में ले जाओ। ईसामसीह चौथे आकाश पर जीवित हैं। वे प्रलय के समय पृथ्वी पर आकर उपहार स्वीकार करेंगे। इस पद का यह अर्थ भी हो सकता है कि ईसामसीह अपनी सामग्री पहले ही कबर में भेज चुके हैं। २. फूल की नींद। ३. एक स्थान पर। ४. कली। ५. हथेली। ६. व्याकुलता। ७. सन्तोष। ८. काव्य-रचना के आरम्भिक दिनों। ९. अन्तिम शेर। १०. काल्पनिक विषय।

तो उस दीवान को दूर किया। औराक़[1] एक क़लम चाक किये।[2] दस-पन्द्रह शेर वास्ते नमूने के दीवाने हाल[3] में रहने दिये।

बन्दापर्वर, इस्लाहे नस्री की ज़रूरत नहीं। आपके इन्शा[4] की ये रविशे खास दिलचस्प और बे ऐब है। इस वज़ह को न छोड़िये और जो मेरा ततव्वो[5] और मुझ पर तवज्जोह मंज़ूर हो तो 'पंज आहंग' वग़ैरा मेरी मुसन्निफ़ात[6] को बनिगाहे नज़र[7] व सर्फ़े हिम्मत[8] मुलाहिज़ा फ़रमाइये और मश्क़[9] बढ़ाइये। चश्मे बद्दूर[10] तबीयत हुज़ूर की निहायत आली और मुनासिब इस फ़न के है। मैं आपकी रसाइए ज़हन[11] और क़ुव्वते क़लम[12] से उमीदे क़वी[13] रखता हूँ कि अनक़रीब बहुत खूब लिखिएगा। मेरे और तमाम दोस्तों के फ़ख्र और दुश्मनों के रश्क हो जाइयेगा और इन्नाहाज़ा मिन बरकतुल इल्मे या मौलाना व बिल फ़ज़्ल वल कमाल औलाना।[14]

७

(अक्टूबर, १८६५ ई०)

क़िब्ला व काबा,

फ़क़ीर पा दर रिकाब[15] है, सेशम्बा[16], चार शम्बा[17] इन दोनों दिनों में से एक दिन आज़मे रामपूर[18] होगा। तक़रीब[19] वहाँ के जाने की रईसे मरहूम[20] की

१.पृष्ठ (ब० व०)। २. पूरे फाड़ दिये। ३. वर्त्तमान गजल-संग्रह। ४. गद्य। ५. अनुकरण। ६. रचनाएँ। ७. गहरी दृष्टि से, ध्यानपूर्वक। ८. धैर्यपूर्वक। ९. अभ्यास। १०. बुरी नजर न लगे। ११. बुद्धि की पहुँच। १२. लेखनी की शक्ति। १३. बहुत आशा। ४१. हे मौलाना, जो अपनी योग्यता में बहुत श्रेष्ठ हैं। १५. रिकाब पर पाँव। १६. मंगलवार। १७. बुधवार। १८. रामपुर पहुँचना १९. अवसर, समारोह। २०. स्वर्गीय-नरेश।

ताज़ियत[1] और रईसे हाल[2] की तहनियत[3]। दो-चार महीने वहाँ रहना होगा। अब जो कोई खत आप भेजें तो रामपुर भेजें। मकान का पता लिखना ज़रूर नहीं, शहर का नाम और मेरा नाम काफ़ी है।

मुखम्मस[4] बाद इस्लाह, भेजा जाता है। हक़ तो ये है कि शेर आप रहते हैं और हज़[5] मैं उठाता हूँ। हुस्ने इत्तिफ़ाक़[6] से इस्लाहे खम्से[7] के वक़्त दोस्त ग़मगुसार[8], यारे वफ़ाशिआरे रोज़गार[9] खत्मुल उल्मामुतवह्हरैन[10] मुतवह्हरैन[11] मौलवी मुफ़्ती सद्रुद्दीनखाँ साहब बहादुर सद्रुस्सुदूर[12] देहली अलमुतखल्लिस ब 'आज़ुर्दा' दामे बक़ा व ज़ादे अला[13] कि मुझसे मिलने ग़मखाने[14] पर तशरीफ़ लाये हुए मौजूद थे, खम्से को देख कर पसन्द फ़रमाया। हुज़ूर की बलाग़त[15] की तहसीन[16] की। अरबी मिस्रों के मेरे साथ शरीके ग़ालिब होकर मज़े लूटे और आपकी शीरीनीए गुफ़्तार[17] के वस्फ़[18] में ता देर अज्बुलबयान[19] रत्बुललिसान[20] रहे। और मुझसे बक़द्र मेरे मालूम व बयान के आपकी सिफ़ाते हमीदा[21] से वाक़िफ़ व आगाह होकर बहुत शाद व खुर्सन्द[22] हुए। मुबारक हो। नादीदा[23] व ग़ायबाना[24] यानी महज़ मुश्ताक़ाना[25] व तमन्ना ए मुलाक़ात[26] व इश्क़ व

---

१. शोक प्रकाशन। २. वर्तमान नरेश। ३. बधाई। ४. जिस कविता के प्रत्येक पद में पाँच चरण रहते हैं। ५. आनन्द। ६. संयोग। ७. ऐसी कविता जिसके प्रत्येक पद में पाँच पंक्तियाँ होती हैं। ८. सहानुभूति रखने वाला। ९. प्रेमी मित्र। १०. अगाध पांडित्ययुक्त महा विद्वान्। ११. मुस्लिम धर्मशास्त्रवेत्ता। १२. प्रधानन्यायाधीश। १३. श्रेष्ठ वंश की अभिवृद्ध सम्पत्ति और सुपुत्र। १४. शोकग्रस्त घर। १५. गद्य अथवा पद्य की आलंकारिक शैली। १६. प्रशंसा। १७. वाणी की मधुरता। १८. प्रशंसा। १९. मधुरभाषी। २०. मधुर भाषा का प्रयोग करने वाले। २१. पुनीत प्रशंसा। २२. प्रसन्न और प्रमुदित। २३. जिसे नहीं देखा गया। २४. परोक्ष। २५. प्रेमी होने के नाते। २६. भेंट की लालसा के कारण।

नियाज़[1] लिखने की इर्शाद कर गये हैं। लिहाज़ा मैं लिखता हूँ। क़ुबूल फ़रमाइएगा।

८

(१८६५ ई०)

क़िब्ला,

पहले मानीए अबयात के मानी[2] सुनिये।

"नक़्शे फ़र्यादी..." ईरान में रस्म है कि दादख़्वाँ[3] काग़ज़ के कपड़े पहन कर हाकिम के सामने जाता है। जैसे मशाल दिन को जलाना या ख़ून आलूदा[4] कपड़ा बाँस पर लटका कर ले जाना। बस शाइर ख़याल करता है कि नक़्श किसकी शोख़ी ए तहरीर का फ़रयादी है कि जो सूरते तस्वीर है, उसका पैरहन[5] काग़ज़ी है। यानी हस्ती अगरचे मिस्ले तसावीरे एतबारे महज़ हो, मूजिबे रंज व मलाल व आज़ार[6] है।

"शौक़ हर रंग....." रक़ीब[7] बमानी मुख़ालिफ़ यानी शौक़ सरो सामान का दुश्मन है। दलील ये है कि क़ैस[8] जो ज़िन्दगी में नंगा था, तस्वीर के पर्दे में भी नंगा ही रहा। लुत्फ़ ये है कि मजनूँ की तस्वीर बातने उरियाँ[9] ही खिंचती है, जहाँ खिंचती है।

"ज़ख़्म ने दाद....." एक बात मैंने अपनी तबीयत से नई निकाली है, जैसा कि इस शेर में—

---

१. प्रतिष्ठा और आदर के साथ। २. पदों के अर्थ का आशय। ३. प्रशंसा का इच्छुक। ४. ख़ून में सराबोर। ५. वेश। ६. शोक, दुःख और उदासी का कारण। ७. प्रतिप्रेमी। ८. मजनूँ। ९. नग्न शरीर के साथ।

नहीं ज़रिय ए राहत जराहते पैकाँ[1]
वो ज़ख्मे तेग़ है जिसको के दिलकुशा[2] कहिये

यानी ज़ख्म तीर की तौहीन बसबबे एक रख्ना[3] होने के, और तलवार के ज़ख्म की तहसीन[4] बसबबे एक ताक़-सा खुल जाने के। "ज़ख्म ने दाद न दी तंगीए दिल की" यानी ज़ायल[5] न किया तंगी को। "पुर अफ़शाँ" बम नी बेताब और ये लफ़्ज़ तीर के मुनासिबे हाल है। मानी ये कि तीर तंगी ए दिल को दाद क्या देता, वो तो ख़ुद ज़ीक़े मुक़ाम[6] से घबरा कर पुरफ़िशाँ[7] और सरासीमा[8] निकल गया।

नाम ए ग़ालिब का मकतूब इलैह[9] रहीमबेग नामी मेरठ का रहने वाला है। दस बरस से अन्धा हो गया है। किताब पढ़ नहीं सकता, सुन लेता है। इबारत लिख नहीं सकता, लिखवा देता है, बल्कि उसके हमवतन ऐसा कहते हैं कि वो क़ुव्वते इल्मी[10] भी नहीं रखता, औरों से मदद लेता है। अहले देहली[11] कहते हैं कि मौलवी इमामबख्श सहबाई से उसको तलम्मुज़[12] है, अपना ऐतबार बढ़ाने को अपने को उनका शागिर्द बताता है। मैं कहता हूँ कि वाए[13] इस हेच व पोच[14] पर जिसको 'सहबाई' का तलम्मुज़ मूजिबे इज़्ज़ो वक़ार[15] हो। रिसाला उसका "साते बुरहान" दिल्ली पहुँच कर ढूँढूँगा अगर मिल गया तो ख़िदमत में पहुँचेगा। जनाब मुस्तताब[16] मीर क़ासिम अलीख़ाँ साहब सादिक़ुल कौल[17] हैं। मेरे घर आये होंगे, दरवाज़ा बन्द

---

१. बाण की नोंक का घाव। २. हृदय को आनन्द देने वाला। ३. छिद्र। ४. प्रशंसा। ५. नष्ट। ६. स्थान की संकीर्णता। ७. बरसाता हुआ, (रुदन करता)। ८. व्याकुल। ९. जिसे पत्र लिखा गया। १०. ज्ञान की सामर्थ्य। ११. दिल्लीवासी। १२. शिष्यत्व। १३. हाय-हाय। १४. नीच और तुच्छ। १५. आदर और प्रतिष्ठा। १६. शुभ। १७. सच्चे।

पाया होगा। मगर एक खदशा[1] है कि हज़रत में और मेरे भाई मिर्ज़ा अलीबख्शखाँ में बहुत रब्त व इत्तिहाद[2] था और वो मरहूम खुदायश बियामरज़ाद[3] किज़्ब व गिज़ाफ़[4] ज़र्बु'ल मसल[5] था। इस तसव्वुर से अगर मैं इस जुम्ले के सच जानने में ताम्मुल करूँ तो मेरा ताम्मुल बेजा[6] न होगा। बहरहाल उनको मेरा सलाम कहिएगा।

"सलाबची" एक लफ़्ज़ है, हिन्दियाने फ़ारसीदाँ[7] का अस्ल लुग़त[8] 'चिलमची, और ये लुग़त तुर्की है। माहाजा "हबाबे आसमाँ" जब तक कि आसमाँ को बहर या दरिया न कहें। 'हबाबे आसमाँ' न मक़बूल न मसमूअ[9]। 'दनात' मसमूअ है, अगर फ़तहे अलिफ़[10] का इश्बाअ[11] जायज़ हो वर्ना 'दनात पर्वरी' की जगह "अदना पर्वरी' बेहतर है। बल्कि 'दनात' बहरहाल सिफ़त है 'परवरिश' मौसूफ़ की चाहिए न सिफ़त की——वस्सलाम।

६

(जनवरी, १८६६ ई०)

क़िब्ला,

आपको ये तो मालूम हो गया होगा कि ८ जनवरी को फ़क़ीर पहुँचा। थका-माँदा, खस्ता, रंजूर। हनोज़[12] इफ़ाक़ते कुल्ली[13] नहीं पाई। आज सुबहदम[14] हवा बन्द है। धूप तेज़ है। पुश्त ब आफ़ताब[15] तकिये के सहारे से बैठा हुआ

---

१. आशंका। २. मेल-मिलाप। ३. ईश्वर उसे क्षमा करे। ४. गप और शेखी। ५. लोकोक्ति, कहावत। ६. अनुचित। ७. भारत के फ़ारसी जानने वाले। ८. शब्द। ९. श्रुत। १०. अकार को इकार पढ़ना। २३. ज़बर, ज़ेर और पेश को इतना बढ़ाना कि 'आ' ए और ऊ हो जाये। १२. इस समय। १३. पूर्ण स्वास्थ्य। १४. भोर। १५. सूरज की ओर कमर किये हुए।

ये सतरें लिख रहा हूँ। ग़ज़ल पहुँची है। गोंद में लिथड़ कर एक टुकड़ा काग़ज़ का अलग हो गया है, हज़रत ब एहतियात उसको लिफ़ाफ़े से निकालें—

है तुम्हारा आफ़तावा[1] आफ़तावे आसमाँ[2],
देख लो अपनी चिलमची में हवावे आसमाँ

अगर पसन्द आये तो इस मतले को यों रहने दीजिये।

मौलवी निज़ामी गंजवी अलैहिर्रहमा[3] का एक शेर तालिवे इल्मों[4] के हाथ पड़ा। उन्होंने अज़रू ए क़वायदे[5] नहो[6] इसमें कलाम करना शुरू किया। मौलवी के पास जब वो कलमात पहुँचे, तो फ़रमाया 'यारों, शेर मरा बमदर्सा के बुर्द।

जो साहब ये फ़रमाते हैं कि पहला मिस्रा मुब्तदा[7] नहीं हो सकता, उनसे पूछा चाहिए कि क्या आप इसी पहले मिस्रे में से 'ज़ुल्मतकदे में मेरे' इसको मुब्तदा और 'शबे ग़म का जोश है' इसको खबर ठहराते हैं? पस अगर यों है तो भी मुद्आ हासिल है। दूसरा मिस्रा दूसरी खबर सही। आख़िर ये मुसल्लमाते फ़ने नहो[8] में से है कि एक मुब्तदा की, दो, बल्कि ज़्यादा हो सकती हैं। हाँ एक क़ायदा और है यानी जुम्ला ए फ़ेलिया[9] के क़ब्ल[10] जो इबारत होती है, उसको मुब्तदा नहीं कहते। इस मतले का मिस्र ए सानी[11] जुम्ल ए इस्मिया[12] है। अपने माक़ब्ले मुब्तदा को क़बूल करता है। अगर हमने नज़र इस दस्तूर पर मिस्र ए अव्वल[13] को मुब्तदा कहा तो भी

---

१. दस्तेदार लोटा। २. आसमान का सूर्य। ३. उन पर ईश्वर की दया रहे। ४. विद्यार्थी। ५. पिंगलशास्त्र के अनुसार। ६. व्याकरण। ७. प्रारम्भित। ८. पिंगलशास्त्र के सर्वमान्य तथ्य। ९. क्रिया से सम्बन्धित वाक्य। १०. पहले। ११. द्वितीय चरण। १२. कर्ता से सम्बन्धित वाक्य। १३. प्रथम चरण।

क़बाहत[1] लाज़िम नहीं आती। बहरहाल जो वो साहब इसी पहले मिस्रे को क़रार दें, वो मुझे क़ुबूल है। मगर शेर मेरा मुहमिल[2] नहीं। ज़्यादा इससे क्या लिखूँ ? भाई मीर क़ासिमअलीख़ाँ साहब को वन्दगी।

१०

(१ अप्रैल, १८६६ ई०)

क़िब्ला,

उस इनायतनामे का जो मार्च गुज़श्ता में पाया है, आज यकुम अप्रैल को जवाब लिखता हूँ, गोया नमाज़े सुवह क़ज़ा[3] पढ़ता हूँ। जनाब मौलवी ग़ुलाम ग़ौसख़ाँ बहादुर मीर मुंशी लफ़्टंट गवर्नरी ग़र्ब व शुमाल[4] का क्या कहना है। हुस्नेसीरत[5] जो बाद रियाज़ते शाक़ा[6] और बाद तहसीले फ़ज़ाइले अरबा[7] ए मलिक ए अदालत व हिकमत व शुजाअत व इफ़्फ़त[8] हासिल होता है, इस दाना दिल, वेदार मग़्ज़[9] को फ़ितरत[10] ने वदीअत[11] किया है। हुस्ने सूरत[12] वो कि जो देखे, पहली नज़र में हुस्ने खुल्क़[13] लुत्फ़े तबा[14] उसको नज़र आये।

फ़क़ीर हमेशा मौरिदे ऐतराज़ात[15] रहा है, लेकिन अक्सर ऐसा होता है कि बाद दो-चार दिन के मोतरिज़[16] साहब का ख़त आया है लुग़त तरकीब मोतरिज़फ़ी[17] की सनद के अशार हज़रत ने उस ख़त में दर्ज किये हैं। अल्लाह अल्लाह, जो कलकत्ते में शोरे नशोर[18] उठा था। मेरा शेर—

---

१. त्रुटि। २. अस्पष्ट। ३. ऐसी नमाज़ जो समय पर न पढ़ी गई हो। ४. पश्चिमोत्तर। ५. सुस्वभाव। ६. कठिन साधना के पश्चात्। ८. विक्टोरिया के पार्षदों की श्रेष्ठताओं और युक्ति, वीरता तथा पावित्र्य की प्राप्ति के पश्चात्। ९. कुशाग्र बुद्धि। १०. स्वभाव। ११. अमानत। १२. आकृति का सौन्दर्य। १३. सुशीलता। १४. सुस्वभाव। १५. आक्षेप का स्थान। १६. आक्षेपकर्त्ता। १७. आक्षेपित। १८. अत्यधिक कोलाहल।

जुज्व ए अज़ आलमम व अज़ हमा आलम वेशम
हम चू मूए के बुताँ रोज़ मियाँ बर खीज़द[1]

खस्ता जराहतहाए ऐतराज़[2] हुआ है। मन्शा ए ऐतराज़ ये कि आलम मुफ़रद[3] है, उसका रव्त हमा के साथ वहस्वे इज्तिहादे क़तील[4] ममनू है। क़ज़ारा[5] उस ज़माने में शाहज़ाद ए कामरान दुर्रानी[6] का सफ़ीर[7] गवर्नमेण्ट में आया था। किफ़ायतख़ाँ उसका नाम था। उस तक ये क़िस्सा पहुँचा। उसने असातिज़ा के अशार पान-सात ऐसे पढ़े, जिनमें 'हमा आलम' व 'हमारोज़' व 'हमा जा' मरकूम[8] था और वो अशार "क़ातै बुरहान" में मुंदरिज[9] हैं।

हाँ साहब "क़ातै बुरहान" में और मतालिब बढ़ाये और एक दीबाचा दूसरा लिखा और 'दुरफ़िशे कादयानी' उसका नाम रखा और उसको छपवाया। एक मुजल्लद[10] उसका आज इस खत के साथ डाक में भेजता हूँ। बाद पहुँचने के उसको देखिएगा और अक्सर वक़्ते फ़ुर्सत पेशे नज़र रखिएगा। और जिस दिन पहुँचे उसी दिन या उसके दूसरे दिन रसीद लिखिएगा। और अगर और साहब उसके तालिब[11] और खरीदार हों तो मुझको लिखिएगा। दस-पाँच, दो-चार जिल्द भेज दूँगा। ये नुस्खा मेरी तरफ़ से आपको नज़्र। ग़ज़ल फिर भेजूँगा।

---

१. यद्यपि मैं विश्व का एक अंश हूँ, बुढ़ापे के कारण अब मैं निष्क्रिय और दुर्बल हूँ, अतः लोगों की दृष्टि में मेरा कोई स्थान नहीं है। यद्यपि मैं अब भी महत्वपूर्ण व्यक्तित्व रखता हूँ। जिस तरह कमर काफी स्थूल है किन्तु कवि बाल से बारीक बताते हैं। २. आक्षेप, चीर फाड़, छिन्न-भिन्न। ३. एकवचन। ४. क़तील के आदेश के विपरीत। ५. अकस्मात्। ६. राजपुत्र कामरान शाहमुहम्मद का पुत्र और तैमूरशाह पुत्र अहमदशाह दुर्रानी का पोता था। इसने बहुत समय तक हिरात में शासन किया था। ७. राजदूत। ८. लिखित। ९. उल्लिखित। १०. सजिल्द। ११ माँगने वाले।

शहज़ादा बशीरुद्दीन के नाम

१

पीर व मुर्शिद सलामत,

आज़ा[1] फ़र्सूदा[2] और बोदे हो गये। रूह इनमें दौड़ती नहीं फिरती, मगर अभी मुफ़ारक़त[3] नहीं कर गई। खुदा जाने किस मकमन[4] में है। क़ुवा[5] निकम्मे हो गये। अब वो काम जो उनसे मुताल्लिक़ थे, बन्द हो गये। आपका हुक्म मानना और आपकी खिदमत बजा लानी दिल से ताल्लुक़ रखती है, वो लतीफ़े ग़ैबी[6] यानी रूह के काम हैं। जब तक वो बाक़ी है, सरंजाम पाते जाएँगे।

"खाकम बदहन" वास्ते अक़वाल[7] के है, जब कोई कलमा मकरूहे तबा[8] कहते हैं तो 'खाकम बदहन' कह लेते हैं—

बरखाक व रेख्ती मए नाब मरा
'खाकम बदहन' मगर तो मस्ती रब्बी[9]

और 'खाकम बसर' और खाकम बफ़र्क़ आम है, जैसा कि मैं एक शहज़ादे के मर्सिये में कहता हूँ—

ऐ अहले शहर मदफ़न ईं दूदमाँ कुजास्त
खाकम बफ़र्क़ खाबगहे खुसरवाँ कुजास्त[10]

---

१. शरीर के अंग। २. जरा-जीर्ण। ३. प्रस्थान, पृथकता। ४. घर। ५. अंग। ६. आत्मा। ७. कथन (ब० व०)। ८. भद्दा। ९. मेरी शुद्ध सुरा पृथ्वी पर फेंक दी, ईश्वर तेरे मुँह पर मिट्टी डाले किन्तु तू ईश्वर के आनन्द में मस्त हो जा। १०. हे नागरिकों, इस वंश का कब्रिस्तान कहाँ है? तुम्हारे सिर पर मिट्टी पड़े, सम्राटों के राजप्रासादों का पता नहीं है।

उस्ताद—

खाकम बसर के आशिक़े कार आज़मूदा अम
दानम के बा रक़ीब बखिलवत चहा रवद[1]

आपके हाँ और मौलवी रूम के हाँ 'खाकम बदहन' का मुतवक़्क़ नहीं, जैसा कि मौलवी मानवी ने नहीं लिखा, हज़रत भी अपने हाँ न लिखें।

फ़र्क़स्त दरमियाना के बिसियार नाज़ुकस्त[2]

नजात का तालिब
—ग़ालिब

२

हज़रत पीर व मुर्शिद बरहक़ सलामत,

तक़्सीर[3] माफ़, मैं मुद्दई और आप मुद्दआ अलैह भी और हाकिम भी। वजहे इस्तिग़ासा[4] ये है कि आपने मुझे अपने हल्क़ ए इरादत[5] से खारिज कर दिया। अरायज़े जवाब तलब[6] का जवाब नहीं। एक इनायतनाम ए साबिक़[7]—

आबे ज़ लहल मी रवद बर पर नंग[8]

ये जुम्ला मुरक्कबा[9] लिखा हुआ था। मैं इसको पढ़ भी न सका, मानी तो अलावा रहे। मैंने अरीज़ा[10] लिखा और जुम्ले की हक़ीक़ते हाल का इन्किशाफ़[11]

१. उसके सिर पर मिट्टी पड़े, मैं एक अनुभवी प्रेमी हूँ। मैं समझना चाहता हूँ कि एकान्त में प्रतिप्रेमी के साथ क्या हो रहा है। २. अंतर बहुत सूक्ष्म है। ३. अपराध। ४. वाद का कारण। ५. श्रद्धालु लोगों का मण्डल। ६. उत्तरणीय आवेदन-पत्र। ७. पहले का पत्र। ८. (इस पद का अर्थ ग़ालिब साहब भी नहीं समझ सके।) ९. मिश्रित वाक्य। १० प्रार्थनापत्र। ११. स्पष्टीकरण।

चाहा, अब तक जवाब नहीं पहुँचा। जी घबरा रहा है। जब तक इसका जवाब न पाऊँगा, आराम न आएगा।

बरखुर्दार[1] इक़बाल निशान मिर्ज़ा शहाबुद्दीनखाँ बहादुर की ज़बानी आपके मिज़ाज मुबारक की खैर व आफ़ियत सुनी। मगर वो जो तहरीरे दस्तख़ती से तसल्ली होती है, वो कहाँ! हज़रत अब तो ख़ालिसनलिल्लाहवरंसूल मेरा गुनाह माफ़ और दस्तख़ते ख़ास से मुझको इस जुम्ले के मानी लिख भेजिये॥ ज़्यादा हद्दे अदब।

अफ़ूए जुर्म का तालिब[2]
—ग़ालिब

३

बन्दा परवर,[3]

मेहरबानीनामा आया, सर पर रखा और आँखों पर लगाया। फ़ारसी की तकमील के वास्ते अस्लुल उसूल[4] मुनासिबते तबीयत की है, फिर तत्बोए कलामे अहले ज़बान,[5] लेकिन न अशारें 'क़तील' व 'वाक़िफ़' व शोअराए हिन्दुस्तान के ये अशार सिवाय इसके कि उनको मौज़ूनीए तबा[6] का नतीजा कहिये और किसी तारीफ़ के शायाँ[7] नहीं हैं। न तरकीबे फ़ारसी, न मानीए नाज़ुक[8], हाँ अल्फ़ाज़े फ़र्सूदा आमियाना[9] जो अतफ़ाले दबिस्ताँ[10] जानते हैं और जो मुतसद्दी नस्र में दर्ज करते हैं, वो अलफ़ाज़ फ़ारसी ये लोग नज़्म में

---

१. सुपुत्र। २. अपराध की क्षमा चाहने वाला। ३. सेवकों का पालन करने वाला। ४. सिद्धान्त। ५. भाषा के लिए प्रामाणिक लोगों की रचना का अनुसरण। ६. स्वभाव की अनुकूलता। ७. उपयुक्त। ८. सूक्ष्मार्थ। ९. सामान्य और घिसे-पटे शब्द। १०. पाठशाला के बालक।

सर्फ़[1] करते हैं। जब 'रूदकी' व 'अन्सरी' व 'खाक़ानी' व 'रशीद' व 'तवात' और उनके अमसाल व नजायर[2] का कलाम बइस्तीफ़ा[3] देखा जाये और उनकी तरकीबों से आशनाई बहम पहुँचे और ज़हन एबिजाज[4] की तरफ़ न ले जायें तब आदमी जानता है कि ये फ़ारसी है—

मन के बाशम• • •

इसकी जो शरह[5] छापे में लिखी है उसको मुलाहिज़ा कीजिये और मानी मेरे ख़ातिरे निशान कीजिये तो मैं सलाम करूँ। पहले नज़र यहाँ लड़नी चाहिए 'अज़ओजे बयाँ अन्दाख्ता' का फ़ाइल[6] कौन है और मफ़ऊल[7] कौन है। अगर 'अक़्लेकुल' को अन्दाख्ता का मफ़ऊल और 'मन्के' के काफ़ को कुदामिया[8] ठहराओगे तो बेशुबा 'अन्दाख्ता' के फ़ाइल दो ठहरेंगे, एक 'नावके अन्दाज अदब' और एक 'मुर्ग़ औसाफ़ेतो' एक फ़ेल[9] और दो फ़ाइल, ये क्या तरीक़ और कैसी तहक़ीक़ है ?

अब फ़क़ीर से इसके मानी सुनिये "मन" अन्दाख्ता का मफ़ऊल[10] 'रा' मुक़द्दर[11], 'मन्के' का 'काफ़' तौसीफ़ी[12]। 'नावके अन्दाजे अदब' अदब आमोज़ यानी उस्ताद, 'मुर्ग़ तौसीफ़े तो' फ़ाइल, मुझको कि 'अक़्ले कुल' का उस्ताद हूँ, तेरे मुर्ग़ तौसीफ़ ने ओजे बयान[13] से गिरा दिया। 'अक़्ले कुल' तक कि जो उलवीयों[14] में आला है। इसका नावक[15] पहुँच सकता था मगर मुर्ग़ औसाफ़[16] उस मुक़ाम पर है, जहाँ उस 'नावके अन्दाज[17]' को नावक के पहुँचाने की

---

१. प्रयुक्त। २. उदाहरण और दृष्टान्त। ३. पूर्णतया। ४. [illegible]। ५. व्याख्या। ६. कर्ता। ७. कर्म। ८. प्रश्नवाचक। ९. क्रिया। १०. कर्म। ११. ऐसे शब्द जो वाक्य में न हों किन्तु अर्थ करते समय जिन का व्यवहार किया जाये। १२. विशेषणवाचक। १३. वर्णन की उच्चता। १४. [illegible] लोग। १५. एक प्रकार का तीर। १६. गुणसमूह का पक्षी। १७. [illegible]।

गुंजाइश नहीं। औजे बयान[1] से गिरना आजिज़[2] आ जाना है। क़ुदरत वो कि अक़्ले कुल से भी ज्यादा और इज्ज़ ये कि औजे बयान से गिर गया। क्या अच्छा मुबालिग़ा[3] है मुर्ग़ें औसाफ़ की बलन्दी का और क्या खूब मज़मून है इज़हारे इज्ज़[4] बावजूद ए दाव ए क़ुदरत ! १२।

ईसारे तो बर्दूख़्ता चश्मो दहन आज़[5]

इसके मानी तो वही हैं जो छापे में लिखे हैं। मिस्र ए सानी[6] की शरह[7] में गुमराह हो गया।

'एहसान तो हर क़तर ए दरया बे शिगाफ़्त, ताहम बक़ंदे हिसाब नियामद' ये हीचमदाँ इस मानी के मानी नहीं समझा। सीधी बात है, मगर ख़याल में जब आएगी कि असातिज़ा के मुसल्लमात[8] मालूम हों। कमाले ईसार व अता[9] में मरवारीद व याक़ूत[10] व बहर[11] व मादन[12] की कमबख़्ती आती है। लाल व दुर[13] का मादूम[14] हो जाना और बहर व कान का ख़ाली रह जाना नई-नई तरह से बाँधा है, चुनांचे मैंने किसी ज़माने में इसी ज़मीन में एक क़सीदा लिख कर वज़ीरुद्दौला वाली ए टोंक[15] को भेजा था। उसमें के ये दो शेर आपको लिखता हूँ—

नामूसे निगह दाश्ती अज़ जूद व गीती
जुज़ पर्द गयाने हरमे मादने यम रा
बक़्तस्त के ईं क़ौम बहर कूचा व बाज़ार
पुर्सन्द ज़ हम मन्शा ए रुसवाइ ए हमरा

---

१. वर्णन की उच्चता। २. विवश होना। ३. अत्युक्ति। ४. प्रतिष्ठा का प्रकटीकरण। ५. तुम्हारी उदारता ने लालसा के मुख और नेत्रों को सी दिया। ६. प्रति चरण (कविता)। ७. व्याख्या। ८. सर्वमान्य। ९. त्याग और दान। १०. लाल। ११. समुद्र। १२. खान। १३. मोती। १४. लुप्त। १५. टोंक के राजा।

"पर्दगियान हरम मादनो यम" लाल व गौहर जो कसरते ईसार[1] कूचा[2] व बाज़ार में ख़ाक आलूदा[3] पड़े हुए हैं, वो बाहमदिगर दर्दमन्दाना ये गुफ़्तगू करते हैं कि इस शख़्श ने सब की हुरमतें[4] रखलीं और सबकी आबरूएँ बचाईं, हमको इस क़दर बेहुरमत[5] व ज़लील क्योंकर रखा है? क़तर ए दरिया[6] का हिसाब के वास्ते चीरना, बेहिसाब है। मक़सूद[7] उर्फ़ी का ये है कि जितने मोती दरया में हाथ आये वो बख़्श दिये और बख़्शिश का ज़ौक़[8] बाक़ी रहा। चूंकि क़तरे में बिलक़ुव्वत[9] इस्तेदादे मोती[10] हो जाने की है, तो इस एहतिमाल[11] से हर क़तर ए दरया को चीर डाला कि अगर मोती हाथ आयें तो वो साइलों[12] को दिये जायें। पहले मिस्रे में हिर्स का सेर[13] कर देना, मुआफ़िक़े मुसल्लमाते शोअरा[14] के मुख़्तरे[15] और उसका वक़[16] में आना इग़राक़[17] दूसरे मिस्रे में व एहतियाते इस्तेदाद बिलक़ुव्वत क़तरे को चीर डालना और फिर इस तरह कि हरक़तरे को ये इग़राक़ से गुज़र कर तबलीग़[18] व ग़ुलू[19] है।

दाद का तालिब

—ग़ालिब

४

(१६ जून, १८६३ ई०)

तुम सलामत रहो हज़ार बरस

हर बरस के हों दिन पचास हज़ार

---

१. त्याग का आधिक्य। २. गली। ३. धूल भरे। ४. सम्मान। ५. असम्मानित। ६. समुद्र की बूंद। ७. अभीष्ट। ८. रुचि। ९. सामर्थ्य। १०. मोती में परिवर्तित होने की शक्ति। ११. सन्देह। १२. प्रार्थी। १३. तृप्त। १४. कवियों की सर्वमान्य धारणा के अनुसार। १५. निर्माता। १६. अस्तित्व। १७. अतिशयोक्ति। १८. प्रचार। १९. अत्युक्ति।

आज मंगल, १६ जून १८६७ ई०, बारह बजे इनायतनामा आया। सरनामा देख कर सफ़ेद ए सुबहे मुराद[1] समझा। नंगा एक छोटी सी ख़स की टट्टी के पास बैठा हुआ था, ख़त पढ़ कर यों हाल तारी हुआ[2] कि अगर नंगा न होता तो गिरेबां फाड़ डालता। अगर जान अज़ीज़ न होती तो सर फोड़ता और क्योंकर इस ग़म की ताब लाता कि मैंने अपने को खिंचवा कर बसूरते तस्वीर आपकी ख़िदमत में भेजा। लिफ़ाफ़ा अंग्रेज़ी इक़बाल निशान महाप्रभुदीनदों से लिखवा कर बैरंग इर्साल[3] किया। इस फ़रमान में उस लिफ़ाफ़े की रसीद न पाई। ज़ाहिरा डाक पर डाकू गिरे। मेरे पैकरे बेरूह[4] के टुकड़े उड़ा दिए। बेताब होकर ये इबारत हज़रत को भेजी हुई लिफ़ाफ़े में लपेट कर रवाना की। अब जब आप और लिफ़ाफ़े भेजेंगे तो मताल्बि बाक़ी[5] का जवाब मय औराक़े अशार[6] भेजूंगा। ज्यादा हद्दे अदब।

५

(११ अप्रैल, १८६८ ई०)

दर परस्तिश सुस्तम व दर काम जोई उस्तवार
बादशाह रा बन्द ए कम ख़िदमतो पुरख़्वार हस्त[7]

हज़रत पीर व मुर्शिद बरहक़[8], रोज़ अफ़ज़ूनी काहिश[9] अब इस हद को पहुँची है कि—

तक़सीम जुज़्वे लायतज़ज्जा मुहाल है[10]

---

१. लालसा के प्रभात का हल्का प्रकाश। २. छा गया। ३. प्रेषित। ४. प्राणरहित चित्र। ५. शेष पृष्ठ का। ६. कविता के पृष्ठों के साथ। ७. भक्ति में आलसी और मतलब साधने में बहुत बढ़ा-चढ़ा हूं। सम्राट् की सेवा कम करता हूँ किन्तु खाता खूब हूँ। ८. सच्चे। ९. नित्य विकासशील ह्रास। १०. जो अभेद्य है उसका बँटवारा असम्भव है।

आगे वादे ज़महरीर[1] ने लहू खुश्क कर दिया था, अब आतिशेदोज़ख[2] ने रहा-सहा जला दिया। कल इनायतनामा आया। आप जो रक़म फ़रमाते हैं[3] कि तूने मेरे खत का जवाब नहीं भेजा, मुझको वावस्फ़े इस्तेला ए निसियाँ[4] ख़याल में आता है कि मैं हज़रत के फ़रमान का जवाब लिख चुका हूँ। डाकिए अब डाकू हो गये हैं। अगर वो लिफ़ाफ़ा डाक में तलफ़[5] हो गया तो कुछ बईद नहीं। मुतवक़्क़े हूँ कि उसका न पहुँचना मेरी नारसाईए बख़्त[6] की तासीर समझा चाहिये। मैं मुजरिम न ठहरूँ। ज़्यादा हद्दे अदब।

रोज़े दो शम्बा, ११ अप्रैल १८६८ ई०।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

---

१. अत्यधिक ठंडी हवा। २. नरक की आग। ३. लिखते हैं। ४. विस्मरण की अत्यधिकता के रहते हुए भी। ५. नष्ट। ६. दुर्भाग्य।

मुंशी हीरासिंघ के नाम

१

(१८४८ ई०)

फ़र्जन्दे दिलबन्द[1] सम्रादतमन्द[2] मुंशी हीरासिंघ के हक़ में मेरी दुआएं क़ुबूल हों और उनके जितने मतालिब व मारब[3] हैं वो इनायते इलाही[4] से पूरे हों। भाई 'लबे साहल' की सनद[5] पर ये शेर हैं 'तालिब' आमिली का—

मुद्दते आं—गदाए ख़ूनीं दिल
बूद तब खालए लबे साहल[6]

'लबे बाम', 'लबे फ़र्श', 'लबे गोर', 'लबे चाह', 'लबे दरया', 'लबे साहल' बमानी किनारे के है, मुस्तामल[7] अहले ईरान। 'लबे बाम' उस मुक़ाम को कहते हैं जहाँ एक क़दम आगे बढ़ाइये तो धम से अँगनाई में आइये। पस 'लबे दरया' उसे समझिये जहाँ से क़दम बढ़ाइये तो पानी में जाइये। 'लबे साहल' वो हुआ जहाँ से आगे बढ़े तो दरया में गिरे। 'लबे दरया' से पाँव दरया में रखा जाता है, जैसा नहाने के वास्ते, और 'लबे साहल' से दरया में कूदते हैं, जिस तरह सुलतानजी की बावली में 'लबे बाम' से तैराक कूदते हैं। इसी तरह तैराक,

---

१. हृदय का टुकड़ा—पुत्र। २. आज्ञाकारी। ३. उद्देश्य। ५. ईश्वर की दया। ५. प्रमाण। ६. मैं दीर्घ समय से दुखी बैठा हूँ। तवखाला की तरह मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। (तीव्र ज्वर के कारण होटों के आसपास फुन्सियाँ हो जाती हैं, उन्हें तवखाला कहते हैं)। ७. प्रयुक्त।

जहाँ दरया का पानी नशेब[1] में होता है, वहाँ कड़ाड़े के किनारे पर से कूदते हैं। कड़ाड़ा 'साहल' और कड़ाड़े का किनारा 'लबे साहल'। जो ग़ालिब, कि, लबे साहल को सही नहीं जानते क्या वो 'तालिब' आमली को भी नहीं मानेंगे? और इस लफ़्ज़ पर ऐतराज़ करने का सबब ये है कि उन बेचारों ने सिवाय गुलिस्ताँ-बोस्ताँ के कोई फ़ारसी की किताब नहीं देखी। अगर मुद्दत तक क़ुदमा[2] की तसनीफ़ात[3] नज़र में रखेंगे तो यक़ीन है कि देख लेंगे।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

२

(१४ जनवरी, १८६८ ई०)

नूरे चश्म[4] ग़ालिब ग़मे दीदा मुंशी हीरासिंघ को दुआ पहुँचे। तुम्हारा ख़त मुहर्ररा[5] ११ जनवरी पहुँचा। दौरे का सफ़र, बारे, तमाम हुआ। अब जाड़ों के दिन आराम से काटो। घबराओ नहीं। साल भर पढ़ाये जाओ, जब लड़का शुदबुद से आगाह हो जाये, तब डिप्टी कमिश्नर से तरक़्क़ी की दरखास्त करना। अगर नायब तहसीलदार हो जाओगे तो रफ़्ता-रफ़्ता ऐक्स्ट्रा असिस्टेंट होने की गुंजाइश है। मदर्से के इलाक़े में तो नौकर नहीं जो बाबू प्यारेलाल को तुम्हारी बदली का इख़्तियार हो। ज़िन्हार[6], मैं इस बाब में न बाबू साहब से कहूँगा और न ये ख़त तुम्हारा मुंशी जवाहरसिंघ को दिखलाऊँगा। नाहक़ उलझो क्यों? इस उलझने से फ़ायदा क्या? ख़ातिर जमा रखो—

के रहम गर न कुनद मुद्दई ख़ुदा बकुनद[7]

मैं वैसा ही हूँ जैसा तुम देख गये हो, और जब तक जीऊँगा ऐसा ही रहूँगा।

—ग़ालिब

---

१. ढलान। २. प्राचीन (कवि) ब० व०। ३. रचनाएँ। ४. नेत्र-ज्योति। ५. लिखित। ६. कदापि। ७. यदि मेरा प्रतिद्वन्द्वी दया नहीं करेगा तो ईश्वर करेगा।

बिहारीलाल 'मुश्ताक़' के नाम

१

(२६ फ़रवरी, १८६८ ई०)

सम्रादतमन्द बाकमाल मुंशी बिहारीलाल बयुम्ने तासीरे दुआए ग़ालिब[1] खस्ताहाल उम्र व दौलत व इक़बाल फ़िरावां[2] हो। मुंशी मनभावनलाल तुम्हारे वालिद माजिद का इन्तिकाल मूजिबे रंज व मलाल[3] हुआ। अगरचे उस रहरवे जाद ए फ़ना[4] से मेरी मुलाक़ात न थी, लेकिन तुम्हारे तन्हा और बेमुरब्बी[5] रह जाने का मैंने बहुत ग़म खाया। खुदा उनको बख्शे और तुमको सब्र अता करे।

—ग़ालिब

२

(८ जून, १८६८ ई०)

बरखुर्दार बिहारीलाल,

मुझको तुमसे जो मुहब्बत है उसके दो सबब हैं, एक तो ये कि तुम्हारे खाल[6] फ़र्रुख फ़ाल[7] मुंशी मुकन्दलाल मेरे बड़े पुराने यार हैं, खुशखू[8], शिगुफ़्ता रू[9], बजलागो[10]। दूसरे तुम्हारी सम्रादतमन्दी और खूबी और हिल्म[11] और बक़द्रे

---

१. ग़ालिब के आशीर्वाद के फलस्वरूप भाग्यशालिता के साथ। २. अधिक्य। ३. दुःख और शोक का कारण। ४. मृत। ५. बिना अभिभावक। ६. मामा। ७. सौभाग्यशाली। ८. अच्छे स्वभाव वाले। ९. हँसमुख। १०. सुभाषी। ११. सहनशीलता।

हाल इल्म, उर्दू नज़्म व नस्र में तुम्हारी तबा की रवानी और तुम्हारे क़लम की गुलफ़िशानी[1], मगर चूंकि तुमको मुशाहिद ए अख़बारे अतराफ़[2] और ख़ुद अपने मतबे[3] के अख़बार की इबारत का शग़ले तहरीर[4] हमेशा रहता है, व तक़लीद[5] और इन्शापरदाज़ों[6] के तुम्हारी इबारत में भी इमला की ग़लतियां होती हैं, मैं तुमको जा बजा[7] आगाह करता रहता हूं। ख़ुदा चाहे तो इमला की ग़लती का मलेका[8] बिल्कुल ज़ायल[9] हो जाये। मगर बिहारीलाल इस नौनिहाल[10] बाग़े दौलत यानी हकीम ग़ुलाम रज़ाख़ां के दवामे सुहबत[11] को अपने ताले[12] की या वरी समझो। ये दानिशमन्द सतूदा ख़ू ए अमीर[13] नामवर होने वाला और मरातिबे आला[14] को पहुंचाने वाला है। उसकी तरक़्क़ी के ज़िम्न[15] में तुम्हारी तरक़्क़ी होनेवाली है।

विया दामाने साहिबे दौलतेगीर
के मर्द अज़ साहिबे दौलत शवद पीर[16]

मियां सच तो यों है कि 'अकमलुल मताबे' 'अजमुल मताबे' भी है। हकीम ग़ुलाम नबीख़ां मिन जुम्ला[17] ख़ूबाने रोज़गार[18] हैं। निको ख़ू ए[19] और निको किरदार[20] हैं। मीर फ़ख़ुद्दीन आज़ाद मनिश[21] और सआदतमन्द नौजवान हैं। कम गुफ़्तार

---

१. पुष्पवर्षण। २. आस-पास के समाचारपत्रों का अवलोकन। ३. मुद्रणालय। ४. लिखने का चस्का। ५. अनुसरण। ६. लेखक। ७. यत्र-तत्र। ८. अभ्यास। ९. नष्ट। १०. पौधा। ११. स्थायी संगत। १२. भाग्य। १३. उदार। १४. श्रेष्ठ पद (ब० व०)। १५. विषय। १६. सम्पन्न का आंचल पकड़, सम्पन्न व्यक्ति से ही मनुष्य को बड़प्पन मिलता है। १७. सब में से। १८. अपने समय के प्रतिष्ठित व्यक्ति। १९. श्रेष्ठ स्वभाव वाले। २०. सच्चरित्र। २१. स्वतन्त्र विचारक।

और मरंज व मरंजा[1] हैं। तुम चारो शख्स पैकर सिद्क़[2] व सफ़ा[3] और मेहर व विला[4] के अन्सर[5] हो। जहाँ आफ़रीं, तुम चारों साहबों को खुशनूद, दिलशाद और 'अकमलुल मताबे[6]' को बा रौनक़ और आबाद रखे।

—ग़ालिब

१. जो व्यक्ति स्वयं भी प्रसन्न रहता है और दूसरों को भी दुखी नहीं करता। २. मूर्तिमान् सत्य। ३. विशुद्धता। ४. दया-ममता। ५. तत्व। इस्लामी दर्शन पृथ्वी, जल, तेज और वायु को ही महातत्व मानते हैं, आकाश को नहीं। ६. मुद्रणालय नाम।

केवलराम 'होशयार' के नाम

ग़ालिब ख़ाकसार कहता है कि शोअराए ईरान कुल्लहुम अजमईन[1] मुसल्लमुस्सुबूत[2] हैं और उनका कलाम सनद हैं। सुख़नवराने हिन्द[3] में अमीर ख़ुसरो देहलवी भी ऐसे ही हैं। अहले ईरान में रूदकी व फ़िरदौसी से लेकर जामी तक और जामी से सायब व कलीम तक किसी ने लुग़त की कोई किताब[4] लिखी हो, कोई फ़रहंग[5] जमा की हो तो हमें दिखाओ। उसको अगर मैं न मानूं और सनद[6] न जानूं तो मैं गुनहगार। जितनी फ़रहंगें अब मौजूद हैं, नाम उनके कहां तक लूं, मशहूर व ग़ैर मशहूर कुछ कम सौ रिसाले[7] होंगे। उन सब रिसालों के जामे[8] हिन्दी हैं। कोई अहले ज़बान[9] नहीं है। अशारे असातज़ए ईरान[10] को माख़ज़[11] ठहरा कर जो लुग़ात[12] उनकी नज़्म में देखे बमुनासिबते मुक़ाम[13] उन लुग़ात के मानी लिख दिए। इस्तिंबाते मानी[14] का मदार क़यास[15] पर। ये मैं नहीं कहता कि क़यास उनका सरासर ग़लत है, मेरा क़ौल ये है कि कमतर सही और बेशतर ग़लत है।

इन सब फ़रहंग लिखने वालों में ये दकन का आदमी[16] याने जामे 'बुरहान क़ातै' अहमक़ और ग़लतफ़हम और मऊजुज़्ज़हन[17] है। मगर क़िस्मत का अच्छा

---

१. पूर्णतया। २. प्रमाण सिद्ध। ३. भारत के कवि। ४-५. शब्द-कोष। ६. प्रमाण। ७. पुस्तिका। ८. संकलनकर्ता। ९. जिनकी मातृभाषा फ़ारसी हो। १०. ईरान के आचार्यों की कविता। ११. जिस ग्रंथ से लेखन में सहायता ली गई हो। १२. शब्द (ब० व०)। १३. स्थान के अनुसार। १४. अर्थ का निष्कर्ष। १५. अनुमान। १६. मुहम्मद हुसैन तबरेज़ी, सम्पादक, 'बुरहान क़ातै' (फ़ारसी का एक शब्द-कोश)। १७. मूर्ख।

है। मुसलमान उसके क़ौल को आयत और हदीस़ जानते हैं और हिन्दू उसके बयान को मतालिबे मुन्दरिज ए वेद[1] के बराबर मानते हैं।

'गियाह' बकाफ़[2] फ़ारसी मकसूर[3] सब्ज़ घास को कहते हैं। 'गया' बकाफ़े फ़ारसी मकसूरिया[4] मफ़तूह[5] कोई लुग़त फ़ारसी नहीं है, हर्गिज़ नहीं है। मौलवी रूम और हकीम सनाई के हात के लिखे हुए शेर किसने देखे हैं कि उन्होंने अपने हाथ से काफ़ पर दो मरकज़[6] और फ़तहा[7] बनाया हो। फ़रहंगनवीसों की राय की तबाही और क़यास की ग़लती है जो ऐसा समझे हैं। न गयावा बमानी पहलवान है और न कारेगयाह कोई लफ़्ज़ है, न कोई लुग़त है।

'के' बकाफ़े मफ़तूह[8] बरवजन 'में' एक लुग़ते फ़ारसी है ज़ू मानैन यानी दो मानी देता है। एक तो 'कब' यानी 'किस वक़्त' और दूसरे मानी इसके हैं हाकिम और मालिक के। 'अलिफ़' जो इसके साथ आता है, वो कसरत[9] के मानी देता है। जैसे 'खोशा', 'बहुत खुश', 'बदा', 'बहुत बद', 'किया', 'बड़ा हाकिम'—

इश्क आँ बुज़ुर्गीं के जुम्ला औलिया
याफ़्तन्द अज़ इश्क़े ऊ कारे किया[10]
यानी बसबबे इश्क़ कारे बुजुर्ग याफ़्तन्द।
सरफ़िरो बुरदेम ता बरसरवराँ सरवर शुदेम
चाकरी करदेम ता कारे कियाई याफ़्तेम[11]

---

१. वेदों से उद्धृत। २. ककार से। ३. इकार युक्त। ४. ईकारयुक्त। ५. आकार युक्त। ६. बिन्दु। ७. 'अ' की मात्रा। ८. 'का', आकार युक्त 'क'। ९. आधिक्य। १०. उस व्यक्ति का स्नेह प्राप्त कर जिसके स्नेह से बड़े-बड़े साधकों ने सिद्धि प्राप्त की। ११. मैंने बहुत सेवा की। इस सेवा का परिणाम यह हुआ कि हम सरदारों के सरदार बनाये। हमने नौकरी की, जिसका परिणाम यह हुआ कि बड़े-बड़े पद प्राप्त हो गये।

यहाँ भी वो कारे बुज़ुर्ग यानी बड़ा। पस याये तहतानी[1] अगर मजहूल[2] है तो ताज़ीमी[3] है अगर मारूफ़ है तो मंज़दरी है यानी बुज़ुर्गी का काम, हुकूमत का काम। वो 'किया' मुज़ाफ़[4] और मुज़ाफ़ इलैह[5] मक़लूब[6] है। यानी 'कियाए' वो और 'हाकिम' वो। 'कारे किया' मसला यानी 'कियाए कार' व 'मालिक कार'। जहाँ माक़ब्ल[7] इसके राए मसक़ूर[8] लाएँगे वहाँ 'कार' मौनूफ़[9] और 'किया' सिफ़त है। निहायत तहक़ीक़ व अस्ल हक़ीक़त ये है। फ़क़ीर ने जहाँ 'किया' के लफ़्ज़ पर खत्ते मुस्ततील[10] खींचा है, वो अलामते फ़तहा[11] है। दूसरा मरकज़[12] नहीं जो काफ़े फ़ारसी समझा जाये।

दाद का तालिब

—ग़ालिब

---

१. ऐसा 'ये' जिसके नीचे दो नुक़्ते लगाये जाते हैं। २. 'ए' की ध्वनि देने वाला। ३. अभिवादनार्थक ४. जोड़ा गया, सम्बन्धित। ५. जिससे जोड़ा गया, सम्बद्ध। ६. उलटा हुआ ७. पहले। ८. सम्प्रदानकारक की विभक्ति—'रा'। ९. विशेष्य। १०. आयत रेखा। ११. दीर्घ 'आ' का चिह्न। १२. बिन्दु।

मौलवी करामतअली के नाम

फ़क़ीर असदुल्लाह जनाबे मख़दूमी[1] मौलवी करामतअली साहब की ख़िदमत में अर्ज़ करता है कि आपकी तहरीर के देखने से याद आया कि आप यहाँ आये हैं और आप की मलाक़ात से हज़[2] उठाया है। हल[3] मानी ए अशार की ये सूरत है कि हिन्दी के शेर मेरे नहीं, शोअराए लखनऊ में से किसी के हैं, बल्कि अग़लब[4] है कि नासिख़ के हों। अशारे फ़ारसी अलबत्ता मेरे हैं—

ख़ास्त कज़ मा रंजदो तक़रीबे रंजीदन नदाश्त
जुर्मे ग़ैरज़ दोस्त पुर्सीदिम व पुर्सीदन नदाश्त[5]

'दाश्तन' बमानी रखने के हैं, लेकिन अहले ज़बान बमानी 'बायस्तन' भी इस्तेमाल करते हैं। ज़ुहूरी—

गर असीरे ज़ुल्फ़ो काकुल गुफ़्ताबाशम ख़ीश रा
गुफ़्ता बाशम, ईं क़दर बरख़ीश पेचीदन न दाश्त[6]

मेरे शेर में पहले मिस्रे का दाश्त बमानी रखने के और दूसरे मिस्रे का दाश्त बमानी 'बायस्त' है। मफ़हूमे शेर[7] ये कि दोस्त ऐसा हीला ढूँढता था कि उसके ज़रिये से मुझ पर ख़फ़ा हो। चाहता था कि आज़ुर्दा[8]

---

1. मान्यवर। 2. आनन्द। 3. समाधान। 4. सम्भवतः। 5. वह चाहता था कि मुझसे अप्रसन्न हो किन्तु उसे कोई कारण नहीं मिला। मैंने उससे पूछा, प्रतिप्रेमी का क्या अपराध है? मुझे नहीं पूछना चाहिए था, यही उसकी अप्रसन्नता का कारण बन गया। 6. यदि मैं यह प्रश्न करता कि मैं उसकी पट्टियों और अलकों का बन्दी हूँ तो इस तरह आपत्ति में न पड़ता। 7. शेर का तात्पर्य। 8. दुःखी।

हो, मगर सबब नहीं पाता था। क़ज़ारा[1] कुछ दिनों के बाद रक़ीब[2] से माशूक़ को मलाल हुआ। मेरी जो शामत आई, मैंने दोस्त से पूछा कि रक़ीब ने क्या गुनाह किया जो रांद ए दरगाह[3] हुआ? माशूक़ इसी गुस्ताख़ी को बहान ए इताब[4] ठहरा कर आज़ुर्दा हो गया। अब शाइर अफ़सोस करता है और कहता है—हाय—'पुर्सीदन न दाश्त' यानी 'पूछना न चाहिये था।'

देर ख़ान्दी सूए ख़ीश वजूद फ़हमीदम दरेग़
पेशज़ीं पायम ज़ेगर्दे राह पेचीदन न दाश्त

आशिक़ एक उम्र तक मुन्तज़र[5] रहा कि यार मुझको बुलावे, मगर उस अय्यार ने न बुलाया। रफ़्ता रफ़्ता मैं अपने ग़म से ऐसा ज़ार[6] व नातवां[7] हो गया कि ताक़ते रफ़्तार[8] न रही और गर्दे राह[9] से मेरे पांव उलझने लगे। जब उसने ये जाना कि अब न आ सकेगा, तब बुलाया। आशिक़ कहता है कि तूने मेरे बुलाने में देर की और मैं इसकी वजह जल्द समझ गया कि तूने मेरे बुलाने में इस वास्ते देर की कि इससे पहले मैं ऐसा ज़ईफ़ न था कि तू बुलाये और मैं न आऊं। 'दरेग़' को ये न समझा जाये कि 'ज़ूद फ़हमीदन' पर है या पहले से बीमार न होने पर है। दरेग़ है दोस्त की बेवफ़ाई और बेसबब आज़ार[10] देने और अपनी उम्र के तलफ़[11] होने पर—

मन बवफ़ा मुर्दम व रक़ीब बदरज़द
नीमा लबश अंगबीं व नीमा तबरज़द

'अंगबीं' शहद को कहते हैं और 'तबरज़द' मिश्री को कहते हैं, इन दोनों

---

१. संयोगवश। २. प्रतिप्रेमी। ३. घर से निष्कासित। ४. क्रोध का बहाना। ५. प्रतीक्षा करने वाला। ६. क्षीण, दुःखी। ७. निर्बल। ८. चलने फिरने की शक्ति। ९. मार्ग की मिट्टी। १०. कष्ट। ११. नाश।

में कि ये मानिन्दे क़न्द[1] और बताशों के, जल्द टूटने वाली नहीं । जब तक इसको तबर[2] से न तोड़ो मुद्दआ हासिल नहीं होता। 'बदर ज़दन' अगर चे लुग़वी मानी[3] इसके हैं—'बाहर मारना' यानी 'बदर'—'बाहर' और 'ज़दन'—मारना लेकिन रोज़मर्रा मे इसका तर्जुमा है—'निकल जाना'। अब जब ये मालूम हो गया तो यों समझिये कि माशूक़ के होंटों को मीठा कहते हैं और क़न्द और मिश्री और शहद से निस्बत देते हैं और अलबत्ता मक्खी मिठास की आशिक़ है, पस जो मक्खी कि मिश्री पर बैठी वो जब चाहे, बेतकल्लुफ़ उड़ जाये और जो मक्खी कि शहद पर बैठेगी, जब वो उड़ने का क़स्द[4] करेगी, पर व बाल उसके शहद में लिपट जाएँगे और वो मर कर रह जाएगी। पस अब ये कहता है कि मेरे माशूक़ के होंट शीरीनी[5] में मेरे वास्ते शहद हो गये और रक़ीब[6] के वास्ते मिश्री। यानी वो चाट कर, लुत्फ़ उठाकर, सही व सालिम चला गया और मैं फँस कर वहीं मर कर रह गया—

दर नमकश वीं व ऐतमाद नफ़ूज़श
गर व मय अफ़गन्द हम व ज़ख्मे जिगर ज़द

'ज़दन' लाज़मी[7] भी है और मुताद्दी[8] भी। लाज़मी के मानी हिन्दी में 'लग जाना' और मुताद्दी के मानी 'मारना'। यहाँ ज़द लाज़मी है। अब ये समझा चाहिये कि नमक शराब को बिगाड़ता है, यानी अगर शराब में नोन डाल कर एक-आधा दिन धूप में रखें तो उसमें नशा जाता रहता है और वो सिरका हो जाता है और ज़ख्म पर अगर डालें तो वो कटाव करता है और ज़ख्म को बढ़ाता है। मक़सूद शाइर का ये कि तू मेरे माशूक़ के नमक को देख और देख कि उसे नमक के नुफ़ूज़[9] पर कितना भरोसा है। अगर वो

---

१. दानेदार शक्कर के समान । २. कुल्हाड़ा । ३. शाब्दिक अर्थ । ४. निश्चय । ५. मिठास । ६. प्रतिप्रेमी । ७. सकर्मक । ८. अकर्मक । ९. घुलनशीलता ।

इस नमक को शराब में डाल देता है तो वो शराब में नहीं मिलता, ज़ख्मे जिगर[1] पर जा लगता है। यानी अगर बेमहल[2] भी करिश्मा करता है, तो भी वो अपना काम कर रहता है—

कीस्त दरीं खाना कज़ खुतूते शुआई
मेहरे नफ़स रेज़ा हा ब रोज़ने दरज़द

ये खयाल है यानी एक घर में उसका महबूब[3] बैठा हुआ है और उसने जान लिया है कि कौन है, मगर बतरीक़े तजाहुल[4] भोला बनकर पूछता है कि आया इस घर में ऐसा कौन है कि मिह्र[5] यानी आफ़ताब ने अपनी साँस के टुकड़े फ़र्त्ते शौक़[6] से दरवाजे के रोज़न[7] पर फेंक दिये हैं? आफ़ताब कि खुतूते शुआई[8] का रोजनों में पड़ना, इन खुतूते शुआई का यानी सूरज की किरन का बसूरत साँस के टुकड़ों के होना ज़ाहिर है—

दावए ऊ रा बुवद दलीले बेदिही
खन्द ए दन्दाँ नुमा बा हुस्ने गुहरज़द

खन्द ए दन्दाँनुमा उस हँसी को कहते हैं जो तबस्सुम[9] से बढ़कर हो और उसमें दाँत, हँसने वाले के, दिखाई दें। माशूक़ मोतियों के हुस्न पर हँसा, और हँसता कोई उसी चीज पर है जिसको अपने नज़दीक ज़लील समझ लेता है। अस्ल मानी ये कि मेरा माशूक़ मोतियों के हुस्न पर हँसा। गोया उसने ये दावा किया कि मोती कुछ अच्छी चीज नहीं। अब दावे के वास्ते दलील ज़रूर है, तो शाइर ये कहता है कि मेरे माशूक़ के दावए पर दलील बदीही[10] है, यानी हँसने में उसके दाँत नज़र आये। मालूम हुआ कि वो हुस्न, जो [illegible]

१. हृदय का घाव। २. अस्थान। ३. प्रेमी। ४. जान बूझ कर अनजान बनना, उपेक्षा के रूप में। ५. सूर्य। ६. शौक़ की अधिकता। ७. छिद्र। ८. रश्मि। ९. मुस्कान। १०. स्पष्ट रूप से अभिप्राय पाना।

मोती में गुमान करते थे वो लग़ो[1] है। हुस्न ये है कि जो माशूक़ के दांतो में है। पस इसी दलील ने सबको देख लिया और चूंकि बदीही[2] थी, मान लिया—

ग़ैरते परवाना हम बरोज़े मुबारक
नाला चे आतिश बबाल मुर्ग़े सहर ज़द

परवाने की ग़ैरत[3] दिन को भी मुबारक समझनी चाहिए। परवाने की ग़ैरत वो ग़ैरत नहीं कि जो परवाने में हो या परवाने को हो, बल्कि वो ग़ैरत कि जो और को आती हो परवाने पर, यानी रश्क। हासिले मानी ये है कि मैं तो दिनरात इश्क़ मे जलता हूँ, रात को जो परवाना जलता हुआ देखता था, तो, मुझको उस पर रश्क आता था। लो वही ग़ैरत और वही रश्क जो परवाने पर शब[4] को था, अब दिन को भी मुबारक़ हो, यानी मेरे सुबह के नालों[5] से मुर्ग़े सहर[6] के परों में आग लग गई और मैं अपनी मस्ती और बेख़ुदी में ये नहीं जानता कि ये मेरे नाले के सबब से है। मुझको वो रंज और ग़ुस्सा ताज़ा हो गया जो रात को परवाने को देख कर खाता था। मुर्ग़सहर को जलते हुए देख कर जलता हूं कि, हाय, ये कौन है जो मेरी तरह जलता है—

लश्करे होशम बज़ोरे मय न शिकस्ती
ग़म्ज़ ए साक़ी न ख़ुस्त राहे नज़र ज़द

नज़र 'फ़िक्र' को भी कहते हैं और 'निगाह' को भी। यहाँ निगाह के मानी हैं। शाइर कहता है कि मैं ऐसा न था कि शराब की ताब न लाता और शराब पीकर बेहोश हो जाता, मगर क्या करूँ कि पहले ग़म्ज ए साक़ी[7] ने

---

१. निरर्थक। २. स्पष्ट। ३. लज्जा। ४. रात। ५. रुदन। ६. प्रात:कालीन मुर्ग़ा। ७. मधुबाला के हावभाव।

निगाह को ख़ीरा[1] और मग़लूब[2] कर दिया, फिर उस पर शराब पी गई। बेख़ुदी का इस्तेदाद[3] तो बहम पहुँचा ही गया था, नाचार होश जाते रहे—

जाँ बुते नाज़ुक चे जाए दावए ख़ूनस्त
दस्ते बय ओ दामने के ऊ बकमर ज़द

इस शेर का लुत्फ़ विजदानी[4] है, बयानी नहीं। मानी इसके ये हैं कि उस माशूक़ से कि वो बहुत नाज़ुक है ख़ून का दावा किया करें कि उसके वक़्ते अज़्मे क़त्ल[5], दामन गरदान ते वक़्त वो सदमा पहुँचा है कि उसका हात है और वो दामन कि जो उन्होंने गरदान कर कमर पर बांधा है। ऐसा लचका कमर को पहुँचा है कि वो आप अपने दामन पर दादख़्वाह[6] हो रहा है। पस कोई उससे ख़ून का क्या दावा करेगा—

बर्ग तरब साख़्तेम ओ बादा गिरिफ़्तेम
हरचे ज़े तबहे ज़माना बेरदा सरज़द
शाख़ चे बालद गर अर्मुग़ाने गुल आवुर्द
ताक चे नाज़द अगर सलाए समरज़द

शाइर कहता है कि ये रूईदगियाँ बमुक़्तज़ाए तीनते ख़ाक हर तरफ़ ज़ाहिर हुआ करती हैं। मसलन गन्ना। अब कुछ ख़ाके को और हवा को यही मंज़ूर नहीं कि इसका रस निकले और उसका क़न्द बने। ये सादगी की दानशमन्दी है कि उसने इस घास में से ये बात पैदा की। पस इसी तरह अंगूर है और गुलाब के फूल हैं। शाख़े गुल[8] क्या जाने कि फूल में क्या ख़ूबी है और ताक क्या जाने कि मेरे फल में क्या हुनर है? हमने अपने ज़ोरे [illegible] से अंगूर की शराब बनाई और फूलों को हर हर रंग से अपने काम में लिये—

---

१. चकाचौंध। २. स्तब्ध। ३. पात्रता। ४. आनन्दात्मक, अनिर्वचनीय। ५. वध के निश्चय के समय। ६. न्याय पाने के इच्छुक। ८. फूल की शाखा।

काम न बख़्शीदा गुनह चे शुमारी
ग़ालिबे मिस्कीं व इल्तिफ़ात नयरज़द

ये गुस्ताखाना अपने परवरदिगार से कहता है कि जब इस आलम[1] में तूने मेरी दाद न दी और मेरी ख़ाहिशें पूरी न कीं तो बस अब मालूम हुआ कि मैं लायक़ इल्तिफ़ात[2] के न था। पस जब मैं लायक़ तवज्जोह के नहीं तो अब आलमे उक़्बा[3] में मेरे गुनाहों का मुआख़ज़ा[4] क्या ज़रूर है? जब हमारे मतालिब आपने हमको न दिये तो हमारे मआसी[5] का भी शुमार न कीजिए। जाने दीजिए। हममें इल्तिफ़ात की अर्जिश[6] नहीं है। १२।

—ग़ालिब

---

१. संसार। २. दयापात्र, प्रेम के योग्य। ३. यमलोक ४. प्रतिकार। ५. पाप-समूह। ६. प्रतिष्ठा।

मुस्तफ़ाख़ाँ बहादुर 'शेफ़्ता' के नाम

(७ फ़रवरी, १८६५ ई०)

जनाब भाई साहब क़िब्ला,

यक़ीन है कि आप मा'ल ख़ैर[1] अह्ले दारुल रियासत[2] में पहुँच गये हों और ब जमीयते[3] ख़ातिर रोज़ा रखते हों। सिवा पान के कोई ख़याल और मौलवी अलताफ़ हुसैन के फ़िराक़[4] के सिवा कोई वजहे मलाल[5] न हो। ख़ुदा करे तुमको याद आ जाये कि मुफ़्तीजी शिगुफ़्ती को शिगुफ़्त का मसदर मज़ीद[6] मुसल्लम[7] नहीं जानते थे। सिकन्दरनामे में देखा—

> बसे दर शिगुफ़्ती नमूदन तवाफ़
> इनाने सुख़न रा कशद दर गज़ाफ़[8]

सहबाई[9] शफ़क़ सुबह को ग़लत और इस रंग को मख़सूस[10] ब शाम जानता था। मुहम्मद सैयद अशरफ़ माज़न्दरानी के कलाम में नज़र पड़ा—

> हमचू सुबह शफ़क़ आलूदा करदश नुमाँ सफ़ेद[11]

अब जो फ़क़ीर का ये मतला मशहूर हुआ—

---

१. सकुशल। २. राजधानी। ३. समूह के साथ। ४. वियोग। ५. शोक का कारण ६. जिस पर कुछ बढ़ाया गया हो। ७. प्रामाणिक। ८. व्यर्थ घूमना अपनी कविता को नष्ट करना है। ९. मौलवी इमामबख़्श सहबाई ग़ालिब का समकालीन, गोरों ने इसे फाँसी पर चढ़ाया। १०. विशेष। ११. उसकी आकृति माशूक़-आलिंगन के समान होता और लाल है।

पहचानने लगा, फ़ारसी के ग़वामिज़[1] जानने लगा। बाद अपनी तकमील के तलामिज़ा[2] की तहज़ीब का ख़याल आया। 'क़ात ए बुरहान' का लिखना क्या था गोया बासी कढ़ी में उबाल आया। लिखना क्या था कि सहामे मलामत[3] का हदफ़[4] हुआ। है है ये तुनकमाया[5] मुआरिज़े अकाबिरे[6] सलफ़[7] हुआ। एक साहब फ़रमाते हैं कि 'क़ात ए बुरहान' की तरकीब ग़लत है, अर्ज़ करता हूँ कि हज़रत 'बुरहान क़ातै' व 'क़ात ए बुरहान' एक नमत[8] है। "बुरहान क़ातै" ने क्या लट्ठा नैनों नैनसुख क़ता[9] किया है जो आपने उसको 'क़ातै'[10] लक़ब[11] दिया है? "बुरहान" जब तक ग़ैर की किसी बुरहान[12] को क़ता न करेगी, क्योंकर "बुरहाने ातै" नाम पायेगी? "बुरहाने क़ातै" की सेहत[13] में जितनी तक़रीर कीजिएगा वो "क़ात ए बुरहान" की सेहत के सुबूत के काम आएगी। 'क़तए तारीख़' का क्या कहना! गोया ये किताब माशूक़ और क़ता उसका गहना है। जनाब नवाब साहब का नियाज़मन्द और बन्द ए फ़र्मांबरदार हूँ। बाद अर्ज़े सलाम, शेर के पसन्द आने का शुक्रगुज़ार हूँ। आपके इल्म व फ़ज़्ल[14] व फ़हम व इदराक[15] की जो तारीफ़ की जाये वो हक़[16] है लेकिन मेरे शेर की तारीफ़ सिर्फ़ ख़रीददारी ए दुकान बे रौनक़ है। १२।

---

१. भावार्थ, सूक्ष्मार्थ २. शिष्य। ३. टोंट-टपट के तीर। ४. लक्ष्य। ५. अकिंचन। ६. असाध्य-रोग ७. जीर्ण। ८. शैली। ९. काट-छाँट १०. काट करने वाला। ११. विरुद। १२. युक्ति। १३. शुद्धि। १४. ज्ञान और कृपा। १५. सूझ-बूझ। १६. यथार्थ।

अब्दुलग़फ़ूरख़ाँ 'निसाख़' के नाम

जनाव मौलवी साहव क़िब्ला,

ये दरवेशे गोशानशीं[1] जो मौसूम[2] ब असदुल्लाह और मुतख़ल्लिस[3] ब ग़ालिब है, मुकर्रमते हाल[4] का शाकिर[5] और आइन्दा अफ़ज़ाइशे इनायत[6] का तालिब[7] है। 'दफ़्तरे बेमिसाल' को अतय ए कुबरा[8] और मुहब्बते उज़्मा[9] समझ कर याद आवरी का एहसान माना। पहले इस क़द्र अफ़जाई[10] का शुक्र करता हूँ कि हज़रत ने इस हेचमीरज़ हेचमदाँ[11] को क़ाबिले ख़िताव[12] व लायक़े अता ए किताब[13] जाना। मैं दरोग़गो[14] नहीं, ख़ुशामद मेरी ख़ू[15] नहीं। दीवान फ़ैजे उनवाँ इस्मे बा मुसम्मा[16] है। 'दफ़्तरे बेमिसाल' इसका नाम बजा[17] है। अल्फ़ाज़ मतीन, माना बलन्द मज़मून उम्दा, बन्दिश दिल पसन्द। हम फ़क़ीर लोग एला ए कलमतुलहक़[18] में बेबाक व गुस्ताख़ हैं। शेख़ इमामबख़्श तर्ज़ जदीद[19] के मूजिद[20] और पुरानी नाहमवार[21] रविशों के नासिख़[22] थे। आप उनसे बढ़ कर बसीग़ ए मुबालग़ा[23] बेमुबालग़ा[24]

---

१. एकान्तसेवी, वैरागी। २. संज्ञान्वित। ३. काव्यनामवाला। ४. वर्तमान दया। ५. कृतज्ञ। ६. भावीवृद्धिशील कृपा। ७. इच्छुक। ८. महान् दान। ९. अत्यधिक प्रेम। १०. आदर-सम्मान। ११. तुच्छ। १२. सम्बोधन के योग्य। १३. पुस्तक भेंट के योग्य। १४. असत्यभाषी। १५. स्वभाव। १६. नामधेय। १७. उचित। १८. सच्चाई को उठाने में। १९. नयी शैली। २०. आविष्कारक। २१. दुरूह। २२. व्याख्याता। २३. अत्युक्ति अलंकार के विषय में। २४. यथार्थ में।

नस्साख़[1] हैं। तुम दाना ए रमूज़े उर्दू ज़बान[2] हो—सरमाय ए नाज़िशे कलमरवे हिन्दुस्तान[3] हो।

ख़ाकसार ने इब्तदा ए सिने तमीज़[4] में उर्दू ज़बान में सुख़नगुज़ारी[5] की है, फिर औसत उम्र[6] में बादशाहे देहली का नौकर होकर चन्द रोज़ उसी रविश पर ख़ामा फ़रसाई की है[7]। नज़्म व नस्र फ़ारसी का आशिक़ और माइल[8] हूँ। हिन्दुस्तान में रहता हूँ मगर तेग़े अस्फ़हानी[9] का घायल हूँ। जहाँ तक ज़ोर चल सका, फ़ारसी ज़बान में बहुत कुछ बका, अब न फ़ारसी का फ़िक्र, न उर्दू का ज़िक्र, न दुनिया में तवक़्क़ो, न उक़्बा[10] की उम्मीद। मैं हूँ और अन्दोहे नाकामी ए जावीद[11] जैसा कि ख़ुद एक क़सीद ए नात[12] की तशबीब[13] में कहता हूँ—

> चश्मम कुशूदा अन्द ब किरदार हाए मन
> ज़े आइन्दा ना उमीदम व अज़ रफ़्ता शर्मसार[14]

एक कम सत्तर बरस दुनिया में रहा, अब और कहाँ तक रहूँगा? एक उर्दू का दीवान हज़ार-बारह सौ बैत[15] का, एक फ़ारसी का दीवान[16] दस हज़ार कई सौ बैत का, तीन रिसाले नस्र[17] के, ये पाँच नुस्ख़े मुरत्तब हो गये,

---

१. व्याख्याता। २. उर्दू भाषा के रहस्य को जानने वाले। ३. भारत के लिए गर्व करने योग्य सम्पत्ति। ४. वयावस्था के प्रारम्भ में। ५. गद्य-रचना। ६. आयु का मध्यभाग। ७. लेखनी चलाई है। ८. आसक्त। ९. इस्फ़हान (ईरान का एक नगर) की तलवार। १०. परलोक। ११. [illegible] स्थायी शोक। १२. हज़रत मुहम्मद की प्रशंसा में लिखी गई कविता। १३. उपमा। १४. लोग मेरे आचरण से मुझे नालायक कह रहे हैं। मैं भविष्य के लिए निराश हूँ और अपने पिछले आचरण पर लज्जित हूँ। १५. एक शेर। दो चरण। १६. कविता-संग्रह। १७. गद्य।

अब्दुलग़फ़ूर 'सुरूर' के नाम

अब और क्या कहूँगा ? मक़्ता'[1] का सिला[2] न मिला, ग़ज़ल की दाद न पाई, हर्ज़ागोई[3] में सारी उम्र गँवाई । क्योंकि शाइर ग़ालिबी अलैहिर्रहमा[4]—

बस्त अज़ गुफ़्तन ज़ुबाँ दहान मे गोई
ज़ख़्म बर चेहरा बूदे बेह शुद याद[5]

सच तो यों है कि कुव्वते नातिक़ा[6] पर भी ज़ोफ़[7] और ज़ेहन में भी ज़ोर न रहा, तबीयत में भी मज़ा, सच में भी सौर न रहा । पचास-पचपन बरस की मश्क़[8] का मलिका[9] कुछ बाक़ी रह गया है । इस सबब से फ़न्ने कलाम[10] में यकसर तह कर देता हूँ । हमारा पर भी नक़्शा इस क़दर है कि मुहाविरे गुफ़्तार[11] में मुताबिक़े सवाल[12] जवाब देता हूँ । रोज़ व शब[13] में फ़िक्र रहती है कि देखिये कहाँ पहुँच जाता है और मैं कहाँ-कहाँ गुनहगार बन्दा नवाज़िश करता जाता है । इसका मैं मे इल्तिमास[14] है कि आप जो मुलाक़ात[15] के बानी[16] और मुझको इर्सालनामा की[17] तहरीक के बाइस हुए हैं, अब तक भी ऐसा कहूँ नामा व पयाम[18] से याद[19] और बाद मेरे मरने के दुआ-ए-मग़फ़िरत[20] से याद फ़रमाते रहियेगा । वस्सलाम बिलख़ैर वल इकराम ।

---

1. रचना । 2. प्रतिफल । 3. बक-बक । 4. भगवान की दया उन पर हो । 5. मैंने बोलने से अपने मुँह को बन्द कर लिया है। ऐसा प्रतीत होता है कि मुँह मेरी आकृति पर एक घाव था जो अच्छा हो गया है । 6. वाक्शक्ति । 7. क्षीणता । 8. अभ्यास । 9. अभ्यासजन्य योग्यता । 10. काव्यकला । 11. वार्तालाप के समय । 12. प्रश्न के अनुसार । 13. दिन-रात । 14. प्रार्थना । 15. भेंट । 16. प्रारम्भकर्ता । 17. पत्र भेजने की । 18. पत्र और सन्देश । 19. उत्तर । 20. ईश्वर से क्षमा मिलने की प्रार्थना ।

मर्दानअलीख़ाँ 'राना' के नाम

१

खाँ साहब आलीशान मर्दानअलीखाँ साहब को फ़क़ीर ग़ालिब का सलाम। नज़्म व नस्र देखकर दिल बहुत ख़ुश हुआ। आज इस फ़न में तुम यकता हो, ख़ुदा तुमको सलामत रखे। भाई, 'जफ़ा' के मुअन्नस[1] होने में अह्ले देहली[2] व लखनऊ को बाहम इत्तिफ़ाक़ है, कभी कोई न कहेगा कि जफ़ा किया, हाँ बंगाले में जहाँ बोलते हैं कि 'हथिनी आया' अगर जफ़ा को मुज़क्कर[3] कहें तो कहें, वर्ना सितम व ज़ुल्म व बेदाद मुज़क्कर और जफ़ा मुअन्नस है। [illegible] [illegible][4] वस्सलाम वल इक्राम। १२।

२

खाँ साहब मुशफ़िक़ आलीशान को मेरा सलाम। कल तुम्हारा इनायतनामा पहुँचा। रामपूर का लिफ़ाफ़ा आज रामपूर को रवाना हुआ। काग़ज़े ग़ज़ल मैंने देख लिया, कहीं इस्लाह की हाजत[5] न थी, 'नाला दर' ' ' 'नाल-ए दिल' बना दिया।

नवाब साहब उर्दू का तज़्किरा[6] लिखते हैं, फ़ारसी ग़ज़ल तुमने बेफ़ायदा लिखी। देखो साहब, तुमने अपने मस्कन[7] का पता लिखा, सो मैंने दूसरे दिन तुम्हारे ख़त का जवाब रवाना किया। मुंशी नवलकिशोर साहब यहाँ आये थे। मुझसे मिले, बहुत ख़ूबसूरत और ख़ुशसीरत[8] सआदतमन्द और माक़ूल पसन्द आदमी हैं। तुम्हारे मद्दाह[9] और मैं उनका सनागो[10]। ख़ुदा तुमको और उनको सलामत रखे।

---

१. स्त्रीलिंग। २. दिल्ली-निवासी। ३. पुल्लिंग। ४. [illegible]। ५. आवश्यकता। ६. परिचय। ७. घर। ८. सुस्वभाव। ९. प्रशंसक। १०. प्रशंसा करने वाला।

हकीम ग़ुलाम मुर्त्तज़ाख़ाँ के नाम

(११ मार्च, १८६५ ई०)

ख़ाँ साहब जमीलुल मनाक़िब[1] हकीम ग़ुलाम मुर्तज़ाख़ाँ साहब, दर्दमन्द का सलाम। ख़ूब याद कीजिये कि मैंने कभी किसी अम्र में आपको तकलीफ़ नहीं दी। अब एक तरह की इनायत का सायल[2] हूँ। हामिल हाज़ा उल मक्तूब[3] पंडित जैनरायन मेरा ये ख़त लेकर हाज़िर होते हैं। इनके बुज़ुर्ग नवाब अहमदबख़्शख़ाँ की सरकार में मनासिबे आलिया[4] और ओहदए हाए जलीला[5] रखते थे। अब मौक़ा ये आया है कि जुस्तजूए नौकरी[6] में पटियाले आते हैं। आपको मेरे सर की क़सम, जहाँ तक हो सके सई[7] करके इनको मुआफ़िक़[8] इनकी इज़्ज़त के कोई मन्सब, कोई ओहदा दिलवा दोगे तो मैं ये जानूंगा कि तुमने मुझे नौकर रखवा दिया है। बड़ा एहसानमन्द हूँगा।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

---

१. यशस्वी। २. प्रार्थी। ३. पत्र-वाहक। ४. उच्चाधिकार। ५. उच्च-पद। ६. नौकरी की खोज। ७. प्रयत्न। ८. अनुकूल।

हकीम ग़ुलाम रज़ाख़ाँ के नाम

(१८६५ ई०)

नूरे दीदा[1] व सुरूरे दिल[2] व राहते जान[3], इक़बाल निशान हकीम ग़ुलाम रज़ाख़ाँ को ग़ालिब नीमजाँ[4] की दुआ पहुँचे। तुमसे रुख़सत होकर और तुम्हें ख़ुदा को सौंपकर रवान ए रामपूर हुआ। मौसम अच्छा था। गरमी गुज़र गई थी, जाड़ा अभी चमका न था। आलमे एतिदाले आब व हवा[5], साया[6] व सरचश्मा[7] जा बजा। आराम से रामपूर पहुँचा। नवाब साहबे हाल[8] बमुक़्तज़ा ए अले बलदो सिर्रुनले अबी[9] हुस्ने अख़लाक़[10] में नवाब फ़िरदौस आरामगाह[11] के बराबर बल्कि बाज़शेवा[12] व रविश में उनसे बेहतर है। व मुज़रिदे[13] मसनदनशीनी[14] के ग़ल्ले का महसूल यक क़लम[15] माफ़। अलीबख़्श ख़ानसामा को बीस हज़ार रुपये बाबत मतालिबे सरकारी बख़्श दिया। मुफ़स्सल[16] हालात बज़्ल व नवाल[17] इन्दुल मुलाक़ात[18] ज़बानी कहूँगा।

सुनो साहब, मैं फ़क़ीर आज़ादा केश[19] हूँ, दुनियादार नहीं, मक्कार नहीं, ख़ुशामद मेरा शिआर[20] नहीं। जिसमें जो सिफ़ात[21] देखता हूँ, वो बयान करता

---

१. नेत्र-ज्योति। २. हृदय के हर्ष। ३. आत्मा की शान्ति। ४. अर्धमृत। ५. जलवायु समशीतोष्ण। ६. छाया। ७. झरना। ८. वर्तमान नवाब। ९. पुत्र अपने पिता की अनुकृति होता है। १०. शिष्टाचार। ११. स्वर्गवासी। १२. ढंग। १३. साथ ही। १४. राज्यारोहण। १५. नितान्त। १६. विस्मृत। १७. मुक्तहस्तता और दानशीलता। १८. भेंट के समय। १९. स्वतंत्र आचरण करने वाला। २०. स्वभाव। २१. विशेषताएँ।

हूँ। नवाब साहब तो घर बैठे मुझे सौ रुपये महीना देते हैं, तुम मुझे क्या देते हो, जो तुम्हारे बाब में मेरा अक़ीदा ये है कि अगर बमसल[1] मेरा कोई सुल्बी बेटा[2] ऐसा होता जैसे तुम तो मैं उसको अपना फ़ख्र व शरफ़[3] जानता। इल्म व अक़्ल व सिद्क़[4] व हिल्म[5] के जामे[6]। तवरों[7] व जुहद[8] व तक़्वा[9] के हावी। इल्मे अख़्लाक़[10] में हुकमाए रूहानी[11] ने सआदत[12] के जो मदारिज[13] लिखे हैं, वो सब तुममें पाये जाते हैं। परवरदिगार[14] तुमको उम्रे तबई[15] अता करे और दौलत व इक़बाल शुमार से ज़्यादा दे। इन्शा अल्लाह कि हमचुनीं ख़ाहद बूद[16]।

---

१. लोकोक्ति के अनुसार। २. औरस-पुत्र। ३. बड़प्पन। ४. सच्चाई। ५. गांभीर्य। ६. संग्राहक। ७. संयम। ८. इन्द्रिय। ९. परहेजगारी। १०. शिष्टाचार का ज्ञान। ११. अध्यात्मशास्त्र के जानने वाले विद्वान् १२. शुभकारिता। १३. दर्जे। १४. परमात्मा। १५. स्वाभाविक आयु। १६. ईश्वर ने चाहा तो ऐसा ही होगा।

प्यारेलाल 'आशोब' के नाम

१

(३ अप्रैल, १८६६ ई०)

शफ़ीक़े मुकर्रम बाबू प्यारेलाल साहब को सलाम, कल रुक़्क़ा मय मसविदा बाबू चन्दूलाल साहब के पास पहुँच गया होगा। यक़ीन है कि आपकी नजर से गुज़रा होगा और आप मसविदा करने पर मुतवज्जेह[1] हुए होंगे। जल्दी नहीं। आप बग़ौर अच्छी तरह ताम्मुल[2] से लिखिये। जब साफ़ हो जाएगा, मुझे दीजियेगा। मैं अपनी मुहर करके डाक में भिजवा दूँगा। अभी डिप्टी-कमिश्नर बहादुर के पास से आया हूँ, वो कहते थे कि कल लार्ड साहब आयेंगे और परसों शिमले को तशरीफ़ ले जाएँगे। बतरीक़े इत्तिला आपको लिखा है, ये मंजूर नहीं कि अर्ज़ी आज तैयार हो जाये और कल मैं आप दूँ। डाक में इर्साल करना मंजूर है।

राक़िम[3]

—असदुल्लाह् खाँ 'ग़ालिब'

२

क्यों साहब हमसे ऐसे ख़फ़ा हो गये कि मिलना भी छोड़ा? ख़ैर मेरी तक़सीर[4] माफ़ करो और अगर ऐसा ही गुनाहे अज़ीम[5] है कि कभी न बख़्शा जाएगा तो वो गुनाह मेरा मुझ पर जाहिर कर दो ताकि अपने क़ुसूर पर इत्तिला पाऊँ। बरखुर्दार[6] हीरासिंघ तुम्हारे पास पहुँचता है और ये तुम्हारा दस्तगिरफ़्ता[7] है। रुहतक में तुमने उसे नौकर रखवा दिया था। ख़ैर, वहाँ

---

१. ध्यान देने वाला। २. सोच-विचार। ३. लिखने वाला। ४. अपराध। ५. महापातक। ६. सुपुत्र। ७. वन्दी।

की सूरत बिगड़ गई। अब ये ग़रीब बहुत तबाह है और उसके माश में सख़्त दिलतंग। तुम्हीं दस्तगीरी[1] करो तो ये संभले, वर्ना इसका नक़्शे हस्ती[2] सफ़हे दह्र[3] से मिट जाएगा।

इनायत का तालिब
—ग़ालिब

३

एक अलिफ़ बेश नहीं सैक़ले आईना हनोज़
चाक करता हूँ मैं जब से कि गिरीबाँ समझा

पहले ये समझना चाहिये कि 'आईना' इबारत फ़ौलाद के आईने से है वर्ना हलबी[5] आईनों में जौहर कहाँ और उनको सैक़ल कौन करता है। फ़ौलाद की जिस चीज़ को सैक़ल करोगे बेशुबा पहले एक लकीर पड़ेगी उसको 'अलिफ़े सैक़ल' कहते हैं। जब ये मुक़द्दमा मालूम हो गया तो अब इस मफ़हूम[6] को समझिये—

चाक करता हूँ मैं जब से कि गिरीबाँ समझा

यानी इब्तदा ए सिने तमीज़[7] से मश्क़े जुनूँ[8] है अब तक कमालेफ़न[9] हासिल नहीं हुआ। आईना तमाम साफ़ नहीं हो गया। बस वही एक लकीर सैक़ल की जो है, सो है। चाक की सूरत अलिफ़ की-सी होती है और चाके जेब आसारे जुनूँ[10] ही से है।

—ग़ालिब

---

१. आय का विषय। २. सहायता। ३. अस्तित्व। ४. युग का पृष्ठ। ५. हलब से आया हुआ। हलब दर्पण के लिए प्रसिद्ध था। ६. तात्पर्य। ७. वयस्कता के आरम्भ में। ८. पागलपन। ९. कला की पूर्णता। १०. पागलपन के लक्षण।

४

(३० जनवरी, १८६८ ई०)

फ़र्ज़न्दे अर्जमन्द इक़बाल बुलन्द बाबू मास्टर प्यारेलाल को ग़ालिब नातवाँ[1] नीमजाँ की दुआ पहुँचे। लाहौर पहुँचकर तुमने मुझे खत न भेजा। उसकी जितनी शिकायत करूँ बजा है। तुम नहीं जानते कि मुझे तुमसे कितनी मुहब्बत है। मैं तुम्हारा आशिक़ हूँ और क्योंकर न आशिक हूँ ? सूरत के तुम अच्छे, सीरत[2] के तुम अच्छे। शेवा व रविश[3] के तुम अच्छे। खालिक़[4] ने खूबियाँ तुममें कूट-कूट कर भर दी हैं। अगर मेरा सुलबी फ़र्जन्द[5] ऐसा होता तो मैं उसको अपना फ़ख्रे ख़ानदान[6] समझता और तुम जिस क़ौम और जिस खानदान में हो उस क़ौम और उस खानदान के ज़रिय ए इफ़्तिखार[7] हो। ख़ुदा तुमको सलामत रखे और उम्र व दौलत व इक़बाल व जाह[8] व जलाल[9] अता करे।

मियाँ तुमको याद है कि मैंने तुमको साबिक़ इससे नूरे चश्म मिर्ज़ा यूसुफ़अलीखाँ के बाब में कुछ लिखा है। मेरे इख्तिलाले हवास[10] का हाल तुम जानते हो। खुदा जाने उस वक़्त किस खयाल में था और मैं क्या लिख गया। जो कुछ लिखा वो सहलअंगारी[11] थी, अब जो कुछ लिखता हूँ, ये रास्त-गुफ़्तारी[12] है। मुख्तसर ये, यानी, मिर्ज़ा यूसुफ़अलीखाँ 'अजीज़' बड़े आली

---

१. निर्बल। २. स्वभाव। ३. रंग-ढंग। ४. सृष्टिकर्त्ता। ५. औरस-पुत्र। ६. कुल-गौरव। ७. गौरव का कारण। ८. प्रतिष्ठा। ९. प्रताप। १०. मति-भ्रम। ११. सुस्ती। १२. वार्त्तालाप।

ख़ानदान और बड़े बुज़ुर्ग क़ौम के हैं। शाइर भी बहुत अच्छे हैं, शेर ख़ूब कहते हैं। साहबे इस्तेदाद[1] हैं। इल्म उनका अच्छा है। ये भी गोया अहले इल्म व फ़ज़ल[2] में से हैं और तरक़्क़ी के क़ाबिल हैं। नूरेचश्म मौलवी नसीरुद्दीन को मेरी दुआ कहना।

मर्क़ूमा ३० जनवरी १८६८ ई०।

१. विद्वान् २. ज्ञानी और प्रतिष्ठित।

गोबिन्दसहाय के नाम

१

(२६ दिसम्बर, १८५६ ई०)

बरखुर्दार,

बहुत दिन हुए मैंने तुमको ख़त लिखा है। अब इस ख़त का जवाब जरूर लिखो और जल्द लिखो। दो सवाल हैं तुमसे—एक तो ये कि यहाँ मशहूर है कि नवाब गवर्नर जनरल बहादुर इलाहाबाद से कानपुर आ गये, कोई कहता है आवेंगे। इसका हाल जो कुछ तुमको मालूम हुआ, लिखो। दूसरा सवाल ये है कि दो क़िस्म की अँग्रेजी शराब, एक तो कास्टेलन और एक ओल्डटाम। मैं हमेशा पिया करता था और ये दोनों क़िस्म बीस रुपये, हद चौबीस रुपये दर्जन आती थी। अब यहाँ पहले तो नज़र नहीं आती थी, अब पचास रुपये और साठ रुपये दर्जन आती है। वहाँ तुम दरियाफ़्त करो कि उसका निर्ख़ क्या है और ये भी मालूम करो कि बतरीक़े डाक पहुँच सकती है या नहीं? ये दोनों अम्र दरियाफ़्त करके मुझको जल्द लिखो। अगर ब क़ीमते मुनासिब[1] हाथ आये और उसका भेजना मुमकिन हो तो यहाँ से रुपये की हुंडवी भेज दूँ और तुम खरीद कर बैलगाड़ी की डाक पर रवाना कर दो। जाड़ों में मुझको बहुत तकलीफ़ है, और ये गुड़-छाल की शराब मैं नहीं पीता, ये मुझको मज़र्रत[2] करती है और मुझे उससे नफ़रत है। जरूरी जवाब तलब।

चहारशम्बा, २९ दिसम्बर १८५९ ई०।

—अज़-ग़ालिब जाँ बलब[3]

---

१. उचित मूल्य से। २. हानि। ३. जिसके प्राण होठों पर आ गये हों।

२

(जनवरी, १८६५ ई०)

साहब, तुमको दुआ कहता हूँ और दुआ भी देता हूँ। शराब की क़ीमत के दो ख़त भेजे। भाई, कास्टेलन और ओल्डटाम दोनों चौबीस रुपये दर्जन हमेशा लिया करता था, अब यहाँ मँहगी मिलती है। मैंने तुमसे पूछा, जब वहाँ भी इस क़ीमत की मिलती है तो मेरा मक़दूर नहीं। मैं समझा था कि शायद वहाँ अरज़ाँ[1] हो। ख़ैर इसको जाने दो। रोटी ही मिले जाये तो ग़नीमत है। महीने भर की रोटी का मोल एक दर्जन की क़ीमत है।

---

१. सस्ती।

व सलाह व सवाबदीद फ़रीक़ैन[1] होने लगे। तबीअतें थी दर्राक[2] फ़ारसी व अरबी को बाहम[3] रब्त देकर एक उर्दू पैदा किया। सुभान अल्लाह् वो ज़बान निकली कि न निरी फ़ारसी में वो खज़ाना, न निरी अरबी में वो ज़ौक़। ज़बाने फ़ारसी के क़वाइद के कुतुब[4] खाकिस्तर[5] हो गये थे। इसमें तुर्रा ये कि अरबी के कवाइद के बड़े बड़े जलीलुलक़द्र[6] रिसाले मुरत्तब हो गये थे और होते जाते थे। बेचारा फ़ारसी ज़बान ग़रीबुल वतन[7] बे सरो सामान[8]। न उसकी कोई फ़रहंग[9], ना उसके क़वानीन का कोई रिसाला, न इल्मे पारसी का कोई आलिम बाक़ी। दो-चार हज़ार लुग़त[10] व इस्म[11] व मसल[12] ज़बानज़द[13] अहले अस्र[14] होंगे। फ़ारसी का हर्फ़ कहाँ? फ़ारसी का नुमू[15] कहाँ। फ़ारसी ज़बान आराब[16] की लौंडी, जो चाहा नाम रख दिया। ज़बउन्नहार[17] कहकर पुकारा, शम्सुन्नहार[18] कह कर याद किया। ओ लौंडी छोकरी कह कर बुला लिया। सो भी जो अकाबिरे फ़रीक़ैन[19] मूजिदे ज़बान उर्दू[20] हुए थे, वो तस्मीय ए क़वाइदे फ़ारसी[21] की तरफ़ मुतवज्जेह नहीं हुए। ८००–९०० हिजरी में हवसनाक[22] लोग फ़ारसी के फ़रहंग[23] लिखने पर मुतवज्जेह हुए। न एक, न दो, बल्कि हज़ार-दर हज़ार फ़रहंगे फ़राहम हो गईं। यहाँ तक कि क़तील नौमुस्लिम लखनवी और ग़यासुद्दीन मुल्ला ए मकतबदार[24] रामपूरी और कोई रोशनअली जौनपूरी और कहाँ तक कहूँ

---

१. दोनों पक्षों के परामर्श के अनुसार। २. कुशाग्र (बुद्धि)। ३. परस्पर। ४. किताबें। ५. भस्म। ६. बड़ी प्रतिष्ठा वाले। ७. प्रवासी। ८. अकिंचन। ९. शब्द-कोश। १०. शब्द। ११. नाम। १२. लोकोक्ति। १३. प्रसिद्ध। १४. समकालीन। १५. विकास। १६. अरब के लोग। १७. सवेरे का प्रकाश। १८. प्रभात का सूर्य। १९. दोनों ओर के महत्प्रतिष्ठ (लेखक)। २०. उर्दू-भाषा के आविष्कारक। २१. फ़ारसी व्याकरण के आरम्भकर्त्ता। २२. लालची। २३. कोश। २४. चटसाल का अध्यापक।

कौन-कौन, जिसके जी में आई वो मुतसद्दी ए तहरीरे क़वाइदे इंशा[1] हो गया। मैं उन सब को या उनमें से फ़लाँ चीमां को अपना मुता[2] क्योंकर जानूं और किस दलील से उनके तहक्कुम[3] को मानूं।

पारसीया ने साबिक़[4], जो जानते न थे कि फ़ाइल[5] किसको कहते हैं और जमा[6] किस मर्ज़ का नाम है, अस्त का सीगा[7] कौन जानवर है और इस्मे जामिद[8] किस क़िस्म के पत्थर को कहते हैं, उन्होंने कभी न कहा होगा दाना व बीना सीग़ ए इस्मे फ़ाइल[9] और नालां व गिर्यां सीग़ ए फ़ाइल या हालिया है। एक जमात ने कह दिया है कि अलिफ़-नून इफ़ादा मानी ए फ़ाइलीयत[10] करता है। एक सफ़[11] पुकार उठी कि अलिफ़-नून हालिया है। ख़ुदा जाने अहले पारस अपनी ज़बान में सीग़ ए अस्त को क्या कहते होंगे और अलिफ़ फ़ाइल का उनकी लिसान[12] में कौन होगा। आख़िर ये फ़न उमूरे दीनी[13] में से तो नहीं है कि जो इमामे आज़म[14] के क़ौल को न माने वो मुर्तद[15] है। क़ुव्वते क़यास का माद्दा औरों में था, हमको मब्दए फ़य्याज़[16] से ये क़ुव्वत अता नहीं हुई और फिर अलिफ़-नून हालिया के वुजूद के ऐतराफ़[17] में, मैं ही मुनफ़रिद[18] नहीं हूँ, बक़ौल तुम्हारे और अशख़ास भी हैं। सवाल इस क़दर है कि अलिफ़-नून हालिया मौजूद है या नहीं। साइल[19] का जवाब वहीं

---

१. भाषा के व्याकरण लिखने वाला लिपिक। २. जिसके आदेश का पालन किया जाये। ३. हुक्म जताना। ४. पूर्ववर्त्ती पारसी। ५. कर्त्ता (व्याकरण)। ६. बहुवचन। ७. कर्मकारक। ८. ऐसी संज्ञा जो किसी अन्य शब्द से न बनी हो। ९. कर्त्ताकारक। १०. कर्तृत्व के अर्थ में वृद्धि करने वाला। ११. पंक्ति। १२. भाषा। १३. धार्मिक विषय। १४. इमाम अबू ख़लीफ़ा का विरद। १५. परित्यक्त, इस्लाम धर्म से च्युत। १६. उदार ईश्वर। १७. स्वीकार करना। १८. एकाकी। १९. प्रार्थी।

व सलाह व सवाबदीद फ़रीक़ैन[1] होने लगे। तबीअतें थीं दर्राक[2] फ़ारसी व अरबी को बाहम[3] रब्त देकर एक उर्दू पैदा किया। सुभान अल्लाह् वो ज़बान निकली कि न निरी फ़ारसी में वो खज़ाना, न निरी अरबी में वो ज़ौक़। ज़बाने फ़ारसी के क़वाइद के कुतुब[4] खाकिस्तर[5] हो गये थे। इसमें तुर्रा ये कि अरबी के कवाइद के बड़े बड़े जलीलुलक़द्र[6] रिसाले मुरत्तब हो गये थे और होते जाते थे। बेचारा फ़ारसी ज़बान ग़रीबुल वतन[7] बे सरो सामान[8]। न उसकी कोई फ़रहंग[9], ना उसके क़वानीन का कोई रिसाला, न इल्मे पारसी का कोई आलिम बाक़ी। दो-चार हज़ार लुग़त[10] व इस्म[11] व मसल[12] ज़बानज़द[13] अहले अस्र[14] होंगे। फ़ारसी का हर्फ़ कहाँ? फ़ारसी का नुमू[15] कहाँ। फ़ारसी ज़बान आराब[16] की लौंडी, जो चाहा नाम रख दिया। ज़वउन्नहार[17] कहकर पुकारा, शम्सुन्नहार[18] कह कर याद किया। ओ लौंडी छोकरी कह कर बुला लिया। सो भी जो अकाबिरे फ़रीक़ैन[19] मूजिदे ज़बान उर्दू[20] हुए थे, वो तस्मीय ए क़वाइदे फ़ारसी[21] की तरफ़ मुतवज्जेह नहीं हुए। ८००–९०० हिजरी में हवसनाक[22] लोग फ़ारसी के फ़रहंग[23] लिखने पर मतवज्जेह हुए। न एक, न दो, बल्कि हज़ार-दर हज़ार फ़रहंगे फ़राहम हो गईं। यहाँ तक कि क़तील नौमुस्लिम लखनवी और ग़यासुद्दीन मुल्ला ए मकतबदार[24] रामपूरी और कोई रोशनअली जौनपूरी और कहाँ तक कहूँ

---

१. दोनों पक्षों के परामर्श के अनुसार। २. कुशाग्र (बुद्धि)। ३. परस्पर। ४. किताबें। ५. भस्म। ६. बड़ी प्रतिष्ठा वाले। ७. प्रवासी। ८. अकिंचन। ९. शब्द-कोश। १०. शब्द। ११. नाम। १२. लोकोक्ति। १३. प्रसिद्ध। १४. समकालीन। १५. विकास। १६. अरब के लोग। १७. सवेरे का प्रकाश। १८. प्रभात का सूर्य। १९. दोनों ओर के महत्प्रतिष्ठ (लेखक)। २०. उर्दू-भापा के आविष्कारक। २१. फ़ारसी व्याकरण के आरम्भकर्त्ता। २२. लालची। २३. कोश। २४. चटसाल का अध्यापक।

कौन-कौन, जिसके जी में आई वो मुतसद्दी ए तहरीरे क़वाइदे इंशा[1] हो गया। मैं उन सब को या उनमें से फ़लाँ धीमाँ को अपना मुता[2] क्योंकर जानूँ और किस दलील से उनके तहक्कुम[3] को मानूँ।

पारसीया ने साबिक़[4], जो जानते न थे कि फ़ाइल[5] किसको कहते हैं और जमा[6] किस मर्ज़ का नाम है, अम्र का सीग़ा[7] कौन जानवर है और इस्मे जामिद[8] किस क़िस्म के पत्थर को कहते हैं, उन्होंने कभी न कहा होगा दाना व बीना सीग़ ए इस्मे फ़ाइल[9] और नालाँ व गिर्याँ सीग़ ए फ़ाइल या हालिया है। एक जमात ने कह दिया है कि अलिफ़-नून इफ़ादा मानी ए फ़ाइलीयत[10] करता है। एक सफ़[11] पुकार उठी कि अलिफ़-नून हालिया है। ख़ुदा जाने अहले पारस अपनी ज़बान में सीग़ ए अम्र को क्या कहते होंगे और अलिफ़ फ़ाइल का उनकी लिसान[12] में कौन होगा। आखिर ये फ़न उमूरे दीनी[13] में से तो नहीं है कि जो इमामे आज़म[14] के क़ौल को न माने वो मुर्तद[15] है। क़ुव्वते क़यास का माद्दा औरों में था, हमको मब्दए फ़य्याज़[16] से ये क़ुव्वत अता नहीं हुई और फिर अलिफ़-नून हालिया के वुजूद के एतराफ़[17] में, मैं ही मुनफ़रिद[18] नहीं हूँ, बक़ौल तुम्हारे और अशख़ास भी हैं। सवाल इस क़दर है कि अलिफ़-नून हालिया मौजूद है या नहीं। साइल[19] का जवाब वहीं

---

१. भाषा के व्याकरण लिखने वाला लिपिक। २. जिसके आदेश का पालन किया जाये। ३. हुक्म जताना। ४. पूर्ववर्त्ती पारसी। ५. कर्त्ता (व्याकरण)। ६. बहुवचन। ७. कर्मकारक। ८. ऐसी संज्ञा जो किसी अन्य शब्द से न बनी हो। ९. कर्त्ताकारक। १०. कर्तृत्व के अर्थ में वृद्धि करने वाला। ११. पंक्ति। १२. भाषा। १३. धार्मिक विषय। १४. इमाम अबू खलीफ़ा का विरद। १५. परित्यक्त, इस्लाम धर्म से च्युत। १६. उदार ईश्वर। १७. स्वीकार करना। १८. एकाकी। १९. प्रार्थी।

मुंशी नवलकिशोर के नाम

दौलत

मुंशी साहब जमीलुल मनाक़िब[1] जनाब मुंशी नवलकिशोर साहब को रहवाव
व इक़बाल वजाह व जलाल[2] रोज़ आफ़ज़ूं[3] नसीब हो । चूंकि अवरां ए
कामयाबी व शादकामी[4] से शाद[5] होते हैं, इस वास्ते मुझे इन दिनों यालिखता
इक़बाल[6] से एक अम्र खुशी का पेश आया है। आपकी खुशी के वास्ते।
हूँ, बल्कि नज़रे हमदिगर के इत्तिहाद पर तुमको तहनियात[7] देता हूँ। त फ़लक

आपको मुबारक हो कि आख़िरे माहे गुज़िश्ता को जो हज़रत पंजाब[10]
रिफ़त[8] नवाब मुअल्ला अल्क़ाब[9] लेफ़्टंट गवर्नर बहादुर क़लम रवे गुमनाम
देहली में तशरीफ़ लाये तो सेशम्बा के दिन ३१ मार्च १८६३ ई० को इस ायत[12] से
गोशानशीन को याद फ़रमाया और अज़राहे बन्दा पर्वरी[11] कमाले इनट गवर्नर
खिलत अता किया । सुभान अल्लाह जो लोग मुतअल्लिक़[13], हैं लेफ़्टंक़ाव[14] के
पंजाब से वो क़िस्मतों के कितने अच्छे हैं । जनाब नवाब मुअल्ला अल । साहबे
मकारिमे अखलाक़[15] वो रूह अफ़्ज़ा[16] कि जिससे मुर्दा ज़िन्दा हो जायेकलमात[18]
वाला मनाक़िब[17] तामस डगलस फ़ोरसायथ साहब बहादुर सेक्रेटर के ा[21] पाये।
शफ़क़त आमेज़[19] वो रूह आसा[20] कि जिसको सुनकर बीमार शिफ़
मैं शादमाँ[22] आया. बल्कि बूढ़ा गया जवान आया । सच है--

८. सफलता

---

१. यशस्वी । २, प्रताप, ठाट-बाट । ३. नित्य विकासशील । ठा वाला ।
५. प्रसन्न । ६. सौभाग्य की अनुकूलता । ७. बधाई । ८. महान् प्रतिष्दयापूर्वक ।
९. श्रेष्ठ व्यक्ति । १०. पंजाब-प्रदेश । ११. भक्तवत्सलता । १२. आत्मा को
१३. सम्बन्धित । १४. श्रेष्ठ व्यक्ति । १५. शीलयुक्त कृपा । १६.।८. वचन ।
हर्ष प्रदान करने वाले । १७. उच्चकोटि के यश से युक्त । क्षन्न ।
१९. दयापूर्ण । २०. आत्मा की मनौती । २१. स्वास्थ्य । २२. प्रस

वज़ीरे चुनीं शहरयारे चुनाँ
जहाँ चूं न गीरद क़रारे चुनाँ[1]

लफ़्टेंट गवर्नर बहादुर और साहब सेक्रेटर बहादुर का क्या कहना है, आफ़ताब[2] व माहताब[3] हैं। मगर पंडित मनफूल सिंघ साहब मीर मुंशी भी दयानत[4] व अमानत व कारपर्दाज़ी[5] व मज़लूम नवाज़ी[6] में इन्तिख़ाब[7] हैं। ये न मुबालग़ा है, न ख़ुशामद है, बयाने वाक़ई है। शाइराना-सुख़नसाज़ी को मैंने दख़्ल नहीं दिया है, वो लिखा है जो सच और वाजबी है।

दनामे दौलत सरकार अंग्रेजी का तालिब रंजूर नातवाँ
—असदुल्लाहख़ाँ 'ग़ालिब'

---

१. जब शासक ऐसा है और मंत्री भी ऐसा है तो संसार की व्यवस्था ऐसी क्यों न होगी। २. सूर्य। ३. चाँद। ४. ईमान। ५. व्यवस्थापकी। ६. पीड़ितों पर दया करने वाले। ७. चुने हुए।

ख़ुतूत आते हैं, इधर से भी उनके जवाब लिखे जाते हैं। जो अशार वास्ते इस्लाह[1] के आते हैं, बाद इस्लाह भेज दिये जाते हैं।

इन साहबों में से अक्सर ऐसे हैं कि न मैंने उन्हें, न उन्होंने मुझे देखा है। मुहब्बते दिली और निस्बते रूहानी[2] सही लेकिन साहबाने बलादे दूरदस्त[3] क्या जानें मेरा हाल क्या है? हफ़्ताद व यकसाला[4] उम्र की किताब में से फ़स्ले आख़िरी[5] की हक़ीक़त ये है कि दस-पन्द्रह बरस से ज़ोफ़े सामिआ[6] व क़िल्लते इश्तिहा[7] में मुब्तिला हुआ और ये दोनों इल्लतें[8] रोज़ अफ़्ज़ूं रहें। हिस्से हाफ़िज़ा[9] का बुतलान[10] अलावा। जूं जूं उम्र बढ़ती गई, ये अमराज़ बढ़ते गये। क़िस्सा मुख़्तसर[11] अब समिआ[12] का हाल ये है कि एक तख़्ता क़ाग़ज़ मय दवात क़लम सामने धरा रहता है, जो दोस्त आते हैं, पुर्सिशे मिज़ाज[13] के सिवा और कुछ कहना होता है, वो लिख देते हैं, मैं उनकी तहरीर का जवाब ज़बानी देता हूँ।

ग़िज़ा की हक़ीक़त ये है कि सुबह को आठ-दस बादाम का शीरा सें पहर[14] को सेर भर गोश्त का पानी, दो घड़ी दिन रहे दो या तीन तले हुए कबाब। निस्यान[15] हद से गुज़र गया। राशा[16], दौराने सर[17], ज़ोफ़े बसर[18] ये याराने नौ आमदा[19] हैं। मीर तक़ी मरहूम[20] का मतला[21] विरदे ज़बां[22] है—

मशहूर हैं आलम में मगर हों भी कहीं हम
अल क़िस्सा न दर पै हो हमारे के नहीं हम

---

१. संशोधन के लिए। २. आत्मिक सम्बन्ध। ३. दूर के नगरों में रहने वाले। ४. ७१ वर्ष। ५. अन्तिम अध्याय। ६. श्रवण-शक्ति की निर्बलता। ७. भूख न लगना। ८. उपाधियाँ। ९. स्मरण-शक्ति। १०. नाश। ११. बात संक्षेप में। १२. श्रवण-शक्ति। १३. कुशल-प्रश्न। १४. तीसरे पहर। १५. विस्मृति। १६. कम्पन। १७. सिर के चक्कर। १८. दृष्टि-मान्द्य। १९. नवागन्तुक मित्र। २०. स्वर्गीय। २१. गजल का पहला शेर। २२. जप।

खत बक्स में या किताब में रख देता हूँ और भूल जाता हूँ, आगे लेटे-लेटे खत लिखता था, अब राशा यों भी नहीं लिखने देता।

साहबे 'अकमलुल अखबार' और साहबे 'अशरफ़ुल अखबार' ने जो हमेशा मुझसे मिलते-जुलते रहते हैं, अज़रूए मुशाहदा[1] मेरे कलाम की तसदीक़ करके उसी ऐतज़ार[2] को अपने अखबार में छापा है। कल दीगर साहबा ने मतबा[3] और राक़िमाने अखबार[4] अगर इसी इबारत को अपने अखबार के औराक़ में दर्ज करेंगे तो फ़क़ीर उनका एहसानमन्द होगा।

इस निगारिश[5] की शुहरत से मक़सूद ये है कि मेरे अहबाब मेरे हाल से इत्तिला पायें। अगर खत का जवाब या इस्हाही ग़ज़ल देर में पहुँचे तो तक़ाजा और अगर न पहुँचे तो शिकायत न फ़रमायें। मैं दोस्तों की ख़िदमत गुज़ारी में भी कभी क़ासिर[6] नहीं रहा, और ख़ुशी ए ख़ुशनूदी से काम करता रहा, जब बिल्कुल निकम्मा हो गया, न हवास बाक़ी रहे, न ताक़त, फिर अब क्या करूँ? बक़ौल ख़ाजा वज़ीर—

मैं वफ़ा[7] करता हूँ लेकिन दिल वफ़ा करता नहीं

अगर किसी साहब को मेरी तरफ़ से कुछ रंज व मलाल हो तो खालिसन-लिल्लाह, माफ़ फरमायें। अगर जवान होता तो अहबाब से दुआए सेहत का तलबगार होता, अब जो बूढ़ा हूँ तो दुआए मग़फ़रत[8] का ख़ाहाँ[9] हूँ!

—ग़ालिब

जनाब बाबू साहब, जमीलुल मनाक़िब[10] अमीमुल एहसान[11] सलामत,

नियाज़े मेहर की शाना[12] व दुआए दरवेशाना क़ुबूल फ़रमाये। एक दिन

१. निरीक्षण के अनुसार। २. क्षमायाचना। ३. अन्य मुद्रणालयों का स्वामी। ४. समाचारपत्रों के लेखक। ५. लेखन। ६. वञ्चित। ७. प्रतिज्ञा-पालन, निर्वाह। ८. प्रलय दिवस पर क्षमा की प्रार्थना। ९. इच्छुक। १०. अच्छे यशवाले। ११. अधिक उदार। १२. स्नेह के कारण प्रेमपूर्वक विनय।

२६. **मीर अफ़ज़लअली (मीरन)**—इनके सम्बन्ध में अधिक जानकारी प्राप्त नहीं है। ग़ालिब के पत्रों से ज्ञात होता है कि ये मर्सिया बहुत अच्छे ढंग से पढ़ते थे। पत्र-संख्या ३।

२७. **ख़ाजा गुलामगौसख़ाँ 'बेख़बर'**—बेख़बर के पूर्वज काश्मीर के रहने वाले थे। इनके दादा काश्मीर से तिब्बत की राजधानी ल्हासा गये, वहाँ से नेपाल। इनके पिता का नाम ख़ाजा हुज़ूरुल्लाह था। १८२४ ई० में बेख़बर का जन्म हुआ। इनका परिवार नेपाल से चलकर वाराणसी में रुका। यहीं बेख़बर का अध्ययन हुआ। बेख़बर के मामा उत्तरप्रदेश के तत्कालीन राज्यपाल के मीर मुंशी थे, उन्हीं के कारण १६ वर्ष की आयु में बेख़बर को नौकरी मिली। उन दिनों उत्तरप्रदेश के राज्यपाल आगरा में रहते थे, अतः बेख़बर वाराणसी से आगरा आ गये। मामा के अवकाश ग्रहण करने पर ये मीर मुंशी बने। इस पद से १८८५ ई० में अवकाश प्राप्त किया और इलाहाबाद में बस गये। १९०४ ई० में देहान्त हुआ। ये उर्दू और फ़ारसी दोनों में कविता लिखते थे। पत्र-लेखन में इन्हें विशेष सफलता मिली। इनके पत्रों का संकलन 'उर्दू खुतूते इंशा बेख़बर' नाम से प्रकाशित हुआ है। ग़ालिब के पत्रों का संकलन 'ऊदे हिन्दी' इन्हीं के निरीक्षण में संकलित और प्रकाशित हुआ था। पत्र-संख्या २५।

२८. **हकीम जहीरुद्दीन अहमदख़ाँ**—हकीम गुलाम नजफ़ख़ाँ का परिचय ऊपर दिया जा चुका है। जहीरुद्दीन अहमदख़ाँ उन्हीं के पुत्र थे। पिता के कारण ग़ालिब इन्हें अपने परिवार का एक सदस्य मानते थे। पत्र-संख्या २।

२९. **नवाब हुसेन मिर्ज़ा**—हिसामुद्दीन हैदर की गिनती दिल्ली के प्रतिष्ठित रईसों में होती थी। उनके दो पुत्र थे—मुज़फ़्फ़रुद्दौला सैफ़ुद्दीन हैदरख़ाँ और मुईनुद्दौला ज़ुलफ़िक़ारुद्दीन हैदरख़ाँ ज़ुलफ़िक़ारजंग। दूसरे पुत्र हुसेन मिर्ज़ा के नाम से प्रसिद्ध हुए। हुसेन मिर्ज़ा के बड़े भाई मुज़फ़्फ़रुद्दौला विद्रोह के समय

वहादुरशाह के साथ थे। जब बादशाह पकड़े गये तो ये अलवर भाग गये। वहाँ से पकड़ कर मँगायें गये और गुड़गाँवा में गोली से मार दिये गये। हुसैन मिर्ज़ा किसी तरह भाग कर पानीपत पहुँचे। वहाँ से वेश बदल कर लखनऊ गये। जब अँग्रेजों ने सभी लोगों को क्षमा-प्रदान की तो दिल्ली पहुँचे। पैत्रिक सम्पत्ति अँग्रेजों के अधिकार में चली गई थी। उस समय हैदराबाद के प्रधान मंत्री सालारजंग थे। उन्होंने हुसैन मिर्ज़ा को हैदराबाद बुलाया, किन्तु वहाँ जाने से पहले वे पागल हो गये। बुढ़ापा पागलपन में बीता। इनका १८९० ई० में देहान्त हुआ। ग़ालिब के पास अपनी रचनाएँ ठिकाने से नहीं रहती थीं। उनके दो साथी उनकी कविताओं को जमा किया करते थे--एक जियाउद्दीन अहमदखाँ 'नय्यर' और दूसरे हुसेन मिर्ज़ा। हुसैन मिर्ज़ा को ग़ालिब अपने भाई के समान मानते थे। पत्र-संख्या ६।

३०. **नवाब सज्जाद मिर्ज़ा**—हुसैन मिर्ज़ा के ज्येष्ठ पुत्र। इनका ग़ालिब के साथ पारिवारिक सम्बन्ध था। पत्र-संख्या २।

३१. **नवाब मीर गुलाम बाबाखाँ**—नवाब मीर गुलामबाबाखाँ छोटे साहब के नाम से प्रसिद्ध थे। ये सूरत के रईस थे। अकबर के समय में इनके पूर्वज सूरत में बसे थे। १८३४ ई० में इनका जन्म हुआ। अँग्रेज सरकार ने ख़ानबहादुर और सी. आई. ई. की इन्हें उपाधि दी थी। इनका १८९३ ई० में देहान्त हुआ। पत्र-संख्या १०।

३२. **नवाब इब्राहीमअलीख़ाँ**—ये बड़ौदा में रहते थे। सम्भवतः बड़ौदा राज्य ने इन्हें जागीर भी दी थी। अधिक जानकारी उपलब्ध नहीं। पत्र-संख्या ५।

३३. **हकीम सैयद अहमदहसन मौदूदी**—ये ३ मार्च १८३१ ई० को उत्पन्न हुए। १८५९ ई० में हज के लिए जा रहे थे कि मार्ग में ही देहान्त हो गया। मृत्यु के समय इनकी ३० वर्ष की आयु थी। ये अरबी और फ़ारसी के अच्छे ज्ञाता थे। पत्र-संख्या ११।

३४. **तफ़ज्जुल हुसैनखाँ**—इनके सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त नहीं है। पत्र-संख्या १।

३५. **मियाँ दादखाँ 'सय्याह'**—पिता मुंशी अब्दुल्लाखाँ औरंगाबाद के रईस थे। मियाँ दादखाँ 'सय्याह' की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं थी, इसीलिए औरंगाबाद से बम्बई होते हुए सूरत पहुँचे। सूरत के रईस नवाब मीर गुलाम बाबाखाँ ने इन्हें अपने पास रखा। गुलाम बाबाखाँ के यहाँ नौकरी करते समय ये दिल्ली, कानपुर, लखनऊ, बनारस और कलकत्ता की यात्रा करके सूरत लौटे, अरब और ईरान की यात्रा की। इनका काव्य नाम 'सय्याह' (यात्री) बहुत सार्थक था। 'क़ातै बुरहान' के विवाद के सम्बन्ध में सय्याह के नाम से 'लतायफ़े ग़ैबी' नामक पुस्तक छपी। कुछ लोगों का विचार है कि इस पुस्तक के रचयिता स्वयं ग़ालिब थे। कारणवश वह पुस्तक सय्याह के नाम से छपी। 'सय्याह' फ़ारसी और अरबी दोनों के कवि थे। १९०७ ई० में इनका बम्बई में देहान्त हुआ। पत्र-संख्या ३५।

३६. **मीर हबीबुल्लाह 'ज़का'**—नेल्लूर (पहले मद्रास और इस समय आन्ध्र-प्रदेश में) के निवासी। पूर्वज बीजापुर से नेल्लूर गये थे। १८२८-२९ में 'ज़का' का जन्म हुआ। पिता का नाम हाफ़िज मुहम्मद मीरा था। पाँचों भाइयों में ये सबसे छोटे थे। मद्रास में अरबी और फ़ारसी का इन्होंने अध्ययन किया। उर्दू और फ़ारसी दोनों में ये कविता लिखते थे। फ़ारसी के विद्वान् थे।

सुदूर दक्षिण में रहते हुए भी ग़ालिब के भक्त थे। ग़ालिब से मिलने की उत्कट लालसा रहती थी। बिना बोले दिल्ली के लिए चल पड़े। मार्ग में हैदराबाद आया तो यहाँ अच्छी नौकरी मिल गई और यहीं बस गये। हैदराबाद में रहते समय ग़ालिब से पत्र-व्यवहार प्रारम्भ हुआ। उर्दू और फ़ारसी दोनों में व्यंगात्मक कविता लिखते थे। १८७४ ई० में हैदराबाद में इनका देहान्त हुआ। पत्र-संख्या १५।

३७. **चौधरी अब्दुल ग़फ़ूर 'सुरूर'**—मारहरा (जिला-एटा, उत्तर प्रदेश) के रईस। फ़ारसी के अच्छे कवि और ग़ालिब के पत्रों का संकलन 'ऊदे हिन्दी'

नाम से प्रकाशित हुआ था। इस संकलन का आरम्भिक अंश 'सुरूर' के संकलन के आधार पर तैयार हुआ था। आयु में ग़ालिब से एक वर्ष बड़े थे। पत्र संख्या २६।

३८. **साहबे आलम मारहरवी**—ये मारहरा (एटा, उत्तरप्रदेश) के निवासी, चौधरी अब्दुलग़फ़ूर के बड़े पुत्र थे। पत्र-संख्या ५।

३९. **शाहआलम**—ये मारहरा (एटा, उत्तरप्रदेश) के निवासी साहबे आलम के पुत्र और चौधरी अब्दुलग़फ़ूर 'सुरूर' के पौत्र थे। पत्र-संख्या २।

४०. **अब्दुल रज्जाक 'शाकिर'**—ये अपने को 'जाफ़री अल हैदरी' लिखते थे और वकील थे। ग़ालिब ने इन्हें जो पत्र लिखे हैं, उनमें से किसी पर तिथि लिखी हुई नहीं है। कुछ पत्रों में तिथि का उल्लेख मिलता है। पत्र-संख्या १०।

४१. **शाहजादा बशीरुद्दीन**—ये मैसूर के टीपू सुलतान के पौत्र और राज कुमार शुक्रुल्लाह के पुत्र थे। अरबी और फारसी के अच्छे ज्ञाता थे और कलकत्ता में रहते थे। पत्र-संख्या ५।

४२. **मुन्शी हीरासिंह**—गालिब के मित्र छज्जूमल के पुत्र और जवाहर सिंह के भाई। पत्र-संख्या २।

४३. **बिहारी लाल 'मुश्ताक'**—दिल्ली निवासी मुन्शी मनभावनमल के पुत्र। ये हकीम गुलाम रज़ाख़ाँ के प्रेस 'अकमलुल मताबे' में नौकर थे। पत्र-संख्या २।

४४. **केवलराम 'होशयार'**—ये दिल्ली में रहते थे, इसीलिए ग़ालिब से घनिष्ठता थी। पिता सुलतानसिंह बेगम समरू की सेना में बख़्शी थे। केवलराम फ़ारसी, उर्दू और हिन्दी के अच्छे ज्ञाता थे। पिता के कारण बेगम समरू की सेना में इन्हें भी काम मिल गया। बाद में नौकरी छोड़कर अध्यापक बन गए। कुछ समय तक जेल में कैदियों को पढ़ाया करते थे। उत्तरप्रदेश में शिक्षा-विभाग के डिप्टी इन्सपेक्टर भी रहे। अन्तिम दिनों में चाँदपुर

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
३३६	१०	पहले शिकायत	महले शिकायत
३४२	२	मुशदिफ़	मुरादिफ़
३५५	५	दुश्मन व आरिज़	दुश्मन व आरिज़
३५७	१०	वाखदूम	मख़दूमे
३६०	२	मुफ़रंद ऐ	मुफ़रंद में
३६३	५	असल	अमल
३६३	१२	रूद की	रूदकी
३६४	२	मुम्मतने	मुम्तने
३६४	४	अमसाला	अमसाल
३६४	८	दारुल जरवे	दारुल ज़रबे
३६४	१७	अलैइर्रहमात	अलैइर्रहमता
३६५	१०	नस्तर	नश्तर
३६६	१०	हीश	होश
३६८	१३	आफ़ताव बहयल	आफ़ताब बहमल
३७१	२	जुदामाना	जुदागाना
३७२	१-२	हाए हन्मज़	हाए हव्वज़
३७३	२	दीदर	दीदए
३७३	१६	ऐतवार	ऐतवार
३७५	१२	काम	क़म
३७७	४	क़ुतुवख़ाने	कुतुवखाने
३७७	६	वद	वद
३८०	७	को मज़कूर	जो मज़कूर
३८०	८	सोमजामे	मोमजामे
३८०	१३	हीर परताव	तीर परताब

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
३८४	३	मस्शम	मस्तम
३८६	१२	मुख्वज	मुरव्वज
३९२	२	वर्ग	वर्ग
३९४	४	आप रहते	आप कहते
४१७	९	पुवर्सीदिम	पुर्सीदिम
४२८	टिप्पणी १	निर्दोष	निर्दीप
४३६	३	सुरूवरे	सूरूरे
४३६	टिप्पणी १६	विस्मृत	विस्तृत
४५०	९	तानोस	तानीस
४५४	५	वग़ैहुम	वग़ैरहुम
४५५	८	द्वारा	हाए
४५९	१	इस बात	इस्बात
४५९	६	मालिके मलका	मालिके मलेका
४६४	५	तहनियात	तहनियत
४६४	१५	आमरेज	आमेज़